HOW TO STOP WORRYING AND START LIVING

By

DALE CARNEGIE

Hindi Translation.

चिन्ता छोड़ो सुख से जीयो

लेखक

डेल कारनेगी

रूपान्तरकार

रायसिंह राव, एम्. ए.

प्रथम सस्करण

डी. बी. तारापोरवाला सन्स ॲन्ड कम्पनी प्रायव्हेट लि.

२१०, दादाभाई नौरोजी मार्ग, फोर्ट, बम्बई १.

यह पुस्तक क्या और कैसे लिखी गई

पैंतीस वर्ष पूर्व मैं न्यूयॉर्क के दुःखी नवयुवकों में से था। मैं मोटर ट्रक बेच कर रोजी कमाता था। मोटर ट्रक किस शक्ति से दौड़ती है इस का भी मुझे ज्ञान न था। यही नहीं, मैं कुछ जानना भी नहीं चाहता था। मुझे अपने धन्धे से नफ़रत थी। पश्चिम की ५६ वीं स्ट्रीट में स्थित कसारियों से भरे अत्यन्त सामान्य रूप से सजे कमरे में रहना मुझे पसन्द नहीं था। मुझे स्मरण है कि मेरी नेक टाइयाँ दीवालों पर टंगी रहती थीं और जब मैं सवेरे बदलने के लिए नेकटाई लेने जाता तो कसारियाँ कमरे में चारों ओर भागती नजर आतीं। मुझे सस्ते और गन्दे रेस्ट्रां में भोजन करना अच्छा नहीं लगता था। वे भी कसारियों से भरे रहते थे।

प्रत्येक रात को मैं अकेला सरदर्द से चूर घर लौटता। इस सर दर्द का कारण था – निराशा, चिन्ता, कटुता और विद्रोह। मुझ में विद्रोह इसलिये था कि कॉलेज के दिनों में जो सुनहले स्वप्न मैंने देखे थे वे दु:स्वप्न बन कर रह गए थे। यह भी कोई जिन्दगी थी? क्या यही वह महान उपक्रम था जिसकी मैंने इतनी उत्सुकता से प्रतीक्षा की थी? क्या मेरे जीवन का अभिप्राय यही था कि मैं ऐसी नौकरी करूँ जो मुझे पसन्द न हो। कसारियों के साथ रहूँ, निकम्मा भोजन करूँ और भविष्य से कोई आशा न रखूँ?.. मेरी, कॉलेज के दिनों के, पुस्तके लिखने के, स्वप्न को साकार करने तथा पढने लिखने के लिये अवकाश की कामना थी।

मुझे विदित था कि अपनी उस अनचाही नौकरी को छोड़ने से मुझे लाभ ही होगा, हानि नहीं। मेरी विपुल धन सचय करने की इच्छा नहीं थी, किन्तु मैं जीवन को सार्थक बनाना चाहता था। सक्षेप में, मैं, उस अवस्था को पहुँच गया था जो महान निर्णय की अवस्था है और जिसका सामना प्रत्येक नवयुवक को जीविकोपार्जन का श्री गणेश करने के पूर्व करना पडता है। इसलिये मैंने अपनी जीवन-दिशा निश्चित कर ली। इस निर्णय ने मेरे भविष्य को पूर्णतया बदल दिया। इसने मेरे गत पैंतीस वर्षों को सुखी बना दिया तथा अपनी काल्पनिक आकाक्षाओं से भी अधिक पुरस्कार प्रदान किया।

मेरा निर्णय यह था – जो काम मुझे पसन्द नहीं, उसे मैं नहीं करूँगा। मैंने चार वर्षों तक मिसौरी के वारेन्सबर्ग के स्टेट टीचर्स कॉलेज में अध्ययन किया था और शिक्षक बनने की तैयारी की थी इसलिये मैंने निश्चय कर लिया कि मैं रात्रि-शालाओं की प्रौढ-कक्षाओं में अध्यापन कार्य करूँगा। तब मुझे दिन में अवकाश रहेगा। मैं पुस्तकें पढ सकूँगा, भाषण तैयार कर सकूँगा। उपन्यास एवं कहानियाँ लिख सकूँगा। मैं चाहता था कि "लिखने के लिये जीऊँ और लिख कर जीविकोपार्जन करूँ।

अब प्रश्न यह था कि रात्रि-शाला के प्रौढ़ों को कौन सा विषय पढ़ाऊँ ? मैंने अपने कॉलेज के प्रशिक्षण पर विचार किया और मुझे विदित हुआ कि कॉलेज में मैंने जो कुछ पढ़ा उस सब से अधिक व्यावहारिक लाभ मुझे अपने जीवन और व्यवसाय जन-वक्तृता के अनुभव और प्रशिक्षण के द्वारा प्राप्त हुआ ! क्यों ? इसलिये कि इस से मेरी भीरुता और अनास्था लुप्त हो गई और लोगों से व्यवहार करने में मुझे विश्वास और साहस प्राप्त हुआ। मैंने स्पष्ट रूप से समझ लिया कि नेतृत्व उस व्यक्ति को मिलता है जो खड़ा हो कर अपने विचार व्यक्त कर सकें। मैंने कोलम्बिया विश्व-विद्यालय तथा न्यूयॉर्क विश्व–विद्यालय की रात्रि में सचालित जन–वक्तृता कक्षाओं में अध्यापन कार्य करने के हेतु आवेदन–पत्र भेजे, किन्तु उन विश्व–विद्यालयों को मेरी सहायता की अपेक्षा नहीं थी। वे अपना काम स्वय ही चला लेना चाहते थे।

उससे मुझे निराशा हुई किन्तु आज मै ईश्वर को धन्यवाद देता हूँ कि उन्होंने मेरे आवेदन को ठुकरा दिया क्योंकि मैंने उसके बाद वाई. एम. सी. ए. की रात्रि-शालाओं में पढ़ाना आरम्भ किया जहाँ मैं अपने परिश्रम की सफलता के प्रत्यक्ष एव शीघ्र प्रमाण प्रस्तुत कर सका। कैसी चुनौती थी वह भी ! प्रौढ विद्यार्थियों को कॉलेज की साख और सामाजिक मान की इच्छा थी इसलिये वे मेरी कक्षाओ में नहीं आते थे। वे केवल एक उद्देश्य से आते थे, वह यह कि उनकी समस्याओं का हल उन्हें मिल जाए। वे इस योग्य बनना चाहते थे कि किसी कारोबारी सभा मे खड़े होकर, भय से कॉपे बिना अपने विचार व्यक्त कर सकें। सेल्समेन इस योग्य बनना चाहते थे कि अपना साहस बटोर ने के लिए मकान के तीन चार चक्कर काटे बिना ही किसी कठोर ग्राहक का सामना कर सकें। वे अपने में सतुलन और आत्म-विश्वास का विकास करना चाहते थे। वे व्यापार में उन्नति करना चाहते थे और अपने परिवार के लिये अधिक धन कमाना चाहते थे। वे अपनी ट्युशन-फी किश्तों में अदा करते थे और रिजल्ट न मिलने पर ट्युशन-फी देना भी बन्द कर देते थे। मुझे भी वेतन नहीं मिलता था। लाभ पर परसेन्टेज मिलता था इसलिए अपना गुजर चलाने के लिये बडा व्यावहारिक होना पड़ता था।

मुझे उस समय लगा कि अध्यापन कार्य करने में मुझे बड़ी असुविधा होती है किन्तु आज मैं महसूस करता हूँ कि मैं तब एक अमूल्य प्रशिक्षण प्राप्त कर रहा था। मैं अपने विद्यार्थियों को प्रेरणा देता और उनकी समस्याएँ सुलझाने में सहायता करता। मै प्रत्येक सत्र को उत्तेजक और उत्साहपूर्ण बनाए रखता ताकि विद्यार्थियों का आना जारी रहे।

वह एक उत्साहवर्धक कार्य था। मुझे उससे रुचि थी। मैं यह देखकर चकित रह जाता था कि व्यापारी लोग कितनी जल्दी आत्म विश्वास का विकास करते हैं और कितनी जल्दी उनमें से कई तरक्की कर अच्छी आय बना लेते हैं। कक्षाओं को मेरी उच्चतम

आशाओं से भी अधिक सफलता मिल रही थी। तीन सत्र के अन्दर ही गई. एन. सी. ए. संस्था जो रात्रि के पाँच डालर देने के लिये भी तैयार नहीं थी; मुझे परसेन्टेज के हिसाब से तीस रुपये प्रति रात्रि देने लगी। आरम्भ में तो मैं जन-वक्तृता की शिक्षा देता था किन्तु ज्यों ज्यों वर्ष बीतते गए त्यों त्यों मैं महसूस करता गया कि प्रौढ़ों को लोक-व्यवहार की शिक्षा और योग्यता की भी आवश्यकता थी। लोकव्यवहार पर लिखी गई ऐसी कोई भी उपयुक्त पुस्तक मैं नहीं जानता था इसलिये मैंने स्वयं इस विषय पर एक पुस्तक लिखी। वह पुस्तक आम तरीके से नहीं लिखी गई थी। कक्षाओं में पढ़ने-वाले प्रौढ़ विद्यार्थियों के अनुभवों के आधार पर उसकी रचना हुई थी। उस पुस्तक का नाम मैंने 'हाउ टु विन फ्रैंड्स एण्ड इन्फ्लुएन्स पिपुल' अर्थात् 'लोक-व्यवहार' रखा।

चूँकि वह पुस्तक मेरी प्रौढ़ कक्षाओं के लिये केवल पाठ्य पुस्तक के रूप में लिखी गई थी इसलिये मुझे स्वप्न में भी आशा नहीं थी कि वह इतनी लोकप्रिय होगी। इसके अतिरिक्त मैं चार अन्य पुस्तकें भी लिख चुका था जो लोकप्रिय नहीं हुई थीं। इस दृष्टि से आज मैं सम्भवतः उन लेखकों में से हूँ जो अपनी सफलता से दंग हैं।

ज्यों ज्यों वर्ष गुजरते गए मैं महसूस करने लगा कि उन प्रौढ़ विद्यार्थियों की समस्याओं में से सबसे बड़ी समस्या थी 'चिन्ता'। मेरे विद्यार्थियों में से अधिकांश प्रबन्धक, सेल्समेन, इन्जीनियर और एकाउण्टेण्ट थे। सभी प्रकार के व्यवसाय और धन्धों के वे लोग थे और उन में से अधिकांश की अपनी समस्याएँ थीं। उन कक्षाओं में स्त्रियाँ भी थीं जो या तो व्यापार करतीं थीं या गृहिणियाँ थीं। उनकी भी अपनी समस्याएँ थीं। इसलिए स्पष्ट है कि मुझे 'चिन्ता का पराभव कैसे किया जाय' इस विषय पर लिखी गई पाठ्य पुस्तक की आवश्यकता महसूस हुई। इस बार फिर मैंने ऐसी पुस्तक की खोज की। न्यूयॉर्क अन्तर्गत फिफ्थ एवेन्यु एण्ड फॉर्टी सेकन्ड स्ट्रीट स्थित बृहत् पुस्तकालय में मैं गया और खोज करने पर यह जानकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि 'चिन्ता' विषय पर लिखी गई केवल बाईस पुस्तकें वहाँ की सूची में थीं। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि कीड़े-मकोड़ों पर लिखी गई एक सौ नब्बासी पुस्तकें वहाँ थीं। उन पुस्तकों की संख्या चिन्ता पर लिखी गई पुस्तकों की संख्या से लगभग नौ गुनी अधिक थी। है न यह मजे की बात ! चूँकि चिन्ता मानवता के सामने सबसे बड़ी समस्या है। क्या आप महसूस नहीं करते कि देश का प्रत्येक उच्च विद्यालय एवं कॉलेज 'चिन्ता को कैसे रोका जाय' इस विषय को पाठ्यक्रम में सम्मिलित कर ले। देश में कोई भी ऐसा कॉलेज नहीं है जिस में एक वर्ष के लिए भी इस विषय को पढ़ाया जाता हो। मैंने तो कम से कम ऐसे कॉलेज का नाम नहीं सुना। डेविड सीबरी ने अपनी पुस्तक 'हाउ टु वरी सक्सेस फुली,' (सफलता पूर्वक चिन्ता कैसे की जाय) में लिखा है कि,

" एक किताबे रटने वालों में नाच-गान के लिये आवश्यक व्यावहारिक तैयारी की जितनी कमी होती है उतनी ही कमी हम में व्यावहारिकता के लिये आवश्यक तैयारी की होती है और उसी कम तैयारी के साथ हम प्रौढता में प्रवेश करते हैं।" — लेखक ने इस में कोई आश्चर्य की बात नहीं कही है और इसका परिणाम यह होता है कि हमारे अस्पतालों के आधे से अधिक बीमार स्नायु एव मनोवेग जन्य व्याधियों से पीड़ित होते हैं।

मैंने न्यूयॉर्क के सार्वजनिक पुस्तकालय में रखी हुई उन बाईस पुस्तकों को पढा और इसके अतिरिक्त 'चिन्ता' पर लिखी गई जितनी भी पुस्तकें मिल सकी मैंने खरीद लीं। किन्तु उन पुस्तकों में से एक भी ऐसी नहीं निकली जिसे मैं अपनी कक्षा के प्रौढ विद्यार्थियों के लिए पाठ्य पुस्तक के रूप में प्रयोग में लाता। इसलिए मैंने स्वय एक ऐसी पुस्तक लिखने का निश्चय किया।

सात वर्ष पूर्व मैंने इस पुस्तक को लिखने की तैयारी की। सो कैसे? समय समय पर दार्शनिको ने चिन्ता के विषय में जो कुछ लिखा है उसे मैंने पढ डाला। कन्फ्युसियस के समय से लेकर चर्चिल के समय तक लिखी गई सभी जीवनियाँ मैंने पढ डालीं। मैं सभी तपकों के प्रमुख व्यक्तियों, जैसे-जेक डेम्प्सी, जनरल ओमर ब्रेडले, जनरल मार्क क्लार्क, हेनरी फोर्ड, एलिनोर रुजवेल्ट और डोरोथी डिक्स को मिल चुका हूँ किन्तु वह केवल आरम्भ था।

मैंने अन्य कुछ ऐसे प्रयत्न भी किये जो इन्टरव्यु और पठन-पाठन से अधिक महत्वपूर्ण थे। मैंने पॉच वर्ष तक अपनी प्रौढ कक्षाओं की प्रयोग शाला में चिन्ता पर विजय पाने के लिये काम किया। जहॉ तक मैं जानता हूँ यह प्रयोग शाला ससार में अपने ढग की पहली एव एक मात्र प्रयोग शाला थी। हमने, विद्यार्थियों को, चिन्ता रोकने के लिये कुछ नियम दिये और उन नियमों का अपने जीवन पर प्रयोग करने के लिये कहा और उनके जो परिणाम निकले उनके विषय में कक्षाओं में विचार विमर्ष किया। अन्य विद्यार्थियों ने भी इस सम्बन्ध में भूतकाल में जो पद्धतियॉ अपनायी थी, उनके बारे में विवरण प्रस्तुत किये।

इस अनुभव के परिणाम स्वरूप 'चिन्ता को कैसे जीता जाए' इस विषय पर मेरे खयाल से मैंने ससार के अन्य कीसी भी व्यक्ति से अधिक बात-चीत सुनी इसके अतिरिक्त 'चिन्ता को कैसे जीता जाए?' इस विषय पर मैंने सेकड़ों भाषण सुनें। ये भाषण डाक द्वारा भेजे गये थे। ये वे भाषण थे जो समूचे कनाडा और अमेरिका के एक सौ सत्तर से भी अधिक शहरों मे सचालित हमारी कक्षाओं में दिये गये थे, तथा जिनके लिये पुरस्कार दिये गये थे। इस प्रकार यह पुस्तक किसी बन्द कमरे की उपज नहीं है। और न यह कोई चिन्ता को जीतने के विषय में कोई बौद्धिक प्रवचन ही है, बल्कि मैंने, हजारों

प्रौढ़ोंने चिन्ता को किस प्रकार जीता इस विषय पर एक संक्षिप्त धारा-प्रवाह विवरण लिखने का प्रयास किया है। यह बात निश्चय है कि यह पुस्तक व्यावहारिक है...

मुझे यह बतलाते हुए खुशी होती है कि इस पुस्तक में कीसी भी काल्पनिक अथवा अस्पष्ट अपरिचित क, ख, ग की कहानियाँ नहीं हैं जिन्हें कोई पहचान न सके। कुछ इक्के दुक्के किस्सों को छोड़ कर इस पुस्तक में व्यक्तियों के नाम और पते दिये गये हैं। यह पुस्तक प्रमाणित विवरण है और इसकी साख है।

फ्रेन्च दार्शनिक वेलेरी के अनुसार विज्ञान सफल परिणामों का एक संकलन है। उसी प्रकार यह पुस्तक भी हमारे चिन्तापूर्ण जीवन से छुटकारा पाने के लिये सफल और प्रमाणित नुस्खों का एक संकलन है। फिर भी मैं आपको एक बात कह देना चाहता हूँ और वह यह कि इस पुस्तक में आपको नई बात नहीं मिलेगी, किन्तु आपको बहुत सी ऐसी बातें अवश्य मिलेंगी जिनका आम तौर से व्यवहार नहीं हुआ है। जहाँ तक हमें नई बातों की जानकारी की आवश्यकता नहीं रहती एक पूर्ण जीवन बिताने के लिये हम पहले ही से पर्याप्त बातें जानते हैं। हम सबने 'गोल्डन रूल' और 'द सरमन ओन द माउन्ट' पढ़े हैं। हमारी कठिनाई अज्ञानता न होकर जड़ता है। इस पुस्तक का उद्देश्य यह है कि पुरातन एवं मूलभूत सत्य को फिर से लिखा जाए, उसकी व्याख्या की जाए, उसका प्रवाह निश्चित किया जाए तथा उसे वातावरण के अनुकूल बनाया जाए और आपकी जड़ता मिटा कर उन सत्यों के प्रयोगों के लिये आपको प्रेरित किया जाए।

आपने यह पुस्तक, यह बात पढ़ने के लिये नहीं ली कि यह पुस्तक कैसे लिखी गयी है। आप इसकी व्यावहारिकता देखना चाहते हैं। ठीक है! पहले इस पुस्तक के चवालीस पेज पढ़ जाइये यदि उन चवालीस पृष्ठों के पढ़ लेने के बाद भी चिन्ता को रोकने के लिये और जीवन का आनन्द उठाने के लिये नयी शक्ति एवं प्रेरणा न मिले तो आप इसे रद्दी की टोकरी में डाल दीजिये। यह पुस्तक आपके लिये बेकार है।

डेल कारनेगी

विषय—सूची

भाग ५

चिन्तापर विजय पाने के स्वर्णिम नियम

भाग ६

आलोचना की चिन्ता से दूर रहने का उपाय

भाग ७

छः विधियाँ जो आपकी चिन्ता और थकान दूर कर आपको प्रफुल्लित रखेंगी

भाग ८

प्रसन्नता एवं सफलता देने वाला काम कैसे खोजा जाय

भाग ९

भाग १०

मैंने चिन्ता पर विजय कैसे पाई

भाग पहला

चिन्ता सम्बन्धी जानने योग्य मौलिक तथ्य

—<>—

१ : आज की परिधि में रहिये

सन् १८७१ के बसन्त की बात है; एक नवयुवक ने एक पुस्तक पढ़ी। उसके एक वाक्यने उसके भविष्य को अत्यन्त प्रभावित किया। यह युवक मॉन्ट्रियल जनरल हॉस्पिटल में चिकित्सा-शास्त्र का विद्यार्थी था। इसे निर्णायक परीक्षा में सफलता प्राप्त करने की बहुत चिन्ता थी। क्या करे? कहाँ जाए? चिकित्सक वृत्ति कैसे स्थापित करे तथा जीविकोपार्जन कैसे करे? ऐसी कई चिन्ताएँ उसे घेरे रहती थी।

उस वाक्य ने उसे इतना प्रभावित किया कि वह अपने समय का एक यशस्वी चिकित्सक बन गया। उसने विश्व-विख्यात 'जॉन्स हॉपकिन्स स्कूल ऑफ मेडिसिन्स' का सगठन किया तथा ऑक्सफोर्ड के चिकित्सा शास्त्र विभाग में रेजियस प्राध्यापक नियुक्त हुआ। ब्रिटिश साम्राज्य के चिकित्सा क्षेत्र के किसी भी व्यक्ति को प्रदत्त यह सर्वोच्च सम्मान था। इग्लेण्ड के सम्राट ने उसे 'नाइट' की उपाधि से विभूषित किया था और उसकी मृत्यु के उपरान्त एक हजार चार सौ छियासठ पृष्ठों के दो बृहत् ग्रथों में उसकी जीवन-कथा भी लिखी गयी थी।

वह युवक था सर विलियम ओसलर तथा टॉमस कार्लाइल का जो वाक्य उसने १८७१ के बसन्त में पढ़ा, वह यह था कि, "दूरस्थ तथा सदिग्ध कार्यों को छोड़, सन्निकट एव निश्चित कार्यों को हाथ में लेना ही हमारा मुख्य ध्येय होना चाहिये।"

बयालीस वर्ष उपरान्त बसन्त की स्निग्ध रात्रि में सुमन-सौरभ से सराबोर कॉलेज के अचल में सर विलियम ओसलर ने येल विश्वविद्यालय के छात्रो के समक्ष भाषण करते हुए बताया कि यह स्वाभाविक ही है कि मेरे जैसा व्यक्ति, जिसने एक लोकप्रिय पुस्तक लिखी हो तथा जो चार विश्वविद्यालयों में प्राध्यापक रह चुका हो, कुशाग्र बुद्धि एव प्रतिभा सपन्न समझा जाए किन्तु ऐसी बात नहीं है। मेरे अनन्य मित्र जानते हैं कि मेरी बुद्धि कितनी सामान्य है।

फिर उनकी सफलता का रहस्य क्या था? वह था उनका 'आज की परिधि में रहना।' इस सूत्र का आखिर आशय क्या है? येल में किये गये उनके उस भाषण के कुछ वर्ष पूर्व की बात है—सर विलियम ऑसलर ने एक विशाल पोत पर एटलाटिक पार किया था। पोत पर उन्होंने देखा कि उसके अग्र मच पर खड़ा कप्तान बटन दबाता और उसकी कलें खडखडा उठतीं और पोत के विभिन्न विभाग तत्काल एक दूसरे से जडकर सर्वथा अलग हो जाते। इस यत्र-क्रिया का उल्लेख करते हुए सर विलियम ओसलरने येल छात्रों को बताया कि, 'आपमें से प्रत्येक का शरीर-यत्र उस पोत के यंत्र से कहीं अधिक विचित्र है तथा उससे भी अधिक लम्बी

यात्रा के हेतु सन्नद्ध हैं। अतः मेरा आपसे आग्रह है कि आपभी अपने इस यन्त्र पर नियन्त्रण रखना सीखिये जिससे कि आप आज की परिधिमें रह सकें और आपकी जीवन यात्रा सुरक्षित हो जाए। अपने मस्तिष्क-यन्त्र का बटन दबा कर मृत व्यतीत और अज्ञात भविष्य को लोह कपाटों में जड़ दीजिये। जीवन के प्रत्येक स्तर पर यह प्रयोग कीजिये और आपको विदित होगा कि आज के लिये आप सर्वथा सुरक्षित हैं।

"बीती ताहि बिसारिदे! क्यों कि इस बीती की चिन्ताने कितनी ही मूढात्माओं को कराल काल की राह पर ढकेल दिया है। विगत और आगत का भार एक साथ वर्तमान में ढोकर चलने वाला प्रचण्ड पराक्रमी भी लड़खड़ा जाता है। आगत को भी विगत ही की तरह दृढ़ता से भूल जाइये। आपका, 'कल आज है। यों, कल नाम की कोई चीज है ही नहीं। मानव की मुक्ति वर्तमान से है। भविष्य की चिन्ता करने वाले की शक्ति व्यर्थ में नष्ट होती है। मानसिक क्लेष और स्नायु कष्ट उसके पीछे लग जाते हैं.. अतः मेरा आपसे आग्रह है कि आगत और विगत को नजर-अन्दाज कर आज की परिधि में रहने के अभ्यस्त होइये।"

तो क्या डाक्टर ऑसलर का अभिप्राय यह था कि हम भविष्य के लिये कोई आयोजन ही न करें! नहीं, ऐसी बात नहीं है। इस पहलू पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने स्वय अपने उस भाषण में बताया था कि भविष्य के लिये सम्यक् आयोजन करने का उपयुक्त उपाय तो यही है कि हम अपनी समग्र बुद्धि और अदम्य उत्साह के साथ आज का कार्य उत्तम रीतिसे करने में जुट जाए।

सर विलियम ऑसलर ने येल छात्रों को सलाह दी कि वे अपनी दिनचर्या ईसा की इस प्रार्थना के साथ आरम्भ करें—"हे प्रभु केवल आज का भोजन जुटा दे।"

ध्यान दीजिये, यह प्रार्थना केवल आज के भोजन के लिये ही है इसमें कल की बासी रोटी की शिकायत नहीं है, न इसमें यही कहा गया है कि 'हे प्रभु यदि सूखा पड गया तो आगामी पतझड में रोटी कहाँ से नसीब होगी या कहीं रोजी जाती रही तो मेरा उदरपोषण कैसे होगा?"

इस प्रार्थना में केवल आज की रोटी की ही याचना है इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं। आज की रोटी ही आपकी अपनी है।

वर्षो पहले की बात है-एक निर्धन दार्शनिक था, वह किसी पथरीले प्रान्तर में भटक रहा था। वहाँ के निवासी बडी कठिनाई से अपना जीवन निर्वाह करते थे। एक दिन एक पहाड़ी पर, वे लोग उसके आस पास जमा हो गये। दार्शनिकने उनके समक्ष भाषण किया। उस भाषण को कदाचित् अब तक सब से अधिक उधृत किया गया है। सदियो से उक्त भाषण के वे शब्द निरन्तर गूंजते चले आ रहे हैं। उस दार्शनिक का कथन था, "कल की चिन्ता छोड़ दो। कल अपनी सुध आप ही लेगा। आज की कठिनाइयाँ ही आज के लिये क्या कम हैं?'

'कल की चिन्ता छोड़ दो, ईसा के इन शब्दों को सिद्ध पुरुष की वाणी अथवा पूर्वी रहस्यवाद कहकर कई लोग टाल देते हैं। उनका कहना है "कल की चिन्ता तो करनी ही पड़ेगी, परिवार की सुरक्षा के लिये बीमा भी कराना ही होगा, वृद्धावस्था के लिये बचत भी करनी होगी।"

ठीक है भविष्य के लिये योजनाएँ अवश्य बनाइए, पर पहले प्रभु ईसा के वचनों का तात्पर्य समझने की भी तो कोशिश कीजिये! कठिनाई यह है कि तीन सौ वर्ष पूर्व अनुवादित ईसा के शब्दों का आज भी वही अर्थ लगाया जाता है जो सम्राट जेम्स के शासन काल में लगाया जाता था। तीन सौ वर्ष पूर्व विचार का अर्थ प्रायः चिन्ता से लगाया जाता था। यदि ईसा के अभिप्राय को कहीं सही सही उद्धृत किया गया है तो बाइबल के आधुनिक संस्करण में। जिसमें कहा गया है कि "कल की चिन्ता छोड़ दो।"

कल पर विचार अवश्य कीजिये, उस पर मनन कीजिये, योजनाएँ बनाइये, तैयारियाँ कीजिये, किन्तु उसके लिये चिन्तित मत होइये।

युद्ध काल में हमारे सेनापति, कल के लिये योजनाएँ बनाते थे पर वे उसके लिये चिन्तित नहीं होते थे। अमरिकी नौ सेना के निर्देशक एडमिरल अर्नेस्ट किंग कहा करते थे कि "मैंने उपलब्ध उत्तम साधनों से सज्जित अपने वीर सैनिकों को श्रेष्ठ मिशन पर भेजा है और यही मैं कर सकता हूँ।"

"यदि पोत डूब जाए तो मैं उसे ऊपर नहीं ला सकता। यदि उसे डूबना है तो वह डूबेगा ही। मैं उसे रोक नहीं सकता। जो हो चुका उस पर सिर पीटने से तो यही अच्छा है कि आगे की समस्याओं पर विचार किया जाए। यदि मैं ऐसी उलझनों को अपने पर हावी होने दूँ तो मेरा तो जीना ही मुश्किल हो जाए!"

चाहे युद्ध में हो चाहे शान्ति में, सही और गलत विचार धारा में मुख्य अन्तर यही है कि सही विचार धारा प्रयोजन और परिणाम पर आधारित रहती है और हमें रचनात्मक कार्य-विधि की ओर प्रेरित करती है। इसके विपरीत गलत विचार धारा प्रायः उद्वेग और स्नायु विघटन का हेतु बनती है।

हाल ही में मैंने न्यूयॉर्क टाइम्स के प्रकाशक आर्थर हेज सल्जबर्गर से भेंट की थी। उन्होंने मुझे बताया कि युरोप में द्वितीय महायुद्ध के छिड़ने के समय वे अपने भविष्य के विषय में इतने चिन्तित हो गये थे कि उनकी नींद तक हराम हो गयी। प्रायः अर्ध रात्रि के समय उठ कर वे केनवास और रंग लिये शीशे के सामने जा बैठते और अपनी तस्वीर बनाने का प्रयास करते। चित्रकारी के सम्बन्ध में उनका कोई अनुभव नहीं था किन्तु अपने मस्तिष्क से चिन्ता हटाने के लिये वे जैसे-तैसे कुछ बना ही लेते थे। उन्होंने आगे बताया कि एक चर्च में हुए प्रवचन को सूत्र रूप में ग्रहण करने के उपरान्त ही वे चिन्तामुक्त हो शान्ति से जी सके। वह प्रवचन इस प्रकार था—

'प्रगति का एक चरण ही पर्याप्त है।'

सहारा दे ज्योतिर्मय
विचलित न कर
अधिक की कामना नहीं करता
प्रगति का एक चरण ही पर्याप्त है।

उन्हीं दिनों युरोप में एक युवक सैनिक भी यही उपदेश ग्रहण कर रहा था। यह युवक बाल्टीमोर अन्तर्गत मेरीलेण्ड का निवासी था। टेड बेंगरमिनो उसका नाम था। थकान से संघर्ष करते करते वह अत्यन्त त्रस्त हो चुका था।

टेड बेंगरमिनो लिखता है कि—"सन् १८४५ के अप्रैल में, मैं, अत्यन्त चिन्तित रहा और परिणाम स्वरूप मुझे आंत उलटने (Spasmodic Trans-vascolon) की बीमारी हो गयी। इस बीमारी में रोगी को असह्य पीडा होती है। यदि उस समय युद्ध समाप्त न हो गया होता तो निश्चय ही मेरा अन्त हो जाता। उन दिनों मैं ९४ वीं इन्फेन्ट्री डिविजन में अतायुक्त अधिकारी के पद पर काम करता था और सर्वथा थक चुका था। उन दिनों मेरा एक काम तो उन सैनिकों को पंजीबद्ध करना था जो या तो युद्ध में काम आ चुके थे, या लापता थे या फिर अस्पताल में भरती किये जा चुके थे। दूसरा काम अपने तथा शत्रुपक्ष के सैनिकों की उन लाशों का पता लगाना था जिनको मार काट के दरमियान उथली कब्रों में गाड दिया गया था। मुझे उन सभी सैनिकों की निजी सामग्री को इकट्ठा कर उनके मातापिता अथवा अन्य निकट के सम्बन्धियों के पास भेजना पडता था, क्योंकि उस सामग्री का उनके निकट विशेष महत्त्व था। मुझे सदा ही यह चिन्ता लगी रहती थी कि कहीं हम गम्भीर भूलें न कर बैठें। मैं सोचता रहता, क्या मैं कभी अपने काम से पार पा सकूंगा? क्या मैं अपने बच्चे को अपनी गोद में लेने जी सकूंगा? आदि कई चिन्ताओं ने मुझे इतना निर्बल बना दिया था कि मेरा तीस पौन्ड वजन घट गया। मेरी उद्विग्नता विक्षिप्तता की सीमा तक पहुँच गई। मैं कंकाल मात्र रह गया और ऐसी दशा में घर लौटने के विचार मात्र से सिहर उठता। मेरा धैर्य जाता रहा, मैं बात बात में रो पडता था। मेरी अशान्ति इतनी बढ गयी थी कि एकान्त पाते ही मेरे आँसू बरस पडते। बल्ज युद्ध के आरम्भ में तो मैं अक्सर रोया करता था। इस जीवन में अपनी पूर्वावस्था को पुनः प्राप्त करने की आशा मैं छोड चुका था।

"अन्त में एक सैनिक अस्पताल में मुझे भर्ती होना पड़ा, जहाँ इस दारूण अवस्थासे मुझे छुटकारा मिला। एक सैनिक डाक्टर ने अपने अमूल्य परामर्श द्वारा मेरे जीवन की दिशा बदल दी। जाँच के उपरान्त उसने बताया कि बीमारी का कारण मानसिक है। डाक्टर ने कहा—"देखो टेड, जीवन एक बालु घडी (Hour glass) के समान है। यह तो तुम जानते ही हो कि बालु घडी के शिखर पर सैंकडों बालु कण सचित रहते हैं और वे शनैः शनैः घटिका की सकडी

गर्दन से होकर समान क्रम से निकलते रहते हैं। बालू कणों के इस क्रम को हम घड़ी को तोड़े-फोडे बिना नहीं बदल सकते। ऐसाही क्रम हमारे जीवन में भी है। अपनी दिनचर्या का श्रीगणेश करते समय हमारे सामने सैंकड़ो ऐसे काम आते हैं जिन्हें हम तत्कालही पूरा करना चाहते हैं। यदि हम उन्हें घड़ी की क्रमिकता के अनुरूप दिन भरमें एक एक करके पूरा न करें तो निश्चय ही हमारा शारीरिक और मानसिक ढांचा टूट जाए। उस दिन से आज तक मैं डाक्टर के उस 'एक ही साधे सब सधे' के दर्शन का प्रयोग करता आ रहा हूँ। डॉक्टर के उस परामर्श ने, युद्ध काल में शारीरिक एव मानसिक विघटन से मुझे बचा लिया और उसने मेरे वर्तमान व्यवसाय में भी बडा योग दिया। आजकल मैं बाल्टीमोर की 'कॉमार्शीयल क्रेडिट कम्पनी' में स्टॉक कन्ट्रोल के क्लार्क का काम करता हूँ। अपने इस व्यवसाय में भी मैंने उन्हीं युद्धकालीन उलझनों को पनपते देखा। काम बहुत ज्यादा था और समय कम। हमारे पास स्टॉक की कमी थी। नये फॉर्म बनाना, स्टॉक की व्यवस्था करना, पते बदलना, पुराने कार्यालयों को बन्द कर नये कार्यालय खोलना, आदि कई काम सर पर चढे हुए थे। पर घबराने या मुँह लटकाने के बजाय मुझे डॉक्टर के उन शब्दों 'एक ही साधे सब सधे' का स्मरण हो आया। कई बार मैंने उन शब्दों को दोहराया और उनकी प्रेरणासे अपने कार्य को पूर्ण कुशलता से सम्पन्न किया। तबसे मुझे उस युद्धकालीन मानसिक उद्वेलन का शिकार कभी नहीं होना पड़ा।

हमारे वर्तमान जीवनकी विचित्रता में से एक यह भी है कि अस्पतालों में आधे से अधिक स्थान उन रोगियों के लिये रहते हैं जो स्नायु रोग अथवा मानसिक रोग से पीडित रहते हैं; और जो भूत और भविष्य की चिन्ता में पिस कर रह गये हैं। उन रोगियों में से अधिकांश आज भी सुखद एव उपयोगी जीवन व्यतित करते यदि वे ईसा या सर विलियम ओसलर के उन शब्दों पर ध्यान देते। जिनमें क्रमशः 'कल की चिन्ता छोड़ो' और 'आज की परिधि में रहो' की सलाह दी गयी है।

अभी हम भूत और भविष्य के संधि-स्थल पर खड़े हैं। एक ओर विशाल भूत है जो कभी वापस नहीं आयगा और दूसरी ओर भविष्य है जो तेजी से हमारी ओर बढ रहा है। वर्तमान की उपेक्षा करके पल मात्र के लिये भी हम उन दोनों युगों में से किसी एक के होकर नहीं जी सकते। ऐसे प्रयास से हमारा शारीरिक एव मानसिक ह्रास हो जाता है। अतः जिस काल में हमारे लिये रहना सम्भव हो, उसी काल में रह कर हमें सन्तोष कर लेना चाहिये। इस विषय में रॉबर्ट लुई स्टीवन्सन ने लिखा है कि – "भारी से भारी बोझ भी 'आज के लिये' तो कोई भी ढो सकता है। चाहे कोई भी हो एक दिन के लिये तो कठिन से कठिन परिश्रम कर ही लेता है। सूर्यास्त तक तो कोई भी व्यक्ति मिठास, धैर्य, स्नेह और पवित्रता से रह सकता है। और इसी को जीना कहते हैं। जीवन की हम से यही अपेक्षा है।

एक दिन के लिये अथवा 'आज के लिये जीना सीखने के पूर्व, ८१५ कोर्ट स्ट्रीट सागीनाव मीचीगन की श्रीमती ई. के शील्ड्स हताश होकर आत्महत्या

करने पर उतारू होगयीं थीं। अपनी बीती सुनाते हुए श्रीमती शील्ड्स ने बताया कि "१८३७ में मेरे पति का देहान्त हो गया था, मैं बहुत दु:खी थी। पास में कौड़ी भी न थी। मैंने केन्साज के रोच फ्लावर कम्पनी के मालिक श्री लिओ रोच से नौकरी देने के लिये प्रार्थना की। उनके आधीन मैं पहले भी काम कर चुकी थी इसलिए पहले वाला काम मुझे फिर मिल गया। पहले मैं देहात और कस्बों के स्कूल बोर्डस को पुस्तकें बेचकर अपनी जीविका कमाती थी। मेरे पास उस समय मोटर थी जिसे मैंने अपने पति की बीमारी के दिनों में बेच दिया था। किन्तु इस बार फिर मुझे मोटर खरीदनी पड़ी। महामुश्किल से जो पूँजी मैं जमाकर पाई थी उसे देने के बाद, बची रकम की किश्तें तय कर के एक मोटर खरीद ली और पुस्तकें बेचने का काम फिर से शुरू कर दिया।

"मेरा अनुमान था कि इस प्रकार अपने को काम में लगाकर निराशा से छुटकारा पा जाऊँगी। किन्तु, अकेले गाड़ी चलाना, अकेले भोजन करना मेरे लिये बोझिल हो उठा और फिर लाभ की दृष्टि से भी जिस क्षेत्र में मै काम करती थी वह बेकार था। यहाँ तक कि मोटर की किश्तों का अल्प भुगतान करना भी मेरे लिये कठिन हो गया।

"१९३८ के बसन्त में, मै, वार्सेलिज के बाह्य प्रान्तर मिसौरी में काम करती थी। वहाँ की सड़कें बड़ी ऊबड़-खाबड़ थीं, वहाँ के स्कूल विपन्नावस्था में थे। मुझे अपना एकाकीपन इतना खलने लगा कि मैं हताश होकर आत्महत्या करने के लिये उद्यत हो गयी। जीवन में सफलता की कोई आशा न थी। और न ही कोई मोह था कि जिसके लिये जीती। नित्य सवेरे अपनी दिनचर्या आरम्भ करने में बड़ा भय लगता था। किसी न किसी बात का डर लगा ही रहता था–मोटरकार की किश्ते अब तक नहीं चुका पायी थी। घर का किराया भी देना था, खानेपीने के लिये कुछ था ही नहीं। इधर स्वास्थ्य भी गिर रहा था और उधर डाक्टर को देने के लिये दमड़ी भी पास नहीं थी, ऐसी थी मेरी अवस्था! किन्तु उस अवस्था में यदि किसीने मुझे आत्महत्या के प्रयत्नो से रोका तो इन दो बातों ने – मेरी मृत्यु से मेरी बहन को गहरा धक्का लगेगा, और दूसरे, अपने अन्तिम सस्कार के लिये मेरे पास पर्याप्त रकम नहीं थी।

इसी बीच मैंने एक लेख पढ़ा जिसने मुझे नैराश्य से उबार कर जीने का साहस दिया। उस लेख के, इस प्रेरक वाक्य के प्रति मैं सदैव कृतज्ञ रहूँगी। वाक्य इस प्रकार है–'समझदार के लिये हर सुबह नई जिन्दगी लेकर आती है।' मैंने इस वाक्य को टाईप किया और अपनी गाड़ी के सामने वाले शीशे पर चिपका दिया ताकि गाड़ी चलाते समय वह वाक्य बराबर मेरी आँखों के सामने रहे। मैंने महसूस किया कि एक एक दिन करके जीना इतना कठिन नहीं। मैंने सीख लिया कि भूत को कैसे बिसराया जाए तथा आगत की चिन्ता का निराकरण कैसे किया जाए। रोज सवेरे मैं मन ही मन कहती–'आज नई जिन्दगी का श्रीगणेश है।'

"इस प्रकार. अब मैंने अपने एकाकीपन और निजी अभावोंसे उत्पन्न भय पर विजय पा ली है। मै अब सुखी हूँ, बहुत हद तक सफल भी। जीवन के प्रति मुझमें अदम्य उत्साह और अनुराग है। मुझे अब विश्वास हो गया है कि जीवन की विकट तम परिस्थिति भी मुझे आतंकित नहीं कर सकती। मुझे अब भविष्य की बिलकुल चिन्ता नहीं है। मुझे एक २ दिन करके जीना सहज मालूम पडता है। मै यह भी जानती हूँ कि समझदार के लिये हर सुबह नयी जिन्दगी लेकर आती है।

क्या आप जानते है कि निम्न लिखित पद्यांश किसने लिखा है?

—सुखी मानव तो वही है
आजको अपना बनाले,
और हो आश्वस्त कह दे
जी लिया बस आज मैं तो
'कल,' जो करना हो तू करले।

लगता है जैसे यह पद्यांग आधुनिक युग की रचना हो, इसी युग की अभिव्यजना हो। किन्तु ऐसी बात नहीं है। ईसा से तीन सौ वर्ष पूर्व रोमन कवि होरस ने इस पद्याग की रचना की थी।

मानव प्रकृति की अत्यन्त शोचनीय प्रवृत्ति यह है कि हम वस्तुस्थिति से पलायन कर जाते हैं। अपने गवाक्ष के बाहर इठलाते उन विकसित पुष्पों के सौन्दर्य की उपेक्षा करके हम अन्तरिक्ष के काल्पनिक नन्दन वन में खो जाते हैं।

आखिर हम ऐसी मूर्खता क्यों करते हैं? इतने दयनीय एव मूढ हम क्यो बन जाते हैं!

स्टेफन लिकोक ने लिखा है कि हमारे जीवन की यह छोटी सी शोभा यात्रा भी कितनी विचित्र है! आज का काम कल पर छोड़ दिया जाता है। बालक कहता है कि किशोर होने पर देखा जाएगा, किशोर युवावस्था की प्रतीक्षा करता है और युवा बनने पर कहता है गृहस्थ बनने पर देखेंगे। और तब तक विचार बदल जाता है, सोचता है गृहस्थ हो गया तो क्या हुआ पहले सासारिक झझटोंसे निपट लूँ तब देखूंगा। और जब काम काज से छुट्टी मिल जाती है तब वह अपने अतीत पर दृष्टि दृष्टिपात करता है और उसे लगता है जैसे अतीत पर पाला पड गया हो, सब कुछ समाप्त हो गया हो, और तब कहीं जाकर, इतने विलम्ब के बाद, उसे जीवन के प्रत्येक पल के पूर्ण दोहन में जीवन की सार्थकता का भान होता है।

डेट्रोयट के स्वर्गीय एडवर्ड इवान्स ने यह जानने के पूर्व कि प्रत्येक पल का पूर्ण दोहन ही जीवन की सार्थकता है, चिन्ता मे पडकर अपने को अधमरा बना लिया था। निर्धनता में पले इस इवान्स ने समाचार पत्र बेचकर जीविकोपार्जन का श्रीगणेश किया था। फिर पंसारी के मुनीम के रूप मे काम किया। उसके उपरान्त सात कुटुम्बियों के पोषण का दायित्व निभाते हुए वह सहायक लायब्रेरियन का काम करने लगा। वेतन

कम था, फिर भी नौकरी छोडने में उसे भय लगता था। आठ वर्ष इसी तरह बीत गये तब जाकर कहीं उसने अपना स्वतन्त्र व्यवसाय आरम्भ करने का साहस किया। अपने निजी व्यवसाय का श्री गणेश कर दूसरों से उधार लिये हुए पच्चीस डालर की मूल पूँजी पर ही केवल एक वर्ष में उसने बीस हजार डालर कमा लिये। किन्तु बादमें एक घातक आर्थिक सकट ने उसे दबोच लिया—अपने एक मित्र के लिये उसने भारी रकम अटका दी और वह मित्र बाद मे दिवालिया हो गया। सकट का अन्त यहीं नहीं हुआ—शीघ्र ही एक और सकट ने उसे घर दबाया। जिस बैंक मे उसने अपनी समूची धन राशि जमा कर रक्खी थी वह भी फेल हो गया, नतीजा यह हुआ कि वह कगाल हो गया और ऊपर से सोलह हजार का ऋण और आ पडा। इस आघात को वह सह नहीं सका। अपनी उस अवस्था का उल्लेख करते हुए उसने बताया कि, "उन दिनों मेरा खाना पीना हराम हो गया था। मैं एकदम बीमार पड गया। चिन्ता! चिन्ता! और चिन्ता!! चिन्ताही मेरी बीमारी का मूल कारण थी। एक बार मै चलते चलते रास्ते मे अचेत होकर गिर पडा। एक कदम चलना भी मेरे लिये दूभर हो गया था। मैंने बिस्तर पकड लिया। मेरे शरीर में फोडे निकल आये और धीरे धीरे वे भीतर ही भीतर बढने लगे। पीडा इतनी बढी कि बिस्तर पर पडे पडे अपने पर ग्लानि हो आई। अशक्ति बढती गयी। अन्त मे डॉक्टर ने मेरे जीवन की अवधि कुल दो सप्ताह निश्चित कर दी। इससे मुझे गहरा धक्का लगा। मैंने अपनी वसीयत लिखी और बिस्तर मे लेटे लेटे मृत्यु की प्रतीक्षा करने लगा। सोचा, अब सघर्ष और चिन्ता से कोई लाभ नहीं। चिन्ता को ताक में रख, मैं निश्चिन्त हो कर सो गया। लगातार दो सप्ताह से मैं सोया नहीं था। किन्तु इस बार जीवन तथा उसकी समस्याओं के अन्त को इतना निकट देखकर जो सोया तो घोडे बेच कर सोया। मुझे अशक्त करनेवाली थकान मिटने लगी। मेरी भूख बढी और साथ ही मेरा वजन भी।

"कुछ ही हफ्तों मे मैं बैसाखी के सहारे चलने योग्य हो गया और छः सप्ताह बाद तो अपने काम पर भी लग गया। पहले मैं बीस हजार रुपये वार्षिक कमाता था पर अब तीस डालर प्रति सप्ताह की नौकरी करके भी मैं प्रसन्न था। मैं जहाजों पर चढाई जाने वाली गाडियों के पहियों के पीछे रक्खे जाने वाले अटकन बेचता था। चिन्ता का फल मैं भुगत ही चुका था। इसलिये इस बार चिन्ता को दूर ही रखा। न तो मुझे बीते का पछतावा था और न आगे का भय। मैं अपनी सम्पूर्ण शक्ति और उत्साह के साथ अटकन बेचने मे जुट गया।"

अपनी कार्य क्षमता के फलस्वरूप एडवर्ड इवान्स ने तीव्र प्रगति की और कुछ ही वर्षों में कम्पनी का प्रधान बन गया। उसकी इवान्स प्रोडक्ट्स नामक कम्पनी गत कई वर्षों से न्यूयार्क स्टॉक एक्सचेंज की सूची मे स्थान पाती आ रही है। यही नहीं, सन् १९४५ मे मृत्यु के समय तक एडवर्ड एस-इवान्स की गणना अमेरिका के अत्यन्त प्रगतिशील व्यवसायिकों मे की जाती थी। यदि आप कभी

ग्रीनलैंड पर होकर उड़े तो इवान्स विमान स्थल पर उतर सकते हैं। एडवर्ड एस. इवान्स के सम्मान में ही इस विमान स्थल का नामकरण हुआ था।

इवान्स के जीवन की उक्त घटना की उल्लेखनीय बात यह है कि यदि उसे चिन्ता करने की मूर्खता का भान नहीं हुआ होता और आज की परिधि में रहना न आया होता तो उसे अपने जीवन और व्यवसाय में अर्जित सफलताओं से उत्पन्न उल्लास का अनुभव नहीं हुआ होता।

ईसा के पाँच सौ वर्ष पूर्व एक ग्रीक दार्शनिक हेराक्लीटसने अपने छात्रों को बताया था कि "सब कुछ बदलता है, केवल परिवर्तन का नियम नहीं बदलता।" अपने इस कथन को स्पष्ट करते हुए उसने कहा कि, "बहती सरिता के पल पल परिवर्तित जल में एक बार पैर रख कर, उसी जगह दूसरी बार, फिर उसी जल में पैर नहीं रखा जा सकता, क्योंकि तब तक तो वह बहनेवाला जल बह चुका होता है। सरिता का जल पल पल परिवर्तित और प्रवाहित होता रहता है। यही नियम मानव जीवन के साथ भी लागू होता है। जीवन निरन्तर बदलता रहता है इसलिए 'आज ही शाश्वत है। फिर, निरन्तर परिवर्तित, अनिश्चित एवं अनबूझे भविष्य की गुत्थियाँ सुलझाने में आज के सुख को नष्ट क्यों किया जाय?

प्राचीन रोमन लोगों का कथन था कि, "आज को हाथ से न जाने दो, आज का पूर्ण उपभोग करो।"

नोवेल टॉमन का दर्शन भी यही है। हाल ही में उनके खेतों पर उनके साथ मैंने एक सप्ताह विताया था। वहाँ उनके ब्रोडकास्टिंग स्टुडियो की दीवारों पर जहाँ प्रायः उनकी नजर पड़ती रहती थी, उन्होंने ये शब्द लिख रक्खे थे।—'यह आज ईश्वरीय त्रुटि है। हम इसे भोगेंगे और इसमें प्रसन्न रहेंगे।

जॉन रस्किन अपनी डेस्कपर साधारण पत्थर का एक टुकड़ा रखते थे जिस पर 'आज' शब्द अंकित था। यद्यपि मेरी डेस्क पर उस तरह का कोई पत्थर नहीं है तथापि अपने दर्पण पर जिसमें मैं रोज सवेरे दाढ़ी बनाते समय अपनी छवि देखता हूँ, मैं ने भारत के प्रसिद्ध नाटककार कालिदास की कविता लगा रखी है। सर ऑसलर भी इसी कविता को अपनी डेस्क पर रखते थे—

उषा अभिनन्दन

'आज' का स्वागत करो!
यही जीवन है। जीवन का सार है।
मानव अस्तित्व की सभी विविधताएँ,
वास्तविकताएँ, इसीमें निहित है।
इसमें विकास का वरदान है,
कर्म का माहात्म्य है और
सिद्धि का वैभव है

भूत सपना है और भविष्य कल्पना।
सुखद वर्तमान से ही भूतके सुखद् स्वप्न की सृष्टि होती है।
और आनेवाला कल आशामय बन जाता है।

इसलिए आज का प्रेम से स्वागत करो। यही उषा के प्रति हमारा अभिनन्दन है।

चिन्ता के विषय में जानने योग्य सबसे पहली बात यह है कि यदि आप इसे अपने जीवन से परे रखना चाहते हैं तो वही कीजिए जैसा सर विलियम ऑसरल ने किया था—

भूत और भविष्य को लोह-कपाटों में जड़ दीजिए और आज की परिधि में रहिए। आप मन ही मन निम्नलिखित प्रश्न कीजिए और उनके उत्तर लिख डालिये।

प्र० १ क्या मैं भविष्य की चिन्ता में या अन्तरिक्ष के कल्पित नन्दनवनकी लालसा में वस्तुस्थिति से पलायन तो नहीं करता ?

प्र० २ बीती हुई बातों पर दुखी होकर क्या मैं अपने वर्तमान को कटु तो नहीं बना लेता ?

प्र० ३ क्या मैं रोज सवेरे दिन को सार्थक बनाने तथा उसका पूर्ण दोहन करने के निश्चय के साथ जागता हूँ ?

प्र० ४ क्या आज की परिधि में रहकर मैं जीवन से कुछ अधिक पा सकता हूँ ?

प्र० ५ इस कार्य का आरम्भ कब करूँगा ? अगले सप्ताह ?...कल ?. आज ?

२ : चिन्ताजनक परिस्थितियों को सुलझाने की चमत्कारी विधि

चिन्ताजनक परिस्थितियों से पार पाने के लिए क्या आप शीघ्र कारगर और अचूक नुस्खा जानना चाहेंगे ! तथा इस पुस्तक को और आगे पढे बिना ही क्या आप उसका प्रयोग करना चाहेंगे ? तो लीजिए मैं आपको न्यूयॉक अन्तर्गत सिरेक्स के ससार प्रसिद्ध केरियर कोर्पोरेशन के प्रधान तथा वायुनुकूलित (एअरकण्डीशनिंग) उद्योग के जन्मदाता प्रतिभासम्पन्न इजीनियर श्री. विलियम एच. केरियर द्वारा प्रयुक्त उपाय के बारे में बताऊँगा। यह उपाय चिन्ता दूर करने वाले अबतक के ज्ञात सभी उपायो मे श्रेष्ठ है। स्वयं मि. केरियर ने न्यूयार्क इजीनियर क्लब मे आयोजित सह भोज के समय इस विषय में बताया था।

मि. केरियन ने बताया कि, "मै अपनी युवावस्था मे न्यूयॉर्क की बफेलो फॉर्ज कम्पनी मे काम करता था। मुझे मिसोरी के क्रिस्टल शहर मे 'पिट्स बर्ग प्लेट ग्लास कम्पनी के प्लाट मे गैस शुद्ध करने का कोई यत्र बनाने का काम सौंपा गया था। यह प्लाट लाखों की लागत का था। गैस की अशुद्धियों को मिटाना ही इस प्रतिष्ठान का उद्देश्य था ताकि एञ्जिन को हानि पहुँचाए बिना ही उसमें गेस को जलाया जा सके। गैस शुद्ध करने की यह विधि नवीन थी। इसके पूर्व केवल एक बार ही इसका प्रयोग किया गया था, किन्तु भिन्न परिस्थितियो मे। मिसोरी के क्रिस्टल नगर मे मेरे इस काम मे अप्रत्याशित कठिनाइयाँ उठ खड़ी हुई। किसी हद तक तो यह काम ठीक रहा किन्तु पूर्णतया सन्तोषजनक नहीं।

"अपनी इस असफलता से मे सन्न रह गया मानो किसीने सिर पर हथौडा दे मारा हो। मेरे पेट में ऐंठन होने लगी। कुछ दिनों तक तो मैं इतना चिंतित रहा कि सो भी न सका।

अन्तत' विवेक जगा। सोचा कि चिन्ता से कोई हल नहीं निकलेगा। अत' मैंने चिन्ता छोड अपनी समस्या सुलझाने का उपाय ढूँढ निकाला और उसका बडा अद्भुत परिणाम निकला। गत तीस वर्षो से मे इसी चिन्ता-निरोधक नुस्खे का प्रयोग करता आया हूँ। ये नुस्खा सामान्य है, और कोई भी इसका उपयोग कर सकता है। इसकी तीन अवस्थाएँ हैं।

पहली अवस्था – इस अवस्था में मैने अपनी परिस्थितिका निर्भयता और ईमानदारी से विश्लेषण किया और इस निर्णय पर पहुँचा कि असफलता के कारण कौनसा अनिष्ट सभव है। यह तो स्पष्ट ही था कि इस समस्या के कारण न तो मुझे जेल ही होने को थी और न ही कोई मुझे, गोली मारने वाला था। यह सच है कि मै अपदस्थ हो जाता और साथ ही मेरे मालिकों को इस असफलता के कारण मशिनरी हटाने में, उसमें लगाए गये बीस हजार डॉलर का घाटा उठाना पड़ता।

दूसरी अवस्था – अनिष्ट क्या हो सकता है, यह जान लेने के पश्चात् मैंने उस अनिष्ट को आवश्यकतानुसार स्वीकार करने का दृष्टिकोण अपनाया। मैंने

अपनेआप से कहा—"इस असफलता से मेरी पूर्वअर्जित प्रतिष्ठा को धक्का लगेगा और सम्भवतः मुझे नौकरी से हाथ धोने पड़े। अगर ऐसा हो भी तो मुझे अन्य जगह भी तो मिल सकती है। परिस्थिति जटिलतम भी हो सकती है। जहाँ तक मेरे मालिकों का प्रश्न है उन्हें यह भलीभाँति ज्ञात है कि हम गैस शुद्ध करने की नवीन पद्धति पर प्रयोग कर रहे हैं और इसलिए उन्हे बीस हजार डॉलर का मूल्य चुकाना भी पड़े तो वे उसे चुका सकते हैं। वे इस धन राशि को अन्वेषण के नाम पर व्यय कर सकते हैं क्योंकि आखिर यह एक प्रयोग ही तो है।

सम्भावित अनिष्ट को जान लेने के पश्चात् उसे आवश्यकतानुसार स्वीकार करने का दृष्टिकोण अपनाने के फल स्वरूप एक अत्यन्त महत्वपूर्ण परिवर्तन यह हुआ कि मैंने तुरन्त ही हल्कापन तथा एक प्रकार की शान्ति का अनुभव किया जो उधर कई दिनों से नहीं कर पाया था।

तीसरी अवस्था—और तब मैंने शान्त भाव से अपने समय और शक्तिको मन में स्वीकृत अनिष्ट को सुधारने में लगा दिया।

"अब मैंने उस उपायों पर विचार करने का प्रयास किया जिसके द्वारा बीस हजार डॉलर की सम्भावित हानि में कुछ कमी की जा सके।

मैंने कई परीक्षण किये। अन्ततः इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि यदि हम अतिरिक्त औजारों के लिए पाच हजार रुपये और व्यय कर दें तो हमारी समस्याका हल निकल आए। हमने यही किया और इससे फर्म को बीस हजार की हानि की बजाय पन्द्रह हजार का लाभ हुआ।

"यदि मै चिन्ता ही में उलझा रहता तो इतना सब कभी नहीं कर पाता क्यों कि चिन्ता एकाग्रताका ह्रास कर देती है। जब हम चिंतित रहते हैं तो हमारे विचार सर्वत्र भटकते रहते हैं और हम निर्णय करने की शक्ति से हाथ धो बैठते हैं। जो भी हो, जब हम अपने आपको अनिष्ट स्वीकार करने के लिए विवश कर लेते हैं तब हम उन सारी उटपटाग और बेतुकी कल्पनाओं को दूर कर ऐसी स्थिति पैदा कर लेते हैं जिसमे रहकर अपनी समस्याओं पर पूरी तरह अपना ध्यान केन्द्रित कर सकें।

उपर्युक्त घटना कई वर्ष पूर्व घटी थी। पर अनिष्ट स्वीकार करने की यह युक्ति इतनी कारगर हुई कि तबसे बराबर मैं इसको क्रियान्वित करता आ रहा हूँ और परिणाम स्वरूप जीवन में सर्वथा चिन्ता मुक्त हो गया हूँ।

अब प्रश्न यह है कि विलियम एच. केरियरका यह सूत्र मनोवैज्ञानिक दृष्टि से इतना मूल्यवान और व्यावहारिक क्यों है। इसका कारण यह है कि जब हम चिंता-वश विवेकहीन होकर उलझनो के घने कुहरे में घबराने लगते हैं तब यह सूत्र एक तीव्र झटके के साथ हमें उस कुहरे से बाहर निकाल लाता है। यह हमारे कदमो को दृढता से धरती पर जमा देता है और हमें स्थिति का भान हो आता है। यदि हमारे कदमों के नीचे ठोस धरती न हो तो हम किसी सफलता की आशा कर ही कैसे सकते हैं।

व्यावहारिक मनोविज्ञान के जन्म दाता प्रोफेसर विलियम जेम्सका अडतीस वर्ष हुए देहान्त हो गया है किन्तु यदि वे आज जीवित होते और 'अनिष्ट को स्वीकार करो' सूत्र के विषय में सुनते तो अवश्य ही इसका हार्दिक स्वागत करते। मेरी इस धारणा का आधार उन्हीं का कथन है। उन्होंने अपने छात्रों से कहा था कि, "अपनी स्थिति को जैसी है वैसी ही स्वेच्छा से स्वीकार कर लो। क्योंकि होनी को स्वीकार करना दुर्भाग्यके किसी भी परिणाम पर विजय पाने का पहला कदम है।"

लिन युटाग ने अपनी लोकप्रिय पुस्तक The Importance of Living (जीने का महत्व) मे इन्हीं भावो की अभिव्यक्ति की थी। इस चीनी दार्शनिक का विचार था कि अनिष्ट को स्वीकार करने से मन को सच्ची शान्ति प्राप्त होती है। मेरा भी यही मानना है। मानस–विज्ञान के अनुसार इसका आशय नवीन शक्ति का सचरण है। एक बार अनिष्ट को स्वीकार कर लेने पर खोने के लिये अधिक कुछ नहीं रह जाता। इसलिये स्पष्ट है कि इससे हमे लाभ ही लाभ है। विलिस एच. केरियर ने बताया कि, "अनिष्ट को स्वीकार कर लेने के पश्चात् मेरा मन सर्वथा स्वस्थ हो गया और मुझे एक-प्रकारकी शान्ति का अनुभव होने लगा, जो गत कई दिनों से नहीं हुआ था। उसके बाद मैं किसी भी विषय पर मनन–चिन्तन करने योग्य हो गया था। यह बात कितने महत्त्व की है? फिर भी हजारों व्यक्तियो ने अनिष्ट को स्वीकार न कर, उसमे सुधार का प्रयास किये बिना, जो कुछ बच रहा उसे भी ठुकरा कर, इस भीषण उथल-पुथल में, अपने को तोड कर रख दिया। अपने भावि का पुन-र्निर्माण करने के बजाय, वे अनुभव के साथ कटु और भीषण सघर्ष करने मे जुट गये और अन्त मे उदासीनता एव खिन्नता (मेलन कॉलिया) के शिकार बन बैठे। क्या आप यह जानना चाहेंगे कि विलियम एच. केरियर के उस चमत्कारिक सूत्र को किसने अपनाया और किसने उसे अपनी समस्याओं पर लागू किया? तो लीजिये एक उदाहरण देखिये।

न्यूयॉर्क मे तेल का व्यवसाय करनेवाला एक व्यक्ति मेरी कक्षा मे विद्यार्थी था। उस विद्यार्थी ने अपनी कहानी इस प्रकार आरम्भ की—"मैं छला जा रहा था। मुझे विश्वास नहीं हुआ कि ऐसी बातें हम सिनेमा के पर्दे के अतिरिक्त अन्यत्र भी कहीं देख सकते हैं। मैंने उसकी कल्पना तक नहीं की थी। किन्तु सचमुच ही मै छला जा रहा था। यह सब कैसे हुआ सो सुनिये — जिस तेल कम्पनी का मैं अधिकारी था, उसके माल पहुँचाने वाले कई ट्रक और ड्राइवर थे। उन दिनों 'ओण नियमों का बडी दृढता से पालन किया जाता था। और हमारी कम्पनी, ग्राहको को जितनी मात्रा मे तेल सप्लाई करती थी उसका राशन हो गया था और हमे नियमित ग्राहको को तेल की सप्लाई करनी होती थी। हमारे कुछ ड्राइवर हमारे नियमित ग्राहको को तेल की निश्चित मात्रा से कम तेल देते थे और बचा हुआ तेल उनके अपने ग्राहकों को बेचा करते थे। मैं इस बारे मे कुछ नहीं जानता था। 'इस गैर कानूनी

सौदे का सुराख मुझे तब मिला जब एक व्यक्ति सरकारी इन्स्पेक्टर के रूप में आया और उसने मुझ से रिश्वत की माग की। हमारे ड्राइवरों का लिखित प्रमाण उसके पास मौजूद था। उसने मुझे धमकी दी कि मेरे रिश्वत न देने पर वह उन प्रमाणो को जिला एटरनी के कार्यालय मे पेश कर देगा।

यह तो मैं जानता ही था कि कमसे कम व्यक्तिगत रूप से इस विषय मे चिन्तित होने की कोई बात नहीं थी। किन्तु मैं इतना अवश्य जानता था कि फर्म के कर्मचारियों के कार्य के प्रति फर्म ही जिम्मेदार है। इसके अतिरिस्त मुझे यह भी विदित था कि यदि यह मामला अदालत तक गया और उसकी चर्चा अखबारों मे चली तो इस प्रकार के प्रचार से मेरा व्यवसाय नष्ट हो जाएगा। चौबीस वर्ष पूव अपने पिता द्वारा स्थापित इस व्यवसाय पर मुझे बड़ा गर्व था।

इस चिन्ता के कारण मै बीमार पड़ गया और तीन दिन और तीन रात तक सो नहीं सका। इसी उलझन में चक्कर काटता रहा कि पॉच हजार डालर की रिश्वत उस व्यक्ति को दे दूँ या उसे कह दू कि वह जो कुछ करना चाहे करे। इस दुविधा में मै चक्कर काटता रहा पर किसी निर्णय पर न पहुँच सका।

तब रविवार की रात्रि को मैंने डेल कारनेगी की 'चिन्ता छोडो' नामक पुस्तक पढी जो जन-वक्तृता की कक्षाओं में दी गई थी। पढते पढते विलिस एच, केरियर का दृष्टान्त सामने आया। जिसमें लिखा था कि -'अनिष्ट का सामना करो।' मैंने सोचा, घूँस न देने पर यदि वह धूर्त कुछ लिखित प्रमाण जिला एटर्नी को बता दे तो क्या हो?

उत्तर स्पष्ट था—

व्यवसाय की बरबादी: यही एक अनिष्ट था जो हो सकता था। जेल मुझे हो नहीं सकती थी यदि कुछ होता तो यही कि कुप्रचार के कारण मैं बरबाद हो जाता।

तब मैंने मन ही मन सोचा—व्यवसाय ही तो नष्ट होगा, और क्या होगा?

मुझे नौकरी खोजनी होगी? तो क्या हुआ? नौकरी करना कोई बुरी बात तो है नहीं! तैल व्यवसाय सम्बन्धी मेरे अनुभवों के कारण कई कम्पनियॉ मुझे खुशी से अपने यहाँ नोकरी दे देंगी, इस विचार से मुझे राहत मिली। तीन दिन और तीन रात तक जिस उलझन के कुहरे से मैं घिरा रहा वह अब हटने लगा। मेरी उद्विग्नता लुप्त हो गई और आश्चर्य की बात तो यह हुई कि मैं कुछ सोचने विचारने योग्य हो गया।

"अनिष्ट को सुधारो"—इस तीसरी अवस्था का सामना करने के लिए मेरा मस्तिष्क अब पूर्णतया स्वस्थ हो चुका था। इसलिए जैसे ही मैंने समाधान पर विचार किया एक सर्वथा नवीन दृष्टिकोण मुझे मिल गया, वह यह था कि यदि मैं अपने एटर्नी को यह सारा किस्सा कह सुनाऊ तो सम्भव है वह कोई ऐसा रास्ता निकाल सके जो अबतक मेरे दिमाग में न आया हो। यह कहना मूर्खता

होगी कि यह बात पहले मेरे दिमाग में आई ही न थी। आई थी, किन्तु चिन्ताग्रस्त रहने के कारण मैं इसपर विचार नहीं कर पाया था। मैंने उसी समय निश्चय किया कि सवेरे उठने ही पहला काम एटर्नी से मिलने का करूँगा और इस प्रकार चिन्ता से निश्चिन्त होकर सो गया।

अत में क्या हुआ? यह कि मेरे वकील ने मुझे जिला एटर्नी से मिलकर सच बात बता देने की सलाह दी। मैंने ठीक वैसा ही किया जब जिला एटर्नी ने मुझे यह बताया कि यह ठगी का व्यवसाय कई महीनों से चल रहा है और जो व्यक्ति सरकारी एजेन्ट के रूप में मेरे पास आया था वह एक बदमाश था जिसकी पुलिस को तलाश है, तो मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। ठगी का व्यवसाय करने वाले इस बदमाश को पाँच हजार डॉलर देने न देने की इस दुविधा में तीन रात और तीन दिन तक सन्तत रहने के पश्चात यह सब सुनकर मुझे कितनी राहत मिली यह मैं ही जानता हूँ।

इस अनुभव ने मुझे सदा के लिए एक सबक सिखा दिया, क्यों कि अब जब कभी परेशान कर देने वाली कोई विशेष समस्या सिर पर आ पडती है तो मैं विलिस एच. केरियर के सूत्र का सहारा ले लेता हूँ।

जिन दिनों मिसोरी के क्रिस्टल नगर में गैस शोधक यत्र की स्थापना करने के लिए विलिस एच. केरियर परेशान थे उन्ही दिनों मिसोरी अर्न्तगत क्रिस्टल शहर के ब्रोकनबो, नेब्रास्का का एक निवासी अपनी वसीयत लिखने मे लगा हुआ था। वह व्यक्ति था अर्ल पी. हेने। वह छोटी आँत के व्रण से पीडित था। एक प्रसिद्ध व्रण विशेषज्ञ तथा अन्य दो डाक्टरोंने श्री हेने के रोग को असाध्य घोषित कर दिया था। उन्होने, उन्हें, इधर उधर की चीजें खाने की मनाही कर दी थी। साथ ही यह भी कह दिया था उन्हें किसी प्रकार का क्रोध एंव चिन्ता न कर शान्त और स्थिर चित्त रहना चाहिए। उन्होंने, श्री हेने को अपनी वसीयत तैयार कर देने के लिए कह दिया था। इन व्रणों के कारण श्री हेने को पहले ही एक अच्छा, ऊँची आय वाला, पद छोड़ना पडा था। अब वे बेकार थे। अब उन्हें घुला घुला कर प्राण लेने वाली मृत्यु की प्रतीक्षा मात्र थी।

अन्ततः उन्होंने एक विरल और अपूर्व निश्चय किया। उन्होंने सोचा "जब मौत निकट ही है तो समय का पूर्ण दोहन क्यों न किया जाय? मेरी सदा से यह इच्छा रही है कि मरने के पूर्व विश्व पर्यटन कर लूँ। उस इच्छा की पूर्ति का यही समय है।" यह सोचकर उन्होंने टिकिट खरीद लिया।

डॉक्टर सब सन्न रह गये। उन्होंने कहा — "मि. हेने हम आपको आगाह कर देना चाहते हैं कि यदि आपने यह पर्यटन किया तो आपकी कब्र समुद्र में ही बनेगी।

नहीं ऐसा नहीं होगा" – उन्होंने उत्तर दिया। मैंने अपने परिजनों को वचन दिया है कि मेरा दफन वहीं होगा जहाँ मेरे पूर्वज दफनाए गये हैं। मैं एक कास्केट खरीद कर अपने साथ ले लूँगा।

और उन्होंने एक कॉस्केट खरीद कर जहाज पर रखवा दिया तथा स्टीमशिप कम्पनी के साथ यह व्यवस्था कर ली कि यदि उनकी मृत्यु जहाज पर हो जाय तो स्वदेश लौटने तक शव को जहाज पर सुरक्षित रक्खा जाय। इस प्रकार वृद्ध उमरखैय्याम का उत्साह लिए वे यात्रा के लिए रवाना हो गये। उमरखैय्याम ने एक जगह ये भाव व्यक्त किये हैं—

मिट्टी में मिलने के पहले शेष जीवन का पूर्ण भोग कर लो। क्यों कि तुम्हे मिट्टी मे विना सुरा, सगीत, गायक और मुक्ति के पड़े रहना होगा। जो भी हो उन्हें अपनी यात्रा में शराब का अभाव कभी नहीं रहा। उन्होंने बताया " मैं तेज शराब पीता और लम्बे लम्बे सिगार फूकता था। सब प्रकार के व्यजन मैं खाता था। यहाँ तक कि कुछ ऐसे पदार्थ भी जो मुझे मृत्यु के अधिक निकट ले जाने वाले थे। कई वर्षों के बाद मुझे इस बार इतना आनन्द मिला था। हम वर्षा और तूफानों से भी गुजरे। यदि मैं उनसे भयभीत हो जाता तो अवश्य ही मेरी मृत्यु हो जाती किन्तु इस यात्रा ने मुझे खूब आनन्द दिया।

मैं जहाज पर खेलता, गाता, नये नये मित्र बनाता और आधी रात तक जागता रहता। चीन और भारत पहुँचने पर मैंने महसूस किया कि पूर्व की गरीबी और भुखमरी की यातना के मुकाबले में स्वदेश में अपने व्यवसायकी कठिनाइयाँ और चिन्ताएँ नगण्य थी और अपनी कठिनाइयों और चिन्ताओ के बावजूद भी उस तुलना में मुझे अपने जीवन में स्वर्ग-सुख प्राप्त था। मैं अपनी समस्त व्यर्थ चिन्ताएँ छोड़कर स्वस्थ हो गया। अमेरिका पहुँचने तक मेरा वजन नब्बे पौंड बढ़ गया था। मैं सर्वथा भूल चुका था कि मेरे पेट मे भी कभी व्रण (अल्सर) हुआ था। इतना सुखी मैं जीवन में कभी नहीं रहा। स्वदेश लौटते ही मैंने कास्केट (मजूषा) ठेकेदार को वेच दिया और अपने व्यवसाय में जुट गया। तब से आज तक मैं एक दिन भी बीमार नहीं पड़ा।

जिन दिनो की यह घटना हैं, श्री हेने को विलिस एच. केरियर की चिंता निवारक विधि का कोई ज्ञान नहीं था। किन्तु हाल ही में उन्होने मुझे बताया कि " जाने अन जाने मैं उसी सिद्धान्त का, अपने ढ़ग से, उपयोग कर रहा था। मैंने, मृत्यु के रूप में आए हुए अनिष्ट से समझौता कर लिया था और उसके पश्चात जीवन के शेष समय का आनन्द के साथ उपभोग कर अनिष्ट को सुधार लिया।' उन्होंने आगे बताया कि —"यदि मैं जहाज पर चिन्ता ग्रस्त रहता तो निश्चयही मेरी वापसी शव यात्रा के रूप मे होती। किन्तु मैंने निश्चिन्त हो सारी चिन्ता भुला दी। इस मानसिक स्थिरता से मुझ में एक नवीन शक्ति की उद्भावना हुई जिसने वस्तुतः मेरे जीवन की रक्षा की (आज कल श्री. हेने विनचेस्टर मास के वेजमेयर एवेन्यु मे रहते हैं)

अब, यदि, विलिस एच. केरियर, इस चमत्कारी सूत्र के द्वारा बीस हजार की लागत का कॉनट्रैक्ट (बन्धक) बचा सकते हैं, यदि न्यूयॉर्क का व्यापारी धोखे

के चँगुल से बच सकता है और यदि अर्ल पी. हेने अपनी जीवनरक्षा कर सकते हैं तो क्या इसके द्वारा आपकी समस्याओं का समाधान सम्भव नहीं? क्या यह सम्भव नहीं कि जिन उलझनों को आप अब तक समाधान के परे समझ बैठे हैं, । वे इस सूत्र से सुलझ जाएँ? इस लिए एक दूसरा नियम यह है कि यदि आपके सामने चिन्ताजनक समस्याएँ हैं तो तीन अवस्थावाले विलिस एच. केरियर के इस सूत्र का प्रयोग कीजिए—

१. अपने आपसे पूछिए कि सम्भावित अनिष्ट क्या हो सकता है?

२. यदि अन्य कोई उपाय न हो तो उसे स्वीकार कर लीजिए।

३. धैर्यपूर्वक उस अनिष्ट को सुधारने के लिए बढ़े चलिये।

३ : चिन्ता आपके साथ क्या कर सकती है

जो व्यवसायी चिन्ता से लड़ना नहीं जानते उन्हें अकाल मृत्यु का ग्रास बनना पड़ता है।

डॉ. एलेग्जी केरेल

कुछ दिन हुए सन्ध्या समय एक पड़ोसी ने मेरा दरवाजा खटखटाया और मेरे परिवार के सब लोगों को चेचक का टीका लगाने का आग्रह किया। वह व्यक्ति उन कई हजार स्वयसेवको में से था जो न्यूयॉर्क के घरों के दरवाजे खटखटाते फिर रहे थे। भयग्रस्त व्यक्ति घण्टों टीका लगवाने के लिये पक्ति बद्ध खड़े रहते थे। अस्पतालों में ही नहीं अपितु भट्टी खानों, पुलिस कम्पाउन्ड और बड़े बड़े औद्योगिक अहातों में टीका केन्द्र खोले गये थे। दिन-रात दो हजार से भी अधिक डॉक्टर नर्से उत्तेजना पूर्वक लोगों के टीका लगाने में जुटे हुए थे। और आप जानते हैं इस सरगर्मी का मूल कारण क्या था? वह यह कि अस्सी लाख की जनसख्या वाले न्यूयॉर्क शहर में आठ व्यक्तियों को चेचक निकल आयी थी और उनमें से दो की मृत्यु हो गई थी।

मैं गत सैंतीस वर्षों से न्यूयॉर्क शहर में रह रहा हूँ, किन्तु मनोवेगजन्य चिन्ता रोग से सावधान करने के लिये किसीने भी अब तक मेरा दरवाजा नहीं खटखटाया। यद्यपि इन वर्षों में जितनी जनहानि चेचक से हुई है उससे दस हजार गुनी अधिक जनहानि चिन्ता रोग के कारण हो चुकी है।

पर किसी भी स्वयसेवक ने आकर मुझे सावधान नहीं किया कि दस में से एक अमरीकन को स्नायु-विघटन का शिकार होना पड़ेगा और उनमें से अधिकाश के रोगों का कारण मानसिक होगा। इसलिये आज मैं यह परिच्छेद लिख कर आपको सावधान कर रहा हूँ।

चिकित्सा विज्ञान के महान नोबल पुरस्कार विजेता डाक्टर एलेग्जी केरेल के अनुसार जो व्यवसायी चिन्ता से लड़ना नहीं जानते, उन्हें अकाल मृत्यु का ग्रास बनना पड़ता है, यही हाल गृहिणियों, बड़े बडे डाक्टरों और मजदूरों का है।

कुछ वर्ष पूर्व सान्टा फे रेलवे के एक चिकित्सा प्रशासक डॉक्टर ओ. एफ. गोबर के साथ टेक्सस और न्यू मेक्सिको का मोटर में पर्यटन कर मैंने अपनी छुट्टियाँ बिताई थीं। उनका पद वस्तुतः कोलराडो और सान्टा फे हॉस्पिटल एसोसिएशन के मुख्य चिकित्सक का था। चिन्ता के प्रभाव की बात चल पड़ी थी। उन्होंने कहा–

"यदि रोगियों को चिन्ता और भय से पिण्ड छुडाना आता तो जितने रोगी डाक्टरों के पास आते हैं उनमें से सत्तर प्रतिशत, अपनी व्याधियों का उपचार स्वय कर लेते। मैं उनकी व्याधियों को काल्पनिक नहीं कहता वे वास्तविक ही होती हैं। यहाँ तक कि कभी कभी तो उनका कष्ट उनके लिये असह्य भी हो उठता है ये चिन्ता से उद्भुत व्याधियाँ स्नायुजन्य अजीर्ण, उदरव्रण, हृदय रोग, अनिद्रा, सिरदर्द और लकवा आदि हैं।

"ये व्याधियाँ वास्तविक हैं," डॉक्टर गोबर ने कहा। "मैं इनके बारे में इतनी अच्छी तरह से इसलिये जानता हूँ कि मैं स्वयं बारह वर्ष तक उदरव्रण से पीड़ित रह चुका हूँ।"

"भय से चिन्ता होती है और चिन्ता आपको उद्विग्न और हताश बना देती है। यह आपके पेट की नसों को प्रभावित करती है। पेट के अन्दर के वात पदार्थों (गस्ट्रीक ज्यूसेज) को विषम कर देती है। फलस्वरूप उदरव्रण की उत्पति हो जाती है।"

डॉक्टर जॉजेफ एफ. मोण्टेग्यु जो कि 'नर्वस स्टमक ट्रबल' नामक पुस्तक के लेखक हैं, यही कहते हैं कि उदरव्रण का कारण आपका खाद्य नहीं अपितु वह चिन्ता है, जो आपको खाये जाती है।

मेयो क्लिनिक के डॉक्टर— डब्ल्यु. सी. अल्वारिस का मत है कि उदरव्रण मनोवेगों के उतार-चढाव के साथ घटते-बढते रहते हैं।

इस कथन का आधार मेयो क्लिनिक के उदर रोग से पीड़ित पन्द्रह हजार रोगियों का परीक्षण है। इनमें से अस्सी प्रतिशत रोगियों की व्याधियों का आधार शारीरिक बिल्कुल नहीं था। भय, चिन्ता, घृणा, स्वार्थपरता और दुनिया की वास्तविकता के अनुकूल अपने को न ढाल सकने की अयोग्यता ही उन व्याधियों की मुख्य कारण थी। उदरव्रण (अल्सर) आप का विनाश कर सकते हैं। 'लाइफ' पत्रिका के अनुसार तो घातक व्याधियों में उदरव्रण का स्थान दसवाँ होगया है।

हाल ही में मेयो क्लिनिक के डॉक्टर हेरोल्ड सी. हेबेन के साथ मेरा पत्र-व्यवहार हुआ था। अमेरिका के औद्योगिक क्षेत्रों के डाक्टरों के एसोसियेशन के वार्षिक अधिवेशन में भाषण करते हुए उन्होंने बताया कि ४४ ३ की औसत आयु वाले १७६ व्यावसायिक प्रबन्धकों की स्थिति का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि उन प्रशासकों में से एक तिहाई से भी कुछ अधिक तनाव पूर्ण जीवन सम्बन्धी तीन रोगों में से किसी एक से पीड़ित थे। ये रोग हैं, हृदय-रोग, आतव्रण, और रक्तचाप। जरा सोचिये, हमारे एक तिहाई व्यावसायिक प्रबन्धक पैंतालीस वर्ष की आयु तक पहुचने के पूर्व ही हृदय-रोग, रक्तचाप अथवा अलसर के कारण अपने शरीर का नाश कर बैठते हैं, कितनी महगी पडती है उनको अपनी यह सफलता! इनात होने पर भी वे सफलता को खरीद नहीं पाते। हृदय-रोग और उदर-व्रण के बदले व्यावसायिक उन्नति प्राप्त करने वाला व्यक्ति भी कभी सफल हो सका है? अपने स्वास्थ्य को खोकर यदि विश्व का समस्त वैभव भी पाया तो क्या पाया? और यदि विश्व-वैभव प्राप्त हो भी जाए, तब भी कोई व्यक्ति न तो भूख से अधिक खा सका है और न एक बार में एक से अधिक बिस्तर पर सो ही सका है। फिर इतना तो एक मजदूर को भी नसीब हो सकता है। कदाचित् एक उच्च प्रबन्धक की बनिस्पत वह अधिक गहरी नींद सो लेता है और अपने भोजन का अधिक

आनन्द ले लेता है। इससे स्पष्ट है कि मैं अेलबामा में एक साझेदार किसान बनना पसन्द करूगा ताकि खेतों में बेन्जो बजाऊँ और मस्त रहूँ। बनिस्पत इसके कि रेल रोड या सिगरेट कम्पनी का प्रबन्धक बनूँ और पैतालीस वर्ष पार करने के पहले ही अपना स्वास्थ्य बरबाद कर लू।

सिगरेट के इस प्रसग मे एक सिगरेट बनाने वाले की कहानी सुनिये—केनाड़ा के वन प्रान्तर में विश्राम करते हुए एक विश्व-विख्यात सिगरेट निर्माता की हालही में हृदय गति रुक जाने से मृत्यु हो गई है। उसने लाखो डालर की सम्पति जमा की और अन्तमें ६१ वर्ष की अवस्थामें स्वर्ग सिधार गया। जीवन में कई वर्षों तक वह व्यावसायिक सफलता प्राप्त करने के लिये जूझता रहा। मेरे विचार से तो लाखो की सम्पत्ति इकट्ठी करनेवाले इस सिगरेट निर्माता की सफलता मेरे पिताजी द्वारा अर्जित सफलता की आधी भी नहीं है। वे मिसौरी में किसान का जीवन विताते थे। नवासी वर्ष की अवस्था में उनकी मृत्यु हुई और उस समय भी वे निर्धन ही थे।

प्रसिद्ध मेयो बन्धुओं ने घोषणा की थी कि एक अस्पताल में आधे से अधिक रोगी स्नायु-रोग से पीड़ित थे। मृत्यु के उपरान्त चीर फाड द्वारा जब उनकी शिराओं की सूक्ष्म जॉच की गयी तब पता चला कि उनकी शिराएँ उतनी ही स्वस्थ थी जितनी स्वस्थ जैक डेम्सी की हैं। अतः इन स्नायु रोगों का हेतु शिराओं का ह्रास न होकर निस्सारता, निष्फलता, व्याकुलता, चिन्ता, भय, पराजय और नैराश्य आदि के मनो विकार हैं। प्लेटो कहा करता था कि-" चिकित्सक सब से बडी भूल यह करते हैं कि वे मस्तिष्क का उपचार न करके केवल शरीर का ही उपचार करने में प्रयत्न शील रहते हैं, जब कि शरीर और मस्तिष्क परस्पर जुडे हुए हैं और उनका एक दूसरे से पृथक उपचार नहीं किया जाना चाहिये।

इस महान सत्य का ज्ञान प्राप्त करने में चिकित्सा विज्ञान को तेईस सौ वर्ष लग गये आज कल हम 'साइको सोमेटिक' नामक एक विशेष प्रकार की चिकित्सा पद्धति का विकास कर रहे हैं। इस नवीन पद्धति के अनुसार रोगी का शारीरिक ही नहीं मानसिक उपचार भी किया जाता है और यही उपयुक्त समय भी है कि हम इस नवीन दिशा की ओर अग्रसर हों, क्यों कि चेचक, हैजा, पीला बुखार आदि अनेक कीटाणु-जन्य व्याधियों का, जिन्होंने लाखों मनुष्यों को अकाल मृत्यु का ग्रास ग्रास बना दिया है बहुत कुछ उन्मूलन कर दिया गया है, किन्तु चिन्ता, भय, घृणा निष्फलता और नैराश्य आदि मनोविकारजन्य शारीरिक और मानसिक रोगों का उपचार करने मे चिकित्सा विज्ञान अब तक असमर्थ रहा है। इन मनोविकारों से उत्पन्न व्याधियों से मरने वालों की सख्या अत्यन्त शोचनीय गति से बढ़ती जा रही है।

डॉक्टरों का कहना है कि भविष्य में अमरिकी जनसंख्या के पॉच प्रतिशत व्यक्तियों को अपने जीवन का कुछ भाग उन चिकित्सा-सस्थाओं में बिताना होगा जो मानसिक व्याधियों से पीड़ित व्यक्तियों के लिये हैं। गत द्वितीय महायुद्ध के दिनों मे

भर्ती के लिये बुलाए गये लगभग सोलह-सत्रह प्रतिशत युवकों को केवल उनकी मानसिक अस्वस्थता के कारण ही अस्वीकार कर देना पड़ा।

आखिर इस विक्षिप्तता का कारण क्या है? इसका ठीक ठीक उत्तर अब तक किसी के पास नहीं है। किन्तु अधिकतर अनेक रोगियों की व्याधियों के मूल में भय, चिन्ता आदि मनोविकार ही रहते हैं। 'चिन्तित और दुखी व्यक्ति संसार की कठोर वास्तविकता के अनुरूप ढल नहीं पाता तो वह अपने आसपास के वातावरण से सम्बन्ध विच्छेद कर अपने ही काल्पनिक संसार में पलायन कर जाता है।

इस समय मेरे सामने डाक्टर एडवर्ड पोडोल्सकी की लिखी 'स्टोप वरी एण्ड गेट वेल' नामक पुस्तक रक्खी हुई है। इस पुस्तक के कुछ मुख्य परिच्छेदों के शीर्षक ये हैं—चिन्ता का हृदय पर क्या प्रभाव पड़ता है?

चिन्ता ही से रक्तचाप बढ़ता है।

गठिया रोग का कारण चिन्ता ही है।

पेट को स्वस्थ रखने के लिये चिन्ता कम करो।

चिन्ता जुकाम का कारण कैसे है?

चिन्ता और थायरोइड (Thyroid)

चिन्ता-जन्य मधुमेह।

चिन्ता सम्बन्धी पहलुओं पर प्रकाश डालनेवाली एक दूसरी पुस्तक है, 'मैन अगेन्स्ट हिम सेल्फ' इसके लेखक मानस-विज्ञान-विशेषज्ञ मेयो बन्धुओं में से एक डॉक्टर कार्ल मेनिन्जर हैं। अपनी इस पुस्तक में उन्होंने एक अत्यन्त आश्चर्य-जनक रहस्य का उद्घाटन किया है—उन्होंने बताया है कि किस प्रकार विनाशकारी मनोवेगों को अपने पर हावी होने देकर हम अपना अनिष्ट कर बैठते हैं। यदि आप अपने ही विरुद्ध काम करना नहीं चाहते हैं तो यह पुस्तक खरीद कर पढ़िये और अपने मित्रों को भी दीजिये। चार डालर का यह खर्च अब तक आप द्वारा किये गये खर्च में सबसे उत्तम रहेगा।

चिन्ता एकदम स्वस्थ व्यक्ति को भी रोगी बना सकती है। जनरल ग्राण्ट को इस बात का पता अमरीकी गृह-युद्ध के आखिरी दिनों में इस प्रकार लगा—ग्राण्ट नौ महीनों से रिचमॉण्ड का घेरा डाले पड़ा था। जनरल ली के थके-माँदे सैनिक मुँहकी खा चुके थे। सारी की सारी रेजीमेण्टें पलायन कर रही थीं। कुछ लोग अपने खेमों में भयभीत होकर रोने चिल्लाते प्रार्थनाएँ कर रहे थे। भयानक दुःस्वप्न उन्हें घेरे हुए था। अपने अन्त को एकाएक इतना निकट देखकर ली के सैनिकोंने रिचमॉण्ड के कपास और तम्बाकू के गोदामों में आग लगा दी। गोला बारूद में भी आग लगा दी। एक ओर ऊँची लपटें उठ रही थीं और दूसरी ओर रात के अँधेरे में सैनिक भाग रहे थे। इधर, शेरीडेन की युद्धसेना रेल की पटरियाँ उखाड़ती और रसद की

गाड़ियों को लूटती हुई आगे बढ रही थी। उधर जनरल ग्राण्ट कोन्फेडरेट्स को सब तरफ से घेर कर उनका तीव्र गति से पीछा कर रहा था।

किन्तु असह्य सिरदर्द से त्रस्त ग्राण्ट अपनी सेना से पिछड़ गया। उसे खेत पर बने एक मकान पर ठहर जाना पड़ा। उस घटना का उल्लेख करते हुए उसने अपनी डायरी में लिखा है कि — "मैं सारी रात अपने पैरों को गरम पानी और सरसों के तेल से धोता रहा, कलाइयों और गर्दन के पिछले भाग पर सरसों के तेल का लेप करता रहा। मुझे आशा थी कि सवेरा होते होते मै अवश्य स्वस्थ हो जाऊँगा।"

यद्यपि सवेरा होते ही वह स्वस्थ हो गया किन्तु इसका कारण सरसों का लेपन नहीं था। इसका कारण था जनरल ली का वह सदेश जो एक घुड़सवार द्वारा लाया गया था और जिसमें उसने आत्म समर्पण का सन्देश भेजा था।

उसने अपनी डायरी में आगे यह भी लिखा है — "जिस समय वह सैनिक, आत्म – समर्पण का सदेश लेकर पहुँचा मेरे सिर में पीड़ा ज्यों की त्यों थी, किन्तु सदेश पढ़ते ही वह लुप्त हो गई।"

इससे स्पष्ट है कि चिन्ता, उद्वेग और मनोवेगों ने ही ग्राण्ट को बीमार कर दिया था, किन्तु जैसे ही विजय विश्वास और सफलता के भाव उसमें उत्पन्न हुए, वह स्वस्थ हो उठा।

उस घटना के सत्तर वर्ष बाद रुजवेल्ट मन्त्री मंडल के वित्त विभाग के उप सचिव हैन्री मोरगेन थाओ को भी लगा कि उसके बीमार रहने और चक्कर महसूस करने का कारण चिन्ता ही है। उसने अपनी डायरी में लिखा है — "प्रेसिडेण्ट गेहूँ के दाम बढ़ाना चाहते थे अतः उन्होंने ४४ लाख बूशल गेहूँ एक ही दिन मे खरीद लिए। इसकी मुझे बड़ी चिन्ता हुई। जिस समय खरीदकी यह कार्यवाही हो रही थी मुझे सचमुच चक्कर आ गये। मैं घर चला गया और भोजन के उपरान्त दो घटे तक सोता रहा।"

यदि मैं यह देखना चाहूँ कि चिन्ता मनुष्यों की कैसी दशा कर सकती है, तो मुझे किसी पुस्तकालय में या किसी डॉक्टर के पास जाने की आवश्यकता नहीं रहती। जिस कमरे में बैठ कर मै यह पुस्तक लिख रहा हूँ, उसकी खिड़की से एक मकान दिखाई देता है, जिसमें चिन्ता के कारण स्नायु विघटन की घटना हो चुकी है। उसीके पास एक दूसरे मकान में चिन्ता के कारण एक अन्य व्यक्ति मधुमेह का शिकार बन चुका है। शेयर बाजार में मन्दी आने पर उसके रक्त और मूत्र मे मधु की मात्रा बढ जाती है।

जब प्रसिद्ध दार्शनिक मोन्टाइन अपने नगर बोर्दो का मेयर चुना गया तो उसने नागरिक बन्धुओं से स्पष्ट कह दिया था कि मै आपका यह काम करूँगा पर इसकी

परेशानी सर पर नहीं लूँगा। मैं यह कार्यभार अपने सर पर लेने को तैयार हूँ किन्तु अपने स्वास्थ्य की कीमत पर नहीं।

जिस पड़ोसी के बारे में मैं ऊपर बता चुका हूँ। उसने शेयर बाजार के कारोबार को मधुमेह-रोग के रूप में अपने रक्त में समा लिया और अपने को प्राय: नष्ट कर दिया।

चिन्ता के कारण आप को गठिया एवं आर्थराइटिस जैसे रोग हो सकते हैं, और चलने फिरने के लिए आप पहियोंवाली गाड़ी का सहारा लेने के लिये विवश हो सकते हैं। कोर्नेल विश्वविद्यालय के मेडिकल स्कूल का डॉक्टर रसेल एल. सेसिल आर्थराइटिस रोग का संसार प्रसिद्ध विशेषज्ञ है और उसने आर्थराइटिस के चार मुख्य कारण बताये हैं —

१. नौ सेना के जहाज का विध्वंस
२. आर्थिक विनाश और संकट
३. एकाकीपन और चिन्ता
४. पुरानी नाराजगी

यह तो स्वाभाविक ही है कि केवल यह चार संवेगजन्य परिस्थितियाँही आर्थराइटिस की हेतु नहीं बन सकतीं। क्योंकि यह रोग उसके विभिन्न कारणों के अनुसार कई प्रकार का होता है। सामान्यत: ये चार कारण, जिन्हें डॉक्टर रसेल एल. सेसिल ने बताये है, इस रोग को फैलाने में जिम्मेदार होते हैं। उदाहरणार्थ— मंदी के दिनों में मेरे एक मित्र को जबरदस्त आर्थिक हानि उठानी पड़ी थी, इतनी कि वह कौड़ी-कौड़ी का मोहताज हो गया। गैस कम्पनी ने गैस देना बंद कर दिया और बैंक ने मकान पर अधिकार कर लिया। इन सब चिन्ताओं के कारण उसको आर्थराइटिस की बीमारी हो गयी। उपचार एवं पथ्य के बावजूद भी बीमारी ठीक नहीं हो सकी; और उसका स्वास्थ्य तभी सुधरा जब उसकी आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ।

चिन्ता के कारण दाँतों तक का ह्रास हो जाता है। एक बार आइ. एल. मेक्गोनिगल ने अमेरिकन डेन्टल-एसोसियेसन के समक्ष भाषण करते हुए बतलाया कि चिन्ता, भय और चिढ़ से उत्पन्न क्लेशप्रद मनोवेग शरीर में केलशियम के संतुलन को नष्ट कर दाँतों का ह्रास कर सकते हैं। अपने एक रोगी का जिक्र करते हुए उन्होंने बताया कि उस रोगी की पत्नी अकस्मात् बीमार हो गयी थी। उस बीमारी के पहले रोगी के दाँत पूर्णतया स्वस्थ थे। किन्तु बाद में, उसकी स्त्रीको तीन सप्ताह तक अस्पताल में रहना पड़ा और उस अवधिमें चिन्ता के कारण उसके दाँतों में नौ दरारें पड़ गयीं।

क्या आपने कभी अत्यन्त चपल और विषम थायरोइड ग्रंथि वाले व्यक्ति देखे हैं? मैंने तो देखे हैं। मैंने उन्हें काँपते और थर्राते देखा

है। वे उन व्यक्तियों के समान दीखते हैं जो मृत्यु से भयभीत हों। जानते हैं, ऐसा क्यों होता है? इसलिये कि हमारे शरीर का सचालन करने वाली थायरोइड ग्रथि अपने स्थान से हट जाती है। इससे हृदय की धड़कन बढ़-जाती है और सारा शरीर भट्टी की तरह जलने लगता है। यदि समय पर ऑपरेशन अथवा उपचार द्वारा रोग पर काबू न पा लिया जाए तो जलन के कारण ही रोगी की मृत्यु हो जाती है।

कुछ ही दिनों की बात है, मैं इस रोग से पीड़ित अपने एक मित्र के साथ फिलेडेल्फिया गया था। हम इस रोग के एक विशेषज्ञ के पास गये जो गत अड़तालीस वर्षों से इसी प्रकार की बीमारियों का उपचार करता आरहा था। क्या आप जानते हैं कि उसने प्रतीक्षालय की दीवाल पर, जहा सभी रोगियों की नजर पड़ती है, क्या सलाह लिख रक्खी थी? वह थी—

विशुद्ध धर्म, निद्रा, सगीत तथा विनोद,
आदि मनोरजक एव सुखदशक्तियॉ हैं।
स्वास्थ्य और सुख की कामना हो तो —
ईश्वर में श्रद्धा रखिये, गहरी नींद सोइये।
मधुर सगीत मे रुचि लीजिये और
जीवन के आनन्दपक्ष का ही विचार कीजिये।

मैंने इन पक्तियों को एक लिफाफे के पीछे लिख लिया। जब हम डॉक्टर के पास गये तो सबसे पहले उसने यह प्रश्न किया कि किन मनोविकारों के कारण आपकी यह दशा हुई है। सबसे पहले उसने उस मनोविकारों के बारे मे पूछा जिसके कारण उसकी ऐसी दशा हुई थी। उसने मेरे मित्र को सावधान करते हुए कहा कि यदि आपने चिन्ता न छोडी तो हृदय रोग, उदर-व्रण, मधुमेह आदि अन्य बीमारियॉ भी आपके शरीर मे पनप जाएँगी। उसने आगे बताया कि ये बीमारियॉ एक दूसरे की चचेरी बहनें हैं और ये सब चिन्ता के कारण होती हैं। मेर्लें ओबेरोन ने मुझे एक भेंट मे बताया —"मै चिन्ता कभी नहीं करती क्यों कि मुझे ज्ञात है कि चिन्ता मेरे सौन्दर्य को, जो कि चित्रपट के लिये एक प्रमुख गुण है नष्ट कर देगी।"

उसने मुझे आगे बताया — "शुरू में जब मैंने चित्र जगत में प्रवेश किया तब मैं बहुत ही चिन्तित और भयभीत रहा करती थी। मैं भारत से आई थी और लन्दन में, जहॉ कि मुझे अपनी जीविका की तलाश थी, मेरा कोई परिचित न था। कुछ निर्माताओं से मैं मिली भी, पर एक ने भी मुझे काम नहीं दिया। जो कुछ रुपया मेरे पास था वह भी समाप्त होने लगा। दो सप्ताह तो मैंने केवल बिस्कुट और पानी के सहारे बिताये। चिन्ता के अतिरिक्त अब भूख भी मुझे सताने लगी। मैने मन ही मन कहा, 'तुम्हारी यह निरी मूर्खता है कि तुम चित्र-जगत में प्रवेश पाने का प्रयत्न कर रही हो। न तो तुम्हारा इस क्षेत्र मे कोई अनुभव है, और न कभी तुमने

अभिनय किया है। केवल एक आकर्षक सौन्दर्य के अतिरिक्त चित्र-जगत के लिये तुम्हारे पास है ही क्या?'

"मैं शीशे के सामने जाकर खडी हो गई। चिन्ता का कुप्रभाव स्पष्ट रूपसे मेरे चेहरे पर दिखाई देने लगा था। उस पर रेखाएँ बन गयी थीं और चिन्ता एव आतुरता के भाव स्पष्ट दीखने लग गये थे। यह देखकर मैंने मन ही मन कहा— 'शीघ्र ही मुझे इस दशा को रोकना होगा, चिन्ता से काम नहीं चलेगा। चित्र-जगत् को देने के लिये मेरे पास आकर्षक सौन्दर्य ही तो है और चिन्ता उसे भी नष्ट कर देगी।'"

चिन्ता ही एक ऐसा कारण है जो स्त्री के सौन्दर्य को इतनी शीघ्रता से नष्ट कर देता है तथा उसे कम उम्रमें ही वृद्ध और क्लान्त बना देता है। चिन्ता चेहरे की सौम्यता को नष्ट कर देती है, जबड़ों को कठोर बना देती है और चेहरे पर झुर्रियाँ डाल देती हैं। इसके कारण बाल सफेद हो जाते हैं और झड़ने लगते हैं, इससे चेहरे का रग बदल जाता है और उसपर अनेक मुँहासे और कीलें निकल आती हैं।

आज अमेरिका में हृदय रोग सबसे घातक रोग है। द्वितीय विश्वयुद्ध के दिनों में तीन लाख से कुछ अधिक सैनिक युद्ध में काम आये थे। उन्हीं दिनों करीब दस लाख व्यक्ति हृदय-रोग से मरे थे और उनके हृदय-रोग का कारण था-चिन्ता एवं तनावपूर्ण जीवन। हृदय रोग जैसी अति व्यापक बिमारियों के कारण ही एलेग्जी केरेल ने कहा था कि, "जो व्यवसायी चिन्ता से लड़ना नहीं जानते उन्हें अकाल मृत्यु का ग्रास बनना पड़ता है।"

दक्षिण में रहनेवाले हब्शी और चीनी लोगों को चिन्ताजन्य हृदय रोग नहीं होता, क्योंकि वे परिस्थितियों को धैर्यपूर्वक स्वीकार करते हैं। हृदय-रोग से मरने वाले कृषि-मजदूरों की सख्या से बीस गुनी अधिक सख्या हृदय-रोग से मरने वाले डॉक्टरों की है। डॉक्टर लोग तनावपूर्ण जीवन बिताते हैं और उसका जुर्माना वे इस तरह अदा करते हैं।

विलियम जेम्स का कथन है कि—"भगवान भले ही पापों को क्षमा कर दें किन्तु स्नायु सस्थान हमें किसी भी भूल के लिये क्षमा नहीं करता।"

मैं आपको एक आश्चर्य जनक बात बताता हूँ, जिस पर शायद आप विश्वास नहीं करेंगे। वह बात यह है कि अमेरिका में प्रतिवर्ष, आत्महत्या करके मरने वाले लोगों की सख्या, पाच प्रमुख सक्रामक रोगों से मरने वाले लोगों की सख्या की अपेक्षा कहीं अधिक है।

इस आत्महत्या का मूल कारण क्या है? केवल चिन्ता।

जब युद्ध के दिनों में क्रूर चीनी शासकों को अपने बन्दियों को कष्ट देना होता तो वे उन्हें उनके हाथ पाँव बाँधकर निरन्तर टपकने वाले पानी के घड़े के नीचे बिठा देते। पानी उनपर रात-दिन टपका करता। आखिर, वे पानी की बूँदे हथौड़े

की तरह उनपर गिरतीं और उन्हें पागल बना देतीं। स्पेन में भी कानूनी जाँच-पड़ताल के समय कष्ट देने का यही ढग अपनाया जाता था। हिटलर भी नजर-बदी शिविरों में ऐसी ही यातना युद्ध-बन्दियों को देता था। चिन्ता भी पानी की उन निरन्तर गिरने वाली बूंदों के समान है। दिमाग में लगातार घूमनेवाली यह चिन्ता मनुष्य को पागलपन और मृत्यु की ओर ढकेल देती है।

जब मैं मिसौरी में एक देहाती युवक था, विली सन्डे नामक एक व्यक्ति, नर्क-यातना का वृत्तान्त सुनाया करता था। उस वृत्तान्त को सुन कर मैं भय से अधमरा हो जाता था। किन्तु विली सन्डे ने कभी चिन्ता ग्रस्त व्यक्तियों द्वारा भोगे गये शारीरिक सन्ताप से उत्पन्न नर्क-यातना का कभी कोई जिक्र नहीं किया। उदाहरणार्थ यदि आप चिन्ता के एक पुराने रोगी हैं तो आप किसी न किसी दिन 'एन्जिमा पेक्टोरीस' नामक अत्यन्त पीड़ा कारक एव असह्य रोग से पीड़ित हो सकते हैं।

भाई, कभी यह रोग आपको लग जाए तो आप यन्त्रणा और पीडा से इतने-चीखने लगेंगे कि 'दँते' के 'इन्फरनो' की चीख भी आप की चीख के मुकाबले में 'बेब्ज इन टॉय लेण्ड' की चीख के समान नगण्य लगेगी, और तब आप मन ही मन कहने लगेंगे कि, "हे भगवान, इस बार यदि पीडा से छुटकारा मिल जाए, तो भविष्य में कभी चिन्ता न करूँगा।" (यदि आप इसे अतिशयोक्ति समझते हैं तो अपने परिवार के किसी चिकित्सक से पूछ देखिये।)

यदि आपको जीवन से अनुराग है और आप उत्तम रूप से स्वस्थ और दीर्घायु होना चाहते हैं तो आप अपनी इच्छा पूर्ति इस प्रकार कर सकते हैं-मैं यहाँ पुनः डॉक्टर एलेग्जी केरेल का हवाला दे रहा हूँ-उनका कथन है — "आधुनिक नगर के शोर-गुल के बीच भी जो व्यक्ति आन्तरिक शान्ति कायम रख सकते हैं उन्हें स्नायु रोग कभी नहीं होते।"

क्या आप आधुनिक नगर के शोर-गुल के बावजूद भी आन्तरिक शान्ति रख सकते हैं? यदि आप सामान्य प्रकृति के व्यक्ति हैं तो अवश्य ही आप ऐसा कर सकेंगे। हम में से अधिकाश अपने अनुमान से भी अधिक शक्तिशाली हैं। हमारे अपने कई आन्तरिक स्रोत हैं जिनका हमने दोहन नहीं किया है। इस विषय में 'थोरो' ने अपनी विख्यात पुस्तक 'वाल्डेन' में कहा है कि अपने सचेष्ट प्रयत्नों द्वारा जीवन को उन्नत बनाने वाली मनुष्य की असदिग्ध क्षमता से बढकर अन्य उत्साह-वर्धक एव प्रेरक शक्ति मैंने नहीं देखी। यदि मनुष्य श्रद्धा के साथ अपनी आकाक्षाओं एव सपनों की दिशामें अग्रसर होता रहे और जिस जीवन की उसने कल्पना की है, उसमें रहने का प्रयास करे तो उसे सामान्य अवधि में ही अप्रत्याशित सफलता प्राप्त हो सकेगी।

यह तो निश्चय ही है कि इस पुस्तक के पाठकों में भी इच्छा शक्ति और आन्तरिक स्रोत उतनी ही मात्रा में विद्यमान हैं जितनी मात्रा में 'ओल्गा' के

'जार्वी' में हैं। 'बोक्स न. ८९२, कर डालिन आइडहो'–इस महिला का पता है। अत्यन्त दुःखद परिस्थितियो तक म उसने चिन्ता को अपने पास फटकने नहीं दिया। मेरा तो यह दृढ विश्वास है कि यदि हम इस पुस्तक मे उल्लखित उन परम्परागत सत्यों का प्रयोग करें तो चिन्ता से मुक्त रह सकते हैं। यहाँ मैं आपके सामने 'ओल्गा' के 'जार्वो' की कहानी प्रस्तुत करता हूँ, जो उसने स्वयम् मुझे भेजी थी। उसने लिखा है —"साढे आठ वर्ष पहले डाक्टरों ने कह दिया था कि मुझे केन्सर हो गया है और इसलिये अब मुझे पीडा और सन्ताप मे ही घुल-घुल कर मरना होगा। देशके अच्छे से अच्छे डॉक्टर, मेयो बन्धुओं ने भी इस बातका अनुमोदन कर दिया था। मृत्यु मुँह खोले मुझे निगलने खडी थी। किन्तु मैं जवान थी, मौत के मुँह में जाना नहीं चाहती थी। अपनी इस निराशावस्था मे मैंने केलोग मे अपने एक डॉक्टर को फोन किया और अपने हृदय के नैराश्य को उसके सामने उडेल दिया। मुझे सयत करते हुए उसने कुछ अधीरता से कहा "क्या बात है ओल्गा ? क्या तुम्हारीं सघर्ष-शक्ति बिल्कुल जाती रही है ? यदि तुम इस प्रकार रोती–झींखती रहीं तो एक दिन अवश्य ही मौतके मुँहमें चली जाओगी। लगता है अनिष्ट तुम पर हावी हो गया है पर कोई बात नहीं। वस्तुस्थिति का सामना करो और चिन्ता छोड़ दो। फिर रोग से छुटकारा पाने का प्रयत्न करो।" मैंने डॉक्टर की सलाह मान ली और दृढ प्रतिज्ञा कर ली कि चाहे मेरे मास में कील ही क्यों न गढ जाए, मेरी हड्डियों मे जाड़ा क्यों न धंस जाए, मैं चिन्ता कभी नहीं करूँगी और न कभी विलाप-सन्ताप करूँगी। मै परिस्थिति पर विजय प्राप्त करूँगी और जिन्दा रहूँगी।"

रोग की बढी हुई अवस्था मे रेडियम का प्रयोग नहीं किया जा सकता, इसलिये सामान्यतः रोगी को प्रतिदिन साढे दस मिनट के हिसाब से तीन दिन तक एक्स-रे उपचार लेना पड़ता है। किन्तु डाक्टरो ने मेरा साढे चौदह मिनट प्रति दिन के हिसाब से उन्चास दिन तक एक्सरे से इलाज किया। यद्यपि मेरे ककाल शरीर की निकली हुई हड्डियाँ, वीरान पर्वतीय प्रान्तर की चट्टानो की तरह लगती थीं तथा मेरे पैरों का वर्ण शीशे के वर्ण के समान होगया था तथापि मैंने किसी प्रकार की चिन्ता नहीं की। एक बार भी मैंने ऑसू नहीं बहाये, बल्कि मै मुस्कराती रही। वस्तुतः मुस्कराने के लिये मैं बलपूर्वक प्रयास करती रही।

"मैं इतनी मूर्ख नहीं थी कि यह सोचने लगती कि मुस्कराहट से केन्सर मिट जाएगा। किन्तु मेरा इतना विश्वास अवश्य है कि प्रसन्न-मानसिक दशा, रोगी के लिए, व्याधि से सघर्ष करने में बहुत सहायक होती है। जो भी हो, मैंने केन्सर के चमत्कारी उपचारो मे से एक का अनुभव प्राप्त कर लिया था। गत कुछ वर्षो मे जितनी मै स्वस्थ रही उतनी पहले कभी नहीं रही; और उसके लिये मैं डॉक्टर मेके फ्रि का आभारी हूँ जिसने इन प्रेरक और उत्साह वर्धक शब्दों द्वारा मेरा उपकार किया। डॉक्टर ने कहा था —'वस्तुस्थिति का साम/. करो, चिन्ता छोड़ दो और रोग से छुटकारा पाने का प्रयत्न करो।'

मैं इस परिच्छेद के शीर्षक को दुहरा कर इसे समाप्त कर रहा हूँ। डॉक्टर एलेग्जी का कथन है —"जो व्यवसायी चिन्ता से लड़ना नहीं जानते उन्हें अकाल मृत्यु का ग्रास बनना पड़ता है।"

पैगम्बर मोहम्मद के धर्मान्ध अनुयायी अक्सर कुरानशरीफ की आयतों को अपने सीने पर गुदवाते थे। मैं भी चाहता हूँ कि यह पुस्तक पढनेवाला प्रत्येक व्यक्ति इस परिच्छेद का यह शीर्षक —"जो व्यवसायी चिन्ता से लडना नहीं जानते उन्हें अकाल मृत्यु का ग्रास बनना पडता है"—अपने सीनेपर गुदवा लें।

कौन जाने, डॉक्टर केरेल ने आप ही के लिये यह सत्र कहा हो!

भाग पहले का संक्षेप

चिन्ता सम्बन्धी जानने योग्य मौलिक तथ्य

नियम १. यदि आप चिन्ता से दूर रहना चाहते हैं तो वही कीजिये जो सर विलियम ऑस्लर ने किया था अर्थात् 'आज की परिधि में रहिये।' भविष्य की चिन्ता मत कीजिये। रोज नई जिन्दगी का श्री गणेश कीजिये।

नियम २. यदि चिन्ता आपको लाचार करदे तो विलियम एच. केरियर के सूत्र का प्रयोग कीजिये।

(क) मन ही मन प्रश्न कीजिये कि समस्या का समाधान न मिलने से क्या अनिष्ट हो सकता है।

(ख) यदि आवश्यक हो तो मन में अनिष्ट को स्वीकार कर लीजिये।

(ग) शान्त चित्त से मन ही मन स्वीकृत उस अनिष्ट को सुधारने का प्रयास कीजिये।

नियम ३. चिन्ता के कारण स्वास्थ्य के रूप में जो भारी मूल्य आप को चुकाना पड़े, उसका खयाल रखिये। "जो व्यवसायी चिन्ता से लड़ना नहीं जानते उन्हें अकाल मृत्यु का ग्रास बनना पड़ता है।'

भाग दो

चिन्ता-विश्लेषण की मूल रीतियाँ

४ : चिन्ताकारक समस्याओं का विश्लेषण एवं समाधान करने की रीति

कौन ? कहाँ ? और कैसे ?
क्या ? क्यों ? और कब ?
छः ये सच्चे साथी मेरे—
मुझे सिखाया सब।

रडयार्ड किपलिंग।

क्या पिछले परिच्छेद में उल्लिखित विलिस. एच. केरियर का विलक्षण सूत्र आप की सभी चिन्ताजन्य समस्याओं का समाधान कर देगा ? नहीं, ऐसी बात बिल्कुल नहीं है।

इसका उत्तर यह है कि, हमें विभिन्न प्रकार की चिन्ताओं से पार पानेके लिये चिन्ता-विश्लेषण की तीन मूल अवस्थाओं को समझ कर अपने आपको तैयार कर लेना चाहिये। और वे मूल्य अवस्थाएँ ये तीन हैं—

(१) तथ्यों का संग्रह कीजिये।

(२) तथ्यों का विश्लेषण कीजिये।

(३) अमुक निर्णय पर पहुँच कर उस दिशा में कार्य कीजिये।

स्पष्ट है, अरस्तु ने भी इनका प्रयोग किया है और इनकी शिक्षा दी है। यदि हमें, तंग करने वाली एवं हमारे जीवन को नर्क बनाने वाली उलझनों से पार पाना है तो उपर्युक्त अवस्थाओं का प्रयोग करना चाहिये।

सबसे पहले हम तथ्यसंग्रहकी पहली अवस्था को लेते हैं। आखिर तथ्यों का संग्रह करना इतना आवश्यक क्यों है ? यह इसलिये कि जब तक सच्चे तथ्य हमारे सामने नहीं आ जाते, तब तक किसी भी समस्या का समाधान बुद्धिमानी से नहीं किया जा सकता। तथ्यों के अभाव में हम उलझकर रह जाते हैं। यह बात मैं अपनी ओर से नहीं कह रहा हूँ। यह बात स्वर्गीय हर्बर्ट. ई. हॉक्स ने कही है। ये महाशय कोलम्बिया विश्वविद्यालय के कोलम्बिया कॉलेज के डीन थे। उन्होंने लगभग बाईस वर्षों तक उस पद पर काम किया था। उन्होंने लगभग बीस लाख विद्यार्थियों की, इनकी चिन्ता जन्य समस्याएँ सुलझाने में सहायता की थी। उन्होंने मुझे बताया कि उलझन चिन्ता का मुख्य कारण है। अपने कथन को स्पष्ट करते हुए उन्होंने बताया — "संसार में आधी चिन्ता तो लोगों को इसलिये

होती है कि वे बिना किसी आधार के निर्णय करने का प्रयास करते हैं। उदाहरणार्थ, उन्होंने बताया — जिस समस्या का सामना मुझे मगल के दिन तीन बजे करना है, उस पर मैं पहले किसी प्रकार का निर्णय नहीं करता। मगल आने तक मै अपने आप को, समस्या विषयक तथ्यों को जुटाने में लगा देता हूँ। मैं उस बारे में चिन्ता कर दुखी नहीं होता और न अपनी नींद ही हराम करता हूँ। केवल तथ्य जुटाने में लग जाता हूँ। तब तक मगलवार भी आ ही जाता है और यदि सभी तथ्य मुझे तब तक मालूम हो जाते हैं तो समस्या अपने आप ही सुलझ जाती है।

मैने डीन हॉक्स से प्रश्न किया था, "क्या आपने चिन्ता से सर्वथा पिंड छुडा लिया है?" "हॉ," उन्होंने उत्तर में कहा। "मैं ईमानदारी से कहता हूँ कि मेरा जीवन अब चिन्ता से सर्वथा मुक्त है। मैंने देखा है कि कोई भी व्यक्ति यदि निष्पक्ष और व्यावहारिक दृष्टि से तथ्य सग्रह करने में लग जाए तो उन तथ्यों की जानकारी मात्र से उस की चिन्ताएँ सामान्यत विलीन हो जाएँ।

इसे एक बार फिर से दुहरा दूँ—"कोई भी व्यक्ति यदि निष्पक्ष और व्यावहारिक दृष्टि से तथ्य सग्रह करने में लग जाए तो इन तथ्यों की जानकारी मात्र से उस की चिन्ताएँ सामान्यतः विलीन हो जाएँ।"

किन्तु, हम में से अधिकाश क्या कभी तथ्यो की परवाह करते है? टॉमस एडिसन ने इस विषय में एक महत्वपूर्ण बात कही है। उसका कहना है कि, "सोचने की झझट से बचने के लिए कोई भी व्यक्ति सरल और चटपट उपाय खोज निकालता है।" और कदाचित् हम तथ्यों की परवाह करते भी हैं तो शिकारी कुत्तो की तरह। हम ऐसे ही तथ्यों के पीछे भागते हैं जिन्हें हमारे मन का समर्थन पहलेही से प्राप्त हो। दूसरे तथ्यों की हम अवगणना कर देते हैं। हम ऐसे ही तथ्य चाहते हैं जो, हमारे व्यवहार एवं कृत्यों का अनुमोदन करें, हमारी इच्छित कल्पना के अनुकूल हों तथा हमारे पूर्व निश्चित विचारों का समर्थन करें।

आन्द्रे मोरिस का कथन है कि "हमें वे ही सभी बातें सत्य प्रतीत होती हैं जो हमारी व्यक्तिगत इच्छाओं के अनुकूल हों पर जो उनके प्रतिकूल हों वे हमें क्रुद्ध कर देती हैं।"

ऐसी दशा में यदि हमें अपनी उलझनों का हल न मिले तो आश्चर्य ही क्या! यदि हम यह मानकर चलें कि दो और दो पॉच होते हैं तो निश्चय ही गणित की एक साधारण समस्या भी हमारे लिए उलझ कर रह जाएगी। इस दुनिया मे ऐसे लोग भी हैं जो दो और दो पॉच या पॉच हजार पर अड़े रहते हैं। और अपना तथा अन्य व्यक्तियों का जीवन नर्क तुल्य बना देते हैं।

तब, क्या करना चाहिए? हमें अपनी भावनाओ को विचारों से अलग रखना चाहिए और डीन हॉक्स के कथनानुसार अपने तथ्यों का आकलन निष्पक्ष और व्यावहारिक रीति से करना चाहिये।

यद्यपि चिन्तित अवस्था में यह करना सहज नहीं है क्यों कि उस दशा में हमारे मनोवेग बडे उग्र रहते हैं। किन्तु दो बातें जरूर ऐसी हैं जो तथ्यों को निष्पक्ष एव व्यवहारिक ढंग से देखने में बडी सहायता करती हैं —

(१) तथ्यो का आकलन करते समय मैं सोच लेता हूँ कि यह काम मैं अपने लिये न करके किसी अन्य व्यक्ति के लिए कर रहा हूँ। इससे मुझे प्रमाण के प्रति निष्पक्ष एव शान्त दृष्टिकोण अपनाने तथा भावना-मुक्त होने में सहायता मिलती है।

(२) परेशान करनेवाली किसी भी समस्या से सबध में तथ्य जुटाते समय मैं सोच लेता हूँ कि मै एक वकील हूँ और विरोधी पक्ष की ओर से पैरवी की तैयारी कर रहा हूँ। मतलब यह कि मैं अपने विरुद्ध सभी तथ्य जुटा लेता हूँ और वे तथ्य ऐसे होते हैं जो मेरी इच्छाओं के लिए घातक होते हैं और जिन्हें मै पसद नहीं करता।

तब मैं अपने तथा विरोधी पक्ष की दलीलों को लिख लेता हूँ और प्राय' सत्य को दोनों पक्षों की परम सीमाओं के बीचही कहीं इधर उधर पा लेता हूँ।

कहने का तात्पर्य यह है कि बिना तथ्यों की जानकारी के न तो मै या आप, न आइन्स्टीन और न अमेरिका का सुप्रीम कोर्ट ही किसी समस्या पर विवेकपूर्ण निर्णय दे सकता है। टॉमस एडिसन इस बात को जानता था। यही कारण है कि उस की मृत्यु के समय उसकी समस्याओं के तथ्यों से भरी दो हजार पॉच सौ डायरियॉ प्राप्त हुई।

अत. समस्याओं को निपटाने का पहला नियम यह है कि तथ्यो का आकलन कीजिये, ठीक वैसे ही जैसे डीन हॉक्स ने किया था। हमें, निष्पक्षरूप से तथ्यों को जुटाने के पहले, किसी समस्या को हल करने का प्रयास कभी नहीं करना चाहिये।

साथ ही इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि दुनियाभर के तथ्य जुटा लेने मात्र से हमारा उद्देश्य सिद्ध नहीं होगा। जब तक कि उनका अर्थनिरूपण एव विश्लेषण न कर लिया जाय, लाभ नहीं होगा।

अपने अमूल्य अनुभवों के आधार पर मेरा विश्वास है कि तथ्यों को लिख लेने से उनका विश्लेषण करना सरल हो जाता है। कागज पर किसी समस्या और उससे सम्बन्ध रखनेवाले तथ्यों को लिख लेने से उचित निर्णय पर पहुँचने में बडा योग मिलता है। चार्ल्स केटरींग के अनुसार-किसी भी समस्या का उचित स्पष्टीकरण, आधी समस्या के हल हो जाने के समान है।"

"अब मैं आप को इस कथन के व्यावहारिक पक्ष की बात बताऊँगा। चीनियो मे एक कहावत है, 'एक तस्वीर और दस हजार शब्द बराबर होते हैं।' मान लीजिये, मैं, आपको जो बात बता रहा हूँ उसके बजाय एक तस्वीर बताऊँ, जिसमे, एक व्यक्ति इसी बात को कार्यरूप दे रहा हो।

गेलन लिचफिल्ड का ही उदाहरण लीजिये—मैं इस व्यक्ति को वर्षों से जानता हूँ। सुदूरपूर्व के अत्यन्त सफल व्यापारियों में से एक है वह। १९४२ में जब जापानियों ने चीन पर आक्रमण किया था, उस समय लिचफिल्ड चीन में था। एक बार, जब वह मेरा मेहमान था, उसने यह घटना मुझे सुनाई थी – "पर्लहार्बर के कुछ ही दिनों बाद जापानी शघाई में उमडने लगे। मैं वहाँ एशिया-जीवन-बीमा कम्पनी का मैनेजर था। उन्होंने हमारे पास एक सैनिक प्रबन्धक भेजा। वह एक एडमिरल था। उसने मुझे कम्पनी की सम्पत्ति को लिक्वीडेट करने में सहायता करने के लिये आज्ञा दी थी। मेरे पास अन्य कोई उपाय नहीं था। या तो मैं उस के साथ सहयोग करता या फिर मरने के लिये तैयार हो जाता।

उस के आदेशानुसार मैं कार्रवाई करने में लग गया। क्या करता? किन्तु फिर भी मैंने ७५,००,००० डालर की सिक्योरिटियों को उस सूची में नहीं बताया जो एडमिरल को दी गई थी। और इस का कारण यह था कि वे सिक्योरिटियाँ हमारे हॉगकॉग सगठन की थीं। उनका शघाई की सम्पत्ति से कोई सबध नहीं था। फिर भी मुझे इस बात की आशंका थी कि यदि जापानियों को इस बात का पता चल गया तो मैं भारी विपत्ति में फंस जाऊँगा।

आखिर वही हुआ। जापानियों को इस बात का पता चल ही गया। जिस समय उन्हें पता चला, मैं ऑफिस में नहीं था। मेरा हेड एकाउण्टेण्ट वहीं पर था। उसने मुझे बताया कि एडमिरल की त्यौरियाँ चढ गई थीं और वह पैर से धरती ठोक ठोक कर मुझे चोर और द्रोही कह रहा था। मैंने जापानी सेना की अवज्ञा की थी और मैं उसका परिणाम भी जानता था कि वे मुझे 'ब्रीज हाउस' में बन्द कर देंगे।

ब्रीज हाउस! वह जापानी खुफिया विभाग का यन्त्रणालय था। मेरे अपने कुछ दोस्तों ने उस ब्रिज हाउस की यन्त्रणा से बचने के लिये, उस में जाने के पूर्व ही, आत्महत्या कर ली थी। मेरे कुछ अन्य मित्र ऐसे भी थे जो उस कैद में दस दिन की पूछताछ और यंत्रणा के बाद इस दुनिया से टिकट कटा चुके थे और अब मेरी बारी थी।

मैंने क्या किया? रविवार के अपराह्न में मैंने यह खबर सुनी थी। उस समय यदि मेरे पास अपनी समस्याओं को हल करने की अमुक एवं निश्चित विधि न होती तो उस अवस्था में मैं बौखला उठता। वर्षों से इस विधि का प्रयोग मैं करता आ रहा हूँ। जब कभी भी मैं चिन्ता से घिर जाता हूँ अपने टाइप राइटर पर दो प्रश्न और उन के उत्तर टाइप कर लेता हूँ—

(१) चिन्ता का कारण क्या है?

(२) मैं क्या उपाय कर सकता हूँ?

पहले तो मैं बिना लिखे ही इन प्रश्नों के उत्तर देने की कोशिश करता था। किन्तु, इधर कुछ वर्षों से मैंने यह तरीका छोड़ दिया है। मुझे लगा कि प्रश्न और उत्तर दोनों ही लिख लिये जाने चाहिएँ। इस से विचार अधिक स्पष्ट हो जाते हैं।

अस्तु, उस दिन सीधा मैं अपने वाई. एम. सी. ए. के कमरे में चला गया। फिर टाइप पर लिखने लगा—

प्रश्न—मैं चिन्तित क्यों हूँ?

उत्तर—मुझे भय है कि कल सवेरा होते ही मैं ब्रिज हाउस मे ढकेल दिया जाऊँगा।

प्रश्न २—इस का उपाय क्या हो?

उत्तर—मैंने अपनी चार प्रणालियाँ निश्चित की, और उन पर मनन करते उन्हें लिखते, उन के सम्भावित परिणामों पर विचार करते, घण्टों बिता दिये। वे चार प्रणालियाँ ये थीं—

(१) मुझे जापानी एडमिरल को समझाने की कोशिश करनी चाहिये, किन्तु वह अंग्रेजी जो नहीं जानता! किसी दुभाषिये के जरिये समझाने का प्रयत्न करने पर सम्भव है वह भड़क उठे और नतीजे में पल्ले पड़े मौत।

मुझे आशंका थी कि अपनी दुष्ट प्रकृति के कारण वह मुझ से बातचीत करने की झंझट न कर, सीधे मुझे ब्रीज हाउस में ढकेल देगा?

(२) मैं भाग निकलने का प्रयत्न करूँ तो? नहीं, यह सम्भव नहीं। रात दिन वे मेरी निगरानी रखते हैं। और फिर भाग निकलने के पूर्व मुझे वाई. एम. सी. ए. के कमरे के भीतर और बाहर देखभाल कर लेनी होगी। पर ऐसा करते देख, सम्भव है वे मुझे पकड़ लें और गोली मार दें।

(३) या मैं इसी कमरे में पड़ा रहूँ और ऑफिस न जाऊँ। बिना इस से जापानी एडमिरल को सन्देह हो सकता है, वह मुझे गिरफ्तार करने अपने सिपाही भेज दे और फिर बिना मेरी दलील सुने मुझे ब्रीज हाऊस में ठोंस दे।

(४) या फिर मैं रोज की तरह कल सुबह ही ऑफिस चला जाऊँ। सम्भव है, व्यस्त रहने के कारण एडमिरल को मेरे कारनामे का खयाल ही न आए। और यह भी सम्भव है कि अब तक वह शान्त हो गया हो और इसलिए परेशान न भी करे। और मानलो उसने मुझे परेशान किया ही, तो भी उसे समझाने के लिए अवसर तो है ही। इस प्रकार सोमवार को, रोज की तरह निर्विकार हो–"जैसे कि कुछ हुआ ही न हो" ऑफिस जाकर ब्रीज हाउस से बचने के दो मौके तो प्राप्त कर ही सकता हूँ।

जैसे ही मैंने सारी स्थिति पर विचार कर रोज की तरह सोमवार की सुबह ऑफिस जाने के इस चौथे मार्ग को अपनाने का निश्चय किया, मुझे बड़ी राहत मिली।

जब दूसरे दिन मैं ऑफिस पहुँचा मैंने जापानी एडमिरल को मुँह में सिगरेट दबाए वहाँ बैठे देखा। उसने रोज की तरह आँखें तरेर कर मुझे देखा और कुछ नहीं कहा। छः सप्ताह बाद वह टोकियो चला गया और मेरी परेशानी का अन्त हो गया।

मैं आप को बता चुका हूँ कि मै अपनी प्राण–रक्षा इसलिये कर सका कि रविवार अपराह्न में बैठकर मैंने सभी प्रकार के तरीकों को तथा उनके सम्भावित

परिणामों को लिख डाला था। इस प्रकार धैर्य के साथ मैं अमुक निश्चय पर पहुँच सका था। यदि ऐसा न करता तो बेचैन और डॉवा-डोल रहता और अन्त में कोई गलत कदम उठा बैठता। यदि अपनी समस्या पर विचार कर अमुक निर्णय पर न पहुँचा होता तो रविवार का सारा अपराह्न चिन्ता में बीतता और रात को सो भी न पाता। चिन्तित और परेशान चेहरा लेकर मुझे ऑफिस जाना पड़ता और एडमिरल का सन्देह जगा कर उसे कुछ करने – धरने को उकसा बैठता।

"अनुभव ने समय समय पर प्रमाणित कर दिखाया है कि अमुक निर्णय पर पहुँच जाने का मूल्य कितना अधिक होता है।

किसी निश्चित ध्येय को प्राप्त करने की असफलता, तथा पागल बना देने वाली उलझन और चक्कर से अपने को रोकने की अयोग्यता मनुष्यको स्नायुरोग तथा जीवन–नर्क की ओर खदेड़ती है। मेरा तो यह अनुभव है कि पचास प्रतिशत चिन्ताएँ स्पष्ट एव निश्चित परिणाम पर पहुँचते ही रफूचक्कर हो जाती हैं। और शेष चालीस प्रतिशत उस निर्णय के क्रियान्वय से विलीन हो जाती हैं।

'इस प्रकार नब्बे प्रतिशत चिन्ताएँ मैं इन चार तरीकों से दूर कर लेता हूँ—

(१) अपनी चिन्ता का सम्यक् हेतु लिख कर

(२) उस का उपाय लिख कर

(३) क्या करना चाहिये, यह निश्चय कर

(४) उस निश्चय को तत्काल कार्यरूप देकर

गेलन लिचफिल्ड आजकल न्यूयॉर्क की तीसरी जॉन स्ट्रीट की स्टार पार्क एण्ड फ्री मेन इन्श्योरेन्स कम्पनी के सुदूर पूर्व क्षेत्र के डायरेक्टर हैं। यह कम्पनी बड़े भारी इन्श्योरेन्स तथा वित्तीय हितों का प्रतिनिधित्व करती है।

मैं बता चुका हूँ, गेलन लिचफिल्ड आज एशिया में प्रमुख अमेरीकन व्यवसायियों में से हैं और स्वय उन्होंने माना है कि उनकी सफलता का कारण उनकी चिन्ता–विश्लेषण–पद्धति तथा उससे सीधे निपट लेने की रीति है।

इस पद्धति की विलक्षणता यह है कि यह उत्तम है, ठोस है तथा समस्या की गहराई तक पहुँच जाती है। इसके अतिरिक्त "कुछ उपाय कीजिये," के तीसरे अपरिहार्य नियम के द्वारा इस पद्धति की श्रेष्ठता और भी बढ़ जाती है। यदि हम इस पद्धति का पालन न करें तो हमारा तथ्य आकलन और विश्लेषण, हमारी शक्ति का अपव्यय मात्र हो कर रह जाए।

विलियम जेम्स का कहना है कि "एक बार निर्णय पर पहुँच कर क्रियान्वय की अवस्था में, परिणाम की जिम्मेदारी और उसकी चिन्ता को ताक में रख दीजिये।" यहाँ विलियम जेम्स ने चिन्ता शब्द को क्षोभ का पर्यायवाची लिया है। उसका अभिप्राय यह है कि एक बार सावधानी से तथ्य के आधार पर अमुक निर्णय पर पहुँच कर तत्काल ही उसके पालन में जुट जाइये। उसपर पूर्ण विचार करने के लिये रुकिये मत, डावाँ-डोल न रहिये, चिन्ता न कीजिये तथा पीछे कदम मत

रखिए, अपने को शका मे न डालिये, क्यो कि इससे कई अन्य शकाएँ भी उत्पन्न हो जाती हैं। अपनी शक्तिपर अविश्वास मत कीजिये।

एक बार मैंने ओक्लाहोमा के प्रसिद्ध तैल–व्यवसायी वेट फिलिप से पूछा था कि वे अपने निर्णय का पालन कैसे करते हैं, उत्तर में उन्होंने बताया कि, "मेरा मानना है कि एक निश्चित अवधि से अधिक अपनी समस्याओं पर सोचते रहने से चिन्ताएँ और उलझनें निश्चय ही अपना सर उठा बैठती हैं। एक ऐसा समय आता है जब अधिक छान बीन और सोच विचार हानिकारक होते हैं। एक समय आता है जब हमें अमुक निश्चय पर पहुँच कर कार्य आरम्भ कर देना चाहिये और पीछे मुड़कर नहीं देखना चाहिये।

आप अभी से गेलन लिचफिल्ड की पद्धति का अपनी किसी एक चिन्तन समस्यापर प्रयोग कर लीजिये। देखिए, यह है पहला प्रश्न – मेरी चिन्ता का हेतु क्या है? (कृपया नीचे दिए हुए रिक्त स्थान पर पेन्सिल से उत्तर लिख लीजिये –

....

दूसरा प्रश्न—क्या उपाय, किया जा सकता है? (कृपया नीचे दिये हुए रिक्त स्थान पर पेन्सिल से उत्तर लिख लीजिये—

....

तीसरा प्रश्न — यह है वह उपाय जो मैं करने वाला हूँ।

चौथा प्रश्न – कार्य कब अरम्भ करने वाला हूँ?

(इन प्रश्नों के भी उत्तर लिख लीजिए।)

☆

५ : इस विधि से आपकी पचास प्रतिशत व्यावसायिक चिन्ताएँ दूर हो जाएँगी।

यदि आप कोई व्यवसायी हैं तो मन ही मन सोचेंगे कि इस परिच्छेद का शीर्षक अजीब मखौल है। मैं भी उन्तीस वर्षों से अपना कारोबार चला रहा हूँ। और यदि कोई ऐरा-गैरा इसके उत्तर जान सकता है तो मुझे तो अवश्य ही जानने चाहियें। यह बात कतई वाहियात है। कोई ऐरा-गैरा मेरी पचास प्रतिशत व्यावसायिक चिन्ताएँ कैसे दूर कर सकता है?

आपका सोचना ठीक है, मैंने भी यदि कुछ वर्ष पूर्व इस पुस्तक के परिच्छेद के शीर्षक को देखा होता तो मैं भी यही सोचता, कहता कि इसमें शेखचिल्ली के सपने हैं जिनकी कोई वक्त नहीं।

ईमानदारी से देखा जाए तो कदाचित् मैं आपकी पच्चीस प्रतिशत व्यावसायिक चिन्ताएँ दूर करने में आपकी सहायता न कर सकूं। क्यों कि अन्ततः आपही को अपनी चिन्ताएँ दूर करनी होंगी। मैं तो केवल इतना कर सकता हूँ कि आपको बता दूँ कि दूसरे लोगों ने अपनी चिन्ताएँ किस प्रकार दूर कीं। और बाकी का काम आप पर छोड़ दूँ।

आपको स्मरण होगा कि इस पुस्तक के पिछले पृष्ठों पर मैंने विश्व विख्यात डॉ. एलेक्सी केरल का यह कथन उद्धृत किया था कि जो व्यवसायी चिन्ता से संघर्ष करना नहीं जानते वे जवान ही मर जाते हैं।

चिन्ता अपने में एक गम्भीर समस्या है और इसलिये यदि मैं आपकी दस प्रतिशत चिन्ताएँ दूर करने में भी आपकी सहायता कर सकूं तो आपको अवश्य ही सन्तोष होगा।

हाँ, तो मैं आपको यह बताने जा रहा हूँ कि किस प्रकार एक व्यवसायी प्रशासक ने अपनी पचास प्रतिशत चिन्ताएँ भी दूर कीं और साथ ही साथ अपना सत्तर प्रतिशत समय भी बचा लिया जो कि वह पहले, व्यवसाय सम्बन्धी समस्याओं का हल ढूँढने के लिए बुलायी गयी कोन्फ्रेन्सों में खर्च कर दिया करता था।

मैं किसी क, ख या अपने किसी परिचित की ऐसी अनहोनी कहानियाँ नहीं कह रहा हूँ जिन की आप तसदीक तक न कर सकें। यह कहानी एक जीते-जागते व्यक्ति लियोन-शीमकीन की है जो बीस न्यूयॉर्क अन्तर्गत रोकफेलर सेन्टर के साइमन और सूस्टर नामक प्रमुख अमेरिकन प्रकाशन संस्थाओं का भागीदार तथा मैनेजर हैं।

यहाँ, मैं सियान शीकीन के अनुभव उसीकी जबानी दे रहा हूँ—"पन्द्रह वर्ष तक काम-काज का प्रत्येक आधा दिन हमने व्यवसाय सम्बन्धी समस्याओं पर विचार-

विमर्ष करने में बिताया है। हम सोचते–यह करें या वह करें या कुछ भी न करें। फिर हम गम्भीर हो जाते। अपनी कुर्सियों में तने बैठे रहते। फ़र्शपर इधर-उधर चक्कर काटते हुए विवाद करते और उलझन में फँसे रहते। रात होते होते मैं थककर चूर हो जाता। मुझे पूरा विश्वास हो गया था कि जीवन भर इसी तरह पपड़ वेलने होंगे। गत पन्द्रह वर्षों की कार्यविधि में एक बार भी मुझे नहीं लगा कि काम करने की इससे अच्छी कोई अन्य विधि भी हो सकती है। यदि कोई आकर मुझे यह कहता कि मै आपकी इन चिन्ताजनक कॉन्फ्रेन्सों का तीन चौथाई समय तथा आपका तीन चौथाई स्नायु दवाव कम कर सकता हूँ तो मै निश्चय ही ऐसे आदमी को पीठ ठोककर खुश होनेवाला निठल्ला शेखचिल्ली समझता। फिर भी मैंने आखिर एक विधि निकाल ही ली जिसने ठीक वही काम कर दिखाया जिसके बारे में ऊपर कह चुका हूँ। गत आठ वर्षों से मैं इस विधि का प्रयोग करता आ रहा हूँ। इस विधि ने मेरी कार्यकुशलता, मेरे स्वास्थ्य और मेरे सुख के क्षेत्रों में विलक्षण प्रभाव दिखाया है।

एक तरह से यह एक चमत्कार ही लगता है, किन्तु इसकी कार्यप्रणाली जान लेनेपर यह भी अन्य ' चमत्कारो की तरह सामान्य प्रतीत होने लगता है। अब मैं आप को उस चमत्कार का रहस्य बताऊँगा–सबसे पहले तो मैंने पन्द्रह वर्षों से प्रयोग में लाये जाने वाले उन कॉन्फ्रेंसों के तरीके को तिलाजलि दी। उस कार्यविधि का श्रीगणेश यों होता था–पहले मेरे सभी परेशान सहयोगी भूल कहाँ हुई है इसका ब्यौरा देते और अन्त में अब क्या करें कह कर रुक जाते। किन्तु अब मैंने एक नियम बना लिया है कि किसी भी समस्या को प्रस्तुत करने वाले व्यक्ति को चाहिये कि पहले वह उसका एक मेमोरेण्डम तैयार कर ले तथा इन चार प्रश्नों का उत्तर लिख डाले।

प्रश्न पहला–समस्या क्या है ?

(" पहले, परेशान कर देने वाली कॉन्फ्रेन्सों में दो – एक घण्टे तो हम समस्या के निश्चित और स्थूल रूपको जाने विना ही, उस पर विचार करने में बिता देते थे। समस्या को स्पष्ट रूप से लिखे विना ही एक तरह की फेनिल अवस्था में हम काम करते रहते।)

" प्रश्न दूसरा–समस्या का हेतु क्या है ? "

(" जब मैं अपनी पहले की कार्य प्रणाली पर विचार करता हूँ तो यह जान कर सन्न रह जाता हूँ कि मैंने समस्या की मूल अवस्था को स्पष्ट रूप से जाने विना ही उस पर विचार करके उन परेशान कर देने वाली बैठकों में कितना अमूल्य समय नष्ट कर दिया।

प्रश्न तीसरा—समस्या के सभी समाव्य समाधान क्या हैं ?

" उन दिनों बैठकों में एक आदमी एक हल बताता तो दूसरा आदमी उस पर विवाद करता, इस प्रकार उत्तेजना बढ जाती। अक्सर हम विषय स्पष्टीकरण

तो कर लेते थे किन्तु बैठकों के अन्त में उन विविध मुद्दों को लिखते नहीं थे ताकि इस समस्या पर काबू पा सकते।

" प्रश्न चौथा—आप किस समाधान की सलाह देते हैं?"

(" मैं उन बैठकों में ऐसे व्यक्ति को अपने साथ लेकर जाता था जो घण्टों समस्या पर विचार कर के थक चुका होता। किन्तु जिसने कभी भी सभी सम्भव समाधानों के विषय में कोई विचार नहीं किया होता; न वह कभी कोई समाधान अपनी ओर से लिख कर प्रस्तुत करता।")

किन्तु अब, मेरे सहयोगी क्वचित् ही कोई समस्या लेकर मेरे पास आते हैं, क्यों कि इन चार प्रश्नों के उत्तर तैयार करने के लिये उन्हें सभी तथ्यों को पहले इकट्ठा कर उन पर सांगोपांग विचार करना पड़ता है। जब वे इतना कर लेते हैं तो तीन चौथाई मामलों में उन्हें मेरे परामर्श की आवश्यकता नहीं रहती, क्यो कि ऐसा करने में अनायास ही समुचित समाधान इलेक्ट्रिक टोस्टर पर बाहर निकल आने वाले ब्रेड के समान, निकल आता है। यहाँ तक कि जिन मामलों में मेरा परामर्श अभिवांछित होता है उन में भी पहले के समय का एक तिहाई ही खर्च होता है। कारण यह है कि मामला क्रमिक एवं युक्तियुक्त ढंग से विवेक पूर्ण परिणाम की ओर अग्रसर होता रहता है।

गलती कहाँ हुई है इस पर विचार करने में अब बहुत कम समय लगता है। और उन मामलों को सुधारने में अब काफी अधिक काम किया जा सकता है। मेरा एक मित्र है फ्रैंक बेडगर जो इन्शोरेन्स से सम्बन्ध रखने वाले अमेरिका के प्रमुख व्यक्तियों में से एक है। उसका कहना है कि उपर्युक्त पद्धति के प्रयोग से उसने व्यवसाय सम्बन्धी अपनी चिन्ताएँ भी मिटा लीं और साथ ही अपनी आय भी दुगुनी कर ली। फ्रैंक बेडगर का कहना है कि, " कई वर्ष पूर्व जब मैंने पहले पहल पॉलिसी बुक करने का कार्यारम्भ किया, मुझे अपने कारोबार के प्रति अदम्य उत्साह और आस्था थी। और फिर एकाएक न जाने क्यों, मैं हतोत्साह हो गया। अपने धन्धे से नफरत करने लगा और उसे छोड देने की सोचने लगा। कदाचित् मैं उसे छोड भी देता यदि एक शनिवार की सुबह चिन्ताओं का मूल खोजने का विचार मेरे मन में नहीं उठ खडा होता।

१. मैंने मन ही मन प्रश्न किया—आखिर, समस्या क्या है? मेरी समस्या यह थी कि अलग अलग स्थानों पर कितने ही लोगों से अपने धन्धे के विषय में मिलकर थक कर चूर हो जाने पर भी मुझे पर्याप्त आय नहीं होती थी। जब कभी मैं किसी प्रोसपेक्ट को बेचने में सफल होने को होता कि बिक्री बन्द करने का समय हो जाता और ग्राहक कह उठता—" अच्छा मिस्टर बेडगर, मैं बाद में सोचूँगा फिर कभी मिलियेगा।' इस प्रकार समय की बर्बादी जो मुझे ग्राहकों से बारबार मिलने-जुलने में करनी पड़ती थी, मेरे दु ख का कारण बन गयी।

२. मैंने मनही मन सोचा कि इस समस्या के सभाव्य समाधान क्या हो सकते हैं? किन्तु इस एक प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने के लिये मुझे तथ्यों के अध्ययन की आवश्यकता थी। मैंने गत बारह महीनों की अपनी रेकॉर्ड बुक निकाल कर ऑकड़ो का अध्ययन किया।

इस प्रकार मैंने एक आश्चर्यजनक खोज कर डाली। उस रेकॉर्ड से मुझे पता चला कि मेरी सत्तर प्रतिशत बिक्री पहली ही मुलाकात में बन्द हो गयी थी। तथा तेईस प्रतिशत दूसरी मुलाकात में। अब शेष सात प्रतिशत चौथी एव पॉचवी मुलाकात में जाकर समाप्त हो गयी थी। ये मुलाकाते मुझे परेशान भी करती थी और मेरा समय भी नष्ट होता था। दूसरे शब्दों में मैं अपने काम का आधा दिन धन्धे के उस अश पर खर्च कर देता था जिसका सम्बन्ध मेरी केवल सात प्रतिशत बिक्री ही से था।

अब मैं क्या करता? स्पष्ट था कि मैं तत्काल ही दूसरी मुलाकातों के बाद किसी से भी मुलाकात करना बन्द कर दूँ तथा अतिरिक्त समय नये लाभ के निर्माण करने में लग जाऊँ। इसका आशातीत परिणाम निकला और अत्यन्त कम समय में ही मेरी मुलाकातो के फल स्वरूप होने वाले लाभ में दुगुनी वृद्धि हो गयी।

जैसा कि मैं बता चुका हूँ फ्रैंच बेटगर अमेरिका का जाना-माना इन्श्योरेन्स व्यवसायी है, वह फिलेडेल्फिया के फ्रेडीलिटी म्युचुअल से सम्बन्धित है तथा प्रतिवर्ष लगभग दस लाख की पॉलिसियॉ सपन्न करता है। एक समय था जब वह इस व्यवसाय को छोड़ना चाहता था। अपनी हार मानने ही वाला था कि समस्याविश्लेपण की इस पद्धति ने उसे सफलता के राजमार्ग पर गति दे दी।

क्या आप अपनी व्यावसायिक समस्याओं पर यह प्रश्न लागू कर सकते हैं? मैं फिर से इस चुनौती को दुहराता हूँ कि यह आपकी पचास प्रतिशत चिन्ताएँ कम कर देगी।

वे प्रश्न ये हैं।

१. आपकी समस्या क्या है?

२. समस्या का हेतु क्या है?

३. समस्या के सभी सभाव्य समाधान क्या है?

४. आप क्या समाधान सुझाते हैं?

☆

दूसरे भाग का संक्षेप

चिन्ता-विश्लेषण की मौलिक विधियाँ—

नियम पहला—तथ्यों का आकलन कीजिये। कोलम्बिया विश्व विद्यालय के डीन जॉन हॉक्स का यह कथन स्मरण रखिये कि "संसार में आधी चिन्ताएँ तो इसलिये होती हैं कि लोग अपने निर्णय के आधार को जाने बिना ही निर्णय कर लेने का प्रयास करते हैं।

नियम दूसरा—सभी तथ्यों की सावधानी से छानबीन कर के निर्णय लीजिये।

नियम तीसरा—एक बार सावधानी से निर्णय कर लेने पर कार्यारम्भ कीजिये। निर्णय को क्रियान्वित करने में तल्लीन हो जाइये, और सभी परेशानियों को ताक पर रख दीजिये।

नियम चौथा—जब आप या आप के सहयोगी किसी समस्या पर विचार करने का ढंग अपनाएँ तो पहले ये निम्नलिखित प्रश्न लिख लीजिये—

क. समस्या क्या है?

ख. समस्या का हेतु क्या है?

ग. सभी सम्भाव्य समाधान क्या हैं?

घ. सर्वोत्तम समाधान क्या है?

२. इस पुस्तक से अधिक से अधिक लाभ उठाने के नौ सुझाव

१. यदि आप इस पुस्तक से अधिक से अधिक लाभ उठना चाहते हैं तो एक अपरिहार्य एव किसी भी नियम अथवा विधि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण शर्त का होना आवश्यक है। जब तक आपके पास वह आवश्यक शर्त नहीं है तब तक अध्ययन करने के ढग के आपके हजारो नियम भी व्यर्थ हैं। किन्तु अगर आप के पास वह प्रधान गुण है, तो आप किसी भी पुस्तक से विना किसी प्रकार के सुझाव पढे कमाल हासिल कर सकते हैं।

वह चमत्कारिक शर्त क्या है? वह है—सीखने की गहन एव प्रेरक उत्कठा तथा चिन्ता रोकने और जीवनयापन करने का प्रबल एव दृढ सकल्प।

ऐसी उत्कठा का विकास आप कैसे कर सकते हैं? आप अपने आप को निरन्तर स्मरण दिलाते रह कर कि ये सिद्धान्त कितने प्रमुख हैं, यह कर सकते हैं। अपने सामने एक चित्र खींचिये कि उन सिद्धान्तों का प्रभुत्व आप को वैभव पूर्ण और अधिक सुखी जीवन विताने में किस प्रकार सहायता करेगा। मन ही मन बारबार दुहराते रहिये कि "मेरे मस्तिष्क की शान्ति, मेरा सुख, मेरा स्वास्थ्य और सभवतः आगे जाकर मेरी आय भी बहुत हद तक इस पुस्तक में बताये गये पुरातन, सहज एव चिरन्तन सत्यों के प्रयोग पर निर्भर करती है।"

२. प्रत्येक अध्याय को पहले जल्दी जल्दी सरसरी निगाह से पढ जाइये। आप को शायद अगला अध्याय पढने का लोभ हो आए, किन्तु ऐसा मत कीजिये! यदि आप केवल मनोरजन के लिये पढ रहे हों तो बात दूसरी है। किन्तु यदि आप चिन्ता का निवारण कर जीवनयापन करने के लिये पढ रहे हैं तो प्रत्येक परिच्छेद को सागोपाग दुहरा लीजिये। आगे चलकर इस से आप के समय की बचत होगी और उस का परिणाम भी निकलेगा।

३. पढते समय पढी हुई सामग्री पर विचार करने के लिये बार बार रुकते जाइये मन ही मन सोचिये कि प्रत्येक सुझाव पर प्रयोग आप कब और कैसे कर सकते हैं। उस प्रकार का पढना जल्दी पढने से कहीं अधिक सहायक होगा।

४ पढते समय अपने हाथ मे पैन्सिल, लाल पैन्सिल या फाउनटेन पेन रखिये और जब कभी आप ऐसा सुझाव पढें और आप को लगे कि उस का उपयोग आप कर सकते हैं, तो उसके पास एक लकीर खींच लीजिये। यदि वह चार तारों वाला सकेत हो तो प्रत्येक वाक्य के नीचे लकीर खींचिये, या उस पर '××××' चिह्न लगा दीजिये। चिह्न लगाने और नीचे लकीर खींचने से पुस्तक अधिक मनोरजक बन जाती है और जल्दी से उसकी पुनरावृत्ति करने में सरलता हो जाती है।

५. मैं एक ऐसे व्यक्ति को जानता हूँ जो पन्द्रह वर्ष से एक बड़ी इन्श्योरेन्स कम्पनी का मैनेजर है। वह हर महीने अपनी कम्पनी के द्वारा जारी किये गए

इन्श्योरेन्स के सभी इकरारनामे पढता है और वह उन्हें महीनों, एवं वर्षों तक पढता रहता है। क्यों? इस लिये कि उसने अनुभव से यह लिखा है कि उन इकरारनामों की शर्तों को ठीक ठीक याद रखने का यही एक तरीका है।

एक बार मैंने सार्वजनिक वक्तृत्व कला पर एक पुस्तक लिखने में लगभग दो वर्ष बिता दिये। फिर भी, अपनी पुस्तक में जो कुछ भी मैंने लिखा था उसे याद रखने के लिये उस पुस्तक को समय समय पर मुझे पढते रहना पड़ता है। जिस शीघ्रता से हम बातों को भूल जाते हैं उस पर आश्चर्य होता है।

इस लिये, यदि आप इस पुस्तक से वास्तविक और स्थायी लाभ प्राप्त करना चाहते हैं तो यह मत समझिये कि एक बार इसे सरसरी निगाह से देख जाना पर्याप्त है। इस को भली भाँति पढ लेने के बाद आप को चाहिये कि हर महीने इसे दुबारा पढने में आप कुछ घण्टे खर्च करें और प्रति दिन इसे आप अपनी डेस्क पर अपने सामने रक्खें, प्रायः इसे उलटते पुलटते रहें और निरन्तर अपने मन पर संस्कार डालते रहें कि इस पुस्तक की सहायता से आप कितनी बडी उन्नति कर सकते हैं। याद रखिये कि इन सिद्धान्तों का निरन्तर प्रयोग तथा प्रबल पुनरावर्तन ही इन्हें आप के स्वभाव का एक अंग बना सकेगा, और तभी आप अनजाने ही इन पर आचरण करने लगेंगे। इस के सिवा दूसरा कोई उपाय है ही नहीं।

६. बर्नार्ड शॉ ने एक बार कहा था—"यदि आप किसी मनुष्य को कोई बात सिखाना चाहेंगे तो वह कभी नहीं सीखेगा।" शॉ का यह कथन सही था। सीखना एक सक्रिय प्रक्रिया है। हम काम कर के ही सीखते हैं। इस लिए यदि आप उन सिद्धान्तों पर पूर्ण प्रभुत्व पाना चाहते हैं, जिनका अध्ययन आप इस पुस्तक में कर रहे हैं, तो उन के सम्बन्ध में कुछ कीजिये। जब भी सुयोग मिले इन नियमों का प्रयोग कीजिये। यदि आप ऐसा नहीं करेंगे तो उन्हें जल्दी ही भूल जाएँगे। केवल वही ज्ञान मस्तिष्क में टिकता है जिस का उपयोग किया गया हो।

सम्भवत हर समय आप को इन सुझावों का प्रयोग कठिन जान पडे। मैं यह इस लिये कह रहा हूँ कि मैंने यह पुस्तक लिखी है। फिर भी प्राय इस में लिखी गयी प्रत्येक बात का प्रयोग करना मुझे कठिन जान पडता है। इस लिये जब भी आप यह किताब पढे, याद रखिये कि आप केवल जानकारी प्राप्त करने का ही प्रयत्न नहीं कर रहे हैं बल्कि आप नयी आदतों का निर्माण करने के प्रयत्न कर रहे हैं। हाँ, आप नवीन जीवन-मार्ग का निर्माण कर रहे हैं, और उस के लिये समय, अध्यवसाय और सतत प्रयोग करते रहने की आवश्यकता रहेगी। इस लिये इन पन्नों को प्रायः देखते रहिये। इसे चिन्ता पर विजय पाने के लिये एक व्यावहारिक गुटका समझिये और जब कभी आप के सामने कोई कठिन समस्या आ खड़ी हो, तो विचलित न होइये। स्वभाव एव आवेग में मत बह जाइये। ऐसा करना सामान्यतः गलत होता है। इस के बजाय इन पन्नों को टटोलिये और रेखांकित अनुच्छेदों को पढ

जाइये। तब इन नवीन रीतियों का उपयोग कीजिये और उन के चमत्कार को देखिये।

७. जब कभी आप की पत्नी आप को इस पुस्तक के किसी एक सिद्धान्त को भग करते हुए टोके तो आप उसे इकन्नी दे दीजिये, वह आप को उत्साहित एव प्रेरित करेगी।

८. इस पुस्तक के पृष्ठ खोलिये और पढिये कि वॉल स्ट्रीट बैंकर, एच. पी. हॉवेल तथा वृद्ध बेन फ्रैंकलिन ने अपनी गलतियों को किस प्रकार सुधारा ? आप भी इस पुस्तक में वर्णित सिद्धान्तों के प्रयोग की पुष्टि करने के लिये हॉवेल तथा फ्रैंकलिन की पद्धति को काम में क्यों नहीं लाते ! यदि आप ऐसा करेंगे तो परिणाम में दो बातें होंगी —

पहली — आप अपने को एक ऐसी शिक्षा-प्रक्रिया में नियोजित करेंगे जो अमूल्य एव कौतुहलपूर्ण है।

दूसरी — आप देखेंगे कि चिन्ता रोकने और जीवन यापन करने की आप की क्षमता कद्दवी बेल की तरह फलने फूलने लगेगी।

९. आप एक डायरी रखिये जिस में आप को चाहिये कि इन सिद्धान्तों के प्रयोग की सफलताओं को लिख डालें। जो कुछ लिखें, ठीक लिखें। नाम, तीथियाँ तथा परिणामों को भी लिखें। इस प्रकार का लेखा रखने से आप को बड़े उद्योग करने की प्रेरणा मिलेगी और आज से कई वर्ष बाद किसी शाम को जब कभी आप उस में लिखी घटनाओं पर दृष्टि डालेंगे तो यह लेखा आप को अत्यन्त मोहक प्रतीत होगा।

संक्षेप में—

१. चिन्ता पर विजय पाने के सिद्धान्तों पर प्रभुत्व पाने के लिए अपने में एक गहन प्रेरक शक्ति का विकास कीजिये।

२. आगे के परिच्छेद को पढने के पूर्व प्रत्येक परिच्छेद को दुहरा लीजिये।

३. पढ़ते समय बार बार रुकिये और मन ही मन सोचिये कि प्रत्येक सुझाव का उपयोग आप किस प्रकार कर सकते हैं।

४. प्रत्येक प्रमुख विचार को रेखांकित कीजिये।

५. प्रति मास पुस्तक का पुनरोवलोकन कीजिये। /

६. जब भी सुयोग मिले इन सिद्धान्तों का उपयोग कीजिये। आप की रोज की समस्याओं को हल करने के लिये इस पुस्तक को व्यावहारिक-पुस्तिका के रूप में काम में लीजिये।

७. जब कभी आप का कोई मित्र आपको इन सिद्धान्तों को भग करते हुए टोंके, आप उसे हर बार एक पैसा या एक आना देकर अपने इस अध्ययन को एक रोचक खेल बना लीजिये।

८. प्रति सप्ताह अपनी प्रगति का ब्यौरा लीजिये तथा मन ही मन सोचिए कि आपने क्या भूलें की हैं। भविष्य के लिए आपने क्या सुधार किये हैं तथा क्या शिक्षा ग्रहण की हैं।

९. इस पुस्तक के पृष्ठ भाग में एक डायरी रखिये जो यह बताए कि आपने इन सिद्धान्तों का प्रयोग कब और कैसे किया है।

भाग तीन

चिन्ता आप को मिटा दे इस के पूर्व आप चिन्ता को कैसे मिटा सकते हैं

६ः चिन्ता को दिमाग से बाहर कैसे खदेड़ी जाए ?

मैं उस रात्रि को कभी नहीं भूलूंगा जब मेरीयन जे. डगलस (यह उस का वास्तविक नाम नहीं है, कुछ व्यक्तिगत कारणों से उसने अपना परिचय गुप्त रखने का अनुरोध किया है) कुछ वर्ष पूर्व मेरी कक्षा का विद्यार्थी था। यहाँ मैं उस की सच्ची कहानी सुना रहा हूँ, जो उसने हमारी प्रौढ कक्षा में कही थी। उसने अपने परिवार पर दो दो बार पड़ी विपत्ति का हाल बताया था। पहली विपत्ति तब आयी जब उसकी आँखों की पुतली, उसकी पाँच वर्ष की बालिका इस ससार से चल बसी थी। उसे और उसकी पत्नि को लगा कि वे इस विपत्ति को सह नहीं सकेंगे, किन्तु उसके दस महीनो बाद ही भगवान ने उसे एक दूसरी बच्ची दी और वह भी पाँच दिन उनके बीच रह कर चल बसी।

यह दोहरा वियोग उसके लिये अत्यन्त असह्य हो उठा। उसने कहा, "मैं उसे सह नहीं सका। मेरा सोना, खाना, पीना, सभी हराम हो गया। न कोई आराम कर सकता था, न निश्चिन्त होकर जी सकता था। मेरे स्नायु बुरी तरह से झकझोर हो उठे थे और मेरी आस्था टूट चुकी थी" आखिर वह डाक्टरों के पास गया। एक ने नींद लेने की गोलियाँ खाने को कहा तो दूसरे ने यात्रापर जाने का सुझाव दिया। उसने वे दोनों बातें कर देखीं पर कोई काम नहीं हुआ। उसने बताया, "मुझे ऐसा लगता मानो मेरा शरीर शिकजे के बीच रख दिया गया है और वह अधिकाधिक कसता जा रहा है। यदि आपने भी कभी अनुभव किया हो तो जानते होंगे कि शोक का उद्वेग कितना भीषण होता है?

किन्तु प्रभु कृपा से मेरे एक चार वर्षीय बालक और था। उसने मुझे अपनी समस्या का समाधान सुझाया। एक दिन अपराह्न में जब मैं खिन्न बैठा था, वह आया और पूछने लगा–'बापू मेरे लिये एक नाव बना दोगे?' नाव बनाने की मनःस्थिति मेरी थी नही। वस्तुतः मैं कुछ भी कर सकने की स्थिति में नहीं था, फिर भी उस हठी बालक की बात मुझे माननी पड़ी।

नाव का वह खिलौना बनाने में मुझे तीन घण्टे लगे। बना चुकने के बाद मुझे मानसिक शाति और राहत का अनुभव हुआ जिसका अनुभव मैं कई महीनों से नहीं कर पाया था।

इस अनुभव ने मुझे उदासीनता से छुटकारा दिलाया तथा मुझे कुछ सोचने विचारने की प्रेरणा दी। कई महीनों के बाद मैं पहली बार कुछ सोच सका। मुझे लगा कि जिस काम को करने मे आयोजना एव सोच–विचार की आवश्यकता हो

उस कार्य को करते समय चिन्ता नहीं रहती। मेरे इस नाव बनाने के कार्य ने मेरी चिन्ता को समूल उखाड़ फेंका और मैंने अपने को व्यस्त रखने का निश्चय किया।

दूसरी रात को अपने को व्यस्त रखने का निश्चय कर घर के प्रत्येक कमरे मे गया और उनमें किये जानेवाले कुछ आवश्यक कार्यों की सूची तैयार कर ली। बीसियों जगह मरम्मत की जरुरत थी। बुक केस, सीढियॉ, खिडकियॉ, खिडकियों के छज्जे, नोव, ताले तथा टपकते हुए नल आदि कई वस्तुओं की मरम्मत करनी थी। आप को आश्चर्य होगा कि दो सप्ताह के अन्दर मैंने इन दो सौ बयालिस पदों की सूची बना ली जिन पर ध्यान देना आवश्यक था।

मैंने गत दो वर्षों मे उसमे से अधिकाश काम पूरा कर लिया है, और अपने जीवन को उत्साहवर्धक कार्य-प्रवृत्तियों से भर दिया है। सप्ताह में दो रात के लिये मैं न्यूयार्क की प्रौढ शिक्षा सम्बन्धी कक्षाओं में भाग लेता हूँ। अपने कस्बे की कई नागरिक प्रवृतियो में भी भाग ले चुका हूँ, और आजकल एक स्कूल बोर्ड का चेयरमेन हूँ। और भी कई बीसियों प्रवृतियों मे भाग लेता रहा हूँ तथा रेडक्रॉस जैसी सस्थाओ के लिए चंदा जुटाने मे सहयोग भी करता हूँ। अब मैं इतना व्यस्त रहता हूँ कि चिन्ता करने के लिये समय ही नहीं मिलता।

चिन्ता करने के लिये समय नहीं! हॉ, जब गत महायुद्ध उग्रता से चल रहा था और चार्चिल को अठारह घण्टे काम करना पडता था तब उन्होंने भी ये ही शब्द कहे थे। जब उन्हें पूछा गया कि इतनी अधिक जिम्मेदारियों से आपको चिन्ता नहीं होती? उत्तर में उन्होंने बतलाया कि, "मेरे पास समय ही कहॉ है कि मैं चिन्ता करू?"

चार्ल्स केटरीन का भी यही हाल था जब वह मोटर के लिये सेल्फ स्टार्टर का आविष्कार कर रहे थे। हाल ही मे ये रिटायर हुए हैं। इसके पहले ये विश्व विख्यात जनरल मोटर्स के रीसर्च कोर्पोरेशन के उपाध्यक्ष थे। जिन दिनों ये प्रयोग कर रहे थे, ये इतने गरीब थे कि एक घास-घर को इन्होंने अपनी प्रयोग शाला बना रक्खा था। प्रयोग सम्बन्धी आवश्यक वस्तुए खरीदने के लिये इन्होंने अपनी पत्निके पन्द्रह सौ डालर, जो उसने दूसरो को पियानो सिखा कर कमाये थे, खर्च कर डाले। इसके अतिरिक्त उन्हें अपने जीवन बीमा पर पाच सौ डालर और उधार लेने पडे। मैंने इनकी पत्निको पूछा कि ऐसे दुर्दिनो मे भी आपको कभी चिन्ता नहीं होती थी? "क्यो नहीं! होती थी, जरूर होती थी" उन्होने उत्तर दिया। "मै इतनी चिन्तित रहती थी कि मेरी नींद तक गायब हो गयी थी, किन्तु मिस्टर केटरीन को कोई चिन्ता नहीं थी। वे अपने कार्य में इतने सलग्न रहते थे कि चिन्ता करने के लिये उनके पास समय ही नहीं रहता था।"

महान वैज्ञानिक पास्टल ने 'पुस्तकालयो और प्रयोगशालाओ की शान्ति' की बात कही है, वहॉ शान्ति क्यो रहती है? इस लिये कि पुस्तकालयों एव प्रयोग शालाओ मे सभी लोग सामान्यतः अपने-अपने कामों मे इतने अधिक मग्न रहते हैं

कि उन्हें अपने बारे में चिन्ता करने का समय ही नहीं मिलता। कोई भी अन्वेषण करनेवाले व्यक्ति शायद ही कभी स्नायु रोग से पीडित रहते हो। मनोविज्ञान का एक प्रमुख नियम यह है कि मानव मस्तिष्क कितना ही प्रखर क्यों न हो एक ही समय में उसके लिये एक से अधिक विषयों पर सोचना नितान्त असम्भव हो जाता है। यदि आप को विश्वास न हो तो प्रयोग करके देख लीजिये।

आप इसी समय अपनी पीठ के बल झुक जाइये, आँखे बन्द कर लीजिये और एक ही समय में स्टॅचु ऑफ लीबरटी तथा अपने किसी आगामी कार्य-क्रम पर एक साथ विचार कर देखिये। चलिये, कोशिश कीजिये।

आपको पता चला होगा कि आप एकसाथ दो विषयों पर विचार नहीं कर सकते। यही बात मनोभावों के साथ भी लागू होती है। हम एक ही बार में दो भिन्न मनःस्थितियों में नहीं रह सकते। किसी रोचक कार्य से उत्पन्न उत्साह एव सक्रियता तथा चिन्ता-जन्य निष्क्रियता का अनुभव हम एक साथ कभी नहीं कर सकते। एक मनोभाव, अपने से भिन्न दूसरे मनोभाव को हमेशा उखाड फेंकता है। इसी जानकारी के कारण ही मनोविज्ञान चिकित्सक युद्ध के दिनों मे ,कमाल हॅासिल कर सके। जब युद्ध के भीषण अनुभवो से विचलित, त्रस्त तथा स्नायु रोग से पीडित सैनिक लौट कर आते तो डॉक्टर लोग उपचार स्वरूप उन्हें व्यस्त रहने का नुस्खा दिखा देते।

स्नायु व्याघात से पीडित उन सैनिको का प्रत्येक चेतन क्षण विभिन्न प्रवृत्तियों से भर दिया जाता। सामान्यतः से प्रवृत्तियॉ बाह्य होती थी—जैसे-मछली पकडना शिकार खेलना, गेंद अथवा गोल्फ खेलना, तस्वीरें खींचना, बाग लगाना, नाचना आदि। उन सैनिकों को समय ही नहीं दिया जाता कि वे उन भीषण अनुभवो पर कुछ सोच विचार कर सकें।

उपर्युक्त चिकित्सा पद्दति को मानस चिकित्सा क्षेत्र में 'ओकुपेशन थेरापि' कहते हैं। इसमें रोगी को दवा के स्थान पर काम दिया जाता है। पर यह कोई नवीन पद्धति नहीं है। ईसा के पॉच सौ वर्ष पूर्व भी पुराने ग्रीक चिकित्सक इसी चिकित्सा पद्धति का प्रचार करते थे।

बेन फ्रैंकलिन के समय में क्वेकर लोग फिलाडेल्फिया में इसी चिकित्सा पद्धति का प्रयोग करते थे। सन् १७७४ में क्वेकर सिनेटोरियम का निरीक्षण करते हुए एक महाशय को यह देखकर बडा आश्चर्य हुआ कि मनोरोग से पीडित व्यक्ति कलई के काम में व्यस्त थे। पहले तो उन्होंने सोचा कि इन गरीब भाग्यहीनों का यहॉ शोषण किया जा रहा है। पर बाद में क्वेकर लोगोंने उन्हें समझाया कि उनका अबतक का अनुभव यह है कि काम करने से रोगियों के स्वास्थ में सचमुच ही सुधार होता है तथा उनके स्नायुओं को राहत मिलती है।

कोई भी मानस शास्त्री क्यो न हो, वह आपको यही बताएगा कि व्यस्तता अस्वस्थ स्नायुओं के लिये अबतक की उपलब्ध सभी औषधियों में सर्वोत्तम है।

हेनरी डब्ल्यु. लोंगफेलो को इस बात का ज्ञान अपनी जवान पत्नी के मर जाने पर हुआ। यह दुर्घटना इस प्रकार हुई–एक बार उनकी पत्नी दीपक के पास बैठी सील लगाने के लिये मोम पिघाल रही थी, कि एकाएक उसके कपड़ों में आग लग गयी। उसकी चीख सुनते ही लोंगफेलो ने उसे बचाने के लिये उस तक पहुँचने का प्रयास किया, किन्तु वे पहुँचे तबतक वह मर चुकी थी। कुछ समय तक इस दुर्घटना से लोंगफेलो इतने सन्त्रस्त रहे कि उन्मादावस्था के निकट पहुँच गए। किन्तु उनके सौभाग्य से उनके तीन बच्चों की देखरेख उन्हें करनी पड़ती थी। अतः दु:ख की स्थिति मे भी वे उन बच्चों की माता और पिता, दोनो की हैसियत से देख भाल करने लगे। वे उन्हें सैर पर ले जाते, कहानियाँ सुनाते और उनके साथ खेल खेलते। अपने बच्चों के साथ बिताये गये उन क्षणों को 'दी चिल्डरन्स आवर' शीर्षक कविता में उन्होंने अमर कर दिया है। इसके अतिरिक्त उन्होंने कवि दाते की कृतियों का भी अनुवाद किया। इन सभी कामों में वे इतने व्यस्त रहे कि अपनी सारी चिन्ताओ को सर्वथा भूल गये तथा अपनी मन. शान्ति को पुन. प्राप्त कर लिया। जब टेनिसन के अत्यन्त घनिष्ठ मित्र आर्थर हेलम की मृत्यु हो गयी तो उसने भी कहा — "मुझे कार्य में निमग्न रहना चाहिये, नहीं तो नैराश्य में टूट जाऊँगा।"

हम में से अधिकाश को चक्की चलाने में तथा अपना दैनिक कार्य करते करते उसमें तल्लीन हो जाने में कोई कठिनाई नहीं होती। किन्तु, कार्य के उपरान्त अवकाश के क्षण हमारे लिये बड़े भारी हो उठते हैं। उस समय जब कि अवकाश के कारण हमारा मन प्रसन्न रहना चाहिये, हम पर चिन्ता के बादल छा जाते हैं। हम विचार करने लगते हैं–" जीवन में हमारी प्रगति भी हो रही है या नहीं ? या उसी ढर्रे में पड़े हुए हैं।" या सोचते हैं–साहब ने आज जो सकेत किया था उसमें कोई रहस्य तो नहीं है। कही हम गजे तो नहीं होते जा रहे हैं।

जब हम निठल्ले रहते हैं तो हमारे मस्तिष्क में शून्यता आने लगती है। भौतिक विज्ञान का प्रत्येक विद्यार्थी इस बात को जानता है कि प्रकृति शून्यता पसन्द नहीं करती। मस्तिष्क की यह शून्यता अथवा रिक्तता जलते हुए बिजली के लट्टू के अन्दर की रिक्तता से बहुत कुछ मिलती जुलती होती है। आप उस लट्टू को तोड दीजिये और प्रकृति उस सैद्धान्तिक रिक्तता को वायु से भर कर समाप्त कर देगी। इसी तरह प्रकृति भी रिक्त अथवा शून्य मस्तिष्क को भरने के लिये दौड पडती है। सामान्यतः वह इस रिक्तता को मनोभावोंसे भरती है। क्यो कि चिन्ता, भय, घृणा, ईर्ष्या तथा स्पर्धाके मनोभाव प्राकृत ओज तथा प्राकृत चेतन-शक्ति से सचालित होते हैं। ये मनोभाव इतने प्रबल होते हैं कि वे मस्तिष्क से अन्य सभी शान्त एव सुखद विचारों एव मनोभावों को बाहर निकाल फेंकते हैं।

टीचर्स ट्रेनिग कॉलेज, कोलम्बिया के प्रशिक्षण अध्यापक जेम्स. एल. मुर्सेल इसी बात को बडे रोचक ढगसे कहते हैं — " चिन्ता का स्वभाव है कि वह आपपर

उस समय प्रवल रूपसे हावी होती है, जब आप अपने दैनिक कार्य से निवृत्त हो खाली बैठे रहते हैं। उस अवस्था में आपकी कल्पना भड़क सकती है। वह अनेक प्रकार की हास्यास्पद सभावनाओं की उद्भावना कर सकती है तथा आपकी प्रत्येक भूल को राई से पर्वत बना सकती है। वे यह भी कहते हैं कि ऐसे समय में आपका मस्तिष्क उस विना लोड (वजन) के चलने वाली मोटर के समान होता है, जो अत्यन्त तीव्र गति से भागती है और ऐसे समय में सारी मोटर के टुकड़े टुकड़े हो जाने तथा उसके पुर्जों के जल उठने का भय रहता है।" चिन्ता का उपचार यही है कि अपने को किसी रचनात्मक कार्य में पूर्णतया तल्लिन कर दिया जाए। इस सत्य का अनुभव करने तथा उसे कार्यरूप में परिणित करने के लिये यह आवश्यक नहीं कि आप कॉलिज के प्राध्यापक ही हो। युद्ध के दिनों में मै शिकागो की एक गृहस्थी महिला से मिला था। उसने मुझे एक घटना बताई जिसके द्वारा उसने यह महसूस किया कि "चिन्ता का उपचार यही है कि अपने को किसी सक्रिय कार्य में पूर्णतया तल्लिन कर दिया जाए।" न्यूयार्क से मिसोरी में अपने फार्म तक की यात्रा के दौरान में एक डायनिंग कार में इस दम्पति से मेरी मुलाकात हुई थी। (मुझे खेद है कि मैं उनके नाम नहीं जान सका। यों मै प्रामाणिकता सिद्ध करनेवाले नाम पते के विना कोई भी कहानी अथवा उदाहरण देना पसन्द नहीं करता) उस घटना का वर्णन करते हुए उन्होंने मुझे बताया कि पर्ल हारबर की घटना के बाद उनका इकलौता पुत्र सेना में भर्ती हो गया था। उस पुत्र की चिन्ता ने उस महिला के स्वास्थ्य को गिरा दिया था वह बार बार उसी के बारे में सोचा करती थी– वह कहाँ होगा? सुरक्षित तो होगा? क्या लड़ रहा होगा? क्या घायल हो गया होगा? कहीं वह मारा तो नहीं गया होगा! आदि। जब मैंने उसे पूछा कि उसने अपनी चिन्तापर किस प्रकार काबू पाया तो उसने बताया कि, "मैं व्यस्त रहने लगी।" उसने अपनी नौकरानी को छुट्टी देकर, घर भर का काम स्वयं करके, उसमें व्यस्त रहने का प्रयत्न किया। किन्तु इसमे उसे विशेष सफलता नहीं मिली। उसने कहा, "मेरी कठिनाई यह थी कि मैं घरभर का काम विना मस्तिष्क की सहायता लिये मशीन की तरह कर लेती थी। अत. मेरे मस्तिष्क मे चिन्ता ज्यों की त्यों बनी रहती। बिस्तर बिछाते या बर्तन धोते, मैंने महसूस किया कि मुझे कोई ऐसा काम करना चाहिये जो शारीरिक और मानसिक दृष्टि से मुझे प्रतिक्षण व्यस्त रख सके। इस दृष्टि से मैंने एक बड़े डिपार्टमेण्टल स्टोर में सेल्सवुमन की नौकरी कर ली।

इस काम मे मुझे अपने उद्देश्य में सफलता मिली, मैं अनेक कामों से घिरी रहने लगी। मेरे चारों ओर ग्राहक वस्तुओं के नाम, दाम, तथा रग पूछते हुए उमड़ने लगे। मुझे अपने तात्कालिक कार्य के अतिरिक्त किसी अन्य विषय पर सोचने का समय ही नहीं मिलता था। रात को भी थके हुए पैरों को विश्राम देने के अतिरिक्त अन्य कोई बात मुझे नहीं सूझती थी। भोजन करते ही मै बिस्तर में जा दुबकती और सो जाती। चिन्ता के लिये मेरे पास न तो समय ही था और न शक्ति ही।

जिस बात को जॉन कॉपर पॉविज ने 'दी आर्ट ऑफ फरगेटींग द अन्प्लेजेण्ट' (अरुचिकर को भूलने की कला) नामक पुस्तक में बताया था उसे उस महिला ने स्वतः ही अनुभव कर लिया था। जॉन कॉपर पॉविज का कहना है कि सुरक्षा, अगाध आन्तरिक शान्ति तथा सुखद स्तब्धता के भाव मनुष्य की नसों को व्यस्तता की अवस्था में आराम देते हैं।

ससार की अत्यन्त प्रसिद्ध महिला अन्वेषक ओसा जॉन्सन ने हाल ही में मुझे शोक एवं चिन्ता से छुटकारा पाने की अपनी कहानी सुनायी थी। आपने शायद वह कहानी पढ़ी भी होगी। कहानी का शीर्षक है, "आइ मेरीड़ एडवेंचर" सचमुच ही यदि किसी महिला ने उपक्रम को जीवन साथी बनाया तो इसीने। जब यह सोलह वर्ष की थी, मार्टीन जोन्सन के साथ इसका विवाह हो गया था। मार्टीन जोन्सन उसे केन्सास अन्तंगत चेनुट के नागरिक जीवन से दूर बोर्नियो के जगलों में ले गये। लगभग पचीस वर्षों तक ये केन्सास दम्पति ससार का भ्रमण करते रहे। नौ वर्ष पूर्व अमेरीका लौटनेपर उन्होंने व्याख्यान-माला का श्री गणेश किया और स्थान स्थान पर अपने प्रसिद्ध चलचित्रों का प्रदर्शन करने लगे। इसी दौरान में वे डेनवर के तटवर्ती प्रदेशों के दौरे के लिये एक हवाई जहाज से रवाना हुए। विमान यकायक मार्ग की उपत्यकाओं से टकरा गया और मार्टीन जॉन्सन इस दुनिया से चल बसे। डॉक्टरों को विश्वास हो गया था कि ओसा अब कभी भी बीमारी से नहीं उठ सकेगी। पर कदाचित् वे इस महिला को अच्छी तरह से नहीं जानते थे। इस दुर्घटना के तीन महीनोंके बाद ही पहियोंवाली कुर्सी में बैठकर उसने बड़ी बड़ी सभाओं में भाषण देना आरम्भ कर दिया। एक सत्र में ही उसने सौ सभाओं में भाषण दे डाले। जब मैंने उसे पूछा कि तुमने ऐसा क्यों किया? तो उत्तर में उसने बताया कि "मैंने समय काटने के लिये ही यह किया, ताकि मैं दुःखी और चिन्तित न रहू।"

ओसा जॉन्सन ने उसी सत्य का अनुभव किया जिसके बारे में सौ वर्ष पूर्व टेनिसन अपनी एक कविता-में कह चुके थे कि "मुझे कार्य में व्यस्त रहना चाहिये वरना मैं नैराश्य मे टूट जाऊंगा।"

एडमिरल बीर्ड ने भी इसी सत्यका अनुभव किया था। वह पाच महीनों तक दक्षिण ध्रुव मे फैली हिमानियों में धँसी हुई एक लकडी की कुटिया में अकेले रहे थे। ये हिमानियॉ अपने में प्रकृति के कई प्राचीनतम रहस्यों को समाये हुये हैं, और युरोप तथा अमेरीका के सम्मिलित आकार के, इस अजाने महाद्वीप को ढँके हुए हैं। एडमिरल बीर्ड ने अकेले ही वहॉ पाच माह व्यतीत किये थे। वहा की सौ मील की परिधि में किसी जीवित प्राणी का नामोनिशान भी नहा था। कड़ाके की सर्दी पड़ती थी। बर्फीली हवाएँ सनसनाती हुई उस के कानां के पास से गुजरती और उसकी सॉस अन्दर ही अन्दर भारी होकर जमती-सी सुनाई देती। अपनी 'अलोन'

(एकाकी) पुस्तक में एडमिरल बीर्ड ने उस हृदयविदारक एव घोर अन्धकार में बिताये हुए उन पाँच महीनों में प्राप्य अपने अनुभवों का वर्णन किया है।
वहाँ दिन भी रातों के समान ही अन्धकारमय होते थे। अपना मानसिक सतुलन बनाये रखने के लिये उन्हें व्यस्त रहना पडता था।

उन्होंने लिखा है, "रात को सोने के पूर्व सवेरे का कार्यक्रम बनालेने का मैंने एक नियम-सा बना लिया था। मैंने समय को अलग अलग कामों में बॉट दिया था। एक घण्टे तक भाग निकलने के लिये तैयार की गयी सुरग पर काम करता, आधा घण्टा दरारें भरने में लगाता, एक घण्टा ड्रम सीधे करने में लगाता, एक घण्टा रसद के लिये बनायी गयी सुरग की दीवारों में पुस्तकें रखने के लिये खण्ड बनाता तथा दो घण्टे आदमी से खींची जाने वाली स्लेज गाड़ी के पुर्जे ठीक करता।

"यह समय विभाजन बड़ा कमाल का था। इस के द्वारा मैं अपने आप पर कठोर नियन्त्रण रखने में सफल हो सका। बिना इस के या ऐसी ही किसी अन्य व्यवस्था के मेरा दैनिक जीवन निरुद्देश्य हो जाता और उस का परिणाम यह होता कि मेरा जीवन विशृखलित हो जाता।"

यदि हम चिन्तित हैं तो हमें पुरानी चिकित्सा पद्धति के अनुसार औषध-सेवन न कर व्यस्तता का उपचार करना चाहिये। यह बात हावर्ड के 'मेडीसिनल क्लिनिक' के भूतपूर्व प्राध्यापक स्वर्गीय डॉक्टर रिचार्ड सी. केबट जैसे आधिकारिक व्यक्ति द्वारा कही गयी है। अपनी पुस्तक वॉटमेन लिव बाई' में उन्होंने बताया है कि एक चिकित्सक के नाते मुझे यह देख कर बड़ी प्रसन्नता हुई है कि प्रबल आशका, असमजस, भय तथा दुविधा की स्थिति से उत्पन्न व्याधि से पीडित व्यक्ति काम मे सलग्न रह कर निरोग हो जाते हैं। काम करने से रोगी मे साहस पैदा होता है। यह स्वावलबन के समान है और इसे इमरसन ने सदैव के लिए गौरवपूर्ण बना दिया है।

यदि मैं और आप कार्यव्यस्त न रह कर बैठे बैठे चिन्ता ही में घुला करें तो चार्ल्स डार्विन के शब्दों में हम अपने भीतर ऐसे कीटाणुओं का पोषण करने लगेंगे जो हमें अन्दर ही अदर खोखला बना देंगे और हमारी कार्यक्षमता एव इच्छा-शक्ति को नष्ट कर देंगे।

मैं न्यूयॉर्क के एक ऐसे व्यवसायी को जानता हू जिसने व्यस्त रह कर मन में उठने वाली आशकाओं से सघर्ष किया। वह इतना व्यस्त रहने लगा कि उत्तेजित एव क्रोधित होने का उसे समय ही नहीं मिलता था। उस व्यापारी का नाम ट्रेम्पर लॉगमेन है और ४० वॉल स्ट्रीट में उस का ऑफिस है। वह मेरे द्वारा सचालित प्रौढ कक्षाओं का विद्यार्थी था। 'चिन्ता पर विजय कैसे प्राप्त की जाए' इस विषय पर उसने इतना प्रभावशाली एव मनोरजक भाषण किया कि कक्षा समाप्त होते ही मैंने उसे अपने साथ रात का भोजन करने के लिये आमन्त्रित किया। होटल में आधी रात से अधिक समय तक बैठे बैठे हम उसके अनुभवों के बारे में बातचीत

करते रहे। उसी दौरान में उसने एक घटना का उल्लेख किया—"अठारह वर्ष पूर्व चिन्ता के कारण मुझे अनिद्रा-रोग हो गया था। मैं क्रुद्ध चिड़चिडा और उत्तेजित रहने लगा। मुझे लगा कि मैं धीरे धीरे स्नायु-रोग का शिकार बनता जा रहा हू।

मेरी चिन्ता के कई कारण थे। न्यूयार्क अन्तर्गत ४१८ वेस्ट ब्रोडवे की क्राउन फ्रुट एण्ट एक्सट्रेक्ट कपनी का मैं खजाची था। हमने गेलन के नाप के टीनों मे स्ट्रॉबेरी भरवा कर पाच लाख डालर खर्च कर दिये। गत बीस वर्षो से यह टीन में भरी स्ट्रोवेरी हम आइसक्रिम बनाने वालों को बेचते आये हैं। यकायक हमारी बिक्री ठप हो गयी क्यों कि नेशनल डेरी और बोर्डेन जैसे आइसक्रिम बनानेवाले व्यवसायी बड़ी तेजी से अपना उत्पादन बढा रहे थे। स्ट्रॉबेरी के टीन न खरीद कर वे उनके बेरल खरीदने लगे और इस प्रकार समय एवं पूँजी की बचत करने लगे। नतीजा यह हुआ कि हमारे पास पाच लाख डालर के मूल्य की स्ट्रॉबेरी टीनों में भरी रह गयी। इसके अलावा आगामी बारह महीनों के लिये दस लाख डालर के मूल्य की स्ट्रॉबेरी खरीदने का अगाऊ सौदा भी हम कर चुके थे। बैंक से पहले ही पेंतीस लाख डालर का ऋण लिया जा चुका था। हमारे लिये उस ऋण का भुगतान करना अथवा उसे रीन्यु करवाना असम्भव था और इस लिये यदि मुझे चिन्ता थी तो आश्चर्य ही क्या?

मैं केलिफोर्निया अन्तर्गत वाटसनविले नामक स्थान पर गया जहाँ पर हमारा कारखाना था। मैंने वहाँ अपने प्रेसिडेन्ट को बहुत समझाया कि इन बदली हुई परिस्थितियों के फलस्वरूप हमारा धन्धा नष्ट हो जायगा। किन्तु उन्होंने विश्वास नहीं किया और सारा-दोष न्यूयार्क के ऑफिस के मात्थे मँढ दिया। बेचारा कर्मचारी कई दिनों के लगातार अनुरोध के बाद कहीं उन्हें सहमत कर सका कि अब अधिक स्ट्रॉबेरी टीनों मे न भरी जाएँ तथा नये माल को सेनफ्रान्सिस्को मे नये बाजारभाव पर बेच दिया जाए। ऐसा करने से हमारी समस्याएँ लगभग सुलझ गयीं। इस के साथ ही मेरी चिन्ता का भी अन्त हो जाना चाहिये था किन्तु ऐसा हुआ नहीं, क्यों कि चिन्ता भी एक आदत है जो एकाएक नहीं छूटती, और यही बात मेरे साथ हुई।

"न्यूयार्क से लौटने पर मैं हर बात के लिये परेशान रहने लगा। इटली से हमें चेरी खरीदनी थी, अनन्नास हमें 'हवाई' से खरीदने थे, इन सभी चिन्ताओं के कारण मैं उत्तेजित एव क्षुब्ध रहने लगा। नींद गायब हो गयी और जैसा कि पहले ही बता चुका हूँ मैं स्नायु रोग की ओर बढने लगा।

उस नैराश्य में भी मैंने जीने की एक युक्ति ढूँढ ही निकाली, जिसने मेरे अनिद्रा-रोग को ठीक कर दिया और जिस से मेरी चिन्ता लुप्त हो गयी। मैं व्यस्त रहने लगा और अपनी समस्त शक्ति के साथ समस्याओं के समाधान में जुट गया। पहले मैं दिन मे सात घण्टे काम करता था किन्तु अब पन्द्रह सोलह घन्टो तक काम करने लगा—सवेरे आठ बजे ऑफिस जाता और आधी रात से भी अधिक समय तक वहीं काम में फँसा रहता, मैंने अपने पर और भी कुछ नया काम और नयी

जिम्मेदारियाँ ले ली थीं। आधी रात को जब मैं घर लौटता तो इतना थका होता कि बिस्तर में गिरते ही गहरी नींद सो जाता।

लगभग तीन महीनों तक यही हाल रहा। चिन्ता की आदत तब तक लगभग छूट चुकी थी और मैं पुनः अपने उसी सामान्य आठ घण्टों के काम पर आ गया। यह बात अठारह वर्ष पहले की है तब से अब तक मैं कभी अनिद्रा-रोग का शिकार नहीं हुआ हूँ।

जॉर्ज बर्नार्ड शॉ ने एक बड़ी ही सारभूत बात कही है कि, " खाली समय में अपने सुख-दुःख पर विचार करना ही हमारे दुःखी होने का कारण है, इस लिये ऐसी बातें न सोचिये। यदि करने धरने को और कुछ न हो तो मक्खियाँ ही मारा कीजिये पर बेकार न बैठिये। ऐसा करने से आप का रक्त सचालन ठीक तरह से होगा। आप के मस्तिष्क की चेतना जाग उठेगी और उस की लहर शीघ्र ही चिन्ता को दूर कर देगी। काम कीजिये और व्यस्त रहिये। यह सब से उत्तम विचार है।

चिन्ता निवारण का पहला नियम-व्यस्त रहिये, चिन्तित व्यक्ति को चाहिये कि वह हर वक्त व्यस्त रहे, नहीं तो नैराश्य में डूब जाएगा।

७ : अपने को घुन से बचाइये

मै इस नाटकीय घटना को सम्भवतः जीवन भर न भूल सकूँ। यह घटना मुझे रॉबर्ट मूर ने बतायी थी, जो न्युजर्सी अन्तर्गत १४ हाई लेण्ड एवेन्यु के मेपल-वुड के निवासी हैं।

घटना का विवरण देते हुए उन्होंने बताया—"उन्नीस सौ पैंतालिस के मार्च महीने मे हिन्द चीन के समुद्री तट से दूर दो सौ छह्त्तर फ़ुट पानी के नीचे मैंने जीवन का यह महत्त्व पूर्ण अनुभव प्राप्त किया था। मै पनडुब्बी, यू. एस. एस. तीन सौ अठारह के अट्ठासी व्यक्तियो मे से था। हमने रडार यन्त्रद्वारा मालूम कर लिया था कि एक छोटा सा जापानी पोत-समूह हमारी ओर बढता चला आ रहा है, दिन निकलते ही उस पर आक्रमण करने के लिये हम पानी के नीचे बैठ गये। पेरिस्कोप द्वारा मैंने देख लिया था कि एक जापानी विध्वंसक, एक टेन्कर और एक माइन-लेयर हमारी ओर बढ रहे हैं। हमने तीन तारपिडो विध्वंसक की ओर छोडे, किन्तु कुछ यान्त्रिक गडबड़ी के कारण निशाना चूक गया। विध्वंसक को हमारे आक्रमण का पता ही न चला और वह आगे बढ़ता ही गया। अब हम अन्तिम पोत माइन-लेयर पर आक्रमण करने की तैयारी करने लगे, किन्तु यकायक वह मुड़ा और हमारी तरफ़ सीधे बढने लगा। एक जापानी विमान नें हमें साठ फ़ीट की गहराई में देख लिया था, और रेडियो द्वारा इस की सूचना माइन-लेयर को दे दी थी। उनकी दृष्टि से ओझल होने के लिये हम एक सौ पचास फ़ीट की गहराई में चले गये और वहीं से आक्रमण करने की तैयारी करने लगे। हमने हेचेज पर अतिरिक्त बोल्ट लगाये तथा पनडुब्बी को ध्वनि-रहित करने के लिये पखे, ठढक के यन्त्र तथा अन्य इलेक्ट्रिकगियर बन्द कर दिये।

तीन मिनट के बाद तो विपत्ति का पहाड टूट ही पडा। छः बार हमारे चारों ओर धडाके हुए और उन्होंने हमे दो सौ छह्त्तर फ़ीट की गहराई में बैठ जाने के लिये बाध्य कर दिया। हम घबरा उठे। हजार फ़ीट से कम की गहराई में किया गया आक्रमण खतरनाक होता है। किन्तु पाँच सौ फ़ीट से कम की गहराई में तो वह सचमुच ही घातक होता है। फिर हम पर तो दो सौ छह्त्तर फ़ीट की गहराई मे ही आक्रमण किया जा रहा था। सुरक्षा की दृष्टि से यह गहराई घुटने तक की गहराई के समान थी। पन्द्रह घण्टों तक जापानी माइन-लेयर हम पर लगातार गोले बरसाता रहा। यदि किसी भी पनडुब्बी के सत्रह फ़ीट के आसपास कोई विस्फोट हो जाए तो उसमें छेद हो जाता है। किन्तु वे जो बीसियों विस्फोट थे, हमारे पचास फ़ीट की दूरी पर हुए थे। सुरक्षा के लिये हमे अपने स्थानो पर एकदम चुपचाप लेटे रहने की आज्ञा मिली थी। मै इतना डर गया था की साँस तक लेना कठिन हो गया। मैं बार बार मौत-मौत रटने लगा। पखे तथा शीतकर-यन्त्रों के बंद हो जाने के कारण पनडुब्बी का तापमान सौ से कुछ अधिक हो गया था किन्तु भय के कारण मै इतना ठण्डा पड गया था कि मैंने स्वेटर और फ़र के अस्तर वाला जाकेट पहन लिया। फिर भी सर्दी से ठिठुरता ही रहा।

मेरे दाँत कडकडाने लगे और पसीना हो आया। पन्द्रह घण्टे बाद आक्रमण यकायक रुक गया। उनकी आक्रमण सामग्री शायद समाप्त हो चुकी थी इस लिये माइन-लेयर वहाँ से रवाना हो गया। पन्द्रह घण्टों का यह आक्रमण पन्द्रह वर्षों तक होने वाले आक्रमण के समान लगा। मेरे सामने अपनी सारी जिन्दगी नाच उठी। मैंने अपने सारे दुष्कृत्यों तथा बेकार की छोटी छोटी बातों का स्मरण किया जिनके कारण मैं चिन्तित रहा करता था। नौ-सेना में नौकरी करने के पहले मैं एक बैंक में क्लर्क का काम करता था। काम अधिक था और वेतन कम। उन्नति के सुयोग भी कम थे और इसलिये मैं चिन्तित रहा करता था। मुझे हर बात की चिन्ता थी – मेरा अपना घर नहीं था, मोटर नहीं थी, यहाँ तक कि अपनी पत्नी के लिये अच्छे कपड़े भी नहीं खरीद सकता था। अपने पुराने अधिकारी से मैं घृणा करता था, क्यों कि वह सदैव चीढता और डाँटता फटकारता रहता था। मुझे याद है कि किस प्रकार मैं उदास और दुःखी होकर घर लौटता और कई छोटी छोटी बातों को लेकर अपनी पत्नी से झगड बैठता। मेरे ललाट पर घाव का एक भद्दा चिह्न था, वह भी मेरी चिन्ता का कारण बना हुआ था। यह एक मोटर दुर्घटना में बन गया था।

कई वर्षों पूर्व सभी चिन्ताएँ मुझे बड़ी भयानक लगती थीं किन्तु समुद्रतल में धडाकों के समय, जब मृत्यु का भय था, पहले की सभी चिन्ताएँ नगण्य लगने लगीं। मैंने उसी समय प्रतिज्ञा की कि यदि मैं समुद्र की सतह पर लौट जाऊं तो फिर कभी चिन्ता नहीं करूँगा। मैंने पनडुब्बी के भीतर उन पन्द्रह घण्टों की अवधि में जीने की कला के विषय में जो कुछ सीखा वह सीरेक्यूज विश्व विद्यालय में चार वर्ष तक किये अध्ययन से प्राप्त पुस्तकज्ञान से अधिक महत्वपूर्ण था। हम बहुधा जीवन की विकट परिस्थितियों का साहस और धैर्य से मुकाबला कर लेते हैं पर छोटी छोटी बातों को अपने पर हावी होने देते हैं। इस विषय पर एक उदाहरण देखिये – 'सेमुअल पेपीज' ने अपनी डायरी में लन्दन में हेरी वेन का सिर धड से उडाए जाने की घटना का वर्णन इस प्रकार किया है – जब सर हेरी मंच पर चढे उन्होंने जल्लादों से जीवन की भीख नहीं माँगी, किन्तु उनसे इतना अनुरोध अवश्य किया कि वे उनकी गर्दन के दुखते फोड़े पर प्रहार न करें।

ऐसा ही अनुभव बीर्ड को ध्रुव प्रदेश की भयकर शीतल और काली रातों में अपने उन साथियों से हुआ जो अपनी गर्दन की पीडा को बडी बडी विपत्तियों से भी अधिक कष्टकर समझते थे। उन्होंने सभी खतरों, कठिनाइयों तथा शून्य से अस्सी डिगरी कम तक के तापमान को बिना किसी शिकायत के सह लिया था, किन्तु वे ही लोग जब तग जगह में सोते तो बडबड़ाते रहते, क्यों कि प्रत्येक को एक दूसरे पर सन्देह रहता कि वह उस के स्थान पर खिसक आता है। उनमें से एक आदमी ऐसा भी था जो मेस हॉल में जब तक ऐसा स्थान नहीं पा लेता, जहाँ से फ्लेचे

इस्ट को, जो ग्रास को अट्ठाइस बार चबा कर निगलता था, देख सके, भोजन नहीं करता था।

एडमिरल बीर्ड का कहना है कि ऐसी छोटी छोटी बाते अनुशासनप्रिय व्यक्तियों तक में उन्माद ला देती थीं।

"आप यह भी कह सकते हैं", एडमिरल बीर्ड ने कहा, दाम्पत्य जीवन की छोटी छोटी बातें प्रायः उन्माद तथा मानसिक पीडाओं का हेतु बन सकती हैं।

अन्य आधिकारिक व्यक्ति भी यही कहते हैं। शिकागो के जज जॉसेफ साबथ ने, जिन्होंने लगभग चालीस हजार दुःखी पति-पत्नियों में बीच-बचाव किया था, घोषित किया कि दुःखी दाम्पत्य जीवन के मूल मे अधिकाशतया छोटी छोटी बातें एव घटनाएं ही होती हैं। न्यूयार्क के जिला एटर्नी फ्रैंक एस. होगन का भी कथन है कि हमारे न्यायालयों के आधे झगड़े छोटी छोटी बातों से पैदा होते हैं। बार-रूम वाद-विवाद, घरेलू-झगडा, अपमानजनक शब्द, भद्दा व्यवहार आदि छोटी छोटी बाते मार पीट और खून का हेतु बनती हैं। हम मे से बहुत कम व्यक्तियो के साथ कोई बड़ाभारी अपराध किया जाता है। नसार की आधी मुसीबत स्वाभिमान पर ठेस, अभद्रता तथा मिथ्याभिमान के भावों के कारण पैदा होती हैं।

जब एलेन्योर रुजवेल्ट विवाह कर के आयीं तो कई दिनो तक वे चिन्तित रहीं, क्यों कि उनका रसोइया भोजन अच्छा नहीं बनाता था। किन्तु श्रीमति रुजवेल्ट कहती हैं – "यदि अब वैसी कोई बात हो तो मै उसकी अवगणना कर दूँ।" ठीक है, प्रौढ व्यक्ति के मनोभाव ऐसे ही होने चाहिएँ। यहाँ तक कि एकदम निरकुश एव महान केथराइन भी यदि उसका रसोइया खाना बिगाड़ देता तो हँस कर उस बात को टाल देती थीं।

एक बार श्रीमति कार्नेगी और मै शिकागो मे अपने एक मित्र के घर भोजन करने गये। भोजन करते समय गोश्त की बोटी तोडने मे मेरे मित्र ने कुछ भूल कर दी, जिसका मुझे कुछ खयाल ही न रहा और यदि खयाल रहता भी तो मैं उसकी पर्वाह नहीं करता और उसे देखा–अनदेखा कर देता। किन्तु जब उसकी पत्नी ने यह बात देखी तो एकदम तुनक उठी और कहने लगी – "यह क्या कर रहे हो जॉन, क्या तुम्हें ठीक तरह से खाना भी आएगा!"

तब उसने हमारी ओर मुड कर कहा "ये सदा गलतियाँ करते रहते हैं, अपने को सुधारने का प्रयास तक नहीं करते।" सम्भव है उस व्यक्ति ने गोश्त काटना सीखने का प्रयास न भी किया हो। किन्तु फिर भी बीस साल तक ऐसी पत्नी के साथ निर्वाह करने के उसके प्रयत्नों के लिये मैं उसकी दाद दिये बिना नहीं रह सकता। कम से कम मै तो डॉट-डपट सुन कर स्वादिष्ट व्यजन खाने के बनिस्बत चिर शान्ति के वातावरण में सूखी रोटी खाना ज्यादा पसद करूँगा।

उस अनुभव के कुछ ही दिनों बाद मैंने और मेरी पत्नी ने कुछ मित्रों को भोजन के लिये आमन्त्रित किया। वे आने ही वाले थे कि मेरी पत्नी को पता चला कि जितने नेपकीन हैं उनमें से तीन टेबल क्लॉथ से मेल नहीं खाते।

"मैं रसोइये के पास दौड़ी गयी," उसने मुझे बाद में बताया, "मुझे पता चला कि दूसरे तीन नेपकीन धोबी के यहा हैं। इधर अतिथि दरवाजे पर आ गए थे। उन्हें बदलने का समय भी न था। मैं रुआसी हो गयी और सोचा–इस मामुली-सी गलती ने मेरा सारा मजा किरकिरा कर दिया! तब मैंने सोचा–होगा! और मै आनन्द से समय गुजारने का निश्चय कर भोज मे सम्मिलित हो गयी, और मैंने भोज का खासा आनन्द उठाया। मैंने सोचा ज्यादा से ज्यादा हमारे मित्र यह कह सकते हैं कि मै लापरवाह गृहिणी हूँ किन्तु उनका ऐसा समझना ज्यादा अच्छा है बनिस्बत इसके कि वे मुझे खर-दिमाग औरत समझें। जो भी हो, मेरे खयाल से किसीने भी नेपकीन पर ध्यान नहीं दिया।

कानून का एक बहुत ही प्रसिद्ध सूत्र यह है कि 'कानून निरर्थक बातों को महत्त्व नहीं देता,' इस तरह मन में शान्ति चाहनेवाले व्यक्ति को निरर्थक बातों को कोई महत्त्व नहीं देना चाहिये।

किसी तुच्छ घटना के कारण उत्पन्न क्रोध पर विजय पाने के लिये कई बार हमें मन के नवीन एव सुखद दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है, और उसपर विशेष बल देना होता है। मेरे एक मित्र होमर क्रॉय ने 'दे हेड टु सी पेरीस' तथा दूसरी कई पुस्तकें लिखी हैं। वे इस सबध में एक विचित्र उदाहरण देते हैं–पुस्तक लिखते समय जब वे अपने न्यूयॉर्क के घर मे रेडियेटरों की टरटराहट सुनते तो पागल से हो उठते थे। इधर भाप की सिसकारी छूटती और उधर वे लिखते लिखते तिलमिला उठते।

होमर क्रॉय ने इस बारे में बताया–एक बार मैं अपने कुछ मित्रों के साथ शिकार पर गया। वहाँ मैंने देखा कि आग मे पकते हुए मास के चटखने की आवाज रेडियेटरों की आवाज से बहुत कुछ मिलती जुलती थी। पर यह आवाज मुझे अच्छी लगती थी जब कि रेडियेटरो की उस टरटराहट से मै घृणा करता था। मैंने सोचा–ऐसा क्यों होता है? घर आकर मैंने इस समस्यापर विचार किया और शोरगुल की चिन्ता किये बिना आराम से सो जाने का निश्चय किया। कुछ दिनों तक तो रेडियेटरों की टरटराहट मेरे कानो में गूजती रही किन्तु शीघ्र ही मैं उसे भूल गया।

हमारी छोटी छोटी चिन्ताओं के साथ भी यही बात लागू होती है। हम केवल उसी बात पर क्षुब्ध होते हैं जिसे पसन्द नहीं करते।

डिजरायली ने कहा है कि "जीवन तुच्छ बातों में गवाँने के लिए नहीं हैं।" आन्द्रे मोरुआ ने अपने साप्ताहिक 'दिस वीक' मे लिखा है कि इन शब्दों ने कई कटु अनुभवों में मेरा साथ दिया है। प्रायः जिन तुच्छ बातों को हमें भूल जाना चाहिये

और उनकी उपेक्षा कर देनी चाहिये उन्हीं से हम घबरा उठते हैं। इस ससार में हमारा जीवन काल सीमित है, फिर भी हम कितने ही अमूल्य क्षण, जो कभी लौट कर नहीं आते, उन छोटी छोटी बातों पर परेशान हो कर नष्ट कर देते हैं, हम सभी अन्त में उन्हें भूल जाते हैं। हमें अपने जीवन को अच्छे कामों, अच्छी भावनाओं, महान विचारों, सच्चे स्नेह तथा स्थाई उद्योग में लगा देना चाहिये, क्यो कि तुच्छ बातें जीवन को तुच्छ बना देती हैं।

रुडयर्ड किपलिग जैसा प्रसिद्ध व्यक्ति भी कभी कभी भूल जाता था कि तुच्छ बातें जीवन को तुच्छ बना देती हैं और इसका परिणाम यह हुआ कि उसे अपने साले के विरुद्ध वरमोण्ट अदालत में बड़ा सनसनी खेज मुकदमा लडना पडा। यह मुकदमा इतना प्रसिद्ध हुआ कि इसपर 'रुडयर्ड किपलिंग्ज वरमोण्ट फ्युड' (रेडियर्ड किपलिंग का वरमोण्ट का झगडा) नामक एक पुस्तक भी लिखी गयी।

यह झगडा इस प्रकार हुआ-किपलिंगने वरमोण्ट की केरोलिन वेलेस्टियर नाम की एक लडकी से विवाह किया था। उसने वरमोण्ट के अन्तर्गत ब्रेटल बोरो में एक सुंदर मकान बनवाकर अपना शेष जीवन उसी मकान में बिताने का इरादा किया। उसका साला विटी वेलेस्टीयर किपलिंग का गहरा मित्र बन गया था, दोनोंही साथ साथ काम करते और खेलते थे।

उन दिनों किपलिगने वेलेस्टियर से कुछ जमीन खरीदी थी, इस शर्त पर कि वेले-स्टियर को हर साल वहाँसे घास काटने दी जायगी। एक दिन वेलेस्टियर ने देखा कि वहाँ उस घास के मैदान मे किपलिंग फूलों का बाग लगा रहा है। उसका पारा चढ गया और उसे चुनौती दे दी। किपलिंग ने भी उसे वैसा ही जवाब दिया। वरमोण्ट की पहाडियोंका वातावरण उग्र हो उठा। एक दिन जब किपलिग अपनी साइकल पर जा रहा था कि उसके साले ने सड़क के बीच घोडा-गाड़ी अड़ा दी और किपलिग को हटने के लिये बाध्य किया। इधर किपलिग ने जिसने एक जगह लिखा है कि, क्याही अच्छा हो यदि आप ऐसे समय पर जब कि दूसरे अपना सतुलन खोकर आपको दोष दे रहे हो, अपने मस्तिष्क का सतुलन रख सकें—स्वयं अपना सतुलन खो दिया और वेलेस्टियर को कैद करवाने के लिये वारण्ट निकलवाने की सौगन्ध ले ली। फिर क्या था! सनसनी खेज मुकदमा शुरू हो गया। बडे बडे नगरों से सवाददाता कस्बे में उमडने लगे। ससार के कोने कोने में यह खबर फैल गयी। नतीजा कुछ नहीं निकला सिवा इसके कि किपलिग और उसकी पत्नी को जीवन भर के लिये अपना अमेरिका का मकान छोड़ देना पडा। इतनी चिन्ता और इतना क्लेश! और वह भी घास जैसी तुच्छ वस्तु के लिये!

चौबीस सौ वर्ष पूर्व पेरीकल्स ने कहा था, "भाइयों हम बेकार की बातों को बहुत तूल देते है।" और सचमुच में हम यही करते हैं।

लीजिये, डॉक्टर हेरी एमरसन फोसडिक द्वारा कही गयी एक मजेदार बात सुनिये, यह कहानी जगल के एक बहुत बडे वृक्ष की है जिसने अपने जीवन में कितनी ही लडाइयॉ जीती हैं और हारी हैं।

कॉलरेडो की लोंगपीक की ढाल पर एक विशाल पेड़ का खोखर है। प्रकृति विज्ञान के जानकार उसकी उमर चार सौ वर्ष बताते हैं। उनका कहना है कि जब कोलम्बस सेल सल्वाडर के किनारे उतरा था तब यह खोखर अकुर के रूप मे तथा प्लिमथ में पिलग्रीम्स के बसने के समय यह अर्धविकसित रहा होगा। इसके जीवन काल में चौदह बार इस पर बिजलियॉ गिरीं और चार सौ वर्षों से, तूफान और हिमानियों के असख्य आघात इसने सहे, फिर भी जीता रहा। आखिर गोबरेलों की सेना ने उसपर धावा बोल दिया और उसे धराशायी कर दिया, इस की छाल को कुतर कुतर कर उन कीडो ने इसके अन्दर रास्ता बनाया और धीरे धीरे निरन्तर आक्रमणों द्वारा उस पेड की आन्तरिक शक्ति नष्ट कर दी। जगल का यह विशाल वृक्ष काल से नहीं मिटा, बिजली से नष्ट नहीं हुआ, तूफानो से नहीं हारा पर अन्त में उन छोटे कीडों से हार गया, जिन्हें आदमी अपनी अॅगुलियों और अंगूठे के बीच मसल सकता है।

इसी प्रकार हमारे जीवन मे भी विचित्र तूफान आते हैं, हिमपात होता है, बिजलियॉ गिरती हैं, पर हम नष्ट नहीं होते, किन्तु चिन्तारूपी गोबेरलों से जिन्हें हम अपनी अगुलियों से मसल सकते हैं, मात खा जाते हैं।

कुछ वर्ष पूर्व मैंने वियोमीग अन्तर्गत टेटन नॅशनल पार्क की यात्रा की थी। मैं वियोंमाग राज्य के हाईवे सुपरिन्टेण्डेण्ट मिस्टर चार्ल्स सेफ्रेड तथा कुछ अन्य मित्रों के साथ था। हम सब पार्क की जॉन. डी. रोकफेलर इस्टेट देखने जा रहे थे। जिस मोटर मे मैं यात्रा कर रहा था उसने गलत मोड ले लिया और हम भटक गये, हम इस्टेट के प्रवेश द्वार पर एक घण्टा देर से पहुॅचे। प्राइवेट दरवाजे की चाबी मि. सेफ्रेड के पास थी इसलिये उन्होंने मच्छरों से भरे हुए झुलसनेवाले उस जगल में एक घण्टे तक हमारी प्रतीक्षा की। वहॉ मच्छर इतने थे कि किसी सन्त को भी वे पागल बना देते। किन्तु चार्ल्स सेफ्रेड का वे कुछ नहीं बिगाड सके। उन्होंने एक पेड की टहनी काटकर एक सीटी बनाली। हमने आकर देखा कि मच्छरों को कोसने के बजाय वे सीटी बजा रहे थे। मैंने उस सीटी को, उस व्यक्ति की याद में जो निकम्मी बातो को यथास्थान रखना जानता है अपने पास रख छोडा है।

चिन्ता आपको मिटा दे उसके पूर्व आप चिन्ता को कैसे मिटा सकते हैं ?

अवगणना करने योग्य तुच्छ बातों पर हमें क्षुब्ध नहीं होना चाहिये। याद रखिये कि जीवन तुच्छ बातों में गवॅाने के लिए नहीं है।

☆

८ : यह नियम आपकी अनेक चिन्ताओं का परिहार कर देगा

मेरा बचपन मिसौरी के अपने फार्म पर बीता था। एक दिन मैं चेरी की गुठलियाँ निकालने में अपनी माँ का हाथ बँटा रहा था कि एकाएक चीख पड़ा। माँ ने पूछा—"क्या बात है डेल, क्यों चीख रहे हो?" रोते रोते मैंने उत्तर दिया "मुझे लगता है कि मैं जिन्दा ही धरती में समा जानेवाला हूँ।"

अस्तु, उन दिनों मुझे बहुत चिन्ता रहती थी। जब बादल गरजते, मुझे बिजली से मरने का भय लगता। मुझे चिन्ता रहती थी कि दुःख के दिनों में हमें पेट भर भोजन नहीं मिलेगा। मुझे इस बात का भी भय था कि साम वाइट जो उम्र में मुझ से बड़ा था मेरे बड़े बड़े कान काट डालेगा; वह मुझे अक्सर धमकाया करता था। मुझे इस बात की भी चिन्ता रहती थी कि अभिवादन करने पर लड़कियाँ मेरी हँसी उड़ाएँगी। मुझे चिन्ता थी कि कोई भी लड़की मुझसे शादी नहीं करेगी। और शादी हो भी गई तो मैं उससे बातचीत कैसे शुरू करूँगा? मैं कल्पना करता—देहाती चर्च में मेरा विवाह होगा, झालरदार गाड़ी में बैठकर हम अपने फार्म पर जाएँगे, पर चिन्ता यह थी कि रास्ते में बातचीत का सिलसिला कैसे निभाया जायगा? न जाने क्या होगा? हल चलाते समय मैं घण्टों अपनी इन समस्याओं पर विचार किया करता।

किन्तु ज्यों ज्यों वर्ष बीतते गये मैं महसूस करता गया कि नब्बे प्रतिशत चिन्ताएँ एकदम बेकार थीं, वे बातें कभी नहीं हुई।

उदाहरणार्थ—जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूँ, मुझे बिजली गिरने का बड़ा भय लगा रहता था किन्तु आज मैं जानता हूँ कि नेशनल सेफ्टी कौन्सिल के आकड़ोंके अनुसार तीन सौ पचास हजार व्यक्तियों में केवल एक व्यक्ति की मृत्यु बिजली गिरने के कारण होती है। इस तरह यदि मेरे मरने की सम्भावना थी, चाहे वह किसी भी वर्ष क्यों न हो तो केवल उतनी ही।

धरती में जिन्दा धँस जाने का भय तो और भी वाहियात था, मेरे ख्याल से एक करोड़ व्यक्तियों में केवल एक व्यक्ति ही ऐसी दुर्घटना का शिकार होता होगा; फिर भी इसी भय के कारण मैं एकबार रो पड़ा था।

यदि चिन्ता का कोई कारण हो भी तो कैन्सर होना चाहिये। क्योंकि प्रति आठ व्यक्तियों में से एक की मृत्यु कैन्सर से होती है।

मेरी चिन्ता की ये सारी बातें उस अवस्था की हैं जब मैं छोटा था। किन्तु प्रौढावस्था की भी बहुतसी चिन्ताएँ ऐसी ही वाहियात होती हैं। यदि हम लम्बे समय तक अपनी चिन्ताओं पर झल्लाना छोड़कर, औसत नियम को लागू कर, चिन्ताओं का कोई औचित्य जानने का प्रयत्न करें तो कदाचित् दस में से नौ चिन्ताएँ अपने आपही मिट जाएँ।

कभी कभी होनेवाली, इन घटनाओं के विषय में चिन्तित रहने की हमारी इस कु-प्रवृति के कारण ही, लन्दन की प्रख्यात लायड्स इन्स्योरेन्स कम्पनी ने करोड़ो

रुपये कमा लिये हैं। लन्दन की यह इन्श्योरेन्स कम्पनी लोगो से शर्त लगाती है कि भावी अनिष्ट की आपकी चिन्ता निर्मूल है इसे वे जुआ न कह कर इन्शोरेन्स कहते हैं। किन्तु वास्तव में यह है जुआ ही जो औसत-नियम पर आधारित है। गत दो सौ वर्षो से यह इन्शोरेन्स कम्पनी फलती-फूलती आरही है और यदि मानव प्रकृति में परिवर्तन न हुआ तो आनेवाले पचास हजार वर्षों तक यह इसी प्रकार फलती-फूलती रहेगी तथा उन विपत्तियों की खातिर जो औसत-नियम के अनुसार अक्सर नहीं आतीं, जहाजो, जूतों तथा मोम जैसी वस्तुओं का बीमा भी करती रहेगी।

यदि हम औसत-नियम पर विचार करें तो इसके तथ्यनिरूपण पर हम चकित रह जाएँ। उदाहरणार्थ-यदि मुझे पहले ही से ज्ञात होता कि आगामी पाच वर्षों में गीट्सवर्ग के युद्ध के समान ही भीषण युद्ध आरम्भ हो जाएगा, तो मैं खतरे के कारण जीवन बीमा की समस्त धन राशी यथासम्भव निकलवा लेता। अपनी वसीयत लिख कर सभी लौकिक मामलो को तरतीब दे देता, मैं सोचता- "मैं इस युद्ध मे जिन्दा नहीं बचूँगा, इसलिये अच्छा यही है कि जीवन के शेष वर्षों का अधिक से अधिक लाभ उठा लिया जाए। किन्तु औसत-नियम के अनुसार चाहे वह शान्ति काल ही क्यों न हो पचास से पचपन वर्षो की अवस्था के लोगों के लिये जीवन में उतनी ही घात और उतना ही खतरा रहता है जितना कि गीट्सबर्ग की लड़ाई लड़ने में था। मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि शान्तिके समय भी पचास से पचपन वर्ष की आयु वाले व्यक्तियों की मृत्यु की जो प्रति सेकड़ा सख्या होती है वही सख्या गीट्सवर्ग में लड़ने वाले १,६३,००० सैनिकों में से जितने मर गये थे उनकी थी।

इस पुस्तक के बहुत से परिच्छेद मैंने ग्रीष्म काल में केनेडियन रॉकीज की बॉ लेक के तटपर जेम्स सेमसन की नुमटीगाह लॉज में लिखे हैं। जिन दिनों मैं वहा रहता था सेनफ्रासिसको अन्तर्गत २२९८ पेसिफिक एवेन्यु के हारबर्ट एच. सेलिंगर दम्पत्ति से मिला था। श्रीमती सेलिंगर एक आकर्षक, सुडोल एवं प्रसन्नचित्त महिला थीं। उन्हें देख कर मुझे लगा कि उन्होंने शायद कभी भी चिन्ता नहीं की होगी। एक शाम मैंने उन्हें पूछ ही लिया कि क्या कभी आप भी चिन्ता से दुःखी हुई हैं? "दुःखी?" क्यों नहीं!" उन्होंने उत्तर दिया। "चिन्ता ने तो मेरे जीवन को लगभग खतम ही कर डाला था, चिन्ता पर विजय पाना सीखने के पूर्व मैं ग्यारह वर्षों तक स्वनिर्मित नर्क-यातना भोगती रही। मैं चिडचिडी और क्रुद्ध रहने लगी थी। मैं जबरदस्त तनाव की अवस्था में रहती थी। हर सप्ताह मै बस में सेनफ्रासिसको अन्तर्गत अपने सेन माटेओ के मकान से बाजार जाती पर वहाँ चीजें खरीदते समय भी मैं डर से कॉपती रहती कि कहीं बिजली की इस्त्री को तख्ते पर चालू ही तो नहीं छोड़ आयी हूँ? कहीं मकान में आग तो नहीं लग गयी है? कहीं नोकरानी बच्चों को छोड़ कर चली तो नहीं गयी

होगी ! हो सकता है कि बच्चे साइकल चलाते हुए किसी कार के नीचे आगये हो। वस्तुऐं खरीदते समय चिन्ता के मारे मुझे अक्सर पसीना आ जाता और मैं घर की तरफ यह देखने के लिये कि सब कुछ ठीक तो हैं, दौड़ पडती। और इन सब कारणों से मेरे पहले विवाह का अंत यदि दु:खमय हुआ तो आश्चर्य ही क्या !

" मेरे दूसरे पति एक वकील हैं, वे शान्त प्रकृति के हैं, हर बात का विश्लेषण करते हैं और किसी बात के लिये चिन्तित नहीं होते। जब कभी भी मैं किसी बात को लेकर दुःखी और चिन्तित हो उठती हूँ तो वे कहते हैं—पहले स्वस्थ हो लो तब इसपर विचार करेंगे.. ... आखिर तुम्हारी चिन्ता क्या है ? हमें औसत-नियम के अनुसार तुम्हारी चिन्ता पर विचार करना चाहिये और देखना चाहिये कि वह बात होगी या नहीं।

" उदाहरणार्थ—मुझे वह दिन याद है जब हम मेक्सिको अन्तर्गत अल्बुकर्कसे कार्ल्सवेड केवर्न्स की ओर गाड़ी में जा रहे थे। धूल भरी सड़क पर गाडी चल रही थी कि इतने में हम भयंकर वर्षा और तूफान में फँस गये।

गाड़ी इधर उधर फिसलने लगी। हम बड़ी मुश्किल से उसे काबू में रख पा रहे थे। मुझे लगा कि सड़क के दोनों ओर की किसी खाई में हम गिर जायँगे, किन्तु मेरे पतिने मुझे धीरज बँधाते हुए कहा " डरो नहीं, मै बहुत धीरे चला रहा हूँ कोई दुर्घटना नहीं होगी और यदि गाड़ी खाई में गिर गयी तो औसत-नियम के अनुसार हमें चोट नहीं आएगी। उनके इस धीरज और विश्वास ने मुझे शान्त रक्खा।

" एक बार ग्रीष्म काल में केनेडियन रॉकीज की टॉक्वीन घाटी में हम सैर पर गये थे। एक रात जब हम समुद्र की सतह से सात सौ फीट की ऊँचाई पर अपना मुकाम किये हुए थे हमें आशंका हुई—कि तूफान हमारे खेमों को उखाड देगा। हमारे खेमे लकड़ी के तख्तों के साथ रस्सियों से बंधे हुए थे। बाहरी खेमा हवा से हिलने लगा। हर बार मुझे यही आशंका होती थी कि खेमा ढीला होकर उड़ जाएगा। मेरे भय की सीमा न थी। किन्तु मेरे पति समझाते रहे - " देखो प्रिये, हम ब्रीविस्टर के गाइडों के साथ यात्रा कर रहे है, ऐसी परिस्थिति में क्या करना और क्या न करना वे लोग भली-भाँति जानते हैं। गत साठ वर्षों से ये खेमें गाड़ने का काम करते आ रहे हैं। कितने ही मौसम इस खेमे ने पार किये हैं और यह अभी तक यहीं जमा हुआ है और औसत-नियम के अनुसार आज रात भी यह जमा ही रहेगा। और यदि उखड़ भी गया तो हम किसी दूसरे खेमे में चले जाएँगे। अतः निश्चिन्त रहो " इसके बाद सारी रात मैं खूब सोयी।

" कुछ वर्ष पहले केलिफोर्निया अन्तर्गत हमारे इलाके में इन्फेन्टाइल-पैरालिसिस नामक सक्रामक रोग फैल गया था। यदि मैं पहले जैसी होती तो मुझे उन्माद हो आता, किन्तु मेरे पतिने मुझे शान्त रहने की सलाह दी। हमने यथा सम्भव

सावधानी बरती। हम अपने बच्चों को भीड़, स्कूल अथवा सिनेमा में नहीं जाने देते। हमने स्वास्थ्य बोर्ड से पूछ-ताछ की और हमें मालूम हुआ कि केलिफोर्निया में जब उग्र रूप में यह रोग फैला था तब भी केवल एक हजार आठसौ पैंतीस बच्चे ही इस रोग के शिकार हुए थे। सामान्यतया इस बीमारी के फैलने पर रोगियों की सख्या दो-तीन सौ के लगभग होती है। यद्यपि यह सख्या भी कम दुर्भाग्य पूर्ण न थी, तथापि हमने महसूस किया कि हरेक बच्चे के लिये रोग-ग्रस्त होने की समावना बहुत ही कम है।

"औसत-नियम के अनुसार ऐसा नहीं होता। इस वाक्य ने मेरी नब्बे प्रतिशत चिन्ताएँ दूर कर दीं हैं और मेरे जीवन के गत बीस वर्षों को प्रबल आशाओं और असीम शान्ति से भर दिया है।"

जनरल जार्ज क्रुक जो अमेरिकन इतिहास मे अत्यन्त वीर व्यक्ति हो गया है। अपनी आत्मकथा में लिखता है कि अमेरिका के इण्डियन लोगो की सभी चिन्ताएँ एव अप्रसन्नताएँ उनकी कल्पना की उपज होती हैं। वास्तविकता से उनका कोई सम्बध नहीं होता।

जब मैं अतीत के पन्ने उलटता हूँ तो यह महसूस करता हूँ कि मेरी बहुत-सी चिन्ताए भी कल्पना ही की उपज हैं। जीम ग्राटने भी मुझे अपना ऐसा ही अनुभव बताया है। न्यूयार्क अन्तर्गत दोसौ चार फ्रेंकलीन स्ट्रीट की जेम्स. ए. ग्राट डिस्ट्रीब्युटिंग कम्पनी के वे मालिक हैं। वे एक ही बार में लगभग दस से पचास गाड़ी फ्लोरिडा-नारगियों और अगूरों का आर्डर देते हैं। उन्होंने मुझे बताया कि वे अक्सर अपनी ही कल्पना से दुःखी रहा करते थे। जैसे – ट्रेन – दुर्घटना होगी तो क्या होगा? और उसके फलस्वरुप मेरे सारे फल इधर उधर बिखर गये तो क्या होगा? गाड़ियो के पुल पार करते समय यदि पुल टूट गया तो क्या होगा? हालाकि उन फलों का बीमा रहता था; पर मुझे यह आशका रहती थी कि समय पर फलों की सप्लाई न होने से मार्केट हाथ से चला जायगा। इस चिन्ता के कारण मुझे लगा कि मेरे आमाशय में व्रण हो आया है और मै डॉक्टर के पास पहुँच गया। डॉक्टर ने बताया कि स्नायु विकार के सिवाय और कोई बिमारी नहीं है।

"तब मुझे अपनी असली स्थिति का पता चला और मै मन ही मन कहने लगा 'देखो जीम ग्राट, तुम हर साल फलो की कितनी गाडियॉ चलाते हो?' 'पचास हजार' उनमे से कितनी गाड़ियॉ टूट गयी?

'यही कोई पॉच के लगभग।'

'पच्चीस हजार मे से केवल पॉच?'

'जानते हो इसका मतलब क्या हुआ? गाडी टूटने का अनुपात पॉच हजार और एक का रहा, दूसरे शब्दों मे औसत-नियम के अनुसार पाच हजार गाड़ियों में केवल एक गाड़ी के टूटने की सम्भावना हो सकती है फिर इतनी चिन्ता किस लिये?'

मैंने फिर सोचा – ठीक है। पुल टूट सकता है। पर अब तक पूल टूटने से कितनी गाड़ियों की हानि हुई है? मन ने उत्तर दिया – 'एक की भी नहीं।' तब मैंने फिर प्रश्न किया – 'तब क्या उस पुल के बारे में जो अब तक कभी नहीं टूटा, चिन्ता कर के आमाशय व्रण की बीमारी मोल लेकर तथा रेल मार्ग टूटने के परिणाम स्वरूप पाँच हजार गाड़ियों मे से कहीं एक गाड़ी के टूटने की सम्भावना पर चिन्तित होकर तुमने मूर्खता नहीं की?'

"जब मैंने इस दृष्टि से देखा तो अपने आपको कुछ कुछ समझाने लगा। मैंने औसत – नियम पर ही चिन्ता का भार छोड़ दिया और तब से मेरे आमाशय व्रण ने मुझे कोई कष्ट नहीं दिया।"

जब ऑलस्मिथ न्यूयार्क के गवर्नर थे, मैंने उन्हें अपने राजनैतिक शत्रुओं की आलोचना का उत्तर देते हुए कई बार यह कहते सुना कि आओ, अपना रेकॉर्ड देख लें, तब वे तथ्यों का ब्यौरा देना शुरू करते। इसलिये अब जब कभी हमें चिन्ता सताएँ तो हमें वृद्ध एवं बुद्धिमान ऑलस्मिथ से सकेत लेना चाहिये। हमें अपना रेकॉर्ड देख लेना चाहिये और साथ ही अपनी चिन्ता का यदि कोई कारण हो तो उसे जान लेना चाहिये। फ्रेडरिक जे माहस्टेट ने भी ऐसा ही किया, जब उसे लगा मानो वह अपनी कब्र मे ही सो रहा है, उसके द्वारा कही गयी यह कहानी सुनिये; उसने यह कहानी न्यूयार्क की प्रौढ शिक्षा की कक्षाओं में कही थी।

"जून १९४४ के आरम्भ में मैं ओमाहविच के निकट एक खन्दक में लेटा हुआ था। मैं ९९९ सिग्नल सर्विस कम्पनी के साथ था और नॉरमण्डी में हमने नयी खाइयॉ खोदी थीं। जब भी मैं एक समकोण गढे के समान उस खाई के चारों ओर देखता तो सोचने लगता कि यह तो एक तरह की कब्र ही है और जब मैं उसमें लेट कर सोने का प्रयास करता तो मुझे कब्र में सोने का-सा अनुभव होता; मुझे लगता कि हो न हो मेरी कब्र यही है। जब रात के करीब ग्यारह बजे जर्मन बम वर्षकों ने बम गिराने शुरू किये तो मैं डर से सुन्न हो गया। पहली दो तीन रातें मैं सो नहीं सका, चौथी और पांचवी रात तक तो स्नायुरोग ने मुझे धर दबाया। मैं जानता था कि यदि मैंने कुछ नहीं किया तो बिल्कुल पागल हो जाऊँगा। अतः मैंने मन ही मन विचार किया कि पाच रातें बीत चुकी हैं फिर भी मैं जिन्दा हूँ, मेरी सर्विस-कम्पनी के दूसरे लोग भी जिन्दा हैं, सिर्फ दो व्यक्ति घायल हुए हैं और वे भी जर्मन बमों से नहीं बल्कि हमारी एण्टिएयर क्राफ्ट गन से गिरे हुए फ्लास्क के कारण! मैंने सक्रिय रह कर चिन्ता दूर करने का निश्चय किया। खाई के ऊपर मैंने एक मोटी लकडी की छत तैयार की ताकि फ्लास्क से अपनी रक्षा कर सकूँ। मैंने उस विस्तृत क्षेत्र पर विचार किया जिसमें हमारे युनिट के लोग फैले हुए थे। मैंने सोचा कि इस गहरी और सकड़ी खन्दक में मेरी मृत्यु तभी हो सकती है जब इसपर सीधा आक्रमण किया जाए और ऐसे

सीधे आक्रमण का मौका बिल्कुल नहीं के बराबर था। कुछ रातों तक इसी प्रकार सोचते रहने के बाद मैं शान्त हो गया और धडाकोंके बीच भी सोता रहता।

युनाइटेड स्टेट का नौ-सेना विभाग अपने सैनिकों के नैतिक स्तर को ऊँचा रखने के लिये औसत-नियम के ऑकड़ो का उपयोग करता था। एक भूतपूर्व जहाज चालक ने मुझे बताया कि जब उसे और उसके दूसरे साथियों को हाई-ओक्टेन टेड्कर पर काम सौंपा गया तो वे चिन्ता से जकड़ गये। इनका विश्वास था कि यदि टेड्कर पर हाई ओक्टेन गेसोलिन लदा हो तो तारपिड़ो से आक्रमण होने से उस में विस्फोट हो जाता है और उस पर का हर आदमी परम धाम पहुँच जाता है।

किन्तु अमेरीकी नौ-सेना विभाग का अनुभव कुछ और ही था। इसलिये नौ-सेना विभागने कुछ ऐसे निश्चित आँकड़े प्रकाशित किये, जिनमें यह बताया गया था, कि जिन टेड्करों पर तारपिडो का प्रहार हुआ है, उन में से साठ प्रतिशत तो तैरते रहे और शेष चालीस प्रतिशत पाच दस मिनिट में समुद्र में डूब गए, अर्थात् इस पाच-दस मिनट के समय में लोगों को टेड्कर से भाग निकलने का समय मिल जाता है। इन आकडों से दूसरी बात यह भी मालूम होती थी कि दुर्घटनाएँ होने की सम्भावनाएँ बहुत कम होती हैं। क्या इन आकडों से सैनिकों की हिम्मत बनाये रखने में सहायता मिली? सेन्ट पॉल मिनेसोटा अन्तर्गत १९६९ वॉल नट स्ट्रीट के फ्लाइट डब्ल्यु. मास का कथन है कि औसत-नियम की जानकारी ने मेरी सभी मुसीबतों को दूर कर दिया। एक घटना का उल्लेख करते हुए उन्होंने बतलाया कि औसत-नियम की बात सुनकर जहाज के सभी आदमी आश्वस्त हो गये और सबको मालूम हो गया कि औसत-नियम के अनुसार अब भी जीने की सभावना है। सम्भवतः हम मारे भी न जाएँ। इसलिए चिन्ता आपको मिटा दे उसके पहले चिन्ता ही को मिटा देने के लिये यह तीसरा नियम देखिये।

आइये, आपना रेकॉर्ड देखें और मन में औसत-नियम के अनुसार विचार करें कि जिस घटना के घटने की हमें चिन्ता है उसकी सम्भावना कहा तक है!

☆

९ : होनी को स्वीकार कीजिये।

जब मैं बालक था तब मिसौरी के उत्तर पश्चिम में एक पुराने तथा सुनसान मकान में रहता था। वह लकड़ी का बना हुआ था। एक दिन मैं मकान के सबसे ऊपर के कमरे में, अपने मित्रों के साथ खेल रहा था। जब मैं नीचे उतर रहा था, मैंने अपना पैर खिड़की की चौखट पर रखा और नीचे कूद पड़ा। नीचे कूदते समय मेरे बायें हाथ की तर्जनी में जो अंगूठी थी वह एक कील में उलझ गयी और उँगली कट गयी। मैं डर से चीख पड़ा। मुझे निश्चय हो गया कि अब मैं मर जाऊँगा, किन्तु बाद में जब हाथ का घाव भर गया तो एक क्षण के लिये भी मुझे इस बारेमें चिन्ता नहीं हुई। चिन्ता करने से होता भी क्या !...मैंने होनी को स्वीकार कर लिया था।

अब मुझे कभी कभी महीनों तक खयाल नहीं आता कि मेरे केवल तीन उँगलियाँ और एक अगूठा ही है।

कुछ वर्ष पूर्व मैं न्यूयार्क नगर के उस स्थान पर जो ऑफिसों का केन्द्र है, किसी कार्यालय में एक व्यक्ति से मिला जो फ्रेट एलिवेटर चलाता है। मैंने देखा उसका बायाँ हाथ कलाई के पास से कटा हुआ था। मैंने उससे पूछा, "तुम्हें इस कटे हुए हाथ की चिन्ता नहीं होती ?" "बिल्कुल नहीं।" उसने कहा, "मैं इस सम्बन्ध में शायद ही कभी सोचता हूँगा। मै अविवाहित हूँ, सिर्फ सुई में धागा पिरोते समय मुझे इसका खयाल आता है। यह एक बड़ी अजीब बात है कि अनिवार्य परिस्थिति को हम कितनी जल्दी स्वीकार कर लेते हैं और अपने को उसके अनुरूप ढाल कर कितनी जल्दी उसकी चिन्ता छोड देते हैं।

प्रायः मुझे हॉलेण्ड अन्तर्गत एमस्टरडम के पन्द्रहवीं सदी के केथीड्रल के भग्नावशेष पर खुदे हुए एक लेख का खयाल आता है, फ्लेमिश भाषा के इस लेख में लिखा है कि, "जो जैसा है वैसा ही रहेगा, उससे भिन्न नहीं हो सकता।"

जैसे जैसे काल चक्र चलता जाता है, हम बहुत-सी ऐसी दु खद परिस्थितियों का सामना करते रहते हैं जो वैसी ही बनी रहती हैं बदलती नहीं। हमारे सामने केवल एक ही रास्ता रहता है कि हम उन परिस्थितियों को जैसी हैं वैसी ही स्वीकार कर लें और अपने को उनके अनुकूल ढाल लें, या फिर विद्रोह का रुख अपना कर अपनी जिन्दगी बरबाद कर लें अथवा स्नायुरोग के शिकार बन जाएँ।

इसी विषय में मेरे एक प्रिय दार्शनिक जेम्स की सतवाणी का यह अश सुनिये, "जो जैसा है उसे प्रसन्नता से स्वीकार कीजिये," उसने कहा। "होनी को स्वीकार करना दुर्भाग्य के परिणामों पर विजय पाने के लिये पहला कदम है।" और गत पोर्टलेण्ड अन्तर्गत २८४० एन. ई. ४९ एवेन्यु की एलिजाबेथ कोनी को इस बात का अनुभव बडी कठिनाइयाँ सह लेने के बाद हुआ। हाल ही में उन्होंने मुझे एक पत्र लिखा है जिसमें उन्होंने बताया है कि, "जिस दिन हमारी सशस्त्र सेनाएँ उत्तरी अफ्रीका में अपनी विजय की खुशियाँ मना रही थीं, मुझे दूसरे विभाग से सूचना

मिली कि मेरा भतीजा, जिसे मैं खूब प्यार करती थी, युद्धमें लापता है, कुछ समय बाद दूसरे तार से यह सूचना मिली कि वह मर गया है।

शोक से मुझे काठ-सा मार गया। अब तक मैं सोचती थी कि मेरा जीवन बड़ा सुखी है। मेरे पास मन-भाती नौकरी है। मैंने अपने इस भतीजे की उसे आगे बढाने में बहुत सहायता की थी। एक युवक की सभी अच्छाइयाँ उसमें थी। उसे देख कर मैं सोचती कि मेरे प्रयत्न उत्तम रूपसे फलीभूत हो रहे हैं। किन्तु इस खबरने मेरी दुनिया लूट ली, मुझे अब जीना बेकार लगने लगा। मै अपने काम और मित्रों की उपेक्षा करने लगी। हर बातसे मैं किनारा करती। मे क्रोधी और विद्रोही बन गयी। मैं सोचती – वह क्यों मर गया? वह तरुण, जिसको कि जीवन के बहुत दिन गुजारने थे, क्यों मारा गया? मैं इस घटनाको स्वीकार नहीं कर सकी। विषादसे इतनी घिर गयी कि अपना सब काम छोड कर दुःख और आँसुओ में अपने जीवन को डुबो लेने का निश्चय कर लिया।

अपना काम छोडने की तैयारी में मै अपने कागजात व्यवस्थित कर रही थी कि उनमें से एक पत्र मेरे हाथ लगा जिसे मै भूल चुकी थी। यह पत्र उसने कुछ वर्षों पूर्व मेरी माँ की मृत्युके समय लिखा था। उसमें लिखा था, "यह सच है कि हम सब, विशेष कर आप, उनके स्नेहसे वंचित हो गयी हैं किन्तु मुझे विश्वास है कि आप सब-कुछ यथावत् निभाती रहेंगी और आपको अपने वैयक्तिक दर्शन से प्रेरणा मिलती रहेगी। आपने मुझे जो मोहक सत्य सिखाये हैं उन्हें मैं कभी नहीं भूलूँगा। आपसे दूर मैं कहीं भी क्यों न रहूँ, सदैव याद रखूँगा कि आपने मुझे होनी को एक पुरुष की तरह स्वीकार करना और मुस्कराना सिखाया है।

मैंने उस पत्र को बार बार पढा और मुझे लगा जैसे वह स्वयं मेरे पास खड़ा बातें कर रहा हो और कह रहा है कि आप वही क्यों नहीं करतीं जो आपने मुझे सिखाया है? चाहे कुछ भी हो, अपनी जीवन नौका खेती चलिये, अपने दुःखों को मुस्कराहट में छुपा कर काम करती रहिये।'

पत्र की प्रेरणा से मैं फिर से अपने काम में जुट गयी। मैंने क्रोध और विद्रोह छोड दिया। सोचती–जो होना था सो हो गया। मैं उसे बदल नहीं सकती किन्तु मैं उसकी बात तो रख सकती हूँ। मैंने अपने दिमाग और अपनी समस्त शक्ति को काम करने में लगा दिया, मै उन सैनिकों को पत्र लिखने लगी जो किसी के बेटे थे। मैंने जीवन के नवीन आनन्द तथा नए मित्रों की खोज में, प्रौढ व्यक्तियों की रात्रि कक्षाओं में जाना शुरू कर दिया। इससे मुझ में यकायक अप्रत्याशित परिवर्तन हुआ। मैंने, बीती बातों पर जो सदाके लिये बीत चुकी थीं, दुःखी होना छोड़ दिया। अब मैं रोज खुश रहती हूँ। मेरा भतीजा भी यही चाहता था। मैंने जीवन से समझौता कर होनी को स्वीकार कर लिया है, अब मै पहले की बनिस्बत अधिक पूर्ण और सार्थक जीवन व्यतीत कर रही हूँ।

ओरेगोन अर्न्तगत पोर्टलेण्ड की एलिजाबेथ कोनले ने वही सीखा जो कभी न कभी हम सबको सीखना होगा और वह यह कि हमें होनी को स्वीकार करना चाहिये। जो जैसा है वैसा ही रहेगा इससे भिन्न नहीं हो सकता, यह पाठ ग्रहण करना आसान नहीं। यहाँ तक कि राजगद्दियों पर बैठे राजा भी इसे मुश्किल से याद रख पाते हैं। स्वर्गीय जार्ज पंचम ने, बकिंगघम महल के, अपने पुस्तकालय की दीवारों पर ये शब्द लिखवा रखे थे कि, "हे प्रभु मुझे बुद्धि दे कि मैं असम्भव की कामना न करूँ और बिगड़ी बात पर आँसू न बहाऊँ।' ओसनहावेर ने इसी विचार को इस प्रकार रखा है, "जीवन यात्रा में समर्पण के भाव का प्रमुख महत्व है।"

स्पष्ट है कि केवल परिस्थितियाँ ही हमें सुखी अथवा दुःखी नहीं बनाती बल्कि वह ढंग भी जिससे हम उन परिस्थितियों का सामना करते हैं. वही ढग हमारी भावनाओं का निर्माण करता है। ईसा का कथन था कि "स्वर्ग और नर्क हमारे भीतर ही हैं।"

हम सभी, आवश्यकतानुसार विनाश अथवा विपत्ति को सह कर, उस पर विजय प्राप्त कर सकते हैं। भले ही हमें लगे कि ऐसा नहीं होगा। किन्तु हम में एक ऐसी आश्चर्यजनक आन्तरिक शक्ति है जो हमें यदि हम उसका प्रयोग करें, तो पार लगा देगी। हम यह नहीं जानते कि हम अपने अनुमान से भी अधिक शक्तिशाली हैं।

स्वर्गीय बूथ टार्कींगटन कहा करते थे, "कोई भी दूसरी कठिनाई मुझ पर क्यों न आए, मैं उसे बर्दाश्त करने के लिये सदा तैयार हूँ, किन्तु अन्धेपन को मैं कभी बर्दाश्त नहीं कर सकता।"

तब एक दिन, जब वे साठ वर्ष के लगभग थे, उन्हें फर्श पर बिछी दरी के रंग धुंधले दिखायी देने लगे। वे उस दरी के बेलबूटों को स्पष्ट नहीं देख सके। जब वे एक नेत्र विशेषज्ञ के पास पहुँचे तो उसने उन्हें यह दुःखद सत्य सुना दिया कि उनकी नेत्र-ज्योति घटती जा रही है। एक आँख की ज्योति तो जा चुकी थी तथा दूसरी भी ज्योति-हीन होने को ही थी। जिस अभिशाप का उन्हें भय था वही उन पर छा गया।

किन्तु टार्कींगटन ने इस क्रूरतम अभिशाप को कैसे झेला? क्या उन्हें अपने जीवन के इन अन्तिम दिनों पर दुःख हुआ? नहीं, इसके विपरीत उन्हें आश्चर्य हुआ कि वे इस विपत्ति को इतनी आसानी से कैसे सह गए! उन्होंने विनोद का सहारा लिया। दृष्टि के सामने तैरते हुए काले धब्बे, उन्हें क्षुब्ध कर देते थे क्यों कि वे उनके दृष्टि पथ में अंधेरा फैला देते थे। फिर भी जब कभी कोई बड़ासा धब्बा यकायक उनके सामने आ जाता तो वे कह उठते, "लो, ये दादाजी फिर आ गये न जाने सवेरे सवेरे कहाँ निकल पड़े!"

ऐसी हस्ती को तकदीर भी कैसे मात दे सकती है। नहीं दे सकती न! जब टार्कींगटन बिल्कुल अन्धे हो गये तो उन्होंने कहा कि, "मैंने अन्धापन उसी प्रकार स्वीकार किया है जिस प्रकार कोई व्यक्ति किसी अन्य वस्तु को स्वीकार करता है।

मैं जानता हूँ कि मैं अपनी पॉचों ज्ञानेन्द्रियों की शक्ति को खोकर भी केवल अपने मस्तिष्क के भरोसे जीवित रह सकता हूँ, क्यों कि वास्तव में हम मन की ऑखों द्वारा ही देखने हैं और उसी की शक्ति पर जीते हैं। चाहे इस बात को हम भले ही न जानें।"

अपनी खोई हुई ज्योति को पुनः प्राप्त करने की आशा में टार्किंगटन को एक साल में बारह बार ऑपरेशन करवाने पड़े। स्थान विशेष पर इन्जेक्शन लगा कर उनका ऑपरेशन किया जाता। किन्तु क्या उन्होंने उसके विरुद्ध कभी कोई शिकायत की? नहीं। क्यों कि वे जानते थे कि इसके बिना छुटकारा नहीं। अपनी पीड़ा को कम करने का एक मात्र उपाय यही था कि होनी को सहज रूप से स्वीकार कर लिया जाए। उन्होंने रेल–अस्पताल में अलग कमरे में रहने से इन्कार कर दिया तथा वे उस वार्ड में चले गये जहाँ दूसरे बीमार रहते थे वे वहाँ उन बीमारों का मन बहलाने का प्रयत्न करते। उन्हें बारबार ऑपरेशन के लिए जाना पड़ता यद्यपि वे अच्छी तरह जानते थे कि आखिर उनकी ऑखों का क्या होने वाला है। वे हमेशा सोचते कि यह ऑपरेशन भी कितने कमाल की चीज है। वे कहते कि, "मनुष्य की ऑख जैसे कोमल अग का ऑपरेशन कर के विज्ञान ने कितना कमाल हासिल कर लिया है।"

कोई साधारण आदमी होता तो अपने अन्धेपन तथा बारह ऑपरेशन की पीड़ा को झेलते झेलते, स्नायु रोगका शिकार हो जाता, पर टार्किटन अपने इस अनुभव को इतना मूल्यवान समझते थे कि वे किसी भी अन्य सुखद अनुभव के साथ उसका विनिमय करने के लिए तैयार नहीं थे। उस अनुभव ने उन्हें होनी को स्वीकार करना सिखाया था। उस अनुभव से उन्होंने सीखा कि जीवन में कोई ऐसी पीड़ा नहीं जो हमारी बर्दाश्त से परे हो। जॉन मिल्टन का अनुभव यह है कि "अंधापन स्वय में इतना दुःखद नहीं है, दुःखद है अन्धेपन को सह न सकना।"

न्यू इग्लेण्ड की प्रसिद्ध फेमिनिस्ट (स्त्रियों के अधिकारों के लिये लड़नेवाले दल की सदस्या) मारग्रेट फुलरने अपना धार्मिक विश्वास बताते हुए कहा कि, "मैं विश्व को (जैसा है उसी रूप में) स्वीकार करती हूँ।"

जब क्षुब्ध, वृद्ध कार्लाइल ने यह बात इग्लेण्ड में सुनी तो उसने कहा कि, उसने अच्छा ही किया और हमारे लिये भी उत्तम यही होगा कि हम भी वही करें और होनी को स्वीकार कर लें।

यदि हम उस पर बड़बड़ाएँ, उसका विरोध करें, अथवा उसपर दुःख व्यक्त करें तो भी जो होना है सो तो होगा ही। उसे हम बदल नहीं सकते। हमें अपने ही को बदलना होगा। मैं इसलिये यह कहता हूँ, कि यह मेरा अपना अनुभव है।

एक बार मैंने वस्तुस्थिति को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। उसे टालता रहा, उस पर बड़बड़ाता रहा। उस के खिलाफ विद्रोह किया। नींद न आने से मेरी रातें हराम हो गयीं। सभी अवाछित समस्याएँ मुझ पर लद गयीं और अन्त में

एक वर्ष के इस आत्मक्लेष के पश्चात् मुझे उसी स्थिति को स्वीकार करना पड़ा, जिसे मैं पहले ही से जानता था कि बदल नहीं सकूँगा।

मुझे चाहिये था कि मैं कई वर्ष पूर्व कहे गये वॉल्ट वाइट मेन के इस कथन से शिक्षा ग्रहण करता कि–

"अन्धकार, तूफान, भूख, दुर्घटना,
मखौल और विरोध का उसी प्रकार
सामना करो जिस प्रकार पशु और पक्षी करते हैं।"

मैंने बारह वर्ष पशुओं के साथ बिताए हैं किन्तु मैंने कभी नहीं देखा कि, सूखा, हिमपात अथवा शीत के कारण किसी जरसी गाय को ज्वर हो आया हो, न मैंने कभी यही देखा कि बैल का किसी दूसरी गाय पर विशेष झुकाव देखकर गाय को ज्वर हो आया हो। अन्धकार, तूफान, भूख आदि को पशु बड़े धैर्य के साथ सह लेते हैं। यही कारण है कि उन्हें स्नायुरोग नहीं होता; उनके पेट में व्रण नहीं उभरते और न वे कभी पागल ही होते हैं।

मैं यह नहीं कहता कि विपत्तियों के सामने आप घुटने टेक दें; बिल्कुल नहीं, क्यों कि यह कोरा नियतिवाद है। मैं तो कहूँगा कि जहाँ तक किसी परिस्थिति विशेष को हम बना सकें, बना लेना चाहिये। हमें संघर्ष करना चाहिये। किन्तु यदि सामान्य ज्ञान से प्रकट हो कि अमुक परिस्थिति के विरुद्ध हम व्यर्थ ही संघर्ष कर रहे हैं, हम उस परिस्थिति को बदल नहीं सकते हैं तो विवेक इसी में है कि बिना आगा पीछा किये, जो नहीं है, उसकी कामना छोड़ दें।

कोलम्बिया विश्वविद्यालय के डीन स्वर्गीय हाक्स का मोटो भी यही था कि—

हर व्याधि के लिये जगत में –
है उपचार, उसे तुम ढूंढो,
यदि नहीं कोई मिल पाए
तो तुम उसकी चिन्ता छोड़ो।

जिन दिनों मैं यह पुस्तक लिख रहा था अमेरिका के कई प्रमुख व्यापारियों से मिलने का अवसर मुझे मिला। उनसे यह जानकर कि वे होनी को स्वीकार कर सर्वथा चिन्ता मुक्त जीवन यापन करते हैं, मैं अत्यन्त प्रभावित हुआ। यदि वे ऐसा नहीं करते तो निश्चय ही दैनिक प्रवृत्तियों के दबाव के कारण टूट कर रह जाते। निम्नांकित कुछ उदाहरण, मेरा अभिप्राय स्पष्ट कर देंगे —

अमेरिका में स्थान स्थान पर फैले हुए पिने स्टोर्स के संस्थापक जे. सी. पिने ने एक बार मुझे बताया कि, "अपनी सारी सम्पत्ति नष्ट हो जाने पर भी मैं कभी चिन्ता नहीं करूँगा, क्यों कि मैं जानता हूँ कि ऐसा करने से कोई लाभ नहीं होता। यथा सम्भव मैं उचित् काम ही करता हूँ और उसके परिणाम को ईश्वर पर छोड़ देता हूँ।

इसी से बहुत कुछ मिलती जुलती बात एक बार हेनरी फॉर्ड ने कही थी। उन्होंने कहा कि, जब मैं अमुक घटनाओं का प्रबन्ध नहीं कर पाता तो उन्हें उन्हीं पर छोड़ देता हूँ।"

मैंने क्राइसलर कॉर्पोरेशन के प्रधान केटीकेलर से भी प्रश्न किया था कि आप अपने को चिन्ता मुक्त किस प्रकार रख पाते हैं? उत्तर में उन्हों ने बताया कि पहले मैं अपने सामने आई हुई कठिन परिस्थिति को सुलझाने का यत्न करता हूँ, किन्तु जब देखता हूँ कि मैं कुछ नहीं कर सकता तो उसे राम भरोसे छोड़ देता हूँ, उसे भूल जाता हूँ। भविष्य की चिन्ता मैं कभी नहीं करता, क्यों कि कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं जो कह सके कि अमुक बात भविष्य में निश्चित रूप से होने वाली है। भविष्य को प्रभावित करनेवाली अनेक शक्तियाँ हैं, उन शक्तियों का सचालन कौन करता है, कोई नहीं जानता। न कोई उन शक्तियों को समझ ही सका है। अतः स्पष्ट है कि उनके विषय में चिन्ता करना व्यर्थ है। केटीकेलर कोई दार्शनिक नहीं हैं, वे तो एक कुशल व्यापारी हैं। फिर भी उनके विचार 'एपिकटेट्स्' के उन विचारों से बहुत ही मेल खाते हैं, जिन्हें उन्होंने १९०० वर्ष पूर्व रोम में व्यक्त किया था। रोमवासियों को उहोंने बताया कि सुखी रहने का एक मात्र उपाय यही है कि हम अपनी सामर्थ्य के बाहर की बातों के लिये चिन्तित होना छोड़ दें।

साराह बर्नहट एक तेजस्विनी महिला थी जिसे होनी को स्वीकार करना आता था। लगभग अर्द्ध शताब्दी तक उसने चार महाद्वीपों की जनता पर अपनी कला के माध्यम से शासन किया। वह अपने समय की अत्यन्त लोकप्रिय अभिनेत्री थी। इकहत्तर वर्ष की अवस्था में वह निर्धन हो गयी। उसका सम्पूर्ण वैभव विलीन हो गया और जैसे कि यह सब काफी नहीं था, पेरीस के डॉक्टर प्रो. पोजीने उसे अपनी एक टाँग कटवा डालने की सलाह दी। टाँग कटवाना इसलिये जरूरी हो गया था कि एक बार जब वह एटलांटिक की यात्रा कर रही थी, समुद्र में भयंकर तूफान उठा और वह जहाज की डेक पर फिसल पड़ी। टाँग में गहरी चोट लगी। उसे फ्लेबिटीस हो गया और टाँग छोटी हो गयी। असह्य पीड़ा को देखते हुए डॉक्टर के लिये टाँग काटना जरूरी हो गया था। किन्तु टाँग काटने की बात साराह को कहने में डॉक्टर को बहुत डर लगता था, क्यों कि वह क्रुद्ध प्रकृति की थी। डॉक्टर को पूरा विश्वास था कि यह दुर्भाग्यपूर्ण सुझाव उसमें उग्र उन्माद ला देगा। किन्तु उसका अनुमान गलत था, साराहने निमिषमात्र के लिये डॉक्टर की ओर देखा और पलकें झुका कर धीरे से कहा, "यदि टाँग काटनी ही पड़े तो काट डालो, दुर्भाग्य जो ठहरा!"

उसे ऑपरेशन के लिये ले जाते समय उसका लड़का रो पड़ा किन्तु उसने मुस्कराते हुए उससे विदा ली और कहा, "देखो, चले मत जाना, ऑपरेशन होते ही मैं लौट रही हूँ।"

ऑपरेशन के लिये जाते समय जब उसने अपने द्वारा अभिनीत नाटक के एक दृश्य के मवाद को दोहराया तो किसीने पूछा, "क्या आप अपने को प्रोत्साहित करने के लिये यह सवाद दोहरा रही हैं।" "नहीं।" उसने उत्तर दिया। "मैं तो डाक्टरों तथा नर्सों को प्रोत्साहित करना चाहती हूँ क्यो कि ऑपरेशन में उन्हें कठिन परिश्रम करना पडेगा!"

ऑपरेशन के बाद जब साराह स्वस्थ हो गयी तो वह विश्व भ्रमण करने के लिये निकली और सात वर्षों तक अपनी कलासे दर्शकों को मन्त्र मुग्ध करती रही।

'रीडर्स डाइजेस्ट' नामक पत्रिका के एक लेख मे एलसी मेक कोरपीट ने लिखा हैं कि, "जब हम होनी से लडना बन्द कर देते हैं तो हम में एक विचित्र शक्तिका स्रोत खुल जाता है जो हमारे जीवन को सुखी बनाने में हमारी सहायता करता है।

कोई भी प्राणी ऐसा नहीं जिसमें होनी के विरुद्ध सघर्ष करने की यथेष्ट शक्ति एव भावना हो। और यदि सघर्ष कर भी लिया तो नवजीवन के निर्माण के लिये उसमें पर्याप्त शक्ति बच नहीं पाती। आपको दो बातों में से एक चुननी होगी, या तो आप जीवन में होनी के तूफान के आगे झुक जाएँ या फिर उसका सामना कर टूट जाएँ।

मैंने अपने मिसौरी फार्मपर ऐसी ही एक घटना देखी है। फार्म पर मैंने बीसियों-पेड लगाये थे। शुरू शुरू में तो वे आश्चर्य जनक गति से बढने लगे किन्तु बाद में हिमपात के कारण उनकी प्रत्येक टहनी हिम की परतों से बोझिल हो उठी। वे पेड़ विनम्रता से झुकने के बजाय गर्व से ऐंठे रहे और टूट कर रह गये। उन्होंने उत्तरीय भाग के पेड़ों की झुकने की बुद्धिमानी नहीं सीखी थी। केनाडा के सदाबहार वृक्षों के झुरमुटों मे मैंने मिलों तक यात्रा की है, मैंने हिम के भार से गिरा हुआ इनका एक भी पत्ता या तिनका नहीं देखा। ये सदाबहार वृक्ष अपनी डालों को झुकाना जानते हैं तथा होनी के साथ निर्वाह कर सकते हैं।

कसरत सिखानेवाले, अपने शिष्यों को सदा यही सीख देते हैं कि, "घास की तरह झुक जाओ, देवदार की तरह ऐंठे हुए मत रहो।"

क्या आप जानते हैं कि मोटर के टायर इतनी घिसाई के बावजूद भी सडक पर कैसे दौड़ते और घिसते रहते हैं? सुनिये–टायर निर्माताओं ने पहले कठोर टायर बनाने का निश्चय किया जो सडक के धक्कों को सह सकें किन्तु वे टुकडे टुकड़े होकर रह गये, तब उन्होंने ऐसे टायर बनाये जो सडक के धक्कों को लचक कर झेल लें। वे टायर चल निकले। यदि हम भी जीवन के पथरीले मार्ग के हिचकोलों को और धक्कों को झेलना सीख लें तो दीर्घायु होकर सुखपूर्वक जी सकते हैं।

यदि हम जीवन के धक्कों को झेलने के बदले उन्हें रोकने लगें तो क्या हो! यदि हम घास की तरह झुक जाने के बजाय देवदार की तरह ऐंठे ही रहें तो क्या हो? उत्तर-स्पष्ट है—हम अपने में कई अन्तर्द्वन्द्वों की सृष्टि कर बैठेंगे। हम चिन्तित थकित, तनाव ग्रस्त एव उन्मादी हो जाएगे। यदि हम एक कदम और आगे बढें

और वास्तविकता के कठोर ससार को छोड़कर स्वनिर्मित ससार से पलायन करने लगें तो पागल हो जाएँ।

युद्ध के दिनों में लाखों सैनिकों में से कुछ ने तो होनी को स्वीकार कर लिया था और कुछ उसके दबाव में पिस कर रह गये। उदाहरणार्थ—न्यूयार्क अन्तंगत ग्लेण्डेल की ७६ वीं स्ट्रीट के ७१२६ नम्बर के मकान में रहनेवाले विलियम एच. कोसेलियस की कहानी लीजिये। यह पुरस्कृत कहानी न्यूयार्क में सचालित प्रौढ शिक्षा की कक्षा में कही गई थी—

कोस्टलगार्ड में भरती होने के कुछ ही दिनों बाद एटलांटिक महासागर के इस पार मुझे बहुत ही खतरनाक स्थान पर तैनात किया गया। मैं गोला बारूद की निगरानी करता था। जरा सोचिये एक बिस्कुट बेचनेवाला और वह गोला बारूद की निगरानी करे! हजारों टन गोला बारूद के ढेर के पास खड़े रहने का विचार एक आतिशबाजी बेचनेवाले व्यक्ति तक को ठण्डा कर सकता है। मुझे केवल दो दिन तक अपने काम की जानकारी दी गयी और उस जानकारी से मेरा भय और भी बढ़ गया। अपनी उस पहली ड्यूटी को मैं कभी नहीं भूलूँगा। एक दिन बहुत ठण्ड थी और कुहरा छाया हुआ था, मुझे बुलाया गया और न्यूजर्सी अन्तर्गत बेयोनी के केवेन पॉइन्ट के खुले पोतघाट पर तैनात किया गया।

मैं जहाज पर पाच नम्बर के स्थान पर भेजा गया। जहाज के उस भाग पर, तट पर काम करनेवाले पॉच आदमियों के साथ मुझे काम करना पड़ता था। वे लोग माल ढोने में बड़े मजबूत थे। किन्तु गोला बारूद ढोने के बारे में उनका कोई अनुभव नहीं था। एक एक टन टी. एन. टी. के बोझ लाद रहे थे। इतना गोला बारूद इस पुराने जहाज को ध्वंस करने के लिये पर्याप्त था। यह बोझ जजीरों के सहारे उतारा जाता था। मैं सोचता, मान लो जजीर खिसक जाए या टूट जाए तो? इस कल्पना मात्र से मैं कॉपने लगता और मेरा गला सूख जाता। मेरे घुटने ढीले पड़ जाते और दिल धड़कने लग जाता। किन्तु मैं वहॉ से भाग नहीं सकता था। भागने का अर्थ होता नौकरी को छोड़ भागना। इससे मेरी इज्जत में बट्टा लगता और ऐसे व्यवहार के कारण मुझे गोली मार दी जाती। मैं भाग नहीं सका और मुझे वहीं पर डटे रहने के लिये बाध्य होना पड़ा। मज-दूर लोग बड़ी निश्चिन्तता से भार ढोते रहते और मैं उनके इस काम को देखता रहता; सोचता – कहीं एक मिनट में ही जहाज ध्वंस्त न हो जाए, एक घण्टे तक या उससे भी अधिक समय तक भय से सुन्न हो जाने के बाद मैंने सामान्य विवेक का सहारा लिया। मन ही मन काफी तर्क-वितर्क किया और सोचा-मान लो विस्फोट से मैं नष्ट हो गया, तो क्या हुआ? क्या फर्क पडता है? उल्टा यह तो मरने का आसान तरीका है। केन्सर से मरने से तो इस तरह मरना कहीं ज्यादा अच्छा है। मैंने अपने आप से कहा "मूर्ख न बनो, तुम कभी मरोगे ही नहीं ऐसी बात भी नहीं। या तो यह काम करो या गोली के शिकार बनो। जो भी तुम्हें पसन्द हो, करो।"

इस प्रकार मैं घण्टों अपने से मन ही मन तर्क-वितर्क करता रहा। तब कहीं बादमें होनी को स्वीकार कर अपने भय तथा चिन्ता से मुक्ति पायी।

मैं यह पाठ कभी नहीं भूलूँगा। अब जब कभी मैं किसी ऐसी बात को लेकर चिन्तित हो जाता हूँ, जिसे मैं बदल नहीं सकता तो उपेक्षा से कह उठता हूँ – जाने भी दो, भूल जाओ! मेरा अनुभव है कि मेरे जैसे बिस्कुट बेचने वाले के लिये भी यह नियम बड़ा कारगर रहता है।

वाहरे बिस्कुटवाले क्या खूब!

ईसा के फांसी के करुण दृश्य को छोड़ कर यदि कोई अन्य करुण दृश्य है तो वह है सुकरात के विषपान का। आज से दस हजार शताब्दियों बाद भी प्लेटो द्वारा वर्णित साहित्य के इस भावनापूर्ण रोचक तथा अमर वृत्तान्त को पाठक कभी नहीं भूलेंगे। एथेन्स के कुछ ईर्षालु तथा स्पर्धालु व्यक्तियों ने, इस नंगे पैर चलनेवाले सुकरात पर अभियोग लगाया और उसपर मुकद्दमा चलाया। सुकारात को मृत्यदण्ड दिया गया। सद्भावनापूर्ण जेलरने सुकरात को विषका प्याला देते हुए कहा, "होनी को सरल भाव से सह लो" सुकरात ने वैसा ही किया। उसने अपूर्व धैर्य एवं समर्पण के साथ मृत्युका सामना किया और तत्पश्चात् दिव्य-ज्योति को प्राप्त हुआ।

"होनी को सरल भाव से स्वीकार कर लो।" यद्यपि ये शब्द ईसा से तीन सौ निन्यानवे वर्ष पूर्व कहे गये थे तथापि इस चिन्तित और बूढ़े ससार के लिये आज ये पहले से अधिक आवश्यक हैं!

गत आठ वर्षों से मैं, सामान्यतया उन सभी पुस्तकों तथा लेखों को पढ रहा हूँ जिन में चिन्ता निवारण सम्बन्धी थोड़ी-सी भी बात कही गयी है।

अपने इस अध्ययन के दौरान में मैंने चिन्ता सम्बन्धी अत्यन्त महत्त्व पूर्ण कविता की पंक्तियाँ पढीं जिन्हें हमें बाथरूम में लगे शीशे पर चिपका देनी चाहियें, ताकि जब भी हम अपना मुँह धोएँ, उन्हें पढें और अपनी चिन्ताका निवारण करें। इस कविता के रचयिता थियोलोफिकल युनियन सेमिनार, ब्रोडवे, १२० वी स्ट्रीट, न्यूयार्क के व्यावहारिक ईसाई धर्म के प्राध्यापक डाक्टर रेनोल्ड नेबर हैं।

> हे प्रभु मुझे बुद्धि दे कि मैं जिन बातों को
> बदल न सकूँ उन्हें स्वीकार कर लूँ,
> मुझे साहस दे कि हो सके तो स्थिति को बदल दूँ
> मुझे बुद्धि दे कि मैं भला बुरा पहचान सकूँ।

चिन्ता आपको मिटा दे उसके पूर्व चिन्ता को मिटाने के लिये चौथा नियम यह है — होनी को स्वीकार कीजिये।

☆

१० : चिन्ता से होने वाली हानि को सीमित कर दीजिए।

क्या आप जानना चाहेंगे कि स्टॉक एक्सचेन्ज पर पैसा कैसे बनाया जाए? आपके सिवा लाखों ऐसे व्यक्ति हैं जो ऐसी तरकीब जानना चाहेंगे। मेरे पास यदि वह युक्ति होती तो उसे बताने पर यह पुस्तक खूब ऊँचे दामों बिकती। फिर भी एक तरकीब है, जिसका कुछ सफल सट्टेबाज उपयोग करते हैं। चार्ल्स रोबर्ट ने जो न्यूयार्क की १७ पूर्व ४२ वीं स्ट्रीट के कार्यालय में इन्वेस्टमेन्ट सलाहकार था, मुझे यह कहानी सुनायी थी।

उसने कहा, "मैं पहले पहले जब टेक्सस से न्यूयार्क आया तो मेरे मित्रों ने स्टॉक मार्केट में लगाने के लिये मुझे बीस हजार डालर की रकम दी। मैं समझता था कि मै स्टॉक मार्केट की बारीकियों को जानता हूँ। किन्तु बात कुछ ऐसी हुई कि मैं सारी की सारी पूँजी गवॉ बैठा। यह सच है कि कुछ सौदों पर मुझे मुनाफा भी हुआ किन्तु अन्त में सब कुछ खो बैठा।

"मुझे अपनी पूँजी गवॉने की इतनी चिन्ता नहीं थी जितनी कि अपने मित्रों की पूँजी गवॉने की, यद्यपि उन मित्रों के लिये इतनी पूँजी कोई बड़ी बात न थी। अपनी इस दुर्भाग्य पूर्ण असफलता के कारण मुझे उनके सामने जाने म भय लगता। किन्तु आश्चर्य की बात यह थी कि उन्होंने न केवल इस हानि को सहज भाव से सह लिया बल्कि भविष्य के लिये पूर्णतया आशावादी भी रहे।

"मैं जानता था कि 'लग गया तो तीर नहीं तो तुक्का ही सही' की पद्धति पर मैं काम कर रहा था और ज्यादातर भाग्य और अन्य व्यक्तियों की सलाह पर निर्भर था। एच. आइ फिलिप्स के शब्दों में मैं कानों के भरोसे स्टॉक मार्केट का धन्धा कर रहा था।

मैं अपनी गलती पर विचार करने लगा और निश्चय किया कि फिर से स्टॉक मार्केट का धन्धा हाथ में लेने के पूर्व अपनी असफलता के कारण खोजूँगा। मैंने इस दिशा में प्रयत्न शुरू किये और बर्टन एस. कासल्स नाम के एक परम सफल सटोरिये से परिचय किया। मेरा विश्वास था कि मैं जरूर उस व्यक्ति से बहुत कुछ सीख सकता हूँ, क्योंकि वह प्रति वर्ष अपने धन्धे में सफल रहने के कारण प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका था, और मैं यह भी जानता था कि उसके सफल धन्धे का आधार कोई सुयोग अथवा भाग्य न था।

उसने पहले मुझे अपनी अब तक की व्यवसाय पद्धति पर प्रश्न पूछे और तब इस व्यवसाय का अपना प्रमुख सिद्धान्त बताया। उसने कहा, "मै अपने प्रत्येक सौदे पर हानि की सीमा बॉध देता हूँ। जब मैं पचास डालर प्रति शेयर की दर से स्टॉक खरीदता हूँ तो तत्काल ही उस पर पॉच डालर प्रति शेयर की दर से हानि की सीमा निश्चित कर देता हूँ, अर्थात् जैसे ही शेयर का भाव पॉच डालर से गिरा कि अपने आपही शेयर की बिक्री हो जाती है। इस प्रकार अपनी हानि को पाँच डालर तक सीमित कर देता हूँ।"

उस कुशल व्यवसायी ने यह भी कहा कि यदि आपने बुद्धिमानीसे सौदा किया है तो आपको औसतन दस, बीस, पच्चीस, या पचास डालर तक ही नुकसान हो सकता है। अपनी हानि को पाँच डालर तक सीमित कर देने पर आधे से अधिक बार गल्ती करने पर भी आप काफी रुपया बना सकते हैं।

मैंने तत्काल ही उस सिद्धान्त को ग्रहण कर लिया और तब से उसका उपयोग कर रहा हूँ। इससे मैंने अपने तथा अपने ग्राहकों के कई हजार डालर बचा लिये हैं।

इसके अतिरिक्त मैंने यह भी महसूस किया कि 'हानि की सीमा' का यह सिद्धान्त स्टॉक मार्केट के सिवा अन्य कई बातों में भी काम में लाया जा सकता है। मैंने अपने क्रोध और चिड़चिड़ेपन की भी 'हानि सीमा' निर्धारित करना आरम्भ कर दिया और इस पद्धति ने कमाल कर दिखाया।

एक उदाहरण लीजिये — मैं प्रायः अपने एक मित्र के साथ दोपहर का भोजन किया करता हूँ। पर वह कभी कभार ही समय पर पहुँचता। वह लन्च के आधे समय तक इंतजार कराते कराते मुझे परेशान कर देता और तब अपनी सूरत दिखाता। अन्त में तंग आकर एक दिन मैंने अपना 'हानि – सीमा' सिद्धान्त उसे सुना दिया। मैंने कहा, "देखो बिल, अबसे मैं दस मिनट तक तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगा और यदि तुम दस मिनट बाद आये तो हमारे लन्च का प्रोग्राम रद्द, और मैं यहाँ से खिसक जाऊँगा।'

भाइयो, अगर यह बुद्धि मुझ में वर्षों पहले आ गई होती तो कितना अच्छा होता! कितना अच्छा होता यदि मैं अपनी जल्द बाजी, अपने क्रोध, अपने को सही मानने की अपनी इच्छा, अपने पश्चात्ताप तथा अन्य सभी दिमागी और मानसिक बोझों पर 'हानि-सीमा' का सिद्धान्त लागू कर देता! मुझ में यह विवेक पहले क्यों नहीं जगा कि मैं प्रत्येक मानसिक अशान्ति भड़काने वाली परिस्थिति पर काबू पाकर मन ही मन कहता, "देखो, डेल कार्नेगी इस स्थितिपर इससे अधिक किट-किट मत करो।" सोचता हूँ — मैंने ऐसा क्यों नहीं किया ?

फिर भी कम से कम एक मौके पर तो मैंने थोड़े विवेक से काम ले ही लिया था और उसके लिये अपने आपको श्रेय देना ही होगा। वह एक बहुत गम्भीर परिस्थिति थी, मेरे जीवन का अत्यन्त कठिन समय था। ऐसा कठिन समय, जब मैं अपने सपनों, अपनी भावी योजनाओं तथा वर्षों के काम पर पानी फिरते देखता रहा। यह घटना इस प्रकार है—

जब मेरी अवस्था तीस के लगभग थी, मैंने उपन्यास लेखक की हैसियत से जीवन बिताने का निश्चय किया। मेरी कल्पना थी कि मैं फ्रैंक नोरीस या जेक लन्दन या टॉमस हार्डी के समान बनूँगा। मुझ में इतनी लगन थी कि इसके लिये मैंने दो वर्ष यूरप में बिताये जहाँ मैं प्रथम विश्वयुद्ध के बाद वहाँ की मुद्रा स्फिति के कारण डॉलर से सस्ते में अपना जीवन बिता सकता था। दो वर्ष तक मैं वहाँ अपना महान कार्य करता रहा। मैंने अपनी पुस्तक का नाम 'दी ब्ली जार्ड' (बर्फीला

तूफ़ान) रखा। प्रकाशकों की ठंडी प्रतिक्रिया ने इस नामकरण को सार्थक कर दिया। प्रकाशकों का रुख डाकोटा के मैदानों में सनसनाते हुए ब्लीजार्ड की तरह ही ठंडा था। जब मेरे एजेन्ट ने बताया कि यह रचना बेकार है तथा मुझ में उपन्यास लिखने के लिये आवश्यक प्रतिभा एवं कला का अभाव है तो मेरा कलेजा धक् से रह गया। मैं सन्नाटे में आ गया और उसी दशा में ऑफिस से बाहर निकल आया। यदि उसने मेरे सिर पर हथौड़ा भी मारा होता तो मैं इतना किंकर्तव्यविमूढ़ नहीं होता। मुझे लगा कि मैं जीवन के चौराहे पर खड़ा हूँ और मुझे अपनी दिशा का महत्त्वपूर्ण निर्णय करना है। क्या करूँ, क्या न करूँ, इसी दुविधा में कई हफ्ते निकल गए और तब बहुत दिनों के बाद कहीं मुझे अपनी आकुल-व्याकुल स्थिति से छुटकारा मिला। उन दिनों मैं हानि-सीमा के सिद्धांत के विषय में कुछ नहीं जानता था। किन्तु, आज जब मैं उन पिछली बातों पर विचार करता हूँ तो महसूस करता हूँ कि, मैंने अनजाने ही उस सिद्धान्त का उपयोग कर लिया था। उस उपन्यास पर किये गए दो वर्षों के कठिन परिश्रम को एक अच्छा प्रयोग समझ कर उसे वहीं छोड़ दिया और वहाँ से आगे बढ़ चला। मैंने फिर से प्रौढ़ शिक्षा का कार्य आरम्भ किया और उसका संगठन किया। अवकाश के समय में मैंने जीवनियाँ तथा ऐसी पुस्तकें जो कथात्मक न हों, लिखनी शुरु कीं। वैसी ही एक पुस्तक यह है, जिसे आप पढ़ रहे हैं।

आप पूछेंगे कि क्या मैं अपने उस फैसले से खुश हूँ? हाँ, सचमुच खुश हूँ। जब कभी मैं उस विषय में सोचता हूँ, मेरा मन खुशी के मारे नाच उठता है। मैं ईमानदारी से कहता हूँ कि तब से एक घड़ी भर के लिये भी मुझे कभी पश्चात्ताप नहीं हुआ कि मैं टामस हार्डी जैसा उच्च कोटि का साहित्यकार क्यों नहीं बन पाया?

लगभग सौ वर्ष पहले की बात है, जंगल में वोल्डेन पोंड के तट पर रात के समय उल्लुओं की चीख के बीच हेनरी थोरो ने ये शब्द अपनी डायरी में लिखे — 'किसी भी वस्तु का मूल्य, आज या कल, उस के विनिमय में दिये जानेवाले जीवन के क्षणों से आँका जाता है।'

दूसरे शब्दों में, यदि, किसी वस्तु पर हम जीवन का आवश्यकता से अधिक समय व्यय करें, तो हम मूर्ख हैं।

फिर भी गिल्बर्ट और सलिवान जैसे व्यक्ति ऐसी मूर्खता कर ही बैठे। उनका काम मधुर शब्दों और संगीत की रचना करना था। उन्होंने संसार में धूम मचा देनेवाले 'पेशेन्स' 'पीना फोर' 'दी मिकाडो', आदि अत्यन्त सरल एवं मधुर ऑपेराओं की रचना की, किन्तु एक दरी के मूल्य को लेकर उन्होंने अपने जीवन के कई वर्षों को कटु बना दिया। बात यह हुई कि सलिवान ने उनके द्वारा खरीदे गए एक नये थियेटर के लिए नई दरी का ऑर्डर दिया था। जब गिल्बर्ट ने बिल देखा तो वह क्रोध से भड़क उठा। झगड़ा कोर्ट तक पहुँच गया और नतीजा यह हुआ कि जीवन भर वे एक दूसरे से नहीं बोले। जब कभी सलिवान नये नाटक

के लिए कोई धुनें बनाता, वह उन्हें डाक द्वारा गिल्बर्ट के पास भेज देता और जब गिल्बर्ट गीत लिखता तो वह उन्हें वापस सलिवान के पास भेज देता। एक बार दोनों को एक साथ रंगमंच पर आना पड़ा, किन्तु, एक रंगमंच के इस ओर खड़ा रहा तो दूसरा दूसरी ओर। यहाँ तक कि अभिवादन के लिये झुके भी तो विपरीत दिशा में, ताकि एक दूसरे को देख न सकें। उनमें लिंकन के समान, अपने रोष पर हानि-सीमा का सिद्धान्त लागू करने की बुद्धि नहीं थी।

एकबार अमेरीका के गृह-युद्ध के दिनों में लिंकन के कुछ मित्र उसके कट्टर विरोधियों की कटु आलोचना कर रहे थे। उसे सुनकर लिंकन ने कहा, "आप में व्यक्तिगत विरोध के भाव मुझ से कहीं अधिक हैं इससे कोई लाभ नहीं होगा। मनुष्य के पास इतना समय ही कहाँ है कि वह अपनी जिन्दगी झगड़ों में उलझा दे! यदि कोई व्यक्ति मुझ पर आक्षेप करना बन्द कर दे, तो मैं उसके साथ हुए पहले के झगड़े को कभी याद नहीं करूँ।

काश! मेरी चाची एडिथ भी लिंकन ही की तरह क्षमाशील होती। वे चाचा फ्रैंक के साथ एक फार्म पर रहती थीं। फार्म कँटीली झाड़ियों और गढ़ों से भरा पड़ा था। उसकी मिट्टी अधिक उपजाऊ नहीं थी। वे बड़ी कठिनाई से अपने दिन काटते थे। एक एक कौडी मोहर के समान थी। किन्तु चाची को अपने सामान्य दीखने वाले घर को भड़कीला बनाने के लिये पर्दे और अन्य सजावट की वस्तुएँ खरीदने का बड़ा शौक था। ये वस्तुएँ वे 'डान एवर सोल्स ड्राइ गुड्ज स्टोर्स' से उधार खरीदती थीं जो मिसौरी के 'मेरीविले' स्थान पर था। चाचा फ्रैंक को अपने कर्ज की बड़ी चिन्ता थी। जिस प्रकार एक किसान को कर्ज से भय लगता है उसी प्रकार उन्हें भी अपने बढ़ते हुए बिलों से भय लगता था। इसलिये उन्होंने चुपचाप 'डान एवर सोल्स' वालों को अपनी पत्नी को उधार वस्तुएँ देने के लिये मना कर दिया। जब चाची को यह बात मालूम हुई तो वे क्रोधसे भडक उठीं। आज पचास वर्ष बाद भी वे उस घटना को याद कर भडक उठती हैं। मैंने कई बार उन्हें इस बात को दुहराते सुना है। पिछली बार जब मैं उन्हें मिला था वे लगभग सत्तर वर्ष की थीं। मैंने उनसे कहा—'चाची चाचाने यह तुम्हारे साथ अच्छा नहीं किया, किन्तु पचास वर्ष पहले की बात पर शिकायत करते रहकर क्या तुमने उससे भी अधिक बुरा नहीं किया! (चाचीपर मेरी बात का क्या असर होने को था!)

चाची को अपने वैमनस्य तथा कटु स्मृतियों के कारण मानसिक शान्ति को खोकर भारी मूल्य चुकाना पड़ा।

बेन्जामिन फ्रैंकलिन जब सात वर्ष के थे तब उन्होंने एक भूल की थी जिसे वे सत्तर वर्ष के हुए तब तक याद करते रहे। जब वे सात वर्ष के थे एक सीटी पर मुग्ध हो गए। सीटी खरीदने के लिये वे इतने लालायित हो उठे कि उन्होंने दूकानदार के सामने पैसों का ढेर लगा दिया और बिना उसकी कीमत पूछे सीटी

ले आए। सत्तर वर्ष के बाद अपने एक मित्र को पत्र लिखकर उन्होंने उस घटना का इस प्रकार वर्णन किया—'घर आकर सीटी पा जाने की खुशी में मैं सीटी बजाता फिरा। किन्तु जब मेरे बड़े भाई तथा बहनों को पता चला कि मैं सीटी का अधिक मूल्य दे आया हूँ तो उन्होंने मेरी खूब हँसी उडाई और मै गुस्से में रो पड़ा।

वर्षों बाद जब फ्रैंकलिन फ्रास मे राजदूत बने तथा ससार प्रसिद्ध व्यक्ति बन गए तब भी वे सीटी का अधिक मूल्य देने की बात नहीं भूले और परिणाम यह हुआ कि सीटी लेकर उन्हें आनन्द की अपेक्षा अधिक कटुता झेलनी पडी।

किन्तु फ्रैंकलिन ने इससे जो शिक्षा ली वह अन्ततः उनके लिये बडी लाभदायक सिद्ध हुई। उन्होंने कहा कि, "जब मैं बड़ा हुआ और दुनियादारी चलानेवाले लोगों के कार्यों का मैंने निरीक्षण किया, तो मुझे ज्ञात हुआ कि कितने ही आदमी ऐसे हैं जिन्होंने वस्तुओं का अधिक मूल्य चुकाया है। सक्षेप मे मेरी तो यह धारणा है कि बहुत से लोग इसलिये दुःखी होते हैं कि वे वस्तुओं के मूल्यों का गलत अनुमान लगाते हैं।

गिल्बर्ट और सलिवान ने भी एक दूसरे से नाराज हो कर नाराजगी का आवश्यकता से अधिक मूल्य चुकाया। चाची एडिथ ने भी यही किया और डेल कारनेगी ने भी कई बार ऐसा ही किया। ससार के दो महान उपन्यास 'वार एण्ड पीस' (युद्ध और शान्ति) तथा 'एना केरेनिना' के लेखक लिओ टॉलस्टाय ने भी ऐसा ही किया। इन्साइक्लोपेडिया ब्रिटेनिका के अनुसार जीवन के अन्तिम बीस वर्षों मे टॉलस्टाय का ससार में सर्वाधिक मान था। उनकी मृत्यु के बीस वर्ष पूर्व अर्थात् १८९० से १९१० के वर्षों में अनेक श्रद्धालुओं ने दर्शनार्थ उनके निवास स्थान तक तीर्थ यात्रा की। वे उनकी वाणी सुनते, उनके चोगे का आँचल छूते वहाँ जाते और उनका प्रत्येक शब्द लिख लेते, मानो वह कोई 'दिव्य रहस्योद्घाटन' हो। किन्तु उनके सामान्य जीवन में, सत्तर वर्ष के टॉलस्टाय में सात वर्ष के फ्रैंकलिन जितना विवेक भी नहीं था। या कहें विवेक के नाम पर उनके पास कुछ नहीं था।

बात यह थी कि टालस्टाय ने एक ऐसी लड़की से विवाह किया था जिसे वे खूब चाहते थे। वे दोनों पहले इतने सुखी थे कि भगवान से प्रार्थना करते समय यही मागते कि उनके दाम्पत्य जीवन का वह अपूर्व सुख सदा बना रहे। किन्तु टॉलस्टाय की पत्नी बड़ी ईर्ष्यालु थी। वह भेष बदल कर उनके पीछे हो लेती और उनकी निगरानी करती। यहाँ तक कि जगल में भी वह उनका पीछा नहीं छोड़ती। इससे उनमें बड़ा कलह होता। उसे अपने बच्चो तक से ईर्ष्या होती थी, यहाँ तक कि एक दिन ईर्षावश उसने अपनी बच्ची के फोटो को गोली मार दी और उसमें छेद कर दिया। कई बार वह अफीम की शीशी होठों से लगा कर आत्म-हत्या करने की धमकी देती और फर्श पर लोटने लगती। यह देखकर इधर कोनेमें दुबके हुए उसके बच्चे भय से चीखने लगते।

और टालस्टाय क्या करते ? वे भी उत्तेजित होकर फर्नीचर तोडने फोडने लगते। मैं उन्हें दोष नहीं देता, क्योंकि उत्तेजना में प्रायः ऐसा ही होता है। उनके पास उनकी अपनी डायरी रहती थी जिस में वे सारा दोष अपनी पत्नी के मत्थे मढते थे। यह कार्य उनके लिए 'सीटी' सिद्ध हुआ। वे चाहते थे कि डायरी को पढकर भावी पीढी उन्हें निर्दोष मान कर सारा दोष उनकी पत्नी के मत्थे मढ दें। किन्तु इस की प्रतिक्रिया उनकी पत्नी पर यह हुई कि वह डायरी के पन्ने फाड कर जलाने लगी और स्वयं भी डायरी लिखने लगी जिसमें उसने टालस्टाय को खलनायक के रूप में चित्रित किया। इतना ही नहीं उसने 'हूज फाल्ट' (किस का दोष) नाम का एक उपन्यास भी लिख डाला। उस में उसने अपने को त्यागमयी देवी के रूप में और टालस्टाय को घर के पिशाच के रूप में चित्रित किया।

यह सब क्यों हुआ ? क्या कारण था कि उन्होंने अपने घर को—स्वयं टालस्टाय के शब्दों में—'पागल खाना बना डाला ?' यह तो स्पष्ट है कि कारण कई थे, पर उनमें से एक यह भी था कि उनमें दूसरों को अपने अनुकूल करने की तीव्र लालसा थी। उनको यह चिन्ता थी कि 'हम' उन के बारे में क्या सोचेंगे ? पर क्या हम कभी यह भी सोचते हैं कि दोनों में दोषी कौन था ? हम अपनी ही उलझनों में इतने घिरे रहते हैं कि दूसरों के बारे में सोचने को हमारे पास समय ही नहीं होता। बेचारे उन दो प्राणियोंको अपनी 'सीटी' की कितनी भारी कीमत चुकानी पड़ी। पचास वर्ष तक उन्हें सचमुच ही नर्क भोगना पडा; महज इसलिये कि उनमें 'हानि-सीमा' निर्धारित करने का विवेक नहीं था। वे विवाद को वहीं पर खत्म करना नहीं जानते थे। उन में यह जानने का विवेक नहीं था कि 'हमारा जीवन बरबाद हो रहा है और हमें झगडे को यहीं रोक देना चाहिये।'

मेरा तो यह दृढ विश्वास हैं कि 'मूल्यों का ठीक ठीक ज्ञान' हमारी मानसिक शान्तिका महत्वपूर्ण रहस्य है और मेरा यह भी विश्वास है कि यदि हम अपने जीवन के मुकाबले में अमुक वस्तुओं का क्या मूल्य हो, इस बारे में अपना कोई माप बना लें तो तत्काल ही हमारी पचास प्रतिशत चिन्ताएँ दूर हो जाएँ।

इसलिए चिन्ता आपको मिटा दे उसके पहले ही चिन्ता को मिटा देने के लिये यह पाँचवाँ नियम याद रखिये —

जब कभी बेकार बातों को लेकर जीवन नष्ट करने की खब्त सवार हो जाय तो मन ही मन तीन प्रश्न कीजिये —

१ जिस बात से मैं चिन्तित हूँ उस से मुझे क्या हानि होगी ?

२ इस बात के लिए 'हानि—सीमा' कहाँ तक निर्धारित की जाय ? या कब इसे भुला दिया जाय ?

३ अपनी 'सीटी' का कितना मूल्य दूँ। क्या मैंने पहले ही से अधिक मूल्य तो नहीं चुका दिया है ?

☆

११ : हथेली पर सरसों उगाने की कोशिश न कीजिये।

लिख रहा हूँ और खिडकी के बाहर अपने उद्यान की सर्पाकार पटरियों को देख रहा हूँ। ये पटरियॉ सीपियो और ककड़ों से बनी हुई हैं। मैंने इन्हें येल विश्वविद्यालय के 'पीबोडी' म्युजियम से खरीदा था। मेरे पास म्युजियम के क्यूरेटर का एक पत्र है, जिसमें लिखा है कि ये पटरियॉ १८०० लाख वर्ष पूर्व बनी थीं। कोई जड़ मूर्ख भी इस बात से इन्कार नहीं कर सकता कि ये पटरियॉ १८०० लाख वर्ष पूर्व बन चुकी हैं और अब उसके अस्तित्व को बदला नहीं जा सकता। इतना ही क्यों बल्कि १८०० सेकण्ड पूर्व तक की घटित किसी घटना को भी नहीं बदला जा सकता और मजा तो यह है कि हम में से अधिकाश यही करते आए हैं। यह ठीक है कि कुछ क्षण पूर्व हुई किसी घटना के प्रभाव को हम कम कर दें, किन्तु उसे सर्वथा बदल नहीं सकते।

भगवान की इस लीला भूमि पर भूत को सार्थक बनाकर लाभ उठाने का केवल यही तरीका है कि हम धैर्य के साथ अपनी बीती भूलों का विश्लेषण करें, उनसे लाभ उठाएँ और उन्हें भूल जाएँ।

बात ठीक है पर आप सोचेंगे कि, "क्या इसके अनुसार आचरण करने का साहस और विवेक भी मुझ में है!" आपके इस प्रश्न के उत्तर में मैं आपको कई वर्ष पूर्व का अपना एक अनुभव सुनाऊँगा—"एक बार मैंने बिना मुनाफा कमाए तीन लाख डालर की रकम को 'स्वाहा' कर दिया। बात यह थी कि मैंने प्रौढ शिक्षा के लिए एक वृहत् केन्द्र की स्थापना की थी। विभिन्न नगरों में उसकी शाखाएँ खोली गई, और उसके प्रचार एव ऊपरी व्यवस्था के लिये खुले हाथों धन खर्च किया गया। पढाने में व्यस्त रहने के कारण अर्थव्यवस्था पर ध्यान देने के लिये मेरे पास समय ही न था और न ऐसा करने की कोई इच्छा ही थी। इस बारे में मैं इतना लापरवाह रहा कि आय-व्यय का हिसाब रखने के लिये किसी कुशल मैनेजर की आवश्यकता भी महसूस नहीं की।

अन्ततः एक वर्ष के पश्चात मुझे एक गम्भीर एव दिल दहला देनेवाले तथ्य का भान हुआ। वह यह था कि बहुत आय होने पर भी लाभ के नाम पर एक कौड़ी भी हमारे पास न रही। इस तथ्य का पता चल जाने पर मुझे दो बातें करनी चाहिए थीं-एक तो वह, जो हब्शी वैज्ञानिक जोर्ज वाशिंग्टन कारवर ने बैंक में चालीस हजार डालर गवॉ देने पर की।—जब उसे पूछा गया कि क्या आप को अपने दिवालिया हो जाने की बात मालूम है? तो उसने बड़े सहज भाव से उत्तर दिया, "हा सुना तो है।" यह कह कर वह फिर से अपने अध्यापन कार्य में लग गया। उसने उस हानि को सदा के लिए मन से निकाल दिया था।

दूसरी बात जो मुझे करनी चाहिए थी वह यह थी कि मुझे अपनी भूल का विश्लेपण कर उससे सदा के लिये शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए थी।

किन्तु स्पष्ट बात यह है कि मैंने उन दोनों बातों में से एक भी नहीं की, बल्कि चिन्ता में गोते खाने लग गया और कई महीनों तक उलझन में पड़ा रहा। मेरा वजन कम हो गया और नींद हराम हो गई। इतनी बड़ी भूल से शिक्षा ग्रहण करने के बजाय मैं फिर उसी प्रकार लेकिन कुछ छोटे पैमाने पर भूल कर बैठा।

मुझे उस सारी मूर्खता पर सोचते हुए आज बड़ा क्लेश होता है। मैंने बहुत पहले ही समझ लिया था कि दूसरों को शिक्षा देना आसान है किन्तु उसी शिक्षा के अनुरूप स्वयं आचरण करना अत्यन्त कठिन है।

क्या ही अच्छा होता यदि मुझे भी न्यूयार्क के जार्ज वॉशिंग्टन हाईस्कूल में अध्ययन करने का सौभाग्य प्राप्त होता और वह भी श्री ब्रान्डवाइन के विद्यार्थी के रूप में जिन्होंने न्यूयार्क के ब्रॉक्स में ९३९ वुडीक्रिस्ट एवेन्यु के एलन साउन्डर्स को शिक्षा दी थी।

श्री साउन्डर्स ने मुझे बताया कि शरीर विज्ञान के अध्यापक श्री ब्रान्डवाइन नें उन्हें एक बार बहुत ही महत्वपूर्ण पाठ पढाया था। उन्होंने कहा—"उन दिनों मैं किशोरावस्था में था फिर भी चिन्ता का भूत मुझ पर सवार रहता था। मैं अपनी भूलों को लेकर अशान्त और क्षुब्ध रहा करता था। रातभर अपना परीक्षा-पत्र उलटते उलटते इसी चिन्ता में घुलता और जागता रहता कि मैं परीक्षा में सफल होऊँगा, या नहीं ! मैं रोज अपने किए पर पछताता रहता और सोचता—क्या ही अच्छा होता यदि मैं उसे और ढग से करता। फिर सोचता—अमुक बात को यों नहीं कह कर यों कहना चाहिए था।

तब, एक दिन सवेरे हमारी कक्षा के विद्यार्थी एक प्रयोगशाला में गए। वहाँ एक शिक्षक थे। जिन का नाम था श्री. ब्रान्डवाइन। उन्होंने एक दूध की बोतल डेस्क के बिल्कुल किनारे पर रख छोड़ी थी। हम सभी उस दूध की बोतल को देखते बैठे रहे। सोचने लगे—आखिर इसका हमारे शरीर विज्ञान के पाठ से क्या संबंध हो सकता है ! तब एकाएक ब्रान्डवाइन उठ खड़े हुए, टेबल हिली और बोतल गिर कर चूरचूर हो गई। सब दूध बह निकला और वह चिल्ला उठे—'दूध तो बह गया अब रोने से क्या !'

तब, उन्होंने हमें अपने पास बुलाकर उन टुकड़ों को दिखाया और कहा—इन्हें अच्छी तरह देख लो—मैं चाहता हूँ कि तुम इनसे शिक्षा लो और उसे जीवन पर्यंत याद रखो। तुम देख ही रहे हो कि दूध नाली में बह निकला है और अब यदि सारी दुनिया एक साथ उसके ऊपर बडबड़ाने तथा बाल नोचने लगे तो भी दूध की एक बूँद भी हाथ नहीं लग सकती। उस समय थोड़ी-सी भी सावधानी दूध को बचा सकती थी किन्तु अब कुछ नहीं हो सकता। अब तो यही अच्छा है कि हम इस घटना को भूलकर दूसरे कार्य में लग जाएँ। श्री. साउन्डर्स ने कहा—उस सामान्य प्रदर्शन ने मुझे बहुत ही प्रभावित किया। आज मैं अपने ज्योमिति, लेटिन आदि विषय भूल चुका हूँ पर वह दूध की घटना आज भी मेरे दिमाग में

ताजा है। मेरे विचार से उस प्रदर्शन से मुझे व्यावहारिक जीवन पर जितनी महत्व-पूर्ण शिक्षा मिली, उतनी उच्च विश्वविद्यालय के चार वर्षों के अध्ययन के दौरान में किसी भी अन्य बात से नहीं मिली। उस से मुझे शिक्षा मिली कि यथासम्भव हानि से सावधान रहा जाए किन्तु इतने पर भी हानि हो ही जाए तो उसे सर्वथा भुला दिया जाए।

कुछ पाठक इस कहावत को कि–अब पछताए होत क्या जब चिड़ियाँ चुग गईं खेत – घिसी हुई पुरानी कहावत कह कर अपनी चिढ़ व्यक्त करते हैं। मैं भी जानता हूँ कि यह कहावत घिसी हुई, नीरस और उच्छिष्ट लगती है। मैं यह भी जानता हूँ कि आप इसे हजारों बार सुन चुके हैं किन्तु मैं आपसे यह भी कहना चाहूँगा कि इन्हीं घिसी-घिसाई पुरानी नीरस कहावतों में युगों का विशुद्ध ज्ञान अन्तर्निहित है। इन कहावतों का उद्भव मानव जाति के कठोर अनुभवों से हुआ है। तथा असंख्य पीढ़ियों में प्रयुक्त होती हुई ये हम तक पहुँची हैं। यदि आप महान विद्वानों द्वारा 'चिन्ता' पर लिखी गई सामग्री पढ़ें तो आप को पता चलेगा कि जितने अधिक सारभूत और गम्भीर तथ्य आपने इन पुरानी कहावतों में पढ़े उतने किसी अन्य सामग्री में नहीं। उदाहरणार्थ ये कहावतें लीजिए—'पुल आनेके पहले ही उसे पार न करो' तथा 'अब पछताए होत क्या जब चिड़ियाँ चुग गईं खेत।' यदि हम इन दो कहावतों पर चिढ़ने के स्थान पर उनका जीवन में प्रयोग करने लगें तो हमें इस पुस्तक को पढ़ने तक की आवश्यकता नहीं रहे। वस्तुतः यदि हम अपनी इन कहावतों को जीवन में उतारने लगें तो हम सुखपूर्वक जी सकें। जो भी हो, ज्ञान की शक्ति तो उस की व्यावहारिकता में ही है, तथा इस पुस्तक का उद्देश्य आप को कोई नई बात बताना नहीं है। इस पुस्तक का एक उद्देश्य तो यह है कि आप को उन तथ्यों का स्मरण कराया जाय जिन्हें आप पहले से ही जानते हैं, दूसरा उद्देश्य यह भी है कि इसके द्वारा आप को उन तथ्यों को, जिन्हें आप पहलेसे ही जानते हैं, जीवन में उतारने की प्रेरणा मिले।

स्वर्गीय फ्रेड फुलर शेड जैसे व्यक्ति के प्रति मेरी बड़ी श्रद्धा है क्यों कि उनमें पुराने सत्यों को नवीन तथा आकर्षक ढंग से प्रकट करने की प्रतिभा थी। वे फिलेडेल्फिया बुलेटिन के सम्पादक थे। एक बार कॉलेज के भावी स्नातकों के सामने प्रवचन करते हुए उन्होंने प्रश्न किया कि आप मे से कितने ऐसे हैं जिन्होंने कभी लकड़ी चीरी है? जरा अपने हाथ उठा दें। उन्होंने देखा कि बहुतों ने लकड़ी चीरी थी। तब उन्होंने दूसरा प्रश्न किया – आपमें से कितने ऐसे हैं जिन्होंने खेतों में धान की जगह धूल बोई है?

किसीने हाँ नहीं की।

मि. शेड ने कहा–स्पष्ट है कि कोई खेतों में धूल नहीं बो सकता। वह तो पहले ही से वहाँ मौजूद है। अतीत के साथ भी कुछ ऐसी ही बात है। जब आप गड़े मुर्दे उखाड़ने लगते हैं तो आप धूल बोने का प्रयास करते हैं।

जब बेसबॉल के प्रसिद्ध खिलाड़ी वृद्ध कोनीमेक इक्यासी वर्ष के थे मैंने उनसे पूछा कि, "क्या आप कभी अपनी हार पर चिन्ता करते थे ?"

"हाँ करता था" कोनीमेक ने कहा। "किन्तु कई वर्ष हुए मै इस मूर्खता से मुक्त हो चुका हूँ। मैंने जान लिया कि चिन्ता से मेरी कोई प्रगति नहीं हो सकती। जो बीत चुका है वह लौट कर नहीं आता।"

बीते को पुनः प्राप्त करने के व्यर्थ प्रयास में आप केवल अपने चेहरे पर झुर्रियाँ डाल सकते हैं तथा उदर व्रण के शिकार बन सकते हैं।

मैंने गत 'थैंक्सगिविंग' समारोह के अवसर पर जेक डेम्पसी के साथ भोजन किया था। भोजन करते समय उन्होंने मुझे उस घटना का वर्णन सुनाया जिस में वे हेवीवेट चेम्पियनशिप की स्पर्धा में टूने से मात खा गए थे। उनके अहं को आघात पहुँचना स्वाभाविक ही था। उन्होंने मुझे बताया कि, "उस संघर्ष के दौरान में मुझे एकाएक लगा कि मै वृद्ध हो चला हूँ...। दस बार कुश्ती हुई तब तक तो मैं टिका रहा किन्तु उसके बाद टिक नहीं सका। मेरे चेहरे पर सूजन आ गयी थी और वह जगह जगह से कट गया था। मेरी आँखें लगभग बन्द हो चुकी थीं। मैंने देखा कि रेफरी ने जेक टूने का हाथ ऊपर उठा कर उसे विजयी घोषित कर दिया है। मैं विश्व-चेम्पियन नहीं रहा। बरसते पानी में भीड को चीरता हुआ मैं अपने ड्रेसिंग रूम में चला गया। जब मैं भीड़ में से गुजर रहा था कुछ लोगों ने मेरा हाथ थाम कर सहानुभूति प्रदर्शित की, तो कुछ लोगो की आँखों में आँसू थे।

एक वर्ष पश्चात टूने से मैं फिर लडा किन्तु व्यर्थ। मै सदा के लिए हार चुका था। उस चिन्ता से मुक्त होना मेरे लिए कठिन हो गया। तब मैंने मन ही मन निश्चय किया—गडे मुर्दे उखाड़ने से कोई लाभ नहीं। मै बीती घटनाओं पर आँसू नहीं बहाऊँगा। पराभव के धक्के को मै झेल लूँगा पर भूमिसात् कभी नहीं हूँगा।

जेक डेम्पसी मन ही मन दुहराता नहीं रहा कि मैं गडे मुर्दे नहीं उखाडूँगा। नहीं, ऐसा करने का परिणाम तो यह होता कि वह भूत की चिन्ता पर सोचने के लिए बाध्य हो जाता। किन्तु उसने अपने पराभव को स्वीकार कर उसे भुला दिया और भावी के कार्यक्रम पर अपना ध्यान केन्द्रित कर दिया। उसने ब्रोडवे पर जेक डेम्पसी रेस्त्रा चलाया, तथा ५७ वीं स्ट्रीट पर ग्रेट नोर्दर्न होटल खोली। उसने घूँसेबाजी के प्रदर्शन तथा कुश्तियों की स्पर्धा का प्रचार करने मे अपने को लगा दिया। वह अपने रचनात्मक कार्यों में इतना व्यस्त रहने लगा कि उसे अतीत को याद करने तथा उसपर विचार करने का समय ही नहीं मिलता था।

जेक डेम्पसी ने कहा — गत चार वर्षों से मेरा जीवन चेम्पियनशिप के जीवन से कहीं अधिक सुखी है।

"जब मैं इतिहास तथा आत्म कथाएँ पढता हूँ तथा अत्यन्त कठिन परिस्थितियों में लोगों को अपनी चिन्ताओं एवं विपदाओं को भुला कर सुखी जीवन

व्यतीत करते देखता हूँ तो हर बार चकित रह जाता हूँ तथा उनसे प्रेरणा प्राप्त करता हूँ।"

"एक बार मैं सिंगसिंग गया और वहाँ देखा कि कैदी, कैद के बाहर आम लोगों के समान ही सुखी हैं। इस बारे में मैंने सिंगसिंग के वॉर्डर लेविस इं. लॉज से बात-चीत की। उसने बताया कि जब ये अपराधी पहली बार जेल में आते हैं तो क्षुब्ध और दुःखी रहते हैं किन्तु कुछ महीनों के पश्चात् उनमें से अधिकाश, जिनमें कुछ बुद्धि है, अपने दुर्भाग्य को भुला देते हैं, अपने को उस जीवन में ढाल लेते हैं और उसे स्वीकार कर लेते हैं। वे उसे सुखी बनाने का प्रयास करते हैं। वॉर्डन लॉज ने मुझे सींगसींग के एक कैदी का हाल बताया जो माली था और जेल में सब्जी उगाते तथा फूल लगाते समय गाता रहता था।

सींगसींग के उस कैदी में अन्य लोगों से अधिक विवेक था। वह जानता था कि विधाता लेख लिखता है और लिखता ही रहता है। आपकी समस्त पवित्रता एव बुद्धि आधी पंक्ति मिटाने के लिए भी उसे ललचा नहीं सकती। विधाता से लिखे अंकों में से एक को भी आपके आँसू धो नहीं सकते।

इसलिए व्यर्थ ही आँसू क्यों बहाए जाएँ। यह सच है कि हम बहुत सी भूलें और मूर्खताएँ करते हैं, यह हमारा दोष है। तो क्या हुआ ? किसने यह सब नहीं किया ? नेपोलियन जैसा व्यक्ति भी अपनी जीती हुई लड़ाइयों की एक तिहाई हार गया था। औसतन हमारे प्रयत्न नेपोलियन के प्रयत्नों से बुरे नहीं बैठते।

यह तो निर्विवाद है कि शक्तिशाली राजा भी टूटी को फिर से नहीं जोड़ सकता, चाहे वह अपनी पूरी ताकत ही क्यों न लगा दे।

इस लिए यह ७ वाँ नियम स्मरण रखिए – बात का बतंगड़ न बनाइये।

☆

तीसरे भाग का संक्षेप

(१) व्यस्त रहकर चिन्ताओं के जमघट को दिमाग से बाहर रखिये। खूब काम कीजिए। घुल घुल कर जीनेवालों के लिए यह सर्वोत्तम औषध है।

(२) तुच्छ बातों पर सिर न धुनिये। तुच्छ बातें जीवन की दीमक हैं। उन को लेकर जीवन का सुख नष्ट न कीजिए।

(३) औसत नियम का प्रयोग कीजिए, चिन्ताओं को भगाइये। मन ही मन सोचिये—यदि कुछ हुआ तो क्या विपत्ति आ सकती है?

(४) होनी के साथ सहयोग कीजिये यदि आप परिस्थितियों को बदल नहीं सकते, उनमें संशोधन नहीं कर सकते तो कहिये—ठीक है— है सो है, बदला नहीं जा सकता।

(५) अपनी चिन्ताओं को सीमित कीजिए। उनका मूल्य निश्चित कीजिए, अधिक मूल्य न दीजिये।

"बीती ताहि बिसारिये आगे की सुध लेय"

भाग ४

मन में सुख शान्ति रखने की सात विधियाँ

१२ : ये शब्द आपकी जिन्दगी बदल देंगे

कुछ वर्ष पूर्व मुझे रेडिओ कार्यक्रम में यह प्रश्न पूछा गया था कि आपने अब तक सबसे महत्वपूर्ण पाठ कौनसा सीखा है ?

उत्तर सरल था। अब तक जो महत्वपूर्ण बात मैंने सीखी, वह हैं, 'हमारे विचारों के महत्व का ज्ञान।' यदि मुझे मालूम हो कि मैं क्या सोचता हूँ तो मैं, आप क्या हैं, कैसे हैं, यह भी जान सकता हूँ। हमारे विचार ही हमारे व्यक्तित्व को बनाते हैं। हमारी मानसिक अवस्था ही हमारे भाग्य का निर्णय करती है। इमर्सन ने कहा है कि, "मनुष्य का व्यक्तित्व उसके दिन भर के विचारों से आका जाता है। वह अपने विचारों से भिन्न हो ही नहीं सकता।"

मेरी तो यह धारणा अब दृढ हो गई है कि, हमारे सामने यदि कोई सब से बड़ी या यह कहें कि एक मात्र समस्या है तो वह हैं-सम्यक् विचारों का संकलन। यदि इतना कर सकते हैं तो हम अपनी सभी समस्याएँ हल कर सकते हैं। रोमन साम्राज्य पर शासन करनेवाले महान दार्शनिक मारकुस ओरेलियस ने ठीक ही कहा है, "हमारा जीवन वैसा ही होता है जैसा विचार उसे बनाते हैं।" ये शब्द हमारे जीवन की दिशा बदल सकते हैं।

क्यों कि यदि हम सुखद विचार रखते हैं तो सुखी होंगे। दुःखद विचार रखते हैं तो दुखी होंगे। भयावह विचार रखते हैं तो भयभीत रहेंगे। अस्वस्थ विचार रखते हैं तो अस्वस्थ रहेंगे, और यदि असफलता के सबंध ही में सोचते रहे तो निश्चय ही असफल रहेंगे। यदि हम आत्मग्लानि में ही पड़े रहे तो सब लोग हम से दूर भागेंगे और हमारी अवगणना करेंगे। नोर्मन विसेन्ट पील का कथन है कि, "आप अपने को जैसा समझते हैं वैसे नहीं हैं। आप वैसे हैं जैसे आपके विचार हैं।"

मैं आपको यह नहीं कह रहा हूँ कि अपनी सभी समस्याओं के प्रति एक सा ही रुख अपनाइए – नहीं। दुर्भाग्यवश हमारा जीवन इतना सरल नहीं है। मै तो यह कह रहा हूँ कि हम जीवन के प्रति एक विधेयात्मक रुख अपनाएँ न कि नकारात्मक। दूसरे शब्दों में हमें अपनी समस्याओं के प्रति सजग तो रहना है किन्तु उनकी चिन्ता नहीं करनी है। सजगता और चिन्ता मे क्या अन्तर है ?

एक दृष्टान्त लीजिए – न्यूयार्क के भीड भरे यातायात के बीच से गुजरते हुए जो काम मैं कर रहा हूँ उस के प्रति सजग तो रहता हूँ किन्तु मुझे उसकी चिन्ता नहीं रहती। सजगता का अर्थ है समस्याओ का ज्ञान तथा उन्हें शान्ति से सुलझाने का प्रयास। चिन्ता का अर्थ होता है आकुल-व्याकुल अवस्था में चक्कर काटना।

एक व्यक्ति अपनी गम्भीर समस्याओं को जानते हुए भी कोट में फूल लगाए तनकर चल सकता है। मैंने देखा है कि लोवेल टॉमस यही करते थे। प्रथम महायुद्ध के दिनों मे 'एलन बी. लॉरेन्स' नामक प्रसिद्ध चलचित्र तैयार करते समय लोवेल टॉमस के साथ मुझे काम करने का अवसर मिला था। उन्होंने अपने साथियों के साथ करीब पॉच छः मोर्चों पर युद्ध के चित्र खींचे थे जो कि सर्वोत्तम थे। उनमें टी. ई. लारेन्स तथा उसकी सजीली अरेबियन सेना का चित्रमय विवरण था और एलन बी. की होलीलैन्ड विजय का चित्र-विवरण भी उसीमें था। उनके सचित्र विवरण 'विथ एलन बी. इन पेलेस्टाइन' तथा 'लॉरेन्स इन अरेबिया' नें लन्दन तथा संसार के अन्य भागो में तहलका मचा दिया था। लन्दन का ऑपेरा समारोह छः सप्ताह के लिए स्थगित कर देना पड़ा था ताकि वह कोवेन्ट गार्डन रोयल ऑपरा हाउस में अपने चित्र प्रदर्शित कर सकें, तथा उस महान साहसिक कथानक को जारी रख सकें। लन्दन की उस सनसनी खेज सफलता के पश्चात् उन्होंने कई देशों की विजेता के रूप में यात्रा की। इस के बाद दो वर्ष, भारत तथा अफगानिस्तान के लोक जीवन पर चित्र बनाने में बिताये। दुर्भाग्यवश एक अभूतपूर्व घटना हो गई। लन्दन में वे 'दिवालिया' हो गए। मैं उस समय उन के साथ ही था। मुझे आज भी याद है कि हम सस्ते होटल में भोजन किया करते थे। यदि हम प्रसिद्ध स्कॉट कलाकार जेम्स मेकवे से कुछ उधार न लेते तो वह सस्ता भोजन भी नसीब न होता। कहने का तात्पर्य यह है कि यद्यपि लॉवेल टॉमस भारी कर्ज मे दबे हुए थे और एकदम निराश थे तथापि उन्होंने उसकी कभी चिन्ता नहीं की। हाँ, वे सतर्क जरूर रहते थे। वे जानते थे कि यदि उन्होंने असफलताओं को अपने पर हावी होने दिया तो कर्जदारों तथा अन्य लोगों की निगाहों से वे गिर जाएँगे। अत. वे हर सुबह बाहर निकलने के पूर्व एक फूल खरीदते और उसे अपने कोट में लगा लेते फिर आक्सफोर्ड स्ट्रीट से बड़े मजे से गुजरते। वे सदा रचनात्मक और साहसपूर्ण बातें सोचते रहते थे। और असफलता को अपने पर कभी हावी नहीं होने देते। उनके लिए हार भी एक खेल था। यदि आप भी जीवन में उन्नति के शिखर पर पहुँचना चाहें तो इस लाभदायक शिक्षा को ग्रहण कीजिए, क्यो कि हमारी मानसिक अवस्था का शारीरिक शक्तियों पर विलक्षण प्रभाव पड़ता है।

प्रसिद्ध ब्रिटिश मनोवैज्ञानिक जे. ए. हेल्ड फिल्ड ने अपनी रोचक पुस्तक–'दी साइकोलोजी ऑफ पावर' (शक्ति का मनोविज्ञान) में एक प्रभावशाली दृष्टान्त दिया है। वे लिखते हैं कि, "मैंने तीन व्यक्तियों को, उनकी शक्ति पर मानसिक निर्देश का प्रभाव जानने के लिए, तैयार किया और परीक्षण किये। शक्ति-परीक्षण-यन्त्र को कस कर पकड़ने से किया जानेवाला था। उन्होंने उनको, अपनी सम्पूर्ण शक्ति से यत्र को दबाने को कहा। तीन विभिन्न अवस्थाओं में यह परीक्षण किया गया।

पहले अपनी सामान्य चेतनावस्था में उनकी शक्ति १०१ पौण्ड थी।

तब उनको हिप्नोटाइज़ किया गया। उस अवस्था में कमजोरी के कारण उनकी शक्ति केवल २९ पौण्ड रह गई जो उनकी सामान्य शक्ति से एक तिहाई भी नहीं थी। उनमें एक तो नामी पहलवान था। जब हिप्नोसिस की अवस्था में उसे कहा गया कि, "क्या तुम्हें कमजोरी लगती है?" तो, उसने उत्तर दिया, "मुझे अपने हाथ बच्चों के हाथों की तरह छोटे लगते हैं।"

तब, केप्टन हेडफिल्ड ने उन आदमियों का तीसरी बार परीक्षण किया। इस बार हिप्नोसिस अवस्था में उन्हें निर्देश दिया गया कि वे बहुत ताकतवर हैं। इस बार जब उन्होंने उस यन्त्र को दबाया तो उनकी औसत शक्ति १४२ पौण्ड आँकी गई। जब उनके मस्तिष्क में शक्तिमयची क्रियात्मक विचार भरे गए तो उन्होंने अपनी वास्तविक शारीरिक शक्ति को प्रायः पाँच गुना बढा लिया।

इतनी विलक्षण शक्ति है हमारे मानस में! इस विषय में मैं अमेरीकन इतिहास की एक विलक्षण कथा दृष्टान्त स्वरूप उद्धृत करूँगा। इस कथा को लेकर मैं एक पुस्तक लिख सकता हूँ। किन्तु संक्षेप में वह इस प्रकार है—गृह-युद्ध के कुछ ही दिनों के बाद अक्तूबर की हिमानी रात में एक स्त्री ने, जो गृह-विहीन, आवारा तथा घुमक्कड़ थी, एमेस्बरी, मेसाच्युसेट्स के अवकाश प्राप्त समुद्री केप्टन की पत्नी, मदर वेबस्टर का द्वार खटखटाया।

द्वार खोलने पर, मदर वेबेस्टर ने एक छोटे, दुबले पतले, लगभग सौ पाउन्ड वजन के प्राणी को, जो अस्थिपंजर मात्र था, अपने सामने खड़ा पाया। उसने अपने को श्रीमती ग्लोवर बताया और कहा कि उसको एक ऐसे घर की तलाश है, जहाँ बैठकर एक ऐसी समस्याका समाधान पा सके, जिसमें वह रात दिन डूबी रहती है। श्रीमती वेबेस्टर ने कहा — "तुम यहीं क्यों नहीं ठहर जाती? इतने बड़े मकान में मैं अकेली ही तो रहती हूँ!" श्रीमती ग्लोवर वहाँ रहने लगी। वह मदर वेबेस्टर के साथ अनिश्चित काल तक रहती यदि वेबेस्टर का दामाद न्यूयार्क से छुट्टियों में घर आने पर उसे आवारा कह कर वहाँ से निकाल न देता। उसने कहा— "मेरे घर में आवारा लोगों के लिए कोई स्थान नहीं।" बाहर भीषण वर्षा हो रही थी। कुछ क्षणों तक वह काँपती हुई खड़ी रही, फिर अन्य किसी आश्रय की तलाश में चल पड़ी।

इस कहानी की विलक्षण बात यह है कि जिस स्त्री को आवारा कह कर दामाद बिल एलिस ने घर से निकाल दिया था, उसी स्त्रीने आगे चल कर संसार के विचारों को प्रभावित करनेवाली अन्य विदुषी महिलाओं के समान ही संसार के विचारों को प्रभावित किया। आज वह अपने लाखों अनुयायियों में मेरी बेकर एडी के नाम से प्रसिद्ध है। इसी महिला ने 'साइन्स मॉनिटर' नामक पत्रिका की स्थापना की थी।

अब तक एडी ने अपने जीवन में रोग, शोक और विपत्ति के सिवा अन्य बातों का अनुभव बहुत कम किया था। उसका पहला पति विवाह के कुछ ही काल उपरान्त संसार से चल बसा था। उसके दूसरे पति ने उसे छोड़ दिया

और किसी अन्य विवाहित स्त्री को भगा ले गया। बाद में एक सामान्य घर में किसकी मृत्यु हो गई। उसके केवल एक लड़का था, जिसे उसने चार वर्ष की अवस्था में दैन्य, अस्वस्थता तथा ईर्ष्या के कारण त्याग दिया। बाद में उस लड़के का कोई पता नहीं चला। इस घटना के बाद इकत्तीस वर्षोंतक वह जीवित रही किन्तु अपने उस लड़के से नहीं मिल सकी।

अपनी रुग्णावस्था के कारण श्रीमती एडी वर्षों तक मानसिक स्वस्थता के विज्ञान पर प्रयोग तथा चिन्तन करती रही। उस के जीवन का अत्यत नाटकीय परिवर्तन मेसाचुसेट्स के लीन में हुआ। जाड़े में एक दिन वह चलते चलते बर्फ से ढकी पटरीपर फिसलकर गिर पड़ी और बेहोश हो गई। उसकी रीढकी हड्डी पर इतनी गहरी चोट आई कि 'स्पाज्मस' की सहायता से उसे जोड़ना पड़ा। डाक्टरों को तो भय था कि वह मर जाएगी, और यदि किसी करतब से वह जीवित भी रही तो चलने-फिरने के योग्य तो नहीं ही रहेगी।

अपनी मृत्यु शैया पर पड़े पड़े मेरी बेकर एडी ने ईश्वरीय प्रेरणा से बाइबल खोल कर सन्त मेथ्युज के ये शब्द पढ़े—"लो देखो। वे शैय्या पर लिटा कर एक रोगी को उनके पास लाए और उन्होंने उस रोगी से कहा—'वत्स, स्वस्थ हो जा! ईश्वर तेरे पाप क्षमा कर देगा।' उठ, अपना विस्तर समेट और घर की राह ले।" रोगी उठा और घर की राह ली।

"ईसू के उन शब्दों ने" उसने कहा - "मुझमें इतनी शक्ति, इतनी श्रद्धा तथा इतनी ताजगी पैदा की कि मैं तुरन्त शैय्या से उठ बैठी और चलने लगी।"

श्रीमती एडी ने कहा - "वह अनुभव मेरे लिए न्यूटन का 'गिरता सेब' साबित हुआ, तथा उस खोज से मैंने सीख लिया कि अपने को तथा दूसरों को कैसे स्वस्थ बनाया जाय।... मैं एक युक्तियुक्त निश्चय पर पहुँची कि मस्तिष्क ही सभी रोगों का हेतु है तथा हर तरह का प्रभाव एक मानसिक प्रक्रिया है।

इस प्रकार मेरी एडी एक नवीन 'क्रिश्चियन साइन्स' की संस्थापिका तथा उच्च धर्म सेविका बन गई। अब तक केवल यही एक ऐसा धार्मिक सम्प्रदाय है जिसकी स्थापना किसी महिला ने की है और जो विश्वव्यापी है।

सम्भवतः आप यह सोचने लगें कि यह कारनेगी तो क्रिश्चियन साइन्स में हमें दीक्षित करना चाहता है किन्तु आपका विचार गलत है। मैं इस मत का अनुयायी नहीं हूँ किन्तु ज्यों ज्यों अवस्था बढती जाती है, विचारों की अपार शक्ति में मेरी श्रद्धा बढती जाती है। अपने पैंतीस वर्ष के प्रौढ शिक्षण के आधार पर मैं विश्वास के साथ कह सकता,हूँ कि मनुष्य अपने विचार-परिवर्तन द्वारा चिन्ता, भय तथा विभिन्न प्रकार के रोगों का निवारण कर, अपने जीवन को बदल सकता है। मैंने हजारों बार ऐसे विलक्षण परिवर्तन देखे हैं, और इतने अधिक देखे हैं कि इन पर कोई आश्चर्य नहीं होता।

एक उदाहरण लीजिए ऐसे ही एक परिवर्तन का, मिनेसोटा सेण्ट पॉल की १४६९ वेस्ट इडाहो स्ट्रीट का फ्रैंक जे. व्हेले मेरा शिष्य रह चुका है। उसीके परिवर्तन की यह कहानी है। वह स्नायुरोग से पीड़ित था। यह स्नायुरोग उसे, चिन्ता के कारण हुआ था। फ्रैंक व्हेले ने मुझे बताया कि "मुझे हर बात की चिन्ता रहती थी। मैं बहुत दुबला पतला था। इसकी भी मुझे चिन्ता थी। मुझे चिन्ता रहती कि मेरे बाल झड रहे हैं। मुझे भय रहता कि मै विवाह के लिए पर्याप्त रकम जमा नहीं कर पाऊँगा तथा जिस लडकी से मैं विवाह करना चाहता हूँ, वह हाथ से निकल जाएगी। मुझे लगता कि मैं अच्छा जीवन नहीं बिता पा रहा हूँ। साथ ही दूसरे लोगों पर अपने प्रभाव की चिन्ता भी मुझे लगी रहती थी। मुझे उदर व्रण का भय था। मै अधिक काम भी नहीं कर सकता था। आखिर मुझे अपनी नौकरी भी छोड़नी पड़ी। मन मे तनाव इतना बढ गया था कि मैं बहुत दुखी रहने लगा। मुझ पर बोझ इतना बढ गया था कि कहीं न कहीं तो टूटना ही था, और हुआ भी यही। यदि आप कभी स्नायु रोग से पीड़ित नहीं रहे हैं तो भगवान से प्रार्थना कीजिए कि आपको यह रोग कभी न हो, क्यों कि कोई भी शारीरिक पीडा मानसिक यन्त्रणा से अधिक कष्टकर नहीं होती।"

मेरा स्नायु रोग इतना, असाध्य हो गया था कि मैं अपने परिजनो से बात भी नहीं कर सकता था। अपने विचारो पर से मेरा नियन्त्रण हट चुका था। मै पूर्णतया भयग्रस्त हो चुका था। मामूली शोरगुल से भी मै उत्तेजित हो जाया करता था। हरएक से मुँह छिपाता और बिना किसी स्पष्ट कारण के रोने-धोने लगता।

मेरा प्रत्येक दिन विषाद में बीतता था। मुझे लगता कि सभी लोगों ने मेरी उपेक्षा कर दी है, यहाँतक की भगवान ने भी। नदी में कूदकर आत्म-हत्या कर लेने की मेरी इच्छा होती थी।

किन्तु आत्महत्या न करके मैंने फ्लोरिडा की यात्रा करने का निश्चय किया। इस आशय से कि वातावरण के परिवर्तन से शायद कुछ सहायता मिले। जैसे ही मैं गाडी में बैठने लगा, मेरे पिता ने मुझे एक पत्र दिया और कहा कि मैं इसे फ्लोरिडा पहुँचने पर ही खोलूँ। मैं फ्लोरिडा ऐसे मौसम में पहुँचा जब यात्रियों का वहाँ खासा जमघट रहता है। मुझे वहाँ किसी होटल में स्थान नहीं मिला। अतः मैंने एक गेराज में सोने की जगह किराए पर ले ली। मियामी के प्रान्तर में मैंने एक भारवाहक पोत पर नौकरी पाने की कोशिश की, किन्तु भाग्य ने साथ नहीं दिया। हार कर खाडी पर ही समय काटने का निश्चय किया। फ्लोरिडा में मैं घर से भी अधिक दुखी हो गया। इसलिए मैंने यह देखने के लिए कि पिताजी ने क्या लिखा है वह लिफाफा खोला। उस पत्र में लिखा था – 'पुत्र, तुम घर से १५०० मील दूर हो, तथापि अपनी यहाँ की तथा वहाँ की अवस्था में कोई अन्तर नहीं पाते हो। है न? मैं जानता था कि तुम्हें वहाँ भी शान्ति नहीं मिलेगी, क्यों कि तुम अपने साथ वहाँ भी वही वस्तु ले गए जो तुम्हारे क्लेष का कारण है, और वह है, तुम्हारी विचारधारा।

तुम्हारे शरीर अथवा मस्तिष्क में कहीं कुछ भी नहीं विगडा है; न परिस्थितियों ने ही तुम्हें दूध की मक्खी बना रखा हैं। परिस्थिति विषयक तुम्हारी विचारधारा ही तुम्हारे क्लेष का मूल कारण है। मनुष्य अपने मन में जैसा सोचता है वैसा ही होता है। पुत्र, जब तुम्हे यह ज्ञान हो जाए तो तुम घर लौट आना। तुम अपने आप अच्छे हो जाओगे।"

पिता के पत्र से मै बहुत रुष्ट हुआ। मुझे सहानुभूति की आशा थी, शिक्षा की नहीं। मैं इतना उग्र हो उठा कि तत्काल घर न जाने का निश्चय कर लिया। उस रात मियामी के एक उपमार्ग से गुजरते हुए मै एक चर्च मे जा पहुँचा, जहाँ प्रार्थना हो रही थी। आगे बढ़ने का कोई उपाय न देख मै एक ओर खड़ा हो गया और प्रवचन सुनने लगा – "जो अपनी भावना पर विजय पा लेता है, वह देश जीतनेवाले व्यक्ति से भी अधिक सबल है" भगवान के उस पवित्र मन्दिर मे बैठ कर, उन्हीं विचारों को सुनकर, जिन्हे मेरे पिता ने पत्र में लिखा था, मेरे मस्तिष्क का सारा विकार धुल गया। मै जीवन मे पहली बार स्पष्ट और विवेकपूर्ण ढग से सोचने लगा। मुझे अपनी मूर्खता का भान हो आया। अपने को फिर से वास्तविक रग में देखकर मैं ठगा सा रह गया। मै सारे ससार और उसके प्रत्येक प्राणी को बदलना चाहता था, जब कि आवश्यकता इस बात की थी कि मैं अपने ही विचार तथा दृष्टिकोण को बदलता।

दूसरे ही दिन मै घर के लिए रवाना हो गया। एक सप्ताह बाद मै फिर से अपनी नौकरी पर जाने लगा। चार माह पश्चात मैंने उसी लडकी से विवाह कर लिया जिसको खो देने का मुझे भय था। अब हमारा पॉच बच्चों का अपना सुखी परिवार है। ईश्वर की कृपा है कि मै आर्थिक और मानसिक दृष्टि से सुखी हूँ। जिन दिनों मै स्नायु रोग का शिकार हुआ था, मै एक छोटे विभाग में आठ कामगारों पर रात के समय फोरमन का काम करता था। किन्तु अब मै कार्टन (कागज) बनानेवाले कारखाने में चार सौ पचास व्यक्तियोंपर सुपरिन्टेन्डेन्ट हूँ। जीवन अब काफी भरा भरा और सौहार्दपूर्ण लगता है। उसके वास्तविक मूल्यों को अब मैं समझता हूँ, ऐसा मेरा विश्वास है। जब कभी अशान्त क्षण जीवन में भरने लगते हैं, जैसा कि हरएक के जीवन में होता है, मैं अपने विचार और दृष्टिकोण बदल देता हूँ और सब कुछ ठीक हो जाता है।

"मै ईमानदारी से कह सकता हूँ कि स्नायुरोग का अनुभव करके मै बहुत ही प्रसन्न हूँ क्यों कि इसके बिना अपने शरीर तथा मस्तिष्क पर होनेवाले विचार-शक्ति के प्रभाव का ज्ञान मुझे न होता। अब मैं अपने विचारों से अपने अनुकूल लाभ उठा सकता हूँ ' अब मै महसूस करता हूँ कि पिताजी ने सही कहा था कि मेरे क्लेश का कारण बाह्य परिस्थितियाँ न हो कर मेरे वे विचार थे जो मै उन के सबध में रखता था। जैसे ही मुझे इस सत्य का ज्ञान हुआ मैं स्वस्थ हो गया।—तो यह था फ्रैंक जेव्हेले का अपना अनुभव।

मेरा तो अटल विश्वास है कि जीवन की सुख-शान्ति पूर्णतया हमारी मानसिक अवस्था पर निर्भर है। हम कहाँ हैं ? हमारे पास क्या है ? तथा हम कौन हैं ? इन बातों का उससे कोई सम्बन्ध नहीं। बाह्य परिस्थिति का प्रभाव जीवन की सुख-शान्ति पर नहीं के बराबर होता है। उदाहरणार्थ-वृद्ध जॉन ब्राउन का ही मामला लीजिए। उसने हार्पर्सफेरी –अमेरीकी सरकार के शस्त्रागार पर अधिकार कर दासों को विद्रोह के लिए भडकाया था। इस अभियोग में उसे फॉसी की सजा दी गई थी। वह सिर पर कफन बॉधे फाँसी के तख्ते की ओर बढ चला। जो जेलर उस के साथ जा रहा था, वह दुखी था और घबरा रहा था, किन्तु वृद्ध जॉन ब्राउन शान्त और विकार रहित हो वर्जिनिया की ब्लुरीज पर्वतमालाओं की ओर निहार रहा था। उसने भावावेश में कहा, कितना सुन्दर है यह देश। मुझे इस के वास्तविक सौन्दर्य को देखने का सौभाग्य इससे पहले कभी प्राप्त नहीं हुआ।

या फिर रोबर्ट फाल्कन स्कॉट तथा उसके साथियों का उदाहरण लीजिए। दक्षिण ध्रुव तक पहुँचनेवाले वह पहले अंग्रेज थे। उनकी वापसी यात्रा, मनुष्य द्वारा की गयी अब तक की सभी यात्राओं से खतरनाक थी। उनकी रसद सामग्री बीत चुकी थी। ईंधन भी खत्म हो चुका था। ग्यारह दिन और ग्यारह रातों तक इस पृथ्वी से गिर्द गरजते हुए भीषण बर्फीले तूफान के कारण वे एक कदम भी आगे नहीं बढ सके थे। हवा इतनी क्रुद्ध और तीखी थी कि वहाँ की बर्फ में दरारें पड गईं थीं। स्कॉट तथा उसके साथियों को मालूम था कि वे मौत के मुँह में हैं। ऐसी सकट कालीन स्थिति के लिए वे अपने साथ अफीम भी लाए थे। थोडी अधिक मात्रा में लेते ही वे सब चिर निद्रा में सो जाते; किन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया, बल्कि हँसते-गाते, खुशियॉ मनाते मृत्यु को अपनाया। यह हम इसलिए जानते है कि आठ माह पश्चात् जो दल उन्हें ढूढने निकला, उसे उनके पास अन्तिम विदाई का पत्र मिला जिस में यह सारा विवरण लिखा हुआ था।

सचमुच ही यदि हम शान्ति और साहस के रचनात्मक विचारों का पोषण करें तो हम सिर पर कफन बॉधे फॉसी के फदे की ओर बढते हुए भी प्राकृतिक सौन्दर्य का आनन्द उठा सकते हैं। तथा भूख और शीत के कारण दम तोड़ते हुए भी अपने शिविरों को गीतों, कहकहों तथा वाद्यों की ध्वनि से गुंजायमान कर सकते हैं।

मिल्टन ने तीन सौ वर्ष पूर्व अपनी अन्धावस्था में ऐसे ही सत्य की प्रतीति की थी। उस का कहना है कि—

"मस्तिष्क भी अपनी जगह एक ही है, यह अपने में ही स्वर्ग को नर्क और नर्क को स्वर्ग बना सकता है।

मिल्टन के कथन के प्रत्यक्ष प्रतीक हैं नेपोलियन तथा हेलन केलर। नेपोलियन को गौरव, शक्ति तथा ऐश्वर्य जैसी वे सभी वस्तुएँ प्राप्य थीं जिनकी सामान्यतया कोई भी व्यक्ति कामना करता है। फिर भी उसने सेण्ट हेलेना में कहा कि, "मैंने अपने जीवन के छः दिन भी कभी सुखपूर्वक नहीं बिताए। इसके ठीक विपरीत अंधी,

बहरी तथा गूँगी हेलन केलर का कहना है कि, "मेरे लिए जीवन अत्यन्त मोहक वस्तु है।"

यदि मेरे जीवन की अर्ध शताब्दी ने मुझे कुछ सिखाया है तो वह यह कि आप स्वयं ही अपने लिए शान्ति प्राप्त कर सकते हैं।"

मैं इमर्सन के उन शब्दों को ही दुहरा रहा हूँ जिन्हें उसने 'सेल्फरिलाएन्स' नामक निबन्ध के अन्त में लिखा है "राजनैतिक विजय, किसी रोगी का स्वस्थ हो जाना, टेक्स में वृद्धि, बिछुड़े मित्र का मिलना आदि कई अन्य बाह्य घटनाएँ आपकी भावनाओं को उभारती हैं और आप सोचने लगते हैं कि आप के अच्छे दिन निकट हैं, किन्तु ऐसा विश्वास कोरी भ्रान्ति है। बाह्य घटनाएँ आपको शान्ति नहीं दे सकतीं। वह केवल आपके अपने प्रयत्न से ही मिल सकती है। प्रसिद्ध स्टोइक दार्शनिक एपिक्टेट्स ने चेतावनी देते हुए कहा कि हमें अपने शारीरिक फोडों और गिल्टियों से छुटकारा पाने की इतनी अधिक चिंता न कर अपने गलत विचारों से पिंड छुडाने की परवाह करनी चाहिए।

यद्यपि एपिक्टेट्स ने यह बात उन्नीस शताब्दियों पूर्व कही थी तथापि आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान आज भी इस बात का अनुमोदन करता है। डॉ. जी. केन. बी. रोबिन्सने बताया कि जॉन्स होपकिन्स अस्पताल में भर्ती किये गये प्रति पाँच रोगियों में से चार मनोवेगजन्य तनाव अथवा दबाव के कारण बीमार हुए थे। इन्द्रीय सम्बन्धी कष्टों के मूल में भी मनोवेगजन्य तनाव अथवा दबाव ही रहते हैं। अन्ततः उसने घोषित किया कि इन सब कष्टों के मूल में जीवन तथा उसकी समस्याओं के प्रति हमारा अव्यवस्थित दृष्टिकोण है।

"मनुष्य को किसी घटना के घटने से इतना दुःख नहीं होता, जितना उस घटनासम्बन्धी अपने विचारों से होता है"– इस बात को फ्रास के प्रसिद्ध दार्शनिक ने अपने जीवन के आदर्श के रूप में अपनाया था। चाहे कैसी भी घटना हो, उसके सम्बन्ध मे हमारे विचार, सर्वथा हमारे अपने दृष्टिकोण पर निर्भर करते हैं।

मेरा अभिप्राय क्या है! यह समझिये – मैं आपको यह कहने की धृष्टता करूँगा कि जब आप कठिन परिस्थितियों में क्षुब्ध हो उठें तथा जबरदस्त तनाव की स्थिति में हों, उस समय अपनी इच्छाशक्ति द्वारा मानसिक अवस्था को बदल दें। मै आपको बताऊँगा कि यह किस प्रकार सम्भव है! इसके लिए पहले चाहे कुछ प्रयास करना पड़े, किन्तु यह तरीका सरल ही है।

विलियम जेम्स की जो कि व्यावहारिक मनोविज्ञान के विशेषज्ञ हैं, उक्ति हैं कि "सामान्यतया ऐसा लगता है कि भावना के बाद ही क्रियाशीलता की उद्‌भावना होती है। किन्तु वस्तुतः भावना तथा क्रियाशीलता साथ साथ चलती हैं। इच्छा-शक्ति के प्रत्यक्ष नियन्त्रण में अधिक रहनेवाली इस क्रियाशीलता को हम नियमित कर, परोक्ष रूप में नियन्त्रण में न रहनेवाली भावनाओं को भी नियमित कर लेते हैं।

दूसरे शब्दों में – विलियम जेम्स का कथन है कि हम चाहे अपने मनोभावों को अपनी दृढ इच्छा-शक्ति द्वारा न बदल सकें किन्तु अपनी क्रियाशीलता को अवश्य बदल सकते हैं। और जब हम अपनी क्रियाशीलता को बदल देते हैं तो भावना अपने आप ही बदल जाती है।

इस प्रकार अपने कथन को स्पष्ट करते हुए वे कहते हैं कि यदि आपकी प्रसन्नता विलीन हो गई है तो उसे पुनः प्राप्त करने का सहज मार्ग यह है कि आप अपने कर्म तथा वचन से प्रसन्नता का अभिनय कीजिए जैसे कि आप में वे भाव पहले से ही विद्यमान हों।

यह सरल उपाय आप कर देखिए। आपको कमाल नजर आएगा। एक बार आजमा कर देखिए। अपने चेहरे पर आकर्षक, सौम्य तथा सहज मुस्कान धारण कीजिए, तनकर सीना फुला कर गीत गाईए, यदि गीत न गा सकें तो सीटी ही बजाइए और यदि सीटी ही न बजा सकें तो गुनगुना ही लीजिए। ऐसा करने से आप को शीघ्र ही पता लग जायगा कि विलियम जेम्स ने जो कहा था कि प्रसन्नता और आल्हाद का अभिनय करते समय विषाद और खिन्नता का आपके पास फटकना असम्भव है, बिल्कुल सही है।

यह बात प्रकृति के कुछ मूलभूत तथ्यों में से एक है। जो हम सभी के जीवन में विलक्षण करतब दिखा सकती है। कैलिफोर्निया की एक महिला को मैं जानता हूँ, पर नाम नहीं बताऊँगा। यदि उनको यह रहस्य मालूम होता तो चौबीस घंटों में ही वे अपनी विपत्तियों से छुटकारा पा जातीं। वे विधवा हैं और वृद्ध भी। वे प्रसन्न भाव का अभिनय नहीं करतीं। उनसे पूछा जाय कि आप कैसी हैं? तो वे कहेंगी–" ठीक हूँ। " किन्तु उनके चेहरे के भाव तथा उनकी वाणी की वेदना स्पष्ट रूप से बताती है, जैसे वह कह रही हैं–काश! तुम मेरी विपदाओं को जानते! ऐसा लगता है कि वे आपको प्रसन्न देखकर आपकी भर्त्सना कर रही हों। सैंकड़ो स्त्रियाँ ऐसी हैं जो उनसे भी अधिक बुरी दशा में हैं। कम से कम, उनके लिए तो उनके पति जीवन निर्वाह के लिए काफी पूँजी भी पीछे छोड गए हैं। इसके अतिरिक्त उनकी सन्तान भी विवाहित थी जो उन्हें रहने की सुविधा देती थी। फिर भी उनके चेहरेपर क्वचित् ही मुस्कराहट दिखाई देती है। उनकी शिकायत है कि उनके तीनों दामाद कंजूस और स्वार्थी हैं। यद्यपि वे उनके घरों में महीनों मेहमान बनकर रहती हैं तथापि उनको शिकायत हैं कि लडकियाँ उन्हें कोई उपहार नहीं देतीं। बुढापे के लिए अपनी पूँजी को बड़ी सावधानी से बचा बचा कर वे स्वयं अपने तथा अपने अभागे परिवार के लिए अभिशाप बन गई है। कितने दुःख की बात है! यदि वे चाहती तो एक दुःखी एवं अप्रसन्न वृद्ध महिला न रहकर परिवार की एक माननीय एवं स्नेहभाजन सदस्या बनकर रह सकती थीं। और इसके लिए उन्हें प्रसन्नता का अभिनय मात्र करने की आवश्यकता थी। उन्हें चाहिए था कि वे अपना स्नेह दूसरों

पर लुटाने का अभिनय करतीं किन्तु ऐसा न कर उन्होंने अपने आपको दुःखी एव रुष्ट बना दिया।

इन्डियाना अन्तर्गत, चेलसिटी की ग्यारवीं स्ट्रीट में १३३५ वे मकान के एच. जे. ऍग्लर्ट को मैं जानता हूँ। वे प्रसन्न भाव का अभिनय कर के ही आजतक जीवित हैं। आज से दस वर्ष पूर्व श्री ऍग्लर्ट लाल बुखार से बीमार थे। जब उससे छुटकारा पाया तो नेफ्राइटिस के शिकार बन गये। (यह एक गुर्दे की बीमार है) उन्होंने मुझे बताया कि सभी तरह के डॉक्टरों को उन्होंने आजमा लिया था। यहाँ तक कि देशी डॉक्टरों को भी। किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ।

कुछ समय बाद और व्याधियों ने उन्हे घेर लिया। उनका रक्तचाप बढ गया। वे डॉक्टर के पास गये उस समय उनका रक्तचाप दो सौ चौदह था। डॉक्टर ने कहा कि यह घातक है इसलिए अच्छा हो कि जो कुछ तुम्हें करना हो शीघ्रही कर लो।

उसने कहा, "मैं घर गया और मालूम किया कि बीमें की कोई किश्त बाकी तो नहीं है और तब अपने नियता से भूलो की क्षमा याचना की तथा अवसाद पूर्ण चिंतन में डूब गया।

"मैंने सबको दु खी बना दिया। मेरी पत्नी व परिवार के अन्य सदस्य भी दु खी हो गये, और मैं स्वय भी विषाद से भर गया। एक हफ्ते तक आत्मग्लानि में तड़पने के बाद मैंने मन ही मन कहा— "तुम मूर्खता का काम कर रहे हो। हो सकता है मौत के आने में एक वर्ष लग जाय। इसलिए जितने दिन जीना है प्रसन्नता से ही क्यों नहीं जिया जाय?

मैंने चिंता छोड दी, मुस्कराने लगा और इस प्रकार व्यवहार करने लगा मानो कोई बात ही न हुई हो। यह मैं मानता हू कि आरम्भ में मुझे कुछ प्रयास करना पड़ा। किन्तु मैंने अपने को, प्रसन्न रहने के लिए बाध्य किया और इस प्रकार अपने परिजनों को सुखी बना कर, स्वय भी राहत का अनुभव करने लगा।

मेरा अभिनय वास्तविकता में बदल गया। धीरे धीरे सुधार भी होता गया। मैं स्वस्थ और प्रसन्न हो, रहने लगा, मेरा रक्तचाप सामान्य हो गया और मैं अब भी जी रहा हूँ। यह तो निश्चित है कि यदि मैं निरन्तर, असफलता के घातक विचारों में ही उलझा रहता तो डॉक्टरों की भविष्यवाणी सत्य सिद्ध होती। मैंने अपने मानसिक रवैये को बदल कर शरीर को स्वस्थ बनाने का उपाय किया।

इसलिए मैं आपसे भी प्रश्न करता हूँ—"यदि केवल प्रसन्नता का अभिनय तथा स्वस्थ एव साहसपूर्ण क्रियात्मक विचार, व्यक्ति के जीवन की रक्षा कर सकते हैं, तो फिर व्यर्थ ही क्यों छोटे मोटे दुःखों को सहन किया जाए? हम क्यों अपने लोगों को अप्रसन्न एव दुःखी बनाएँ जब कि प्रसन्नता का अभिनय मात्र करके हम प्रसन्नता प्राप्त कर सकते हैं?

कई वर्ष पूर्व मैंने एक पुस्तक पढ़ी थी। जिसने मुझ पर अगाध एव अटल प्रभाव डाला। इस पुस्तक का नाम था, (As a man thinketh) 'ऍज ए मॅन थिंकेथ'। इसके लेखक थे जेम्स लेन एलन। उन्होंने लिखा है कि, "व्यक्ति एव वस्तुओं का स्वरूप हमारे बदलते हुए विचारों के अनुसार बदलता रहता है। यदि व्यक्ति अपने विचारों में आमूल परिवर्तन कर दे तो जीवन की भौतिक परिस्थितियो पर होनेवाले उस परिवर्तन के प्रभाव को देख कर वह चकित रह जाए। मनुष्य को किसी भी वस्तु की प्राप्ति अपनी योग्यता के अनुसार होती है, इच्छा के अनुसार नहीं। हमारे उद्देश्यों को साकार बनानेवाली दिव्य शक्ति हमारे अपने अन्दर ही है। इस शक्ति को हम आत्मा कहते हैं। मनुष्य को सीधे रूप में जो कुछ प्राप्त होता है वह उसके विचारों का ही परिणाम है। विचारों की उच्चता से ही प्रगति, विजय एव सफलता सम्भव है। उनको नीचा रख कर मनुष्य कमजोर, तुच्छ एव दु:खी बना रहता है।

पुरानी बाईबल के अनुसार ब्रह्माने मनुष्य को इस विश्व पर शासन करने का अधिकार दिया। यह स्वय में एक जबरदस्त नियामत थी। पर मुझे तो ब्रह्मा के राज्य सम्बन्धी परमाधिकारों की कामना नहीं है। मैं तो अपने आप पर ही अपना अधिकार चाहता हूँ। मैं अपने विचारों, अपने भय, अपने मस्तिष्क, तथा अपनी भावनाओं पर अधिकार चाहता हूँ। मैं अपने व्यवहार और उसके द्वारा अन्य प्रतिक्रियाओं पर नियत्रण कर अपूर्व अधिकार शक्ति प्राप्त कर सकता हूँ।

विलियम जेम्स का कथन हमें स्मरण रखना चाहिए कि दुःखी व्यक्ति मन में भय की भावना की जगह सघर्ष की भावना को अपना कर, दुःख को सुख मे बदल सकता है।

इसलिए आइये, हम अपने सुख के लिए सघर्ष करे।

आइये, हम सुखद रचनात्मक विचारों की पीठिका पर अपना दैनिक कार्यक्रम बना कर, उसकी सहायता से अपने सुख के लिए सघर्ष करें। हमारा हर दैनिक कार्य आज के सकल्प की पूर्ति के लिए होना चाहिए। सकल्प पूर्ति का यह कार्यक्रम इतना प्रेरक है कि मैंने इसकी सैंकड़ों प्रतियाँ लोगों में बाँट दी हैं। आज से छत्तीस वर्ष पूर्व स्वर्गीय सीबिल. एफ् पेट्रीज ने इसे लिखा था। यदि हम इस कार्यक्रम का अनुसरण करें तो हमारी अधिकाश चिताऍं दूर हो जाएँ। तथा हमारा जीवन असीम आनन्द से भर उठे।

आज का संकल्प

१ आज मैं प्रसन्न रहूँगा। इब्राहिम लिंकन ने ठीक ही कहा है, "अधिकाश लोग अपनी मनोदशा के अनुसार ही प्रसन्न रहते हैं। सुख अपने में ही रहता है। कहीं बाहर नहीं।

२. आज मैं वर्तमान के अनुकूल ढलने का प्रयास करूँगा। दूसरों को अपनी इच्छानुसार ढालने का प्रयास नहीं करूँगा। अपने परिजनों, अपने व्यवसाय तथा अपने भाग्य को यथावत् स्वीकार कर, अपने को उनके अनुरूप ढालूँगा।

३. आज मैं अपने शरीर को हिफाजत से रखूँगा। मैं व्यायाम करूँगा, शरीरकी देखभाल करूँगा, इसका पोषण करूँगा, इसका निरादर नहीं करूँगा, इसका दुरुपयोग नहीं करूँगा, ताकि यह स्वस्थ बना रह कर मेरी उन्नति में सहायक हो सके।

४. आज मैं अपने मन को सबल बनाने का प्रयत्न करूँगा, मैं उपयोगी बातें सीखूँगा, मैं अपने विचारों को भटकने नहीं दूँगा, मैं ऐसी सामग्री पढ़ूँगा जिसमें प्रयत्न, चिंतन तथा एकाग्रता की आवश्यकता हो।

५. मैं अपने मन को तीन दिशाओं में नियोजित करूँगा, मैं किसी का भला करूँगा, विलियम जेम्स के सुझाव के अनुसार अभ्यास स्वरूप कम से कम दो काम ऐसे अवश्य करूँगा जिन्हें करने का मन न हो।

६. आज मैं अपना स्वभाव अच्छा रखूँगा, सुन्दर दीखने का प्रयत्न करूँगा और अच्छे लगनेवाले वस्त्र पहनूँगा। धीरे बोलूँगा और विनम्र बना रहूँगा, दूसरों की प्रशंसा करने में उदार रहूँगा। किसी की आलोचना नहीं करूँगा, किसी में दोष नहीं निकालूँगा, किसी को नियमित करने अथवा सुधारने का प्रयत्न नहीं करूँगा।

७. आज मैं वर्तमान समस्याओं को सुलझाने का प्रयत्न करूँगा। तथा जीवन की सभी समस्याओं को एक साथ हाथ में नहीं लूँगा। यदि मुझे जीवनभर कोई काम करने हैं, तो चाहे वे मुझे मूर्छित करनेवाले ही क्यों न हों उन्हें बराबर बारह घंटे तक करता रहूँगा।

८. आज के लिए मैं अपना कार्यक्रम बनाऊँगा। हर घंटे में जो कुछ मैं करना चाहूँगा उसे लिख लूँगा। चाहे मैं उसका पूरी तरह से पालन न भी कर सकूँ। पर उसे बनाऊँगा जरूर, क्योंकि इससे जल्दबाजी और अनिर्णय की अवस्था दूर हो जायगी।

९. आज आधा घंटा मैं अपने आराम के लिए रखूँगा। इस आधे घंटे में मैं परमात्मा के बारे में सोचूँगा ताकि अपने जीवन के विषय में अधिक अन्तर्दृष्टि प्राप्त कर सकूँ।

१०. आज मैं निर्भय रहूँगा, मैं सुख और सौन्दर्य प्राप्त करने, प्यार करने तथा यह विश्वास करने में कि जिन्हें मैं प्यार करता हूँ, वे भी मुझे प्यार करते हैं, पीछे नहीं रहूँगा।

यदि हम मन में सुख-शान्ति का विकास करना चाहें तो हमें इस नियम का पालन करना चाहिए—आनन्द पूर्ण ढंग से सोचिए तथा आचरण कीजिए। आप आनन्द का अनुभव करेंगे।

☆

१३ : जैसे के साथ तैसा करके हानि मत उठाइए।

कई वर्षों पहले की बात है, एक रात मैं यलोस्टोन पार्क से गुजर रहा था। दूसरे यात्रियों के साथ मैं देवदार तथा अन्य वृक्षों के झुरमुट के सामनेवाले ब्लिचर्स पर बैठा था। एकाएक जिस पशु को देखने के लिए हम प्रतीक्षा कर रहे थे, वही जंगल का आतक, एक भूरे रग का रींछ रोशनियों के प्रकाश में आकर रसोई घर से लाये हुए कुड़े करकट को खाने लगा। मेजर मार्टिडेल जो जगल के अधिकारी थे, उत्तेजना व आतुरता के साथ यात्रियों को रींछ के विषय मे जानकारी देने लगे। उन्होंने कहा कि भूरा रींछ भैंसे तथा कादियाक जाति के रींछ को छोड, पश्चिमी ससार के अन्य किसी भी पशु को मात दे सकता है। फिर भी उस रात मैंने देखा कि उस भूरे रींछ ने एक अन्य पशु को भी उस जंगल से बाहर आने दिया तथा रोशनी के उजाले मे, अपने साथ कुड़ा-करकट खाने दिया। यह पशु अमेरिका का एक जहरीला जानवर 'स्कक' था। रींछ यह भली-भाँति जानता था कि वह स्कक को अपने शक्तिशाली पजे के एक झपाटे मे नष्ट नहीं कर सकता। अनुभव ने उसे सिखा दिया कि ऐसा करने से कोई लाभ नहीं, इसलिए उसने उसे नष्ट नहीं किया।

मेरा भी ऐसा ही अनुभव रहा है। बचपन में मै अपने फार्मपर काम करता था। मैंने एक स्कंक को मिसौरी की झाड़ियों में फॉस लिया था। और आज प्रौढ बनने के बाद भी मैंने इस न्यूयॉर्क की पगडडी पर कुछ दो पैरवाले मानव-स्कक देखे हैं। अपने कटु अनुभवों से मैं यह जानता हूँ कि मानव स्कक और जंगली-स्कक, दोनों में से किसी एक को भी छेड़ना श्रेयस्कर नही होता।

जब हम अपने शत्रुओं से घृणा करते हैं तो उन्हें हम अपनी भूख, नींद, रक्तचाप, स्वास्थ्य तथा सुख पर हावी होने देते-हैं। हमारे शत्रुओं को यदि यह ज्ञात हो जाय कि वे हमें दुःखी और तग कर रहे हैं तथा वे हमारे साथ हानि पहुँचाने में हमारी बराबरी कर रहे हैं तो वे प्रसन्नता से नाच उठें। हमारी घृणा, उन्हें चोट नहीं पहुँचाती बल्कि वह हमारे जीवन को नर्क बना देती है।

"स्वार्थी लोग यदि आप से अनुचित लाभ उठाने का प्रयत्न करें तो उनकी उपेक्षा कर दीजिए किन्तु जैसे के साथ तैसा करने का प्रयास न कीजिए। जब आप 'जैसे के साथ तैसा करते हैं' तो अपने शत्रुको दुःखी करने के बजाय स्वय दुःखी बन जाते हैं। ... ... ऐसा लगता है कि यह कथन किसी उच्च आदर्शवादी का है किन्तु ऐसी बात नही है, ये शब्द मिल्वोकी के पुलिस विभाग के एक बुलेटिन मे प्रकाशित हुए थे।

जैसे के साथ तैसा करने में आपको कई प्रकार के दुःख हो सकते हैं। 'लाइफ' पत्रिकाके अनुसार इस प्रकार का व्यवहार मनुष्य के स्वास्थ्य को नष्ट कर देता है। लाइफ पत्रिका के अनुसार तनावपूर्ण जीवन व्यतीत करने-वाले लोगों की ईर्ष्या जब पुरानी हो जाती है तो उसके फलस्वरूप असाध्य रक्त चाप एव हृदय रोग की उत्पत्ति होती है।

अब आप प्रभु ईसा के कथन के महत्व को समझ गये होंगे। उनका कहना था. "अपने शत्रु से भी प्रेमभाव रखो।" उन्होंने यह बात केवल नीतिशास्त्र की दृष्टि से नहीं कही थी वरन् बीसवीं सदी के लोगों के रोगों के निदान के रूप में कही थी—"शत्रुओं को बार बार क्षमा कर दो, यह कह कर ईसा ने कहा कि इस प्रकार का आचरण कर रक्तचाप हृदयरोग, उदरव्रण आदि अन्य कई व्याधियों से दूर रहो।"

हाल ही में मेरे एक मित्र को हृदयरोग का घातक दौरा पड़ा। उसके डॉक्टर ने उसे बिस्तर पर लेटे रहने की सलाह दी और सावधान किया कि किसी भी परिस्थिति में क्रोध न करे। डॉक्टर जानते हैं कि यदि आपका हृदय कमजोर है तो थोड़ा-सा क्रोध भी आपके प्राण ले सकता है।

क्रोध के कारण ही कुछ वर्ष पूर्व वाशिंग्टन अन्तर्गत स्पोकन के एक रेस्त्रां मालिक की मृत्यु हो गई थी। स्पोकन के पुलिस विभाग के प्रमुख जेरी स्वार्टोट ने एक पत्र में लिखा कि—"कुछ वर्ष हुए स्पोकन के एक कॉफ़ के मालिक ने क्रोध में आकर अपने प्राण दे दिए। उसे क्रोध इसलिए आया कि उसके रसोइये ने उसकी रकाबी में से कॉफ़ी पीने की ज़िद की। कॉफ़ का मालिक इतना क्रोधी था कि उसने पिस्तौल लेकर उस रसोइये का पीछा किया और उसी आवेश में हृदय-गति रुक जाने से वह मर गया। मरने पर भी वह अपने पिस्तौल को बराबर हाथ में दबाए हुए था। कोरोनर ने रिपोर्ट में बताया कि क्रोध के कारण उसके हृदय की गति रुक गई और मृत्यु हो गई।

ईसा ने शत्रुओं पर प्रेमभाव रखने के लिए कह कर परोक्ष में यह भी बताया कि अपनी आकृति को सुन्दर कैसे बनाया जाय? मैं कुछ ऐसी स्त्रियों को जानता हूँ, जिनकी आकृति घृणा के कारण कठोर हो गई है, झुर्रियों से भर गई है और विकृत हो गई है। अपने हृदय की क्षमा, दया तथा प्रेम की भावनाओं से अपने चेहरे को जितना सुन्दर वे बना सकती हैं उतना अन्य किसी उपचार से नहीं। संसार के समस्त सौन्दर्योपचार भी उसकी इस बात में सहायता नहीं कर सकते।

घृणा के कारण हम स्वाद लेकर भोजन भी नहीं कर पाते। बाइबल में इसी भाव को इस तरह समझाया है कि प्यार से खिलाये गए कंदमूल घृणा से खिलाये गये पकवान से अधिक स्वादिष्ट लगते हैं।

यदि हमारे शत्रुओं को पता लग जाय कि उनके प्रति हमारी घृणा हमें नष्ट कर रही है, थका रही है; हमारी आकृति को विकृत कर रही है: हृदयरोग बढ़ा रही है तथा हमारी आयु को कम कर रही है, तो उनकी बाछें खिल जाएँ।

यदि हम अपने शत्रु से प्यार न भी कर सकें तो कम से कम अपने आप को तो करें। हमें अपने को इतना प्यार करना चाहिए कि हमारे शत्रु हमारे सुख, स्वास्थ्य तथा आकृति पर काबू न पा सकें।

शेक्सपियर का कहना है कि शत्रु को झोंकने के लिए भाड को इतनी तेज न करो कि तुम स्वय जल जाओ। शत्रुओं को बारम्बार क्षमा कर देने की बात कह कर ईसा ने हमें ठोस व्यावसायिक शिक्षा भी दी है। उदाहरणार्थ मैं स्वीडन के उपसाला नगर में चौबीस फ्रेडेगार्टॉ के जॉर्ज रौना का पत्र प्रस्तुत करता हूँ। कई वर्षों तक जॉर्ज रौना वियना मे एटर्नी थे। किन्तु द्वितीय गृहयुद्ध के दिनों में वे स्वीडन भाग आये। उनके पास फूटी कौड़ी भी न थी और रोजगार की उन्हें सख्त जरूरत थी। वे कई भाषाओं में लिखना पढ़ना जानते थे। अतः उन्हें आशा थी कि आयात-निर्यात करने वाली किसी फर्म मे पत्र-लेखक का काम उन्हें मिल जायगा। अधिकांश फर्मों ने उन्हें लिख भेजा कि युद्ध के कारण उन्हें उनकी सेवाओं की आवश्यकता नहीं है। किन्तु भविष्य में यदि आवश्यकता हुई तो उनका ध्यान रखा जायगा। पर एक व्यक्ति ने जॉर्ज रौना को लिखा—" क्या तुम समझते हो कि मेरा व्यवसाय झूठा है ? तुम गलती पर हो और मूर्ख हो। मुझे किसी पत्र-लेखक की आवश्यकता नहीं। यदि मुझे आवश्यकता हुई भी तो मैं तुम्हें कभी नहीं रखूँगा क्योंकि तुम्हें स्विस भाषा अच्छी तरह लिखनी नहीं आती। तुम्हारा यह पत्र गलतियों से भरा पड़ा है।

जब जॉर्ज रौना ने यह पत्र पढ़ा तो वे क्रोध से पागल हो उठे। क्या मैं स्विस भाषा लिखना नहीं जानता ? वह आदमी समझता क्या है ? स्वय उसका पत्र कितनी गलतियों से भरा पड़ा है। जॉर्ज रौना ने उस व्यक्ति को ऐसा पत्र लिखा कि वह उसे पढ़कर चीख उठे। किन्तु फिर थोड़ा विचार किया—मैं कैसे कह सकता हूँ कि वह व्यक्ति गलत है ? यद्यपि मैंने स्विस भाषा पढ़ी है, किन्तु वह मेरी मातृभाषा नहीं है। सम्भव है मैंने गलतियाँ की हों और मैं उन्हें न जानता होऊँ। यदि मेरी गलतियाँ हों भी तो मुझे नौकरी पाने के लिए उस भाषा का परिश्रम से अध्ययन करना चाहिए। इस व्यक्ति ने सम्भवतः मेरा उपकार ही किया है। चाहे उसका आशय उपकार करने का न रहा हो। वह भले ही मुझसे सहमत न हो किन्तु इससे उसके मेरे प्रति किए गये उपकार में कोई अन्तर नहीं पडता। इस लिए मैं उसे अपने पर किये गये उपकार के लिए धन्यवाद का पत्र लिखूँगा।

जॉर्ज रौना ने वह कटु पत्र फाड कर फेंक दिया तथा दूसरे पत्र मे लिखा कि आपको किसी पत्र-लेखक की सेवाओं की आवश्यकता न होने पर भी मुझे पत्र लिखने का कष्ट करके आपने बड़ी कृपा की है। मुझे आपके फर्म सम्बन्धी अपनी गलत धारणा पर खेद है। पूछ-ताछ के बाद मुझे मालूम हुआ, कि आप अपने क्षेत्र के प्रमुख व्यापारी हैं, इसीलिए मैंने आपको पत्र लिखा। मैं अनजाने ही अपने पत्र में व्याकरण सम्बन्धी जो भूलें कर बैठा उसका मुझे खेद व पश्चात्ताप है। भविष्य में मैं अध्यवसाय के साथ स्विस भाषा का अध्ययन करूँगा तथा अपनी भूलों को सुधारने का प्रयास करूँगा। आपने मुझे आत्मोन्नति का मार्ग दिखाया है उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।

कुछ ही दिन उपरान्त उस व्यक्ति का पत्र मिला। उन्हें मिलने बुलाया था। रौना वहाँ गये और उन्हें नौकरी मिल गई। जॉर्ज रौना ने स्वयं महसूस किया कि विनम्र उत्तर क्रोध को विलीन कर देता है।

हो सकता है कि हम ऐसे सन्त पुरुष न हों कि अपने शत्रुओं को क्षमा कर दें। पर अपने सुख एवं स्वास्थ्य के हित में हमें चाहिए कि हम उन्हें क्षमा कर दें और भूल दें। ऐसा करना बड़ी बुद्धिमानी है। कन्फ्यूशियस का मत है कि किसी के द्वारा लूटा जाना अथवा किसी के अन्याय का शिकार होना, स्वयं में इतना कष्टकर नहीं होता जितना कि उसे बराबर मन ही मन घोटते रहना। एक बार मैंने जनरल आइसनहावर के पुत्र जॉन से पूछा, "क्या वे कभी अपनी रुष्टता को बराबर बनाए रखते हैं? उत्तर में उन्होंने बताया कि "पिताजी जिन व्यक्तियों से रुष्ट होते हैं उनके बारे में सोच कर एक क्षण भी नष्ट नहीं करते।'

एक पुरानी कहावत है "जिस व्यक्ति को क्रोध नहीं आता वह मूर्ख है। बुद्धिमान वह है जो क्रोध न करे।"

न्यूयार्क के भूतपूर्व मेयर विलियम जे. गेनार की भी यही नीति थी। समाचार पत्रों ने उनकी कटु आलोचना की। एक सनकी ने तो गोली चला कर उनका प्रायः अन्त ही कर दिया होता किन्तु अस्पताल में मृत्यु से संघर्ष करते हुए भी उन्हों ने कहा—"रात आती है और मैं हर घटना को भूल कर प्रत्येक व्यक्ति को क्षमा कर देता हूँ।" क्या ऐसा करना घोर आदर्शवादिता नहीं है? क्या यह अत्यधिक सौम्य एवं मधुर आचरण नहीं? यदि आप ऐसा मानते हैं तो जर्मनी के महान दार्शनिक और 'स्टडीज़-इन-पेसिमिज़म' के लेखक शोपेनहॉवर के मत पर ध्यान दीजिए। शोपेनहॉवर जीवन को एक व्यर्थ और दुःखद उपक्रम मानते थे। विषाद उनके चारों ओर चूता रहता था। फिर भी अपनी नैराश्य की गहराइयों में से वे एक बार चिल्ला उठे—"जहाँ तक सम्भव हो किसी से दुश्मनी न रक्खो।'

एक बार मैंने बर्नार्ड बरुच को, जो छः राष्ट्रपतियों—विल्सन, हॉर्डिंग, कुलिज, हूवर, रूज़वेल्ट और ट्रूमेन—के सलाहकार थे—पूछा "क्या आप अपने शत्रुओं के आक्षेपों से कभी दुःखी होते हैं?"

उत्तर में उन्होंने कहा, 'कोई व्यक्ति मुझे न तो दुखी कर सकता है और न नीचा दिखा सकता है। मैं उसे ऐसा कभी नहीं करने दूँगा।

यदि हम चाहें तो कोई भी हो, हमें दुःखी नहीं कर सकता और न नीचा ही दिखा सकता है।

लाठियाँ तथा पत्थर मेरी पीठ को तोड़ सकते हैं, पर शब्द मुझे चोट नहीं पहुँचा सकते।'

युगों से मानव ने प्रभु ईसा के समान ही अपने शत्रुओं के प्रति भी शत्रुता न रखनेवाले सतों की प्रतिमाओं के सामने श्रद्धा के दीपक जलाए हैं। मैंने प्रायः

जाशपन नैशनल पार्क में खड़े होकर 'एडिथ केवल' नामक पाश्चात्य विश्व की अत्यन्त मनोरम पर्वतमालाओं को देखा है। १२ अक्तूबर १९१५ में एक सन्त की तरह जर्मन फाइरिंग स्क्वाड की शिकार बननेवाली ब्रिटिश नर्स 'एडिथ केवल' के सम्मान में इन पर्वतमालाओं का नामकरण हुआ है। उसका दोष केवल यही था कि उसने चोरी छिपे घायल फ्रासिसी तथा अंग्रेजी सैनिकों को अपने बौल्जियन निवास में शरण दी। उन्हें खिलाया पिलाया और हॉलेण्ड बच निकलने में उनकी सहायता की। जैसे ही अंग्रेज पादरी ने सैनिक कारागृह की एक अंधेरी कोठरी में उसे मरने को तैयार करने के लिए प्रवेश किया, एडिथ केवल ने कहा "मेरे विचार से देश-प्रेम के अलावा मेरे लिए यह भी आवश्यक है कि मैं किसी के प्रति घृणा तथा कटुता की भावना न रखूँ।" उक्त शब्द आज भी कॉसे तथा पत्थर में खुदे हुए हैं। उस घटना के चार वर्ष बाद उसकी अस्थियों का इंग्लैण्ड में स्थानान्तरण किया गया और वेस्ट मिनिस्टर एबे में उसकी याद में प्रार्थनाएँ की गई। आज भी उसकी एक प्रस्तर प्रतिमा लन्दन की नेशनल पोर्ट्रेट गेलेरी में खड़ी है। यह इंग्लैंड की अमर हस्तियों की प्रतिमाओं में से एक है। इस महान आत्मा ने कहा था कि देश प्रेम के अलावा मेरे लिए यह भी आवश्यक है कि मैं किसी के प्रति घृणा एव कटुता की भावना न रखूँ।

अपने शत्रुओं को क्षमा करने तथा उन्हें भुला देने का एक निश्चित ढग यह है कि हम स्वय किसी महानतम हेतु में लग जाएँ ताकि मानापमान तथा शत्रुता का कोई महत्व ही न रहे और हम अपने ध्येय की लगन में सब कुछ भूल जाएँ। उदाहरणार्थ एक अत्यन्त नाटकीय घटना को लीजिए जो १९१८ में मिसिसिपी के जगलो मे घटी थी। एक निर्दोष व्यक्ति को मृत्यु-दण्ड होने वाला था। एक काले शिक्षक एव पादरी को अकारण ही मृत्युदण्ड दिया जानेवाला था। कुछ ही वर्ष पूर्व उस लॉरेन्स जॉन्स द्वारा स्थापित स्कूल को मैं देखने गया था। इस स्कूल का नाम था—'पिने वुड्स कन्ट्री स्कूल।' मैने वहाँ के छात्रों के समक्ष भाषण भी दिया था। सारे देश में यह स्कूल प्रसिद्ध है। यह घटना जिसका मैं वर्णन कर रहा हूँ प्रथम विश्वयुद्ध के उत्तेजनापूर्ण दिनों में घटी थी। मध्य मिसिसिपी में एक अफवाह फैल गई थी कि जर्मन लोग हब्शियों को उकसा रहे हैं तथा उन्हें विद्रोह के लिए भड़काते हैं। लारेन्स जोन्स निर्दोष था, फिर भी उसपर यह अभियोग लगाया गया कि वह अपनी जाति की विद्रोह करने मे सहायता करता है। गोरे लोगों के एक दलने, चर्च के बाहर जाते जाते रुक कर चर्च की धर्म सभा में लॉरेन्स जोन्स का यह आह्वान सुना कि, "जीवन एक सग्राम है। अत' प्रत्येक हब्शी को अपने अस्तित्व एव सफलता के लिए सघर्ष करने के लिए तैयार हो जाना चाहिए।"

लड़ाई! हथियारं! बहुत हो गया! इस प्रकार नारे लगाते हुए युवक घोड़ोंपर रात के अधकार में निकल पड़े और एक भीड के रूप में चर्च में आये! उन्होंने प्रवचक के गले में फदा डालकर उसे चर्च के बाहर एक मील तक घसीटा, उसे

लकड़ियों के ढेर पर खड़ा किया और उसमें आग लगा दी। इस प्रकार उसे वे जलाने ही वाले थे कि कोई चिल्लाया—'मरने के पूर्व इसे अन्तिम सफाई दे लेने दो। देखो क्या कहते हो!' अपने गले में रस्सी का फंदा लटकाये हुए लकड़ियों के ढेरपर खड़े लॉरेन्स जोन्सने अपने जीवन और अपने उद्देश्य के बारे में प्रवचन किया।

१९०७ में लॉरेन्स जोन्स इओवा विश्वविद्यालय से स्नातक बना था। अपने उत्तम चरित्र, पांडित्य तथा संगीत योग्यता के कारण वह छात्रों तथा विश्व विद्यालय के संगीत-विभाग में बड़ा लोकप्रिय रहा। स्नातक बनने के बाद एक होटल मालिक ने नौकरी का प्रस्ताव रखते हुए उसे कहा कि मेरे व्यवसाय को व्यवस्थित कर दो, पर उसने उसे ठुकरा दिया। एक धनी व्यक्ति ने उसकी संगीत विद्या के अध्ययन के लिए खर्च उठाने का प्रस्ताव किया, किन्तु उसने उसे भी ठुकरा दिया, क्यों? इसलिए कि उस में एक स्वप्न को साकार करने की उत्कट लालसा थी। बूकर टी. वाशिंग्टन की जीवनी ने उसे अपनी जाति के दीन तथा अशिक्षित भाइयों को शिक्षित बनाने के लिए अपने जीवन को अर्पित कर देने की प्रेरणा दी थी। अत वह दक्षिण के अत्यन्त पिछड़े हुए प्रदेश में गया, जो कि मिसिसिपी अन्तर्गत जैक्सन के पाँच मील उत्तर में था। वहाँ उसने अपनी घड़ी सात रुपये में गिरवी रख कर जंगल में स्कूल खोला। एक कटे वृक्ष के ठूँठ से वह डेस्क का काम लेता था। अब उसी लॉरेन्स को इसलिए मृत्यु दण्ड दिया जा रहा था कि उसने अपढ़ लड़कों और लड़कियों को शिक्षित करने के लिए संघर्ष किया। उन्हें अच्छे किसान, कारीगर, रसोइये, तथा घरेलू नौकर बनने के लिए शिक्षा दी। उसने उन क्रुद्ध तथा आक्रमक लोगों के सामने उन गोरे लोगों का जिक्र किया जिन्होंने पिने वुड्स कन्ट्री स्कूल की स्थापना करने में जमीन, लकड़ी, रुपये, सूअर तथा गायें दे कर उसकी सहायता की ताकि वह अपना प्रशिक्षण कार्य चला सके। जब लॉरेन्स जोन्स से पूछा गया कि आपको उन व्यक्तिओंसे घृणा नहीं होती जिन्होंने आपको फाँसी पर लटकाने तथा जला देने के विचारसे सड़क पर घसीटा तो उत्तर में उसने कहा "मैं अपने उद्देश्य में ही इतना व्यस्त रहता हूँ कि घृणा करने के लिए मुझे समय नहीं मिलता। मैं अपने से भी अधिक महत्त्वपूर्ण कार्यों के करने में लगा हुआ हूँ। लड़ने झगड़ने और पश्चाताप करने के लिए मेरे पास समय कहाँ? कोई भी व्यक्ति मुझे घृणा करने के लिए बाध्य कर, गिरा नहीं सकता।" जब लॉरेन्स जोन्स ने सचाई तथा भावप्रवणता से भाषण कर, स्वय के लिए कुछ न कह कर, अपने उद्देश्य की पुष्टि की तो भीड़ के लोग नरम पड़ गये। अंत में भीड़ में से एक अवकाश प्राप्त वृद्ध सैनिक ने कहा— "मैं समझता हूँ यह युवक ठीक कह रहा है, मैं उन गोरे अमेरीकनों को जानता हूँ जिनकी चर्चा इसने यहाँ की हैं। यह अच्छा काम कर रहा है। हम गलती पर हैं। फाँसी पर लटकाने के बजाय हमें इसको सहयोग देना चाहिए।" उस वृद्ध सैनिक ने अपनी टोपी पसार कर भीड़ के लोगों से उसी समय बावन डॉलर चालीस

सेन्ट इकट्ठे कर लिये। प्रत्येक व्यक्तिने जो उसे वहाँ फाँसी पर लटकते हुए देखने के लिए आया था, कुछ न कुछ जरूर दिया। उन्होंने यह उस व्यक्ति के लिए दिया जिसने पिने वुड्स कन्ट्री स्कूल की स्थापना की थी और जिसने कहा था कि, "मेरे पास विवाद तथा पश्चात्ताप मे फँसने के लिए समय कहाँ है? और कोई भी व्यक्ति मुझे घृणा करने के लिए बाध्य कर अपने उद्देश्य से गिरा नहीं सकता।"

ऐपिक्टेट्स ने १९०० वर्ष पूर्व कहा था कि हम जैसा करते हैं वैसा भरते हैं। भाग्य हमें सदा ही किसी न किसी रूप में अपने दुष्कृत्यों का मूल्य चुका ने के लिए बाध्य करता है। उसका कहना था कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने दुष्कृत्यों का दण्ड अन्ततः भोगना ही पड़ता है। जो व्यक्ति इस बात का ध्यान रखेगा वह किसी से नाराज न होगा, गाली-गलौज नहीं करेगा, किसी को दोष नहीं देगा, किसी को उत्तेजित नहीं करेगा और किसी से घृणा भी नहीं करेगा।

अमेरिकन इतिहास मे लिंकन को छोड़कर शायद कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं हुआ, जिससे लोगों ने इतनी घृणा, इतना विरोध तथा इतना छल किया हो; किंतु फिर भी हर्नडन्स द्वारा लिखित जीवनी के अनुसार – लिंकन ने कभी दूसरो को भी अपने प्रति व्यक्त की गई भावनाओं से नहीं आँका। उसका मानना था कि किसी अन्य व्यक्ति की तरह ही, उनका शत्रु भी किसी काम को उतनी ही अच्छी तरह से कर सकता है। लिंकन की निन्दा करने वाला तथा व्यक्तिगत स्तर पर उनके साथ दुर्व्यवहार करने वाला व्यक्ति भी यदि किसी ओहदे के लिए योग्य होता तो उस व्यक्ति को वह ओहदा देने में वे उतनी ही तत्परता दिखाते जितनी कि अपने मित्र के लिए। उन्हों ने किसी भी व्यक्ति को ओहदे से इसलिए नहीं हटाया कि उससे उनकी शत्रुता थी। या वे उसे नापसन्द करते थे।

मेकक्लेन, सीवार्ड तथा स्टेन्टन उन व्यक्तियों मे से थे जो खुले आम लिकन की आलोचना करते थे, उसका अपमान करते थे। फिर भी लिंकन ने उनको ऊँचे पद दिए। लिंकन के कानूनी सलाहकार हर्नडोर्न के अनुसार लिंकन का विश्वास था कि किसी भी व्यक्ति की, किसी काम के करने न करने के कारण, प्रशसा अथवा निन्दा नहीं की जानी चाहिए क्यों कि हम सभी घटना–चक्र और परिस्थितियों की उपज हैं और वातावरण, सस्कार शिक्षा एव स्वभाव के कायल हैं।

लिंकन का विचार शायद ठीक था। यदि हमको विरासत में अपने शत्रु के समान ही शारीरिक, बौद्धिक एवं भावात्मक विशेषताएँ मिली हों तथा जीवन का हमारे प्रति भी वही रवैया रहा हो जो हमारे शत्रु के साथ था, तो हम भी ठीक वही करेंगे जो उसने किया। हम उससे भिन्न शायद कुछ नहीं कर सकते। क्लेरेन्स डेरो कहा करते थे कि सब कुछ जानने का अर्थ है सब कुछ समझ लेना। और एकबार सब कुछ समझ लेने के बाद निर्णय अथवा निन्दा की गुंजाइश ही नहीं रहती। इसलिए हमें चाहिए कि हम अपने शत्रु से घृणा न कर उस पर दया करें और ईश्वर को धन्यवाद दें कि उसने हमें उसके जैसा नहीं बनाया। अपने शत्रु की

निन्दा करने तथा उसके प्रति विरोध और प्रतिशोध की भावना रखने के बजाय हमें चाहिए कि हम उसके प्रति क्षमा, सौमनस्य, सहानुभूति और सहयोग की भावना रखें और उसके कल्याण के लिए प्रार्थना करें।

मेरे परिवार के सदस्य, प्रत्येक रात प्रार्थना व बाइबल आदि का नियमित रूप से पाठ करते थे। आज भी मैं अपने पिता को मिसौरी के फॉर्म पर एकान्त में प्रभु ईसा के शब्दों को दुहराते हुए सुनता हूँ "अपने शत्रु पर प्रेमभाव रखो, जो तुम्हें शाप दे उसे वरदान दो, जो तुमसे घृणा करे उसका भला करो, जो ईर्ष्यावश तुमसे अनुचित लाभ उठाए तथा पीडा पहुँचाए उसके भले के लिए प्रार्थना करो' जो तोको काटा बुवै वो ताको तू फूल" जब तक मनुष्य अपने आदर्शोंका स्मरण करता रहेगा, तब तक ये शब्द निरन्तर उसके कानों में गूँजते रहेंगे।

मेरे पिता ने ईसा के इन शब्दों का अनुसरण करने का प्रयास किया था। इन शब्दों ने उन्हें वह वाछित आन्तरिक शान्ति प्रदान की जिसके लिए प्राय राजा-महाराजा भी तरसते हैं।

मन में सुख शान्ति का विकास करने के लिए इस दूसरे नियम पर ध्यान दीजिए – जैसे के साथ तैसा मत कीजिए, क्योंकि, इससे शत्रु के बजाय आपको अधिक हानि उठानी पड़ेगी। जनरल आइसन हावर का अनुकरण कीजिए। जो व्यक्ति आप को पसन्द नहीं उसके विषय मे सोच विचार कर एक पल भी नष्ट न कीजिए।

१४ : नेकी कर कुएँ में डाल

हाल ही में टेक्सास के एक व्यापारी से मैं मिला था। वह क्रोध से तिलमिला रहा था। उसने कहा कि पन्द्रह मिनिट के बाद मैं आपको अपने क्रोध का कारण बताऊँगा और उसने बताया भी। वह घटना ग्यारह महीने पूर्व घटी थी पर आज भी वह उसके कारण तिलमिला रहा था। दूसरी कोई बात वह करता ही नहीं था। उसने अपने चौतीस कर्मचारियों को बडे दिनों के मौके पर दस हजार डॉलर बोनस के रूप मे दिये थे। प्रत्येक को लगभग तीन हजार डॉलर मिले थे। पर किसी भी व्यक्तिने उसे इस कृपा के लिए धन्यवाद नहीं दिया। उसने बड़ी कटुता से कहा "अब मैं उन्हें एक पाई भी नहीं दूँगा।"

"कन्फ्यूशियस का कथन है कि क्रुद्ध व्यक्ति सदा विप से भरा रहता है।" वह व्यक्ति भी विष से इतना भर गया था कि मुझे वस्तुत' उस पर दया आ गई। वह साठ वर्ष का बूढा था। मैंने सोचा कि जीवन बीमा कम्पनियों द्वारा निर्धारित औसत आयु की दृष्टि से उस व्यक्ति की चौदह पन्द्रह वर्ष की आयु शेष है और वह भी यदि जब उसका भाग्य साथ दे तब। फिर भी आयु के इन शेप वर्षों में से एक वर्ष तो उसने बीती घटना पर दुःखी होकर ही नष्ट कर दिया।

उसे चाहिए था कि क्रोध एव आत्मग्लानि में तड़पने के बजाय वह दूसरो की कृतघ्नता का कारण खोजता। सम्भव है उसने अपने कर्मचारियों से अधिक काम लिया हो और कम वेतन दिया हो। सम्भव है उन्होंने उस बोनस को उपहार और कृपा न मानकर अपना अधिकार माना हो। यह भी सम्भव है कि वह छिद्रान्वेषी रहा हो और उनकी पहुँच के इतना बाहर रहा हो कि उनकी उसे धन्यवाद देने जाने की हिम्मत ही न हुई हो। यह भी सम्भव है कि उन्होने सोचा हो कि उसने बोनस इसलिए दिया है कि ऐसा न करने पर मुनाफे का अधिकाश कर चुकाने में चला जाता। खैर!

दूसरी ओर यह भी सम्भव है कि कर्मचारी, स्वार्थी, असभ्य एव कमीने हों। चाहे जो हो, इस बारे में मैं आपसे अधिक नहीं जानता किन्तु डॉक्टर सेम्युअल के कथन के अनुसार इतना अवश्य जानता हूँ कि कृतज्ञता का गुण बड़े परिश्रम के बाद विकसित होता है। सर्वसाधारण में यह गुण नहीं मिल सकता।

कहने का अर्थ यह कि इस व्यापारी ने दूसरों से कृतज्ञता की आशा कर दुःखद भूल की, उसने मानव स्वभाव पर ध्यान नहीं दिया।

मान लीजिए आपने किसी व्यक्ति की जान बचाई तो क्या आप अपेक्षा रखेंगे कि वह आपके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करे? सम्भव है आप ऐसी आशा करें भी। पर कई व्यक्ति ऐसे हैं जिन्हें कृतज्ञता नहीं मिली। सेम्युअल लिबोवीज ने, जो कि जज बनने के पूर्व एक प्रसिद्ध क्रिमिनल वकील थे, अठहत्तर अपराधियों को मृत्यु दण्ड से बचाया था। किन्तु उन में से एक भी व्यक्ति ऐसा न था जो सेम्युअल लिबोवीज के

प्रति आभार प्रदर्शित करने के लिए रुका हो अथवा बडे दिनों के अवसर पर उसे अभिनन्दन पत्र भेजा हो।

ईसा ने एक बार दस कोढियों के घाव भरे किन्तु उनमें से केवल एक ने उनको धन्यवाद दिया और वह व्यक्ति था सन्त ल्के। जब ईसा ने शेष नौ व्यक्तियों के बारे में पूछा तो उन्हें बताया गया कि वे बिना आभार प्रदर्शित किये ही वहाँ से चले गये हैं। अब मैं आपसे एक प्रश्न पूछूँगा कि हमें क्या जरूरत है कि हम अपने छोटे छोटे उपकारों के लिए धन्यवाद की आशा करें? और ईसा के प्रति प्रदर्शित आभार से भी अधिक आभार की इच्छा करें।

और यदि वह आभार रुपयों पैसों को लेकर हो तो और भी बुरा। चार्ल्स श्वाब ने मुझे बताया था कि एक बार उन्होंने एक खजान्ची को जिसने बैंक का रुपया सट्टे में खो दिया था, जबरदस्त आपत्ति से बचाया था। श्वाब ने स्वय बैंक में रकम जमा करा दी और उसे अपराधियों के लिये बने सुधारगृह में जाने से बचा लिया! क्या खजान्ची ने उसका उपकार माना? हाँ, कुछ समय तक के लिए। बाद में वह श्वाब के खिलाफ हो गया, उसे गालियाँ दीं, उस पर दोष मढा और यह सब उसने उस व्यक्ति के प्रति किया जिसने उसे जेल जाने से बचाया था। ऐसा था उसका व्यवहार!

मान लीजिए आप अपने किसी सम्बन्धी को दस लाख रुपये दें, तो क्या आप आशा करेंगे कि वह आपका उपकार माने? एन्ड्रूकारनेगी ने यही किया किन्तु यदि एन्ड्रुकारनेगी कुछ दिनों बाद कब्र से उठ कर आते तो उन्हें यह जानकर गहरा धक्का लगता कि वह सम्बन्धी उन्हें कोस रहा है। इसलिए कि उस वृद्धने तीन हजार छः सौ पचास लाख रुपये जन-कल्याण के लिए दान कर दिये और उसके लिए केवल दस लाख रुपये ही रहने दिये।

ऐसा ही होता है, आखिर मनुष्य प्रकृति ही ऐसी है और वह जीवन पर्यन्त बदल नहीं सकती, इसलिए उसे स्वीकार ही क्यों न कर लिया जाय! हम भी रोमन साम्राज्य के अत्यन्त बुद्धिमान नागरिक मार्कस् ओरेलियस की तरह यथार्थवादी क्यों न बनें। एक दिन उसने अपनी डायरी में लिखा कि, "मैं ऐसे व्यक्तियों से मिलूँगा जो बातूनी हैं, जो स्वार्थी, अहवादी तथा कृतघ्न हैं। किन्तु मुझे उनसे मिलकर कोई आश्चर्य तथा दुःख नहीं होगा क्यों कि मैं कभी ऐसे ससार की कल्पना नहीं करता जिसमें ऐसे व्यक्ति न हों।

यह तो कुछ बुद्धिमानी की बात भी हुई। हुई न? यदि हम दूसरों की कृतघ्नता को लेकर बडबडाते फिरें तो दोष किसका? क्या यह दोष मानव स्वभाव का है अथवा मानव स्वभाव के विषय में हमारे अज्ञान का? हमें दूसरों से कृतज्ञता की आशा करनी ही नहीं चाहिए। ऐसा दृष्टिकोण बना लेने के बाद यदाकदा कृतज्ञता मिल भी जाय तो हमें आश्चर्य और प्रसन्नता ही होगी, न कि दुःख।

इस परिच्छेद मे मैं यह बताने का प्रयत्न कर रहा हूँ कि, "उपकारों को भूलना मनुष्य का स्वभाव है अतः यदि हम दूसरों से कृतज्ञता की आशा करेंगे तो हमें व्यर्थ ही सरदर्द मोल लेना पड़ेगा।"

न्यूयार्क में एक महिला को मैं जानता हूँ जो सदैव अपने एकाकीपन की शिकायत करती रहती है। उसका कोई भी सम्बन्धी उसके पास नहीं फटकता और इसमें आश्चर्यकी बात नहीं क्योंकि यदि आप उसके पास जायें तो वह घटों बैठी बैठी अपनी भतीजियों पर, बचपन में किये गये उपकारों का चिट्ठा आपको सुनाती रहेगी "मैंने चेचक, कठमाला तथा खाँसी की बीमारियो में उनकी सेवा शुश्रुषा की, वर्षों तक खिलाया-पिलाया, एक को व्यावसायिक स्कूल में शिक्षा दिलवाई और दूसरी के लिए विवाह होने तक घर की व्यवस्था कर दी।"

तो क्या कभी वे उसे मिलने नहीं आती? हाँ आती हैं पर कर्तव्य समझकर। किन्तु उन्हें उसके पास जाने में डर लगता है क्योंकि वे जानती हैं कि उन्हें घटों उल्टी-सीधी बातें सुननी पड़ेंगी और उनका सत्कार दुःखद उलाहनों तथा आत्म ग्लानि की ठडी श्वासों से किया जायगा। अब यह महिला अपनी भतीजियों को अपने से मिलने-जुलने के लिए बाध्य नहीं कर सकती, डरा धमका नहीं सकती, इसलिए अब वह हृदय रोग से पीड़ित होने का बहाना करती है, ताकि वे उसे मजबूरन मिलने आएँ।

तो क्या सचमुच ही उसे हृदय रोग है! हाँ, डॉक्टरों का कहना है कि उसका दिल कमजोर है और उसकी धड़कनें बढ जाती हैं, किन्तु वे यह भी कहते हैं कि इससे उसको कोई खतरा नहीं है क्योंकि उसकी यह सारी बीमारी मानसिक है।

इस महिला को स्नेह तथा देख भाल की आवश्यकता है पर वह इसे कृतज्ञता के रूप में चाहती है, पर उसे वह कृतज्ञता और प्यार कभी भी प्राप्त नहीं होगा। क्योंकि वह उसे माँगती है और उसे अपने अधिकार की वस्तु समझती है।

उस महिला के समान ही अन्य हजारों महिलाएँ हैं जो कृतघ्नता एकाकीपन एव उपेक्षा के कारण दुःखी हैं, वे चाहती हैं कि उन्हें प्यार मिले, किन्तु यह तभी सम्भव है जब वे उसकी माँग छोड दें और प्रत्युपकार की आशा न कर दूसरों के प्रति अपना प्यार उँडेलती रहें।

यह बात अव्यावहारिक, काल्पनिक और आदर्शवाद की बात नहीं। यह बड़े विवेक की बात है। यह हमारे लिए वाछित सुख प्राप्त करने का सहज उपाय है। मुझे इसका प्रत्यक्ष अनुभव है, मैंने अपने कुटुम्ब में ही इसका क्रियान्वय देखा है। स्वय मेरे माता-पिता सुख के लिए दान देते थे-हम दीन थे, सदा ही ऋण के बोझ से दबे रहते थे। यद्यपि मेरे माता पिता गरीब थे तथापि वे इओवा में कौसिल ब्लफ्स के क्रिश्चियन होम को अनाथों के लिए बराबर रुपये भेजा करते थे। उन्होंने उस अनाथालय को कभी नहीं देखा था। सम्भवत किसी ने भी उस दान के लिए उन्हें धन्यवाद नहीं दिया, हालाँकि पत्र के द्वारा धन्यवाद अवश्य प्राप्त हो जाता था। फिर भी बच्चों

को सहायता करके जो सुख उन्हें मिलता था वह उनके लिए अमूल्य था और वह सुख उन्हें बिना माँगे, बिना आशा किये मिल जाता था।

मेरे विचार से मेरे पिताजी अरस्तु के 'आदर्श पुरुष' की परिभाषा में खरे उतरते थे। अरस्तु का कहना था कि, "आदर्श पुरुष वह है जिसको दूसरों का उपकार करने में सुख मिले और जो दूसरों के उपकारों को ग्रहण करने में लज्जा का अनुभव करे क्योंकि दूसरों पर कृपा करना महानता का द्योतक है किन्तु दूसरों की कृपा प्राप्त करना हीनता का परिचायक है।

इस परिच्छेद की दूसरी मुख्य बात यह है कि, "सुखी बनने के लिए कृतज्ञता और कृतघ्नता का झमेला छोड़कर मनुष्य आत्मानन्द के लिये दान करें।"

सदियों से माता-पिता संतान की कृतघ्नता को लेकर सिर धुनते आए हैं। यहाँ तक कि शेक्सपियर के नाटक का एक पात्र राजा लियर भी कहता है कि, "कृतघ्न संतान बहुत दुःखदायी होती है। वह सर्प-दंश की पीड़ा से भी अधिक पीड़ा दायक होती है।

किन्तु बच्चे कृतज्ञ कैसे बनें, जब तक कि हम उन्हें सिखाएँ नहीं। कृतघ्नता घास की तरह नैसर्गिक है जब कि कृतज्ञता गुलाब की भाँति लौकिक। उसे पोषण चाहिए, पानी और देखरेख चाहिए, प्यार और संरक्षण चाहिए। यदि हमारी संतान कृतघ्न है तो दोष किसका? हमारा ही, यदि हमने उन्हें दूसरों के प्रति कृतज्ञता प्रगट करना सिखाया ही नहीं तो हम उनसे कृतज्ञता की आशा कैसे कर सकते हैं? मैं एक ऐसे व्यक्ति को जानता हूँ जिसको अपने सौतेले पुत्र की कृतघ्नता से शिकायत है। वह व्यक्ति एक बॉक्स फेक्ट्री में नौकर था। एक सौ साठ रुपये माहवार से अधिक आय उसकी कभी कभार ही होती थी। उसने एक विधवा से विवाह किया था जिसने उसे रुपया उधार निकलवा कर अपने दो लड़कों को कॉलेज भेजने के लिए राजी किया था। अपनी इस आय में से वह अपना कर्ज भी चुकाता और राशन, किराया, ईंधन, कपड़े आदि का खर्च भी चलाता। चार वर्ष तक वह कुली की तरह बिना शिकायत काम करता रहा।

पर क्या उसे यह सब करने के लिए कृतज्ञता प्राप्त हुई? नहीं। उसकी पत्नी और लड़के, जो कुछ वह करता था उसे अपना अधिकार समझते थे। उन्होंने कभी कल्पना ही नहीं की कि वे अपने सौतेले पिता के आभारी हैं। उनके मन में कभी उसे धन्यवाद देने का विचार तक नहीं आया।

दोष किसका था? लड़कों का? हाँ, किन्तु, माँ का दोष उनसे भी अधिक था। उसने छोटी आयु में लड़कों को कृतज्ञता की भावनाओं से लादना लज्जास्पद समझा। वह नहीं चाहती थी कि जीवन के आरम्भ में ही वे कृतज्ञता के बोझ का अनुभव करने लगें। अतः उसने कभी यह कहने का कष्ट नहीं किया कि, "तुम्हारा सौतेला पिता कितना उदार है कि उसने तुम्हें कॉलेज में अध्ययन करने के लिए सहायता

दी।" इसके विपरीत उसने ऐसा रुख अपनाया कि जो कुछ वह कर रहा है थोड़ा है।

उसका खयाल था कि वह बच्चों का बचाव कर रही है, किन्तु वस्तुतः वह बच्चों में ऐसे विचार भर रही थी जैसे वे सब कुछ ससार के मत्थे माँगते हों। यह एक खतरनाक विचार था क्योंकि आखिर उन लड़कों में से एक ने अपने मालिक से रुपया उधार लेने का प्रयास किया और जेल गया।

हमें स्मरण रखना चाहिए कि हमारे बच्चे वैसे ही बनेंगे जैसे हम उन्हें बनाएंगे। उदाहरणार्थ मेरी मौसी वियोला एलेक्जेन्डर को लीजिए, जो मिनेपोलिस के १४४ पश्चिमी मिनेता पार्कवे में रहती हैं। उनको अपने बच्चों की कृतज्ञता के विषय में कभी कोई शिकायत नही करनी पड़ी। जब मै छोटा था, मौसी वियोला मेरी नानी को सेवा शुश्रुषा के लिए अपने घर ले गई। अपनी सास की भी उसने उसी प्रकार सेवा सुश्रुषा की थी। आज भी मैं आँखें बन्द कर कल्पना करू तो वे दो वृद्ध महिलाएँ मौसी वियोला के खेत के मकान में अलाव तापती दिखाई देंगी। क्या कभी मौसी वियोला को उनके कारण कोई कष्ट होता था? हाँ, होता था! किन्तु उनके रूख से कभी भी यह कष्ट प्रकट नहीं हुआ। वे उन वृद्धाओं को प्यार करती थीं, उनका मन रखती थीं, उन्हें सर आँखो पर बिठाती थीं। तथा उन्हें अपने ही घर में रहती हो वैसा अनुभव कराती थीं। उन वृद्धाओंके अलावा घर मे मौसी वियोला के अपने छः बच्चे भी थे। उन्हें कभी विचार ही नहीं आया कि वे कोई विशेष एव महान कार्य कर रही है या उन वृद्धाओं को अपने घर में आश्रय देने के कारण श्लाघा की पात्र हैं। उनके लिए वह कार्य स्वाभाविक, न्यायसगत तथा अपनी रूचि के अनुकूल था।

आज मौसी वियोला कहाँ हैं? बीस वर्षों से वे विधवा का जीवन बिता रही हैं, और उनकी सतान में से पॉच अब सयाने हो गये हैं। उन बच्चों की अपनी पाँच गृहस्थियाँ हैं और वे सभी मौसी को अपने अपने घर मे साथ रखने के लिए बड़े आतुर रहते हैं। वे बच्चे उनका बडा सम्मान करते हैं। वे मौसी के साथ रहने के लिए तरसते हैं। क्या वे उपकार की भावना से ऐसा करते हैं? नहीं। उनके हृदय में मौसी के प्रति असीम प्यार है। बचपन से ही वे सौहार्द एव मानव करुणा की भावनाओं के वातावरण में पले थे, इसलिए अब वे मौसी को प्यार करें तो आश्चर्य ही क्या!

याद रखिये अपनी सतान में कृतज्ञता की भावना का विकास करने के लिए आपको स्वय कृतज्ञ बनना पडेगा। याद रखिये, छोटों के बडे कान होते हैं वे हमारी हर बात को ध्यान से सुनते हैं। बच्चों की उपस्थिति में कभी किसी के उपकार अथवा दया की उपेक्षा न कीजिए। कभी यह न कहिए, "देखो न उसने क्रिसमस के उपहार स्वरुप यह कैसा रद्दी कपडा भेजा है, जैसे कोई झाडन हो। उसने स्वय इसे बुना है। एक पैसा भी तो उसे खर्च नहीं करना पडा!" बल्कि यों कहिए,

"देखो मेरी भतीजी स्यू ने इसे बनाने में कितना समय लगाया होगा! कितनी अच्छी है वह! है न? आज ही हमें उसे धन्यवाद-पत्र लिख देना चाहिए।" हमारे ऐसे व्यवहार को देख कर बच्चे सहज ही में प्रशंसा करने तथा दाद देने की आदत सीख लेंगे।

(क) कृतज्ञता से उत्पन्न चिंता को टालने के लिए यह तीसरा नियम याद रखिए—कृतघ्नता के बारे में चिंता न कर हमें उसे स्वीकार कर लेना चाहिए। याद रखिए कि ईसा ने दस कोढ़ियों का उपचार किया था। किन्तु केवल एक ने ही उनको धन्यवाद दिया। जितनी कृतज्ञता दूसरों से ईसा को मिली उसे अधिक की आशा हम क्यों करें?

(ख) हमें स्मरण रखना चाहिए कि दूसरों से कृतज्ञता की आशा न कर केवल आत्मानन्द के लिए दूसरों का उपकार करें, इसमें सुख मिलता है।

(ग) ध्यान रखिए कि कृतज्ञता का गुण पैदा किया जाता है, इसलिए यदि हम अपनी संतान में कृतज्ञता का भाव भरना चाहें तो उन्हें इसके लिए शिक्षा देनी होगी।

१५ : क्या आप अपनी नियामतों का सौदा करेंगे ?

हेरोल्ड एब्रोट को मैं वर्षों से जानता हूँ। मिसौरी अन्तर्गत वेब शहर के ८२४ दक्षिण मैडिसन एवेन्यू में वे रहते हैं। वे मेरी सस्था में परिसवाद की व्यवस्था करते थे। एक बार हम दोनों केन्सास शहर में मिले। उन्होंने मुझे मिसौरी में अपने वेल्टन के फार्म तक गाडी में पहुँचा दिया। जब हम गाड़ी में जा रहे थे मैंने उन्हें पूछा कि आप चिन्तामुक्त कैसे रहते हैं ? उत्तर मे उन्होंने मुझे एक प्रेरक कथा सुनाई जिसे मैं कभी नहीं भूलूँगा।

उन्होंने मुझे बताया कि, "पहले मैं बडा दुःखी रहा करता था किन्तु १९३४ के बसत के दिनों की बात है। एक दिन सवेरे मैं वेब शहर की डोगर्टी स्ट्रीट से गुजर रहा था। वहाँ मैंने जो दृश्य देखा उससे मेरी सारी चिन्ताएँ मिट गईं। कुछही पलों मे यह सारी घटना घट गई। किन्तु उन पलों में मैंने जितना सीखा उतना दस वर्षों मे भी नहीं सीख सका। गत दो वर्षों से मै वेब शहर मे किराने की दूकान चला रहा हूँ। इसके पूर्व मेरी सारी बचत खर्च हो गई थी और ऊपर से कर्ज भी हो गया था। उस कर्ज को चुकाने में मुझे सात वर्ष लगे। गत शनिवार को मुझे अपनी किराने की दूकान भी बन्द कर देनी पड़ी और व्यापारियों तथा माइनर्स बैंक से रुपया उधार लेने के लिए भटकना पड़ा ताकि मैं वह रुपया लेकर केन्सास नगर में रोजगार की खोज में जा सकूँ। मैं हारे हुए आदमी की तरह भटक रहा था। मेरी निष्ठा और सघर्ष-शक्ति विलीन हो चुकी थी। एकाएक मैंने रास्ते में एक अपग व्यक्ति को देखा। वह पहियों वाले एक लकड़ी के तख्ते पर बैठा था और हाथों में लकड़ी के टुकडे लिए हुए उनके सहारे सड़क पर सरकता चला जा रहा था। मैं उसे उस समय मिला जब वह सडक के मोड पर कुछ ऊँचा उठ कर दूसरी ओर के फुटपाथ पर चढने का प्रयत्न कर रहा था। जैसे ही उसने लकड़ी के तख्ते सहित अपने को उठाया उसकी निगाह मुझ पर पड़ी। मुस्कराते हुए उसने मेरा अभिवादन किया और बड़े उत्साह से कहा, कितना सुहावना समय है ! है न ? मैंने उसे देखा और महसूस किया कि उसके मुकाबले में मैं कितना समृद्ध हूँ। मेरे पास टाँगें हैं और मैं चल सकता हूँ। मैं आत्मग्लानि में डूब गया। सोचा—यदि यह व्यक्ति बिना टाँगों के प्रसन्न एव निष्ठावान हो सकता है तो मैं टाँगोंवाला हो कर भी ऐसा क्यों न बनू। मेरा उत्साह दुगुना हो गया। मुझ मे आत्मविश्वास जगने लगा। पहले मैंने व्यापारियों अथवा बैंक से सौ डालर ही लेने का विचार किया था किन्तु अब मैंने दो सौ डालर लेने का साहस किया। मैंने उन्हें यह कहने का निश्चय किया था कि मैं केन्सास शहर जा कर नौकरी के लिए प्रयत्न करना चाहता हूँ। किन्तु अब मैंने विश्वास के साथ कहा कि केन्सास शहर मे मै नौकरी करने जा रहा हूँ। मुझे कर्ज भी मिल गया और नौकरी भी।

"सम्प्रति मैंने बाथरूम के शीशे पर कुछ लिख रक्खा है जिसे मैं प्रतिदिन डाढ़ी बनाते समय पढता हूँ। शीशे पर लिखे हुए वे शब्द इस प्रकार हैं :—

मैं दु:खी था इस लिए, कि मेरे पहनने को जूते नहीं थे। पर गली में एक ऐसा आदमी भी था जिसके टाँगें ही नहीं थीं।

मैंने एकबार एडी रीकेन बेकर से पूछा कि जब आप अपने साथियों सहित प्रशान्त महासागर में एक लकड़ी के गट्ठों की आपतकालीन नाव पर भटक रहे थे, तब जीवन की कौनसी महत्वपूर्ण बात आपने सीखी ? उत्तर में उन्होंने बताया कि, "मैंने यह सीखा कि जब तक आपके पास पीने के लिए स्वच्छ पानी और खाने के लिए भोजन है, आपको अन्य किसी भी बात की शिकायत नहीं होनी चाहिए।"

टाईम पत्रिका में एक सैनिक अधिकारी के विषय में एक लेख छपा था। यह अधिकारी गोटलकेनाल पर घायल हो गया था। गले में गोली के टुकड़े के लग जाने के कारण उसे सात बार खून चढ़वाना पड़ा था। डॉक्टर से उसने लिख कर पूछा था–"क्या मैं जीऊँगा ?" डॉक्टर ने कहा, "हाँ" उसने दूसरी बार फिर लिख कर पूछा, "मैं बोल भी सकूँगा ?" डॉक्टर ने फिर हाँ कहा। तब उसने लिखा, "फिर मैं व्यर्थ ही क्यों घबरा रहा हूँ।" इस लिए आप भी चिंता छोड़ क्यों नहीं सोचते कि मैं व्यर्थ ही क्यों घबरा रहा हूँ ?' और तब आप महसूस करेंगे कि आपका घबराना व्यर्थ है।

हमारे जीवन में नब्बे प्रतिशत बातें सही होती हैं। केवल दस प्रतिशत ही गलत होती हैं। यदि हमें सुखी रहना है तो उन नब्बे प्रतिशत बातों पर ही ध्यान देकर उन दस प्रतिशत गलत बातों को भुला देना चाहिए और यदि इसके विपरीत चिंतित और दुःखी होना है या उदर व्रण का शिकार बनना है तो उन दस प्रतिशत गलत बातों पर ध्यान देकर नब्बे प्रतिशत सही बातों को छोड़ देना चाहिएँ।

क्रामवेल के समय के बहुत से गिरजाघरों में आज भी लिखा हुआ है कि, 'सोचो और धन्यवाद दो" ये शब्द हमारे दिलों में भी खुभे रहने चाहिएँ। जिन बातों के लिए आप कृतज्ञ हैं उन्हीं के बारे में सोचिए तथा अपने द्वारा उपलब्ध ऐश्वर्य तथा वरदान के लिए भगवान को धन्यवाद दीजिए।

गलिवर्स ट्रेवल्स नामक पुस्तक के लेखक जोनाथन स्वीफ्ट अंग्रेजी साहित्य के अत्यन्त निराशावादी लेखक थे। उन्हें इस संसार में पैदा होने का दुःख था। दुःख की इस भावना के कारण अपने जन्म-दिन पर वे मातम मनाते और भूखे रहते। अपने नैराश्य के बावजूद भी यह घोर निराशावादी साहित्यकार सुखद और उल्लासपूर्ण भावनाओं को स्वास्थ्यप्रदायनि शक्तियाँ मानते थे तथा उनकी सराहना करते थे। वे पथ्य, मौन और प्रसन्नता को संसार के सबसे कुशल डॉक्टर समझते थे।

अपने अन्दर के अपूर्व एव असीम वैभवपर ध्यान देकर हम डॉक्टर 'उल्लास' की सेवायें हर घड़ी प्राप्त कर सकते हैं। क्या आप लाखो रुपयों के बदले अपनी नियामतों का सौदा करेंगे ? क्या आप रुपयों के बदले अपनी आँखें खोने को तैयार हो जाएँगे ? क्या आप अपने परिवार, अपने बच्चों और अपने हाथों का सौदा

करेगें ? अपने उपर्युक्त समस्त वैभव पर विचार कीजिए और आप महसूस करेगें कि उन सभी नियामतों का आप ससार के किसी भी वैभव से सौदा नहीं कर सकते।

पर क्या सचमुच ही हम अपनी नियामतों की सराहना करते है ? नहीं। शोपेन-हॉवर का कथन है कि, "हम सदैव अपने अभाव के सम्बध मे ही सोचा करते हैं। अपनी नियामतों के बारे मे बहुत कम सोचते हैं।" यह हमारा दुर्भाग्य है। ससार की लडाइयों और बीमारियो ने जितना दुःख नहीं फैलाया उतना हमारी इस भावना ने फैलाया है।

इस भावना के कारण ही जोन पालमर जैसा सदा प्रसन्न रहनेवाला व्यक्ति भी असतुष्ट, वृद्ध एव दुःखी बन गया और उसकी सारी गृहस्थी नष्ट हो गई। मै यह उन्हीं के शब्दो में कह रहा हूँ।

श्री पालमर न्यूजर्सी अन्तर्गत टेटरसन के तीन सौ उन्नीसवी एवेन्यू में रहते हैं। अपनी परिस्थितियों का विवरण देते हुए उन्होंने बताया कि, "सैनिक सेवा से निवृत्त होने के कुछ ही दिनों बाद मैंने अपने लिए धन्धा शुरू किया और रात-दिन परिश्रम किया। काम सुचारु रूप से चल रहा था कि कठिनाइयाँ आरम्भ हुई। मुझे मशीनरी के पुर्जे तथा अन्य सामग्री उपलब्ध नहीं होती थी। धन्धा छूटने का भय मुझे बराबर लगा रहता था। मैं इतना चिंतित रहता था कि जल्दी ही बूढा हो गया और दुखी रहने लगा। अपनी इस दशा का पता मुझे उस समय नहीं चला। किन्तु बाद में मैंने महसूस किया कि मेरी सुखी गृहस्थी नष्ट होने वाली है।

तब एक दिन मेरे पास काम करनेवाले एक विकलाग सिपाही ने मुझे कहा, "जॉन, तुम्हें अपने आप पर शर्म आनी चाहिए। तुम तो ऐसी बात कर रहे हो जैसे कि ससार में तुम्ही एक दुःखी आदमी हो। यदि तुम्हें कुछ समय के लिए धन्धा बन्द भी करना पड़े तो क्या हुआ। जब परिस्थितियाँ सामान्य हो जायँ उसे फिर चालू कर देना। तुम मे बहुत-सी ऐसी बातें हैं जिनके लिए तुम्हें अपने आपको खुश किस्मत समझना चाहिए। फिर भी तुम सदैव बड़बड़ाते रहते हो। काश! मैं तुम्हारी परिस्थिति में होता! तुम मुझे क्यों नहीं देखते? मेरे एक हाथ है, मेरा आधा चेहरा गोली लगने के कारण विकृत हो गया है फिर भी मैं कभी शिकायत नहीं करता। यदि तुमने बड़बड़ाना नहीं छोडा तो तुम्हारा यह धन्धा, तुम्हारा स्वास्थ्य, तुम्हारी गृहस्थी और तुम्हारे मित्र सब कोई तुमको छोड़ देंगे।

उसकी इस बातने मेरा दिमाग ठीक कर दिया। उसने मुझे अपनी स्थिति का ज्ञान कराया। मैंने उसी समय निश्चय कर लिया कि मैं पूर्ववत् प्रसन्न चित्त रहने का प्रयत्न करूँगा, और वही किया।"

लूसिल ब्लेक नाम की मेरी एक महिला मित्र अपने अभाव में सदा चिन्तित रहती थी। अपने पास जो कुछ है उसी मे प्रसन्न रहना सीखने के पूर्व वह दुःख के कगारे पर खड़ी कापती रहती थी।

बहुत वर्ष पूर्व कोलम्बिया विश्वविद्यालय के स्कूल ऑफ जर्नलिज़म में मैं ल्यूसिल के साथ लघुकथा लिखना सीख रहा था। उसके नौ वर्ष बाद उसे गहरा धक्का लगा। उन दिनो वह एरीजोनिया अन्तर्गत टेक्सोन में रहती थी। उसने अपनी कहानी सुनाते हुए कहा —

"मै अनेक प्रवृत्तियों के जाल मे फँसी हुई थी।" ऐरीजोना विश्वविद्यालय में वाद्य और सगीत सीखती थी, नगर में चिकित्सा सम्बन्धी व्याख्यानमाला का प्रबन्ध करती थी, अपने निवास स्थान डैजर्ट विलेरांच मे सगीत समीक्षा की शिक्षा देती थी तथा समारोह नृत्य एव घुड़सवारी में भाग लेती थी। "एक दिन सवेरे मुझे मालूम हुआ कि मैं हृदयरोग की शिकार बन गई हूँ।" मुझे काठ मार गया। डॉक्टर ने कहा "तुम्हें पूरे एक वर्ष तक विस्तर मे पडे पड़े आराम करना होगा।" उसने मुझे धीरज नहीं बधाया कि मै फिर से स्वस्थ और सशक्त बन जाऊँगी। उसने उत्साहित नहीं किया।

"मैंने सोचा–एक वर्ष तक विस्तर में पडे पड़े मैं बेकार हो जाऊँगी, शायद मर भी जाऊँ। इन विचारों ने मुझे भयभीत कर दिया। मुझे यह रोग क्यों हुआ ? मुझे ऐसी सजा क्यों मिली ? मैंने ऐसा क्या किया था ?... मै रोती और झींकती रही। दुःखी और विद्रोही बन गई। पर डॉक्टर के आदेश के अनुसार विस्तर मे ही सोती रहती। मेरे एक पड़ोसी कलाकार श्री रेडोल्फ ने एक दिन मुझे कहा कि, 'तुम एक वर्ष तक विस्तर में पडे रहना बड़ा दुःखदायी समझती हो किन्तु ऐसी बात नहीं है। तुम्हें इस अरसे मे सोचने-विचारने का समय मिलेगा और अपने आपको पहचान सकोगी। आने-वाले कुछ ही महीनों मे तुम अपने जीवन मे अब तक की गई आध्यात्मिक प्रगति से कहीं अधिक प्रगति कर पाओगी। मैंने धीरज के साथ नवीन मूल्यों का विकास करने का प्रयत्न किया। मैं प्रेरणादायक पुस्तके पढने लगी। एक दिन एक रेडियो कोमेन्टेटर ने प्रसारित किया कि जो आपकी आत्मा में है वही बाहर प्रगट होता है। पहले भी मैंने इस प्रकार के शब्द सुने थे, किन्तु इस बार ये शब्द मेरे मन मे घर कर गये। मैंने निश्चय किया कि मै वही बात सोचूँगी जिससे जीने की प्रेरणा मिल सके। और ऐसे विचार स्वास्थ्य, प्रसन्नता और सुख के विचार ही हो सकते थे। प्रत्येक सवेरे जगने के बाद मैं अपने आप को उन नियामतों के बारे में सोचने के लिए बाध्य करती जिनके कारण मैं अपने आप को खुश किस्मत समझती थी। मैं सोचती—मेरी एक सलौनी बच्ची है। मै देख सकती हूँ, सुन सकती हूँ। रेडियो पर के मधुर सगीत का आनन्द ले सकती हूँ। मेरे पास अध्ययन के लिए समय है, अच्छा भोजन मुझे मिलता है, अच्छे मित्रों की सगति मुझे प्राप्त हैं, आदि आदि। इस प्रकार मै बहुत प्रसन्न रहने लगी। मेरे पास कई मित्र मिलने आने लगे इस लिए डॉक्टर ने केबिन के बाहर सूचना की एक तख्ती लटका दी, जिसके अनुसार एक निश्चित समय पर केवल एक ही व्यक्ति मुझ से मिल सकता था।

उस बात को आज नौ वर्ष बीत गये हैं और अब मैं सुखद और व्यस्त जीवन व्यतीत करती हूँ। एक वर्ष तक बिस्तर में पड़े रहने के कारण मैं ईश्वर का आभार मानती हूँ। ऐरीझोना में एक वर्ष का मेरा वह समय अत्यन्त बहुमूल्य एव सुखद रहा था। उन दिनों प्रत्येक सवेरे मैं अपनी नियामतों का स्मरण करती थी। आज भी उस आदत को मैंने ज्यों की त्यों बना रक्खा है। यह आदत मेरी अमूल्य निधि बन गई है। मुझे खेद है कि मृत्यु के भय से भयभीत होने के पूर्व मैंने यथार्थ में जीना नहीं सीखा था।

लूसिल ब्लेक ने वही बात सीखी जो डॉक्टर सेमूअल जॉन्स ने दो सौ वर्ष पूर्व सीखी थी। उनके अनुसार " प्रत्येक घटना के उज्ज्वल पक्ष को देखने की आदत का मूल्य हजार रुपये वार्षिक से भी अधिक है।

ध्यान रखिये ये शब्द किसी पेशेवर आशावादी के नहीं थे बल्कि उस व्यक्ति के थे, जिसने जीवन के बीस वर्ष दुःख, भूख और गरीबी में काटे थे और अन्त में अपने युग और पीढी का प्रसिद्ध लेखक एव लोकप्रिय प्रवक्ता बन गया था।

लोगन पियर्सल स्मिथ ने एक बहुत ही तत्व की बात कही है–"जीवन का मुख्य ध्येय मनोवाछित वस्तु की प्राप्ति एव उसका उपयोग होना चाहिए। जो व्यक्ति बुद्धिमान हैं वे ही उपलब्ध वस्तुओं का आनन्द उठा सकते हैं। यदि आप यह जानना चाहें कि रसोई घर में रकाबियाँ धो कर भी रोमाचकारी अनुभव प्राप्त किया जा सकता है तो बोर्गहिल्ड डाल द्वारा लिखित पुस्तक–'आइ वॉन्टेड टु सी' पढिए। उसमे अपूर्व साहस का वर्णन है।

इस पुस्तक की महिला लेखिका लगभग अर्ध शताब्दी तक अन्धी रही। उसने लिखा है कि, " मेरे एक ही ऑख थी और वह भी ऊपर से इतनी ढकी रहती थी कि मुझे ऑख की बाई तरफ के एक छोटेसे सुराख में से देखना पडता था। पुस्तक को मुझे अपनी ऑख के बहुत निकट रखना पडता था और ऑख की बाई ओर अधिक जोर देना पडता था। "

किन्तु उसे दया का पात्र बनना स्वीकार नहीं था। वह नहीं चाहती थी कि लोग उसे अपने से हीन समझें। बचपन मे वह अपने मित्रों के साथ 'हॉप्सकोच' खेल खेलना चाहती थी किन्तु वह जमीनपर बनाये गये निशानों को नहीं देख पाती थी, इसलिए जब सब बच्चे घर चले जाते वह जमीनपर सिरक सिरक कर अपनी ऑख को उन निशानो के बहुत समीप ले जाती और उन्हें पास से देखती। जमीन पर किये गये उन सारे निशानों को उसने समझ लिया और इस प्रकार दौड़ने के इस खेल मे वह बहुत कुशल बन गई। घर पर बड़े अक्षरों की किताब पढते हुए भी वह उसे इतनी समीप रखती कि उसकी बरौनियॉ पुस्तक को छूने लगतीं। उसने कॉलेज से दो डीग्रियॉ प्राप्त कीं। मिनेसोटा विश्व विद्यालय से उसने ए बी की डीग्री प्राप्त की और कोलम्बिया विश्वविद्यालय से एम. ए. की।

मिनेसोटा अन्तर्गत क्वीनवेली के एक छोटे से गॉव मे उसने अध्यापन कार्य शुरू किया और उसके बाद साउथ डाकोटा अन्तर्गत सिओक्स-फोल्स के ऑगस्टाना कॉलेज में साहित्य एव जर्नलिजम की प्राध्यापिका नियुक्त हुई। तेरह वर्षो तक वहॉ प्राध्यापिका रही। वह महिलाओं के क्लबों में भाषण देती तथा पुस्तकों एव लेखकों के सम्बन्ध में रेडियो से समीक्षा प्रसारित करती। उसने लिखा है कि मेरे दिमाग में पूर्णान्ध हो जाने का भय सदा बना रहता था। इस भय से मुक्त होने के लिए मैंने अपने जीवन के प्रति उल्लास एव आनन्द का रुख अपनाया। सन् १९४३ मे जब वह बावन वर्ष की थी एक चमत्कारपूर्ण घटना घटी। प्रसिद्ध मेयोक्लिनिक मे उसका ऑपरेशन हुआ और वह पहले से अधिक अच्छी तरह से देखने लगी।

उसके सामने एक नवीन, मोहक एव चहल पहल पूर्ण ससार निखर उठा। उस के लिये अब रसोई घर मे रकाबियाँ धोना भी एक रोमान्चक अनुभव बन गया। उसने लिखा है कि, "मै कढाई और बर्तनों मे सफेद झाग से खेलने लगती, अपने हाथ उनमें डुबो देती और छोटे छोटे बुदबुदों को हाथों में भर लेती और उन्हें प्रकाश में रख कर इन्द्र धनुष के सतरगी दृश्य का आनन्द उठाती।"

वह घने हिमपात के बीच उड़ती हुई उन स्पेरो चिड़ियों को जो अपने काले एवं भूरे पँखों को फड फड़ाती हुई उडती थी, रसोई घर की खिडकी से देखती।

उन बुदबुदों तथा चिड़ियाओं को देख कर उसे ऐसा आध्यात्मिक आनन्द प्राप्त होता था कि उसने पुस्तक के अन्त में लिखा है कि "हे प्रभु इस आनन्द के लिए मैं तुम्हें बारबार धन्यवाद देती हूँ।"

जरा सोचिये तश्तरियाँ धोते हुए पानी के बुदबुदों में इन्द्र धनुष्य के रगों और हिमपात के बीच उड़ती हुई स्पेरो चिडियों को देख सकने के कारण भी ईश्वर को धन्यवाद!

हमे शरम आनी चाहिए कि जीवन भर सौन्दर्य के नन्दनवन मे रहकर भी हम उसके आनन्द का उपभोग-करने से वचित रहते हैं।

यदि आप चिंता मुक्त होकर जीना चाहते हैं तो इस चौथे नियम पर ध्यान दीजिये — अपने वरदानों को याद रखिए और कठिनाईयों को भुला दीजिए।

☆

१६ : मन में सुख शान्ति रखने के सात उपाय

अपने आप को पहचानिये और जो आप हैं वही बने रहिये। ध्यान रखिए कि इस धरती पर अपनी सानी के आप अकेले हैं।

मेरे पास उत्तरी कोरोलिना मॉउन्ट एरी की श्रीमती एडिथ एलरेड का एक पत्र है। उस पत्र मे उन्होंने लिखा है कि, "बचपन मे मै अत्यन्त भावुक एव शर्मीली थी, मैं काफी मोटी थी और अपने कपोलों के कारण तो और भी स्थूलकाय लगती थी। मेरी माँ पुराने खयालो की थी इसलिए कपड़ों को सुन्दर ढग से सिलवाना निरी मूर्खता की बात समझती थी।" उसका कहना था कि, "ढीला वस्त्र चलता है और तग वस्त्र फटता है।" अपने इसी सिद्धान्त के अनुसार वह मेरी पोशाक बनवाती। अपने बेढंगे कपड़ों के कारण मं कभी पार्टियों मं भी नहीं जाती और न किसी प्रकार का मनोरजन करती। स्कूल मं भी अन्य बच्चों के साथ बाह्य प्रवृत्तियों एव खेल-कूद मे भाग नहीं लेती थी। अक्सर सोचती कि मैं सबसे निराली हूँ और मेरी कोई भी अपेक्षा नहीं रखता।

"बड़ी होने पर भी मेरा विवाह ऐसे व्यक्ति से हुआ जो अवस्था मं मुझसे कई वर्ष बडा था। मुझमे कोई परिवर्तन नहीं हुआ, मेरी ससुराल के लोग प्रतिष्ठा एव आत्म-विश्वास वाले लोग थे।" वह घराना अच्छी से अच्छी बहू के योग्य था, किन्तु मैं वैसी नहीं थी। मैंने उन लोगों के समान बनने की बहुत कोशिश की किन्तु व्यर्थ। ज्यों ज्यों वे मुझे अपने दायरे से बाहर लाने का प्रयत्न करते त्यों त्यो मं अधिक से अधिक अपने घेरे मे धसती जाती। मै निरुत्साही एवं क्रोधी बन गई और अपने सभी मित्रों से दूर रहने लगी। मेरी मानसिक अवस्था इतनी खराब हो गई थी कि दरवाजे की घंटी की टनटनाहट भी मुझे भयभीत कर देती थी। जीवन की असफलता मुझ पर इतनी हावी थी कि मुझे हर बार डर लगा रहता था कि कहीं मेरा पति मेरी कमजोरी को न जान ले। इसलिए जब कभी हम बाहर के लोगों के साथ होते, मं प्रसन्न चित्त रहने का प्रयास करती और अपने इस अभिनय को बहुत बढा चढा कर कर जाती। अपनी इस कृत्रिमता को मै जानती थी और कई दिनों तक इसी को लेकर बहुत दुःखी बनी रही। अत में एक दिन मैं इतनी निराश हो गई कि मुझे जीने में कोई सार नजर नहीं आया और आत्महत्या की बात सोचने लगी।"

इस निराश स्त्री का जीवन कैसे बदला ?

श्रीमती एलरेड ने बताया कि एक साधारण-सी बात ने मेरे जीवन को बदल दिया। एक दिन मेरी सास मुझे बता रही थीं कि किस प्रकार उन्होंने अपने बच्चो का लालन पालन किया। मेरी सासने कहा, "मैंने सदा इस बात पर जोर दिया कि चाहे कुछ भी हो मेरे बच्चे अपनी स्वाभाविकता को न छोड़ें . और वे अपनी स्वाभाविकता में ही रहें।" सास के इन शब्दों ने मेरे जीवन को बदल दिया। तत्काल ही मैंने समझ लिया कि मेरी चिंताओंका मुख्य कारण यह था कि मै अपने आपको ऐसे साँचे में ढालना चाहती थी जिसके अनुरूप मैं नहीं थी।

"मैंने अपने स्वाभाविक रूप में रहना आरम्भ किया। अपने व्यक्तित्व का अध्ययन करने तथा मैं क्या हूँ, यह जानने का प्रयास किया। मैंने अपनी सभी अच्छी बातों का अध्ययन किया। रंगों तथा रहन सहन के तरीकों का अध्ययन किया। मैं वैसी ही पोशाक पहनने लगी जो मेरे विचार से मुझे शोभा देती थी। मैंने मित्र बनाना आरम्भ किया। सबसे पहले मैंने एक छोटी सी संस्था में प्रवेश किया जहाँ मुझे कुछ बोलने का काम सौंपा गया। पहले तो मैं भय के मारे घबरा उठी किन्तु जैसे जैसे मैं उस कार्यक्रम में बोलती गई मेरी हिम्मत बढती गई। पूर्ण सफलता पाने में मुझे समय अवश्य लगा किन्तु आज मैं आशा से अधिक सुखी हूँ। अपने बच्चों का लालन पालन करते समय मैं उन्हें सदा वही शिक्षा देती हूँ जिसे मैंने कटु अनुभवों के बाद प्राप्त किया है। मैं उन्हें कहती कि कुछ भी हो, वही बने रहो जो तुम हो।

डॉक्टर जोन्स गोर्डन गीके का कहना है कि अपनी स्वाभाविकता को स्वीकार करने की समस्या इतिहास की तरह बहुत पुरानी है और मानव जीवन की तरह ही विश्वव्यापी भी। आज के अनेक स्नायु रोगों एवं मनोग्रन्थियों का मूल कारण यह है कि हम अपनी स्वाभाविकता को स्वीकार नहीं करते। एन्जीलो पाट्रीने बाल शिक्षा पर तेरह पुस्तकें तथा हजारों लेख पत्रिकाओं में लिखे हैं। उनका कहना है कि, "अपनी स्वाभाविकता से भिन्न कुछ और बननेवाले व्यक्ति के समान दुःखी व्यक्ति अन्य कोई नहीं होता।

अपने स्वभाव से भिन्न बनने की यह प्रवृत्ति होलीवुड में विशेष रूप से सर उठाए हुए हैं। होलीवुड के एक प्रसिद्ध निर्देशक का कहना है कि नए अभिनेताओं को उनकी स्वाभाविकता में लाना उनके लिए सबसे बड़ा सरदर्द है। वे या तो लाना टर्नर की नकल करेंगे या क्लार्क गेबल्स की, और वह भी बड़े भद्दे ढंग से। सामवुड उन्हें अक्सर कहा करता है कि "जनता को लाना टर्नर तथा क्लार्क गेबल्स के अभिनय की झाँकी मिल चुकी है वह अब कुछ नवीन कला देखना चाहती है।"

'गुड बाई, मिस्टर चिप्स' तथा 'फोर हुम दी बेल टॉल्स,' जैसे चल चित्रों का निर्देशन करने के पूर्व सामवुडने कई वर्ष व्यापारी केन्द्रों में इसलिए विताये कि वे वहाँ से अनुभव प्राप्त कर 'सेल्स पर्सनालिटीज' का विकास कर सकें। उसका कहना है कि सिनेमा संसार तथा व्यवसाय जगत में एक ही से सिद्धान्त लागू होते हैं। आप नकलची बनकर या रट्टू तोता बन कर कोई काम नहीं कर सकते। जो व्यक्ति अस्वाभाविक बनने का प्रयत्न करे, उसे चित्र-जगत में नहीं लेने में ही भला है।

हालही में 'सोकोनीवेक्युम ऑइल कम्पनि' के इम्प्लोयमैन्ट डॉयरेक्टर पोल बोइन्टन को मैंने पूछा था कि नौकरी के लिए प्रार्थना पत्र देते समय लोग सबसे बड़ी गलती कहाँ करते हैं? इस सम्बन्ध में उन्हें अच्छी जानकारी होना स्वाभाविक है क्योंकि वे साठ हजार से भी अधिक नौकरी ढूँढनें वाले लोगों का इन्टरव्यु ले चुके हैं और उन्होंने 'सिक्स वेज टू गेट दी जोब' नामक पुस्तक भी लिखी है। उत्तर में उन्होंने बताया कि नौकरी ढूँढने वाले लोग सबसे बड़ी गलती यह करते हैं

कि वे अपनी स्वाभाविकता में नहीं रहते। निःसकोच एव स्पष्टवादि होने के बजाय प्रायः वे ऐसे उत्तर देने का प्रयास करते हैं जिन्हें वे सोचते हैं, हम पसद करते हैं। किन्तु इससे काम नहीं बनता, क्योंकि कोई भी व्यक्ति अस्वाभाविकता को पसन्द नहीं करता और न कोई जाली सिक्के को ही स्वीकार करता है।

एक कन्डक्टर की लडकी को यह शिक्षा बड़ी कठिनाइयॉ झेलने के बाद मिली। वह एक गाइका बनना चाहती थी। किन्तु उसके चेहरे की आकृति उसके लिए अभिशाप बन गई। उसका मुँह बडा था और दॉत निकले हुए थे। न्यूजर्सी के नाइट क्लब मे जब उसने पहले पहल गाया तो ऊपर के होठ को नीचा करके निकले हुए दॉतों को ढकने का प्रयास किया। उसका वह प्रयास मखौल बन गया और उसकी असफलता निश्चित हो गई।

किन्तु उस नाइट क्लब में एक व्यक्ति ने उस लड़की को गाते हुए सुना था। उसने सोचा कि इस लडकी मे सगीत प्रतिभा है और उसने उसे स्पष्ट शब्दो में कह दिया कि मैंने तुम्हारा गाना सुना है और मैं यह भी जानता हूँ कि गाते समय तुम किस बात को छिपाने का प्रयत्न करती हो। तुम्हें अपने निकले हुए दॉतों से शर्म लगती है। लड़की यह सुनकर उलझन मे पड गई। किन्तु वह व्यक्ति कहता गया। उसने कहा कि, "निकले दॉत होना कोई अपराध नहीं है। उन्हे छिपाने की कभी कोशिश मत करो, अपना मुँह पूरी तरह से खोलो और जब श्रोता यह जानेंगे कि तुम्हें दाँतों के कारण शर्म नहीं आती तो तुम से स्नेह करेंगे। इसके अलावा यह भी सम्भव है कि जिन दॉतों को तुम छिपाने का प्रयत्न करती हो वे ही तुम्हारे लिए वरदान बन जाएँ।"

कारा डेली ने यह सलाह मान ली और उसने दॉतों की परवाह करना छोड दिया। उस दिन से वह केवल अपने श्रोताओं का ध्यान रखने लगी। और अपने मुँह को पूरी तरह से खोल कर इतने उत्साह और आनन्द से गाती कि कुछ दिनों बाद वह एक प्रसिद्ध पार्श्व गाइका और रेडियो कलाकार बन गई। यहॉ तक कि अब कई अन्य नकलची भी उसकी नकल करते नजर आते है।

एक बार प्रसिद्ध विलियम जेम्स उन लोगो के बारे में बता रहे थे, जिन्होंने अपने को कभी नहीं पहचाना। उनका कहना था कि औसतन, मनुष्य अपने मे निहित केवल दस प्रतिशत मानसिक शक्तियो का ही विकास कर पाता है। हमे क्या होना चाहिए, इस दृष्टि से हम पूरे सजग नहीं हैं। हम अपनी शारीरिक और मानसिक शक्तियों का बहुत कम उपयोग करते हैं। व्यापक दृष्टि से देखा जाय तो मनुष्य अपनी सीमाओ में भी पूर्णतया विकसित नहीं है। उसमें अनेक प्रकार की शक्तियॉ हैं। जिनका पूरा पूरा उपयोग करने में वह सदा ही असफल रहा है।

हममें भी वे सभी शक्तियॉ पूरी मात्रा में हैं। इसलिए, दूसरों की बराबरी नहीं कर सकने की चिन्ता मे हमें एक क्षण भी नष्ट नहीं करना चाहिए। अपनी सानी के हम इस ससार मे एक ही हैं ठीक हमारे जैसा इस ससार में न कभी कोई हुआ और

न कभी होगा। हम अपने माता-पिता की सतान हैं तथा उनकी प्रवृत्तियाँ, उनके मस्कार एव गुण अवगुण हमको मिले हैं। आरमड सेनफील्ड के अनुसार प्रत्येक क्रोमसोम म बिसियों जनन-कण होते हैं केवल एक जनन-कण ही व्यक्ति की सारी जीवन धारा बदलने को काफी है। मनुष्य का निर्माण विचित्र ढग से होता है। एक ही माता-पिता से उत्पन्न चाहे हजारो भाई-बहन क्यों न हों वे एक दूसरे से बिलकुल भिन्न होंगे। यह एक वैज्ञानिक तथ्य हैं, कल्पना की बात नहीं। यदि आप इस सम्बन्ध मे और अधिक जानकारी चाहें तो सार्वजनिक पुस्तकालय मे जाकर एमरेन्ड सेनफील्ड की 'यू एन्ड हेरीडिटी' नामक पुस्तक पढिये।

मैं आपको अपनी स्वाभाविकता मे रहने की बात विश्वास के साथ इसलिए कहता हूँ कि मैं इसे बहुत ही गम्भीर बात समझता हूँ। मै जो कुछ कह रहा हूँ वह दुःखद एव कीमती अनुभवों के आधार पर कह रहा हूँ। इसी विषय पर एक दृष्टान्त लीजिए "जब मै मिसौरी के धान के खेतो को छोड पहले पहल न्यूयार्क मे आया तब मैने अमेरिकन एकेडेमी ऑफ ड्रामेटिक आर्ट्स में प्रवेश लिया। मैं अभिनेता बनना चाहता था। मैं इस क्षेत्रको सुगम, सरल और निश्चित सिद्धि देनेवाला क्षेत्र समझता था। मुझे समझ में नहीं आता था कि उत्साही लोग हजारों की सख्या में इस क्षेत्र को क्यो नहीं अपनाते। मेरी योजना यह थी कि उस समय के जॉन ड्रयू वोल्टर हेम्पडन तथा ओरिस स्कीनर जैसे प्रसिद्ध अभिनेताओं की सफलता एव सिद्धिका अध्ययन करूं। मैंने सोचा कि मैं उन सभी प्रसिद्ध अभिनेताओं की विशिष्टताओं का अनुकरण कर अपने में उन गुणों का सुन्दर एव सफल समन्वय करूं। कितने मूर्खतापूर्ण थे मेरे वे विचार! दूसरे लोगों की नकल करने में मैंने जीवन के कई वर्ष नष्ट कर दिए और तब कहीं जाकर मुझमे यह विवेक जगा कि मुझे वही बनना है जो मैं हूँ।

इस अनुभव से मुझे शिक्षा ग्रहण कर लेनी चाहिए थी किन्तु ऐसा हुआ नहीं। मुझे इस शिक्षा को नये सिरे से सीखना पड़ा। उस के कुछ वर्ष पश्चात् मैंने सार्वजनिक वक्तृता पर व्यावसायिक लोगों के लिए एक सर्वोत्तम पुस्तक लिखने का विचार किया। मे एक ऐसी पुस्तक लिखना चाहता था जैसी अब तक किसी ने नहीं लिखी। यह पुस्तक लिखते समय भी मेरे मन मे वही मूर्खतापूर्ण विचार थे जो अभिनय सीखने के समय थे। मैंने बहुत से लेखकों के विचारों को एक पुस्तक रूप मे सकलित कर देने का विचार किया। इस विचार से कि ऐसी पुस्तक अपने में पूर्ण होगी मैंने जनवक्तृता पर बीसियों पुस्तकें इकठी की और उनके विचारो की पान्डुलिपि बनाने में एक वर्ष बिता दिया। किन्तु अन्ततः मुझे लगा कि इस बार भी मैं वही मूर्खता कर रहा हूँ जो पहले की थी। दूसरे व्यक्तियों के विचारों की यह खिचड़ी जो मैंने पकाई थी वह बड़ी बेढगी थी। उस में इतनी कृत्रिमता तथा-प्रवाहहीनता थी कि कोई भी व्यवसायी उसे पढने का कभी कष्ट नहीं करता। इसलिए मैंने साल भर के उस काम को रद्दी की टोकरी में फेंक दिया और नये सिरे से लिखना

शुरू किया। इस बार मैंने सोचा कि, "मुझे अपने सारे दोषो एव सीमाओं के साथ डेलकार्नेगी बने रहना है। मैं कोई अन्य नहीं बन सकता।" इस तरह मैंने भानमति का पिटारा होने का प्रयास करना छोड दिया। मैंने काम करने पर कमर कस ली और सब से पहले वही काम किया जो मुझे करना चाहिये था। मैंने एक वक्ता तथा वक्तृता सिखानेवाले एक शिक्षक के नाते अपने अनुभवों, मान्यताओं और निरीक्षणों के आधार पर सार्वजनिक वक्तृता सम्बन्धी एक पाठ्य पुस्तक लिख डाली। मैंने हमेशा के लिए वही पाठ सीखा जो सर वोल्टर रेले ने सीखा था (मैं उस सर वोल्टर रेले की बात नहीं कर रहा हूँ जिसने रानी के लिए, कीचड पर अपना कोट बिछा दिया था, ताकि वह बिना पाँव गन्दे किये उस पर चल सके। मैं उस सर वोल्टर रेले की बात कह रहा हूँ जो १९०४ में ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय मे अंग्रेजी साहित्य का प्राध्यापक था।) उसका कहना था—"मैं सेक्सपीयर के समान पुस्तक नहीं लिख सकता। किन्तु मै ऐसी पुस्तक अवश्य लिख सकता हूँ जो मेरी अपनी हो।"

अपनी स्वाभाविकता में रहिये और स्वर्गीय जोर्ज गर्शविन को अरविग बर्लिन ने जो नेक सलाह दी उसके अनुसार आचरण कीजिए। बर्लिन और गर्शविन पहली बार मिले तब तक बर्लिन काफी प्रसिद्ध हो चुका था। किन्तु गर्शविन टिन-पान-ऐली मे पचपन डॉलर प्रति सप्ताह पर सगीत लेखक का काम करता था। बर्लिन गर्शविन की योग्यता से बहुत प्रभावित हुआ और उसे उस समय मिलनेवाले वेतन से तिगुने वेतन पर अपना म्युजिक सेक्रेटरी बनाने का प्रस्ताव किया। किन्तु बादमे उसी बर्लिन ने उसे उस प्रस्ताव के विरुद्ध सलाह दी। उसने कहा कि यदि तुम यह नौकरी कर लोगे तो एक सैकड रेट बर्लिन बन कर रह जाओगे। इसलिए तुम वही बनने की कोशिश करो जो तुम हो और इस प्रकार एक दिन प्रसिद्धि प्राप्त कर सकोगे।

गर्शविन ने उसकी इस चेतावनी पर ध्यान दिया और धीरे धीरे अपनी पीढी का एक प्रसिद्ध अमेरीकन सगीतकार बन गया।

चार्ली चेप्लिन, बील रोजर्स, मेरी मार्ग्रेट, मेग्राइड, जेन ओट्री आदि सैंकडो व्यक्तियों को यही शिक्षा ग्रहण करनी पड़ी, जिसका मैं इस परिच्छेद में जिक्र करता आ रहा हूँ। उन्होने भी मेरी तरह ही बड़ी कठिनाई के बाद यह शिक्षा ग्रहण की थी।

जब पहले पहल चार्ली चेप्लिन चित्रजगत् में आया तो चित्रों के निर्देशकने उसे प्रसिद्ध जर्मन विदूषक की नकल करने का आग्रह किया किन्तु जब तक चार्ली चेप्लिन ने अपना स्वाभाविक अभिनय नहीं किया उसे सफलता नहीं मिली। बोब-होप का अनुभव भी ऐसा ही था। उसने सगीत, नृत्य और अभिनय के क्षेत्र में कई वर्ष बिता दिए किन्तु जब तक उसमे अपना स्वाभाविक विवेक नहीं जागा, उसे कोई सफलता नहीं मिली। विलरोजर्स वर्षों तक मौन रह कर हँसी-मजाक के नाटकों में

रस्सी के करतब दिखाता रहा, किन्तु उसे सफलता तभी मिली जब उसे यह ज्ञात हो गया कि दूसरों को हँसाने का उसमें विशेष गुण है। उसके बादसे वह रस्सी के करतब बताते हुए हँसी-मजाक की बातें भी किया करता था।

जब मेरी मार्गेट मेगब्राइड पहले पहल रेडियो पर कार्यक्रम देने आई तब उसने आयरलैंड के एक विदूपक की नकल की और इसलिए वह असफल रही। किन्तु अपनी स्वाभाविक योग्यता प्रदर्शित करने पर वह मिसौरी की साधारण ग्रामीण बाला न्यूयार्क की प्रसिद्ध रेडियो कलाकार बन गई।

जब जेन आर्टी टेक्सास के बोलचाल के ढंग को छोडकर शहरी लडकों की वेपभूषा अपना कर, न्यूयार्क के निवासी की तरह रहने लगा तो लोग उस पर हँसने लगे, किन्तु जब उसने बेन्जो बजा बजा कर लोकगीत गाने आरम्भ किये, वह चित्रपट तथा रेडियो पर ग्रामीण काउबॉय का अभिनय करनेवाला एक सर्वश्रेष्ठ कलाकार बन गया।

इस दुनिया मे अपनी सानी के आप एक ही हैं इस बात से आपको खुश होना चाहिए। प्रकृति द्वारा दी गई नियामतो का पूर्ण दोहन कीजिए। विश्लेपण करके देखा जाय तो सारी कला, आत्माभिव्यक्ति मात्र है। अपने सगीत मे आप अपनी आत्माका ही राग अलापते हैं। आप के द्वारा चित्रित चित्र आपकी आत्मा की ही अभिव्यक्ति है। आपके अनुभवों, सस्कारो और वातावरण ने आपको जैसा बनाया है वैसा ही आपको रहना चाहिए। चाहे अच्छा हो या बुरा। आपको अपने ही इस उद्यान को विकसित करना चाहिए, चाहे मोहक हो चाहे कुरूप। आपको जीवन के वाद्यवृन्द मे अपनाही लघु वाद्य बजाना चाहिए।

स्वावलम्बन शीर्षक निबन्ध मे इमर्सन ने कहा है कि, "प्रत्येक मनुष्य की शिक्षा के दौरान मे एक ऐसा समय आता है जब वह इस निष्कर्ष पर पहुँच जाता है कि स्पर्धा अज्ञान है और अनुकरण आत्महत्या।" उसे महसूस होने लगता है कि अपने भाग्य में आये हुए अच्छे या बुरे को उसे स्वीकार कर लेना चाहिए। वह समझने लगता है कि यद्यपि व्यापक विश्व अच्छी वस्तुओं से भरा पडा है तथापि आवश्यक परिश्रम के बिना अन्न का एक कण भी उसके पल्ले नहीं पड सकता। अपनी शक्ति का उपयोग कैसे किया जाय यह हमारे सिवा अन्य कोई नहीं जान सकता। और यह सब जानने के लिए प्रयत्नो की आवश्यकता होती है।

इमर्सन की इसी बात को स्वर्गीय कवि डगलस मैलौस ने और ढग से कहा है-

यदि आप पर्वत की चोटी पर देवदार वृक्ष नहीं बन सकते तो घाटी के लघु वृक्ष बनिए, झरने के निकट एक सुन्दर छोटा वृक्ष बनिए, और यदि वृक्ष भी न बन सकें तो झाडी बनिये, यदि झाडी भी न बन सके तो वह घास बनिए जो मार्ग को सुखद बना सके। यदि आप कस्तूरी मृग नहीं बन सकें तो एक मछली ही बनिए, झील की सुन्दरतम मछली। हम सभी कप्तान नहीं बन सकते, हमें नाविक बनना

होगा, हम सबके लिए कुछ न कुछ कार्य है ही–छोटा या बड़ा हो हमारा काम हमारे पास ही है। यदि आप राजमार्ग नहीं बन सकें तो पगडंडी ही बनिए। यदि आप सूरज न बन सकें तो तारा ही बनिए, क्यों कि केवल आकार ही से मनुष्य की सफलता अथवा असफलता का निर्णय नहीं होता। आप अपनी स्वाभाविकतानुसार श्रेष्ठ बनिए।

मन में शान्ति और निश्चिन्तता का विकास करने के लिए, यह पाँचवाँ नियम याद रखिए—

दूसरों की नकल न कीजिए, अपने को पहचानिए और जो आप हैं वही बने रहिए।

१७ : जीवन के खटास को मिठास में बदल दो

जिन दिनों मैं यह किताब लिख रहा था शिकागो विश्वविद्यालय के उपकुलपति मैनार्ड हचिन्स से मेरी भेंट हुई थी। मैंने उनसे पूछा कि आप चिन्ता-मुक्त कैसे रहते हैं ! उन्होंने उत्तर दिया कि, "मैं हमेशा सियर्स रोवेक कम्पनी के अध्यक्ष स्वर्गीय रोजर्ट वॉल्ड की सलाह के अनुसार आचरण करने का प्रयत्न करता हूँ। उनका कहना था कि "अपने जीवन के खटास को मिठास में बदल दो।"

एक महान उपदेशक यही करता है किन्तु मूर्ख इसके ठीक विपरीत आचरण करता है। यदि उसके हिस्से नीबू आता है तो वह उसे भी दुर्भाग्य कह कर छोड देता है, निराश हो जाता है और आत्मवेदना में घुलने लगता है। किन्तु एक बुद्धिमान आदमी उसी नींबू से शर्बत बनाकर अपने दुर्भाग्य से शिक्षा ग्रहण करता है तथा उसमें सुधार करने का प्रयास करता है।

जीवन भर मानव शक्तियों एव मानव प्रकृति का अध्ययन करने के बाद महान मनोवैज्ञानिक एल्फ्रेड एडलर ने घोषणा की कि हानि को लाभ में परिवर्तित कर देने की शक्ति मनुष्य की आश्चर्यजनक विशिष्टताओं में से एक है।

यहाँ मैं आपको एक अत्यन्त रोचक एवं प्रेरक कहानी सुनाऊँगा। यह कहानी मेरी एक परिचित महिला की है। उस महिला का नाम है — थेल्मा थोम्पसन और वह न्यूयार्क कि १०० वीं मौरनिंग साइट ड्राइव पर रहती है। उस महिला ने बताया कि "युद्ध के दिनों में मेरे पति की नियुक्ति न्यूमैक्सिको के मोजाव रेगिस्तान में सैनिक प्रशिक्षण केम्प में हुई थी। मुझे उस स्थान से बड़ी चिढ और घृणा थी। इसके कारण मैं बहुत दुःखी रहती थी। मेरे पति के युद्ध अभ्यास के लिए मोजाव रेगिस्तान में जाने पर मुझे एक छोटी सी कुटिया में अकेले रहना पड़ा। जबरदस्त गर्मी थी, तापमान लगभग १२५° डिग्री रहता था, वहाँ के मूल निवासियों तथा भारतीयों के सिवाय वहाँ कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं था जिससे बातचीत की जा सके। उनमें से कोई भी अंग्रेजी नहीं जानता था। लू बराबर चलती रहती और भोजन तथा श्वास के साथ शरीर में प्रवेश करती। भीतर बाहर रेत ही रेत हो गई थी। इस हालत से मैं तग आ गई थी।

"मैं इतनी परेशान और दुखी हो गई कि मैंने तग आकर अपने माता पिता को पत्र लिखा कि मैं सब कुछ छोडकर घर लौट आना चाहती हूँ। मैंने लिखा कि एक क्षण के लिए भी मैं यह सब बर्दास्त नहीं कर सकती। इससे तो जेल में रहना अच्छा है। पत्र के उत्तर में मेरे पिता ने दो पंक्तियाँ लिख भेजीं। इन दो पंक्तियों ने मेरे जीवन की दिशा बदल दी। ये मेरी स्मृति में आज भी गूँजती रहती हैं। उन्होंने लिखा था—दो कैदियों ने एक साथ जेल के बाहर देखा—पर एक ने तारे देखे जब कि दूसरे ने कीचड़।"

मैंने बार बार इन दो पंक्तियों को पढा। मुझे अपने पर लज्जा हो आई। मैंने अपनी तात्कालीन परिस्थितियों में से अच्छाइयों को खोजने तथा तारों को ही देखने का निश्चय कर लिया।

मैंने वहॉ के निवासियों से मित्रता की। उसकी बड़ी विचित्र प्रतिक्रिया हुई। मैं उनके बरतन बनाने और बुनाई के काम में रुचि लेने लगी। इसके फलस्वरुप वे मुझे अपनी कला के उत्कृष्ट एव प्रिय नमूने भेंट स्वरूप देने लगे। साधारणतया वे किसी भी अन्य पर्यटक को वे नमूने नहीं बेचते थे। मैं वहॉ के वृक्षों की मोहक आकृतियों और वहॉ के प्रायरी कुत्तो का अध्ययन करती। मैं रेगिस्तान के डूबते हुए सूरज को देखती, और उन सीपियों की खोज करती, जो वर्षों पूर्व वहॉ पर लहराते हुए सागर की निधि थीं।

यह विचित्र परिवर्तन मुझमें कैसे हुआ? वही मोजाव रेगिस्तान था! और वही वहॉ के निवासी! कुछ भी नहीं बदला था। पर मैं बदल गई थी। मेरा मन बदल गया था। मैंने अपने भयानक अनुभवों को जीवन के अत्यन्त रोचक और रोमॉच-कारी अनुभवों मे बदल लिया था। मैं अपने द्वारा खोजे गए इस नये ससार में उत्तेजित रहने लगी। मेरे मानस में हलचल इतनी तीव्र हो उठी कि उस आवेग में मैंने एक उपन्यास लिख डाला, जो बाद में 'ब्राइट रैम्पार्टस' के नाम से प्रकाशित हुआ। इस प्रकार मैंने स्वनिर्मित कारागृह के बाहर झॉक कर तारों को निहारा।

थैलमा थोम्पसन ने वही एक प्राचीन सत्य खोज निकाला जिसे ईसा के पॉच सौ वर्ष पूर्व एक यूनानी दार्शनिक ने बताया था। उसका कहना था कि, "उत्कृष्ट वस्तुऍ दुर्लभ होती हैं।"

इसी सत्य को हैरी इमर्सन फोस्डीक ने बीसवीं सदी में फिर दुहराया था। उसने कहा कि, "अधिकाशतया सुख सिद्धि सापेक्ष होता है। यह सिद्धि की भावना से उत्पन्न होता है और इसे प्राप्त करने के लिए नीबू के खटास को मीठे शर्बत में बदलना पडता है।"

एक बार मैं फ्लोरीडा के एक सुखी किसान से मिला, जिसने जीवन के खटास को मिठास मे बदल दिया था। पहले पहल तो वह अपने फार्म से बहुत ही निराश हुआ। जमीन इतनी खराब थी कि न तो वह उस पर फल उगा सकता था और न सूअर पाल सकता था। वहॉ झाडियों और सॉपों के सिवाय और कुछ नहीं था। तब उसे एक युक्ति सूझी। उसने इस अभिशाप को वरदान में बदलने का निश्चय किया। उन सॉपों से उसने अधिक से अधिक लाभ उठाने का निश्चय किया। आश्चर्य की बात तो यह थी कि उसने सॉपो के मास को डिब्बो मे भरना शुरू किया। कुछ वर्ष पूर्व जब मैं उसे मिलने गया तो वहॉ उसके फार्म पर आए हुए कई पर्यटकों को मैंने देखा। बढते बढते वहॉ उनकी सख्या बीस हजार प्रतिवर्ष हो गई थी। उसका व्यवसाय जोरों पर था। मैंने देखा कि सॉपों का विष वहॉ से

दवाइयाँ बनाने के लिए जहाँजों द्वारा प्रयोगशालाओं में भेजा जाता था। मैंने यह भी देखा कि साँपों की खाल स्त्रियों के जूते तथा हैंडबेग बनाने के लिए ऊंचे दामों बिकती थी। मैंने देखा कि साँप का मांस दुनिया के सभी भागों के ग्राहकों के लिए भेजा जाता था। मैंने वहाँ एक पोस्ट कार्ड खरीदा और वहाँ के स्थानीय डाक घर 'रेटल्स स्नेक फ्लोरीडा' द्वारा डाक मे भिजवा दिया। उस व्यक्ति के सम्मान मे इस डाक घर का नामकरण हुआ था। उस व्यक्ति ने विषैले नीबू को मीठे शर्बत में बदल दिया था।

मैंने कई बार अमेरीका के विभिन्न प्रांतों की यात्रा की है और मुझे कई ऐसे व्यक्तियों से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है जिनमें घाटे को लाभ मे बदलने की अपूर्व शक्ति है।

ट्रेवेल्स अगेन्स्ट दी गॉड्स' पुस्तक के लेखक स्वर्गीय विलियम बॉलीथोक का कथन है कि "जीवन मे लाभ को महत्व देना कोई विशेषता की बात नहीं। यह तो मूर्ख व्यक्ति भी आसानी से कर सकता है। वास्तव में महत्वपूर्ण बात तो यह है कि अपनी हानि से लाभ उठाया जाय, क्योंकि इसमे बुद्धि की आवश्यकता होती है और यहीं पर मूर्ख और बुद्धिमान मनुष्य में अन्तर मालूम हो जाता है।

मैं एक ऐसे व्यक्ति को जानता हूँ जिसने अपनी दोनो टांगें खो दी थीं फिर भी उसने अपनी उस हानि को लाभ में बदल लिया था। वह व्यक्ति है बेन फोर्टसन। मैं उसे जॉर्जिया अन्तर्गत ऐटलांटा मे एक होटल के एलिवेटर मे मिला था। जैसे ही मैंने एलिवेटर मे प्रवेश किया उसके कोने में एक पहियेवाली कुर्सी मे बैठे हुए टूटी टाँगोंवाले उस व्यक्ति को मैंने प्रसन्न मुद्रा मे देखा। जब एलीवेटर उसकी मंजिल पर रुका तो उसने बडे ही प्रसन्न भावसे मुझे एक तरफ हो जाने की प्रार्थना की ताकि उसको कुर्सी निकालने में आसानी रहे। असुविधा के लिए उसने मुझसे क्षमा भी माँगी। उस समय उसके चेहरे पर प्रसन्नता की उज्ज्वल रेखाएँ खिंची हुई थीं।

जब ऐलिवेटर छोड़ कर मैं अपने कमरे मे गया तो उस प्रसन्न चित्त विकलांग के बारे मे सोचता रहा। मैंने उसकी फिर से खोज की और उसे अपने जीवन की कहानी सुनाने के लिए कहा।

उसने मुस्कराते हुए कहा सन् १९२९ की बात है। मैं अपने बाग मे लगाई हुई बीन्स की फलियो के लिए खूँटे काटने के लिए जंगल में गया हुआ था। उन खूँटों को काटकर मैंने उन्हें अपनी फोर्ड गाडी में भरा और घर के लिए रवाना हुआ। यकायक एक खूँटा कार के नीचे फिसल पड़ा और जब कि मैं एक सॅकडे मोड पर था, वह गाड़ी के यन्त्र में उलझ गया। गाड़ी एक पेड़ पर चढ गई और मैं एक पेड़ के तने से जा टकराया। मेरी रीढ की हड्डी में बहुत चोट आई और मेरे पॉव को लकवा मार गया।

"उस समय मैं चौबीस वर्ष का था और तब से मैं एक पाँव भी नहीं चल पाया।"

मुझे उसकी कहानी सुनकर बहुत आश्चर्य हुआ। चौबीस वर्ष की आयु और यह सजा? मैंने उसे पूछा, "आखिर तुमने इतनी हिम्मत से अपने दुर्भाग्य का सामना कैसे किया?"

उसने उत्तर दिया – पहले पहल तो मैं निराश हो गया, बिलबिलाया, विद्रोह किया और अपने भाग्य पर क्रुद्ध हुआ किन्तु जैसे जैसे वर्ष बीतते गये मुझे विदित हुआ कि इस प्रकार के विद्रोह से केवल दुःख ही होता है। अतः मैंने महसूस किया कि जब दूसरे व्यक्ति मुझ पर कृपा रखते हैं और मेरे साथ शिष्टाचार बरतते हैं तो मुझे भी चाहिए कि उनके साथ वैसा ही व्यवहार करूँ और क्रुद्ध न होऊँ।

जब मैंने उसे फिर पूछा कि आज भी तुम उस दुर्घटना को भारी दुर्भाग्य समझते हो? तो उसने तपाक से उत्तर दिया – "नहीं, मुझे प्रसन्नता है कि वह दुर्घटना हुई क्योंकि अपने क्रोध और धक्के से सम्भलने के बाद मैं एक और ही दुनियाँ में रहने लगा। मैंने पढ़ना शुरू किया और अच्छे साहित्य के लिए अपनी रुचि का विकास किया। चौदह वर्षों में मैंने चौदह सौ पुस्तकें पढ डालीं। उन पुस्तकों ने मेरे लिए नवीन सृष्टि का उद्घाटन किया तथा आशा से अधिक मेरे जीवन को सुखी बना दिया। मैं मधुर संगीत में आनन्द लेने लगा और आज तो हालत यह है कि तान और लय मुझको रोमांचित कर देते हैं, जब कि पहले तान और लय को सुनकर मैं ऊब जाया करता था। सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन मुझमें यह हुआ कि मुझे सोचने के लिए समय मिलने लगा। जीवन में पहली बार मैं संसार तथा उसके वास्तविक मूल्यों को समझने लगा। आज मैं महसूस करता हूँ कि पहले जिन वस्तुओं के लिए मैं प्रयत्नशील रहता था वे निकम्मी थीं।

"अध्ययन के कारण मैं राजनीति में रुचि रखने लगा। जनता के प्रश्नों का अध्ययन करता और अपनी पहियोंवाली कुर्सी पर बैठे बैठे भाषण देता। मैं लोगों को समझने लगा और लोग मुझको।

वही बेन फॉर्ट्सन जो कि आज भी पहियों वाली कुर्सी में घूमता फिरता है जोर्जिया की प्रान्तीय सरकार का 'सेक्रेटरी ऑफ स्टेट्स्' है।"

गत पैंतीस वर्षों से मैं न्यूयार्क शहर में प्रौढ शिक्षा की कक्षाओं को चला रहा हूँ और मैंने मालूम किया है कि अनेक प्रौढ इस लिए दुःखी हैं कि वे कभी कॉलेज में नहीं पढ सके। उनके विचार से कॉलेज में नहीं पढ़ना जीवन में एक बहुत बड़ी रुकावट है। यद्यपि मैं जानता हूँ कि उनकी यह धारणा सर्वथा सत्य नहीं, क्योंकि मैं हजारों ऐसे सफल व्यक्तियों को जानता हूँ जो हाईस्कूल से आगे भी नहीं पढे। इसलिए उन विद्यार्थियों को मैं अपने परिचित एक ऐसे आदमी की कहानी सुनाता हूँ जिसने 'ग्रेड स्कूल' की शिक्षा भी पूरी नहीं की थी। दारुण निर्धनता में उसका पोषण हुआ था। उसके पिता की मृत्यु के समय उसके कफन के पैसे भी मित्रों

ने जुटाए थे। उसके पिता की मृत्यु के बाद उसकी माँ छतरियों के कारखाने में दिन में दस घंटे तक काम करती थी और घर आने पर भी कुछ काम अपने साथ ले आती। रात के ग्यारह बजे तक वह काम किया करती।

उक्त वातावरण में पोषित वह लड़का एक क्लब द्वारा संगठित युवक-नाट्य मंडली में भाग लेता। अभिनय करने में उसे इतना अधिक आनन्द आता था कि उसने सार्वजनिक वक्तृता का पेशा अख्तियार करने का निश्चय किया। उसके सहारे उसने राजनीति में प्रवेश किया और तीस वर्ष की अवस्था में न्यूयार्क राज्य की धारा सभा का सदस्य बन गया। किन्तु वह इतनी बड़ी जिम्मेदारी के लिए तैयार नहीं था। वस्तुतः उसने मुझे स्पष्टरूप से कह दिया था कि राज्यधारा सभा के कार्य के बारे में मैं कुछ नहीं जानता। वह लम्बे लम्बे कठिन बिलों को पढ़ता जिनके लिए उसे मत देना पड़ता था, पर उसके पल्ले कुछ नहीं पड़ता। वह चिंतित एवं किंकर्त्तव्यविमूढ़ रहता था। तब उसे जंगल सम्बन्धी मामलों पर विचार करने वाली एक परिषद का सदस्य बना दिया गया। जंगल में उसने पहले कभी पैर भी नहीं रखा था। जब उसे राज्य बैंक आयोग का सदस्य बनाया गया तब भी वह चिंतित और विस्मित रहने लगा क्यों कि तब तक उसने कभी बैंक में अपना खाता भी नहीं खोला था। उसने मुझे बताया कि वह इतना निरुत्साही हो गया था कि यदि उसे अपनी माँ के सामने अपनी असफलता स्वीकार करने में लज्जा नहीं आती, तो वह कभी का धारा सभा से त्याग पत्र दे देता। अपने इस नैराश्य में उसने दिन में सोलह घंटे तक अध्ययन करने का निश्चय किया और अपने अज्ञान के नीबू को ज्ञान के शर्बत में बदल डाला। अपने उन प्रयत्नों द्वारा वह एक राजनितिज्ञ और राष्ट्रीय नेता बन गया। उसने अपने आप को इतना महत्वपूर्ण बना लिया कि 'न्यूयार्क टाइम्स' ने उसे 'न्यूयॉर्क का लोकप्रिय नागरिक' के नाम से प्रसिद्ध कर दिया।

अब मैं ऑलस्मीथ की बात बता रहा हूँ—अपने राजनैतिक स्वाध्याय के दस वर्ष पश्चात् न्यूयार्क राज्य के राजनैतिक मामलों की जानकारी रखने वाला वह एक धुरन्धर विद्वान बन गया था। लगातार चार बार वह न्यूयार्क के गवर्नर के पद के लिए चुना गया। यह सम्मान अबतक अन्य किसी भी व्यक्ति को नहीं मिला है। १९२८ में अमेरीका के प्रेसीडेन्ट पद के लिए डेमोक्रेटिक पार्टी की ओर से वह नामजद किया गया और छः महान विश्वविद्यालयों ने जिनमें कोलंबिया और हावर्ड भी सम्मिलित हैं उस व्यक्ति को जो 'ग्रेड स्कूल' से आगे नहीं पढ़ा था ऑनरेरी डिग्रियाँ प्रदान कीं।

ऑलस्मिथ ने मुझे बताया कि अपने घाटे को लाभ में बदलने के लिए यदि उसने दिन में सोलह घंटे तक काम नहीं किया होता तो इतनी सफलता उसे कभी प्राप्त नहीं होती।

नित्शे के फार्मूले के अनुसार महान व्यक्तियों को न केवल कठिनाइयाँ बर्दाश्त ही करनी पड़ती हैं बल्कि उनसे प्यार भी करना पड़ता है।

ज्यों-ज्यों मैं सफल व्यक्तियों के आचरण का अध्ययन करता जाता हूँ त्यों त्यों मेरा यह विश्वास दृढ होता जाता है कि इनमें से अधिकांश वे व्यक्ति थे जिन्हें बाधाओं और रुकावटों में अपना जीवन आरम्भ करना पड़ा था। और उन बाधाओं और रुकावटों ने उनको महान प्रयत्नों और महान परिणामों की ओर प्रोत्साहित किया। जैसा कि विलियम जेम्सने कहा है, "हमारी दुर्बलताएँ अप्रत्याशित रूप से हमारी सहायक बन जाती हैं।"

मिल्टन इतना सुन्दर काव्य इसलिए लिख सका कि वह अन्धा था। और बिथोविन उत्कृष्ट संगीत रचना इसलिए कर सका कि वह बहरा था। हेलन केलर का चरित्र प्रखर इसलिए बन सका कि वह अन्धी और बहरी है।

यदि चैकोवस के जीवन में नैराश्य नहीं होता, यदि दुःखद दाम्पत्य जीवन ने उसे आत्महत्या के निकट न खदेड़ा होता, यदि उसका अपना जीवन इतना दयनीय नहीं होता, तो शायद वह अपनी अमरकृति 'सिम्फोनि पेथेटीक' की रचना नहीं कर पाता। यदि डोस्टोवस्की और टॉलस्टाय ने दुःख पूर्ण जीवन नहीं बिताया होता तो सम्भवतः वे अपने अमर उपन्यासों की रचना नहीं कर पाते।

पृथ्वी पर प्राणियों के जीवन सम्बन्धी धारणाओं को बदलने वाले एक प्राणी शास्त्री का कथन है कि, "यदि मैं इतना दुर्बल और असमर्थ न होता तो जितना काम मैंने किया है उतना कभी भी नहीं कर पाता। यह उक्ति चार्ल्स डार्विन की है। दुर्बलता ने उसकी अप्रत्याशित सहायता की थी।

जिस दिन इग्लैण्ड में डार्विन का जन्म हुआ उसी दिन केन्टोकी के एक जगल में लकड़ी की एक कुटिया मे एक दूसरे शिशु का जन्म हुआ था। वह शिशु लिंकन था। दुर्बलताओं ने उसकी भी अप्रत्याशित सहायता की। यदि एब्राहम लिंकन अभिजात कुल में उत्पन्न होता, हावर्ड विश्व विद्यालय से कानून पास करता, और सुखी दाम्पत्य जीवन बिताता तो उसके हृदय की गहराइयों मे से गिटिस्बर्ग पर कह गये वे अमर वाक्य नहीं निकलते, और न वह द्वितीय उद्घाटन समारोह के अवसर पर उन काव्यमय शब्दों की सृष्टि कर पाता जो अब तक के मानव शासकों के हृदय से निकले हुए उद्गारों में सबसे मधुर, सबसे महान और सबसे कोमल हैं। उसने कहा था कि, "उदारता सबके लिए रखो पर घृणा किसी के लिए नहीं।"

हैरी इमर्सन फॉस्डिक ने अपनी पुस्तक 'द पावर टु सी इट थ्रू' में एक स्केन्डिनेवियन कहावत के बारे में लिखा है। जिसमें कहा गया है कि 'उत्तरी हवाओं ने ही वीरो की सृष्टि की है।' क्या आपने कभी भी देखा है कि कठिनाईयों के अभाव में किसीने सुखी एव उत्तम जीवन का निर्माण किया है? जो व्यक्ति अपने आप को कोसते रहे हैं वे तो चाहे मखमल की गद्दियों पर ही क्यों न बैठें, वही करते रहेंगे। किन्तु इतिहास मे सदैव यह देखा गया है कि मनुष्य के सुख और

चरित्र का निर्माण अच्छी बुरी सभी परिस्थितियों में होता है। पर यह तभी सम्भव है जब वह अपनी व्यक्तिगत कठिनाइयों को झेलने का उत्तरदायित्व सभाल लेता है।

मान लिजिए आप अपने जीवन के खटास को मिठास में बदलने में सर्वथा निरुत्साही एव निराश हो जाएँ। ऐसी स्थिति म आपको इन दो कारणों को लेकर अपने प्रयत्नों को जारी रखना चाहिए। एक तो यह कि सम्भव है आप सफल हो जाएँ। दूसरा यह कि, यदि हम सफल न भी हों तो भी घाटे को लाभ में बदलने का यह प्रयत्न हमें पीछे देखने के बजाय आगे देखना सिखाएगा। यह प्रयत्न हमारे निषेधात्मक विचारों को विधेयकात्मक बना देगा, यह हममे रचनात्मक शक्ति की उद्भावना करेगा तथा हमे इतना व्यस्त रखेगा कि, विगत पर दु खी होने के लिए हमें समय ही नहीं मिलेगा।

एक बार ससार प्रसिद्ध वॉयलिन वादक ऑलिबुल पेरिस में अपना कार्यक्रम दे रहा था। यकायक वॉयलिन का एक तार टूट गया, किन्तु ऑलिबुल ने केवल तीन तारों पर ही अपनी धुन को सफलता से पूरा कर दिया।

हैरी इमर्सन फोस्डिक के कथनानुसार जीवन की विशेषता इसी में है कि यदि एक तार टूट भी जाय तो तीन तारो पर ही अपना काम चला लिया जाय। इसी में जीवन की सफलता है।

यदि मेरा वस चलता तो मैं विलियम बालियो के इन अमर शब्दों को कॉसे मे खुदवा कर देश के प्रत्येक स्कूल मे रखवा देता।

अपने लाभ को लेकर डींग हॉकना जीवन में महत्त्व नहीं रखता। यह तो एक मूर्ख भी कर सकता है। वस्तुत. घाटे को लाभ मे बदलने मे ही मनुष्य की अपनी विशेषता है। ऐसा करने के लिए बुद्धि चाहिए और यहीं पर मूर्ख और बुद्धिमान में अन्तर जाना जा सकता है।

इसलिए मन मे सुख शान्ति रखने के लिए इस नियम का पालन कीजिए—
अपने जीवन के खटास को मिठास में बदलने का प्रयास कीजिए।

१८ : चौदह दिनों में मन की उदासी दूर करने का उपाय

जब मैंने यह पुस्तक लिखने की शुरुआत की तो मैंने 'चिंता पर विजय कैसे प्राप्त की' इस विषय पर अत्यन्त प्रेरक उपयोगी एव सच्ची कहानी लिखनेवाले के लिए दो सौ डॉलर का एक पारितोषिक घोषित किया ।

इस स्पर्धा के लिए मैंने तीन निर्णायक नियुक्त किये। एक थे इस्टर्न एयर लाइन्स के अध्यक्ष ए. डी. रिकेन वेकर और दूसरे थे लिंकन मेमोरिअल विश्व-विद्यालय के अध्यक्ष डॉक्टर स्टीवार्ट डब्ल्यु. मैक्लेलैंग और तीसरे थे रेडिओ न्यूज समीक्षक एच. वी कॉल्टनबोर्न। जो कहानियाँ हमे प्राप्त हुई उनमें से दो कहानियाँ इतनी सुन्दर थी कि निर्णायकों के लिए किसी एक को चुनना असम्भव हो गया। परिणाम यह हुआ कि पारितोषिक को दोनों लेखकों मे बॉट देना पडा। प्रथम आने वाली उन दो कहानियों में से एक कहानी मिसौरी के स्प्रिंग फिल्ड अन्तर्गत १०६७ वीं कॉमर्सियल स्ट्रीट के सी. आर. बर्टन ने लिखी थी। ये मिसौरी के विर्जर मोटर सेल्स कम्पनी में काम करते हैं।

बर्टन ने अपनी कहानी में लिखा कि "नौ वर्ष की अवस्था मे मैं अपनी माँ से बिछुड़ गया था और जब मैं बारह वर्ष का था तो पिता का साया सिर से उठ गया था। वे दुर्घटना के शिकार हुए थे। मेरी मॉ उन्नीस वर्ष पूर्व, एक दिन घर से निकल गई और तब से उसको मैंने कभी नहीं देखा। मैंने अपनी उन छोटी बहनों को भी नहीं देखा जिन्हें वह अपने साथ ले गई। अपने प्रस्थान के सात वर्ष बाद उसने एक पत्र अवश्य लिखा था। मॉ के चले जाने के तीन वर्ष बाद ही एक दुर्घटना में मेरे पिताजी की मृत्यु हो गई थी। बात यह हुई कि उन्होंने एक भागीदार के साथ मिसौरी के छोटे से कस्बे में एक केफे खरीदा था। जब मेरे पिता व्यापार के सिल-सिले में बाहर गये हुए थे उनके भागीदार ने केफे को बेच दिया और वह कहीं भाग गया। मेरे पिता के एक मित्र ने उन्हें शीघ्र घर लौटने के लिए तार भेजा। लौटने की जल्दी में केन्सास के सालीनास स्थान पर कार दुर्घटना में उनकी मृत्यु हो गई। उनकी दो गरीब बूढी और बीमार बहनें हममें से तीन बच्चों को अपने घर ले गई। मुझे व मेरे छोटे भाई को वे नहीं ले जाना चाहती थीं। इसलिए हम कस्बे के लोगों की दयामाया पर छोड़ दिये गये। हमें भय था कि लोग हमें अनाथ कहेंगे और हमारे साथ अनाथों जैसा व्यवहार करेंगे। हमारी आशकाएँ जल्दी ही खरी उतरने लगी। कुछ समय तक तो मैं कस्बे के एक निर्धन कुटुम्ब के साथ रहा, किन्तु उस कुटुम्ब की हालत भी अच्छी नहीं थी। परिवार के मुखिया की नौकरी छूट जाने के कारण वे मेरा भरण-पोषण करने की स्थिति में नहीं थे। तब मुझे लॉफ्टीन दम्पत्ति कस्बे से ग्यारह मील दूर उनके खेत पर अपने साथ रखने के लिए ले गये। श्री लॉफ्टिन सत्तर वर्ष के वृद्ध थे और दाद के रोग से पीड़ित थे। उन्होंने मुझे कहा कि, "तुम मेरे साथ तभी तक रह सकते हो जब तक तुम झूट न बोलो, चोरी न करो, और आज्ञा का पालन बराबर करते रहो।" ये तीन आज्ञाएँ

मेरे लिए बाईबल बन गई। मैंने उनका पालन भी दृढता से किया। मैं स्कूल जाने लगा पर एक सप्ताह के अन्दर ही मुझे एक दिन बच्चे की तरह रोते – चिल्लाते घर लौटना पडा। मैं दूसरे बच्चों की हँसी – मजाक का लक्ष्य बन गया था। वे मेरी बड़ी नाक का मजाक उडाते और मुझे गूंगा और अनाथ कह कर चिढाते। उनके उस व्यवहार से मुझे बहुत क्लेश हुआ। मैं उनसे लडकर निबट लेना चाहता था। किन्तु श्री लॉफ्टिन ने मुझे उपदेश दिया कि लड़ने वाले से, लड़ाई से किनारा करनेवाला महान है। इस उपदेश के अनुसार मैं किसी से भी नहीं लडता था। किन्तु एक दिन एक लड़के ने स्कूल के अहाते में से मुर्गों की बीट उठाकर मेरे मुँह पर दे मारी। मैंने उसकी खूब पिटाई की। इससे कुछ अन्य लडके मेरे मित्र बन गये। उन्होंने मेरा समर्थन करते हुए कहा – अच्छा किया वह इसी काबिल था।

"एक दिन श्रीमती लॉफ्टीन मेरे लिए एक नई टोपी लाई। उस टोपी को पा कर मैं फूला नहीं समाया। एक दिन एक बड़ी लड़की ने मेरे सिर से टोपी उतार ली और उस में पानी भरकर उसे बिगाड़ दिया। उसने कहा कि तुम्हारी खोपडी पानी से तर रखने के लिए और उस भूसे से भरी खोपडी को फडकने से बचाने के लिए मैंने इस टोपी को गीला कर दिया है। लड़की के इस व्यवहार से मुझे बडा दुख हुआ।

"मैं स्कूल में नहीं रोया पर घर आकर चीखने लगा। एक दिन श्रीमती लोफ्टीन ने ऐसी सलाह दी कि मेरी सारी कठिनाइयाँ और चिन्ताएँ लुप्त हो गई और मेरे दुश्मन मेरे मित्र बन गए। श्रीमती लॉफ्टीन ने कहा कि "यदि तुम अपने साथियों के साथ सौहार्द भाव रखने लगो, तथा उनके साथ यथा–सम्भव सहयोग करने लगो तो वे तुम्हें कभी अनाथ कह कर नहीं चिढायेंगे" मैंने उनकी सलाह मान ली और कठिन परिश्रम करके कक्षा में सर्व प्रथम रहने लगा। अपने साथियों की सहायता करने में मैं अपने सामर्थ्य से भी अधिक परिश्रम करने लगा। यह देख कर उन्होंने मुझसे स्पर्धा करना छोड दिया।

"मैं उन लड़कों की सहायता करने लगा। मैं उनके लिये भावार्थ एव निबन्ध लिखता और पूरी की पूरी वादविवाद सामग्री तैयार कर देता। उन लड़कों में से एक को, दूसरे लोगों को यह बताने में झेंप आती थी कि वह मुझसे मदद लेता है। अत वह अपनी माँ से शिकार जाने का बहाना कर घर से निकल जाता और श्रीमती लॉफ्टील के फार्म पर आ जाता। जब तक मैं उसे पाठ पढाता वह अपने कुत्तों को एक मकान में बाँधे रखता। एक दूसरे लड़के के लिए मैं पुस्तक समीक्षा लिखता, तो एक लडकी को गणित सिखाने में कई सन्ध्याएँ बिता देता।

"इधर क्या हुआ कि हमारे पड़ोस में मौत की काली घटा घिर आई और दो वृद्ध किसान इस दुनिया से चल बसे। एक औरत को उसके पति ने त्याग दिया। चार परिवारों में मैं केवल एक ही पुरुष रह गया। दो वर्षों तक मैंने उन विधवाओं की सहायता की। स्कूल आते जाते मैं उनके फार्म पर ठहर जाता। उनके लिए लकड़ियाँ

काटता, उनकी गायें दुह देता और चौपायों को दाना पानी देता। मुझे अब शाप के बजाय आशीर्वाद मिलने लगे और सभी लोग मुझे अपना मित्र समझने लगे।

" जब मैं एक बार नेवी से घर लौटा तो उन्होंने मेरे प्रति अत्यन्त प्रगाढ स्नेह प्रकट किया। घर पहुँचने के पहले ही दिन करीब दो सौ किसान मुझसे मिलने के लिए आए। उनमें से कुछ तो लगभग अस्सी मील चल कर आये थे। मेरे साथ उनका सम्बन्ध सर्वथा निष्कपट एवं विशुद्ध था।

" अब मेरी चिन्ताएँ कम हैं क्यों कि मैं दूसरों की सहायता करने में संलग्न रहता हूँ और सुख मानता हूँ। तब से तीस वर्ष बीत गये हैं पर किसी ने भी मुझे कभी अनाथ नहीं कहा है।

सी. आर. बर्टन धन्य हैं! वह मित्र बनाना, अपनी चिन्ताओं पर विजय पाना एव जीवन में आनन्द उठाना जानता है।

वॉशिंगटन अन्तर्गत सीटल के डॉक्टर फ्रैंक लूप ने भी वही किया जो सी. आर. बर्टन आदि लोगों ने किया था। तेईस वर्ष तक वे बीमार रहे। उन्हें आर्थोटीस हो गया था। फिर भी सिटलस्टार पत्रिका के स्टूवर्ट वाइट हाऊस ने मुझे लिखा कि, " मैंने कई बार डॉक्टर लूप से मुलाकात की है और मुझे लगा कि मैंने उनके समान निस्वार्थ तथा जीवन से लाभ उठाने वाला व्यक्ति और नहीं देखा।

बिस्तर में पड़े पड़े उन्होंने जीवन से इतना अधिक लाभ कैसे उठाया! आलोचना और शिकायत करके? नहीं...आत्म ग्लानि में तड़प कर? नहीं। क्या उन्होंने यह चाहा कि वे केन्द्र बनें और अन्य सभी उनके चारों ओर चक्कर काटते रहें? नहीं.. गलत। उन्होंने प्रिंस ऑफ वेल्स के मोटो – मैं सेवा करूँगा – को अपने जीवन में अपना लिया था। उन्होंने दूसरे रोगियों के नाम और पते इकट्ठे किये और उनको खुश करने वाले उत्साहवर्धक पत्र लिख कर उन का मन बहलाया। वस्तुतः उन्होंने बीमारों का एक पत्र–व्यवहार – संघ कायम किया और उन्हें पत्र–व्यवहार करने के लिए उत्साहित किया। अंत में उन्होंने 'शट इन सोसाइटी' नामक एक राष्ट्रीय संस्था बनाई।

बिस्तर में पड़े पडे वर्ष भर में वे औसतन चौदह सौ पत्र लिखते थे। क्लब की सहायता से बीमारों के लिए रेडीओ, पुस्तकों आदि की व्यवस्था कर, उनके जीवन को आनन्दमय बनाते थे।

डॉक्टर लूप तथा अन्य व्यक्तियों में मुख्य अन्तर यह था कि डॉक्टर लूप में सोद्देश्यता एव मिशन की आन्तरिक प्रखरता थी। उन्हें इस बात की प्रसन्नता थी कि वे अपने से भी अधिक श्रेष्ठ एव महत्वपूर्ण ध्येय के लिए प्रयत्न शील हैं। शॉ के शब्दों में वे ऐसा आदमी नहीं बनना चाहते थे जो आत्म केन्द्रित हो, बीमारियों का घर हो और जो शिकायतें करता हो कि दुनियाँ ने उसके सुख के लिए कुछ नहीं किया।"

"एक महान मनोवैज्ञानिक एल्फ्रेड एडलर के इस अपूर्व कथन को देखिए। वे मेलनकोलिया (उदासी) के रोग से पीड़ित रोगियों से कहा करते थे कि, "सदैव दूसरों को प्रसन्न रखने की बात सोचा करो, इस नुस्खे से तुम चौदह दिन में स्वस्थ हो जाओगे।"

इस कथन की सत्यता पर यकायक विश्वास नहीं हो पाता। अतः मैं चाहता हूँ कि डॉक्टर एडलर की रोचक पुस्तक 'वॉट लाइफ शुड मीन टु यू' के कुछ पृष्ठों को उद्धृत करूं (आपको भी यह पुस्तक जरूर पढ़नी चाहिए)। एडलर ने अपनी इस पुस्तक 'वॉट लाइफ शुड मीन टु यू' में लिखा है कि मेलनकोलिया लम्बे अर्से से चले आने वाले दूसरों के प्रति हमारे क्रोध और रोष के समान है। यद्यपि यह भाव हमारे प्रति, दूसरों की सहानुभूति, सहयोग एवं अपेक्षा के अभाव के कारण उत्पन्न होता है, तथापि रोगी अपने ही दोषों के बारे में सोच कर खिन्न रहा करता है। मेलनकोलिया का रोगी सामान्यतः इस प्रकार की बातें याद करता रहता है–'मैं गद्दे पर लेटना चाहता था किन्तु मेरा भाई वहाँ पर लेटा हुआ था। मैं इतना चिल्लाया कि उसे हटना पड़ा।

मेलनकोलिया के रोगी अक्सर आत्महत्या कर के दूसरों के अन्याय का बदला लेने की भावना रखते हैं। इसलिए डॉक्टर का पहला कर्तव्य यह हो जाता है कि वह रोगी को आत्महत्या करने के लिए बहाना ढूँढने का मौका न दे। मैं खुद भी उपचार के पहले नियमित रूप से रोगी के तनाव को दूर करने का प्रयत्न करता हूँ। उसे कहता हूँ कि जो काम तुम्हें नापसन्द हो उसे न करो। यद्यपि यह एक बहुत ही सामान्य बात है, किन्तु मेरा विश्वास है कि इसका असर बीमारी के मूल तक पहुँचता है। यदि रोगी वही करे जो वह चाहता है तो फिर दोष किसको दे? और उसे बदला लेने का बहाना ही कैसे मिले? मैं रोगी को कहता हूँ कि यदि तुम्हें थियेटर जाना हो या सैर-सपाटे पर जाना हो तो जरूर जाओ। और यदि रास्ते में ही तुम्हारा विचार फिर जाय, तो वहीं रुक जाओ। इस बात से रोगी में स्वस्थ प्रवृत्ति उत्पन्न होती है तथा उसके अहं को बड़ा संतोष मिलता है। वह एक तरह से सर्वशक्तिमान-सा बन जाता है और जो भी वह चाहता है, कर लेता है। पर यह बात आसानी से उसके जीवन के ढाँचे में नहीं बैठती, क्यों कि वह दूसरों पर शासन करना चाहता है, उन पर रोब जमाना चाहता है। किन्तु यदि दूसरे लोग उसके साथ सहमत हो जाएँ तो उन पर दबाव डालने अथवा हुकूमत करने का उसे कोई रास्ता ही न मिले। यह नियम रोगी को बड़ी शान्ति देता है। इस पद्धति का पालन करने से मेरे रोगियों में से किसी ने भी आत्महत्या नहीं की। सामान्यतः जब रोगी को उसकी इच्छानुसार कोई काम करने को कहा जाता है तो वह उत्तर देता है-क्या करूँ? कुछ भी अच्छा नहीं लगता। रोगी के इस उत्तर का प्रत्युत्तर भी मैंने तैयार कर रखा है, क्यो कि ऐसी दलील मैंने कई बार सुनी है। मैं उसे तत्काल ही कह देता हूँ कि, यदि ऐसी बात है तो तुम वह काम मत करो जिसे तुम पसन्द नहीं करते। कभी कभी तो रोगी कह उठता है कि, 'मैं तो सारा दिन

बिस्तर में पडे रहना पसन्द करता हूँ। ' पर मैं जानता हूँ कि यदि उसे वैसा करने भी दूँ तो वह नहीं करेगा। हाँ, यदि उसे रोक दूँ तो वह निश्चय ही भडक उठेगा। इसलिए मैं हमेशा रोगी की बात मान लेता हूँ।

यह तो हुआ पहला नियम! दूसरा नियम जो उसके जीवन के ढग पर प्रत्यक्ष प्रभाव डालता है वह यह है—मैं रोगियों से कहता हूँ कि मेरे इस नुस्खे का पालन करके तुम चौदह दिन में स्वस्थ हो सकते हो; 'सदा यह सोचो कि किसी को खुश कैसे किया जाय?' पर वे तो उल्टे विचारो में ही व्यस्त रहने हैं कि किसी व्यक्ति को दु'खी कैसे किया जाय? उन रोगियो के उत्तर भी बडे मजेदार होते हैं। कुछ तो कहते हैं कि 'यह तो मेरे लिए बाएँ हाथ का खेल है। मैंने जिन्दगी भर यही किया है।' किन्तु बात इससे ठीक उल्टी होती है। मैं उनको फिर से इस नियम पर विचार करने के लिए कहता हूँ, पर वे नहीं मानते। तब मैं उन्हें कहता हूँ कि, 'अच्छा, जिस समय तुम बिस्तर में करवटें बदलते रहते हो, कम से कम उस समय तो यह सोचो कि किसी को खुश कैसे किया जाय? और तुम स्वय महसूस करोगे कि स्वास्थ्य सुधार के मार्ग में यह कितना महत्त्वपूर्ण कदम है।' जब मैं दूसरे दिन उनसे मिलता हूँ तो उन्हें पूछता हूँ कि 'क्या तुमने मेरे कहने के मुताबिक किया?' तो उत्तर में वे कहते हैं कि, पिछली रात तो मैं बिस्तर पर लेटते ही सो गया।' हमें एक बात का ध्यान रखना चाहिए कि यह सब काम किसी प्रकार के अह को व्यक्त किये बिना सरल एव मित्रतापूर्ण ढग से किया जाना चाहिए।

कोई रोगी कहता है, 'मैं इतना दुःखी हूँ कि यह सब कभी नहीं कर सकता!' तब मैं उसे कहता हूँ कि चिंता करना भले ही मत छोडो किन्तु यदा-कदा दूसरों के बारे में भी तो सोचो? मैं सदा यह चाहता हूँ कि रोगी अपने साथियों के प्रति सौहार्द भाव बढाए। कुछ रोगी यह भी कहते हैं कि, मैं दूसरों को खुश क्यो करूँ जब कि वे मुझे खुश नहीं करते? तब मैं उन्हें कहता हूँ, तुम अपने स्वास्थ्य के लिए यह करो, दूसरों की बात जाने दो, वे अपनी करनी आप भोगेंगे। अब तक, शायद ही मुझे ऐसा रोगी मिला हो, जिसने कहा हो कि मैंने तुम्हारे सुझाव पर विचार किया है। मैं रोगी की सामाजिक रुचि बढाने की कोशिश करता हूँ क्योकि मैं जानता हूँ कि उसके विषाद का वास्तविक कारण दूसरों के सहयोग का अभाव है और मैं चाहता हूँ कि वह भी इस कारण को जान ले। जैसे जैसे रोगी अपने अन्य साथियो के साथ बराबरी और सहयोग के स्तर पर सम्बन्ध जोडने लग जाता है वैसे वैसे वह स्वस्थ होता जाता है। मनुष्य का एक महत्त्वपूर्ण नैतिक कर्तव्य यह है कि वह अपने पडोसी से स्नेहभाव रखे। जो व्यक्ति अपने अन्य साथियों मे रुचि नहीं रखता उसके जीवन मे सबसे अधिक कठिनाइयाँ आती हैं तथा वह दूसरो को सबसे अधिक कष्ट पहुँचाता है। सभी प्रकार की मानव असफलताएँ ऐसे ही व्यक्ति से उत्पन्न होती हैं। हम हर व्यक्ति से यही अपेक्षा रखते हैं कि वह दूसरों का सहयोगी एव मित्र हो तथा विवाह एवं प्यार में सच्चा साथी बने। ऐसा व्यक्ति ही समाज

की प्रसन्ना का पात्र हो सकता हूँ। डॉक्टर एडलर हमे सदा अच्छा कार्य करने की सलाह देते हैं। परतु वह अच्छा कार्य क्या है? हजरत मोहम्मद के शब्दों में "अच्छा काम वही है जो दूसरों के चेहरे को प्रसन्नता से खिला दे।"

क्या कारण है कि प्रतिदिन अच्छे कार्यों का करना मनुष्य मे अद्‌भुत प्रभाव उत्पन्न करता है? बात यह है कि दूसरों को प्रसन्न करने के प्रयास में मनुष्य को अपने स्वार्थ का विचार छोड़ देना पडता है और अपने स्वार्थ का विचार ही मनुष्य मे चिंता, भय और मेलेनकोलिया की उद्‌भावना करता है।

न्यूयॉर्क के ५२१।५ एवेन्यु के मून सक्रेटेरियट स्कूल की सचालिका श्रीमती विलियम टी मून को दूसरों को प्रसन्न रखकर मेलेनकोलिया मिटाने का उपाय खोजने मे दो सप्ताह भी नहीं लगे। उसने तो एल्फ्रेड एडलर को भी मात कर दिया। जो काम एडलर ने चौदह दिन मे किया वह उसने एक ही दिन में कर दिखाया।

उसने कुछ अनाथ बच्चों को प्रसन्न रखने का विचार किया और फलस्वरूप उसका विषाद एक दिन में दूर हो गया।

श्रीमती मून ने इस घटना का वर्णन करते हुए कहा कि "पॉच वर्ष पूर्व दिसम्बर के महीने में मैं शोक और आत्मग्लानि की भावनाओं से घिर गई थी। कई वर्षो के सुखद् दाम्पत्य जीवन के बाद मेरे पति का प्राणान्त हो गया था। उसके बाद ज्यों ज्यों बडे दिन की छुट्टियॉ नजदीक आती जातीं मेरा दिल बैठता जाता। मैंने कभी भी क्रिसस अकेले नहीं विताया था। इस लिये क्रिसस का आगमन मुझमे भय उत्पन्न कर रहा था। कुछ मित्रों ने मुझे उनके साथ क्रिसस विताने के लिए आमन्त्रित भी किया था, पर मुझ में इस त्यौहार के लिए कोई उत्साह नहीं था। मैं जानती थी कि क्रिस्मस समारोह में मै कबाब में हड्डी की तरह रहूँगी, इसलिए मैंने उनके स्नेहपूर्ण निमत्रण तक को अस्वीकार कर दिया। ज्यों ज्यों क्रिस्मस नजदीक आता गया मैं आत्म परिताप से भरती गई। यद्यपि यह सच है कि जो कुछ मेरे पास था उसके लिए मुझे ईश्वर का कृतज्ञ होना चाहिए था। क्योंकि हम सब के पास कुछ न कुछ चीजें ऐसी अवश्य रहती हैं जिनके लिए हमें ईश्वर का आभारी रहना चाहिए। पर ऐसा हुआ नहीं। क्रिस्मस के एक दिन पहले ही दिन के तीन बजे मैंने अपना ऑफिस छोड दिया और ५ ऐवेन्यु में अपने आत्मपरिताप और मेलेन कोलिया से पिण्ड छुडाने निरुद्देश्य घूमने लगी। सारा ऐवेन्यु प्रसन्न और प्रफुल्लित व्यक्तियों की भीड से भरा पड़ा था। वहॉ के दृश्य ने मुझमें गत वर्षों की सुखद स्मृतियों को जगा दिया। इसलिए घर जाकर वहॉ के सुनसान वातावरण में रहने का विचार मेरे लिए बोझिल हो उठा। मैं किंकर्तव्यविमूढ हो गई। क्या करूँ और क्या नहीं? मैं अपने ऑसुओं को रोक न सकी। एक घटे निरुद्देश्य घूमने के बाद मैं एक बस-टर्मिनस पर पहुँची। मुझे स्मरण हो आया कि किस प्रकार मैं अपने पति के साथ आनन्द के लिए प्रायः अनजान बस में सवार हो जाती और सैर करती। उस दिन भी जो पहली बस मिली उसी में मैं सवार हो गई। हडसन नदी के पार कुछ दूर जाने पर बस-कन्डक्टर ने

कहा कि "यह आखिरी स्टेशन है।" मैं बस से उतर पड़ी। मुझे उस कस्बे का नाम मालूम नहीं था किन्तु वह एक छोटा शान्त और नीरव स्थान था। अपने घर की ओर जाने वाली बस की प्रतीक्षा करती हुई मैं बस्ती की स्ट्रीट में चलने लगी, जैसे ही मैं एक चर्च के पास पहुँची मैंने प्रार्थना का मधुर स्वर सुना। चर्च खाली था। केवल एक व्यक्ति वहा वाद्य बजा रहा था। मैं उसकी दृष्टि से ओझल एक जगह पर बैठ गई। कलात्मक ढग से सजाए गये क्रिस्मस ट्री की सजावट तारिकाजड़ित परियो के समान लग रही थी। वह चन्द्रमा की शुभ्र ज्योत्स्ना में नृत्य-सी कर रही थी। सगीत के गहरे और लम्बे उतार चढाव के कारण तथा सवेरे से भूखी होने के कारण मेरी ऑखें झपने लगीं और मै सो गई।

"जगने पर मुझे पता नहीं चला कि मैं कहा हूँ? मै डर गई। मैंने अपने सामने क्रिस्मस ट्री देखने आए हुए दो बच्चों को खड़े पाया। एक छोटी लड़की मेरी ओर इशारा करके कह रही थी कि यदि सान्ताक्लास ही इसे यहाँ लाया हो तो कोई आश्चर्य नहीं! मेरे जगने पर बच्चे डर गये। मैंने उन्हें कहा, "डरो नहीं, मैं कुछ नहीं करूँगी" वे सामान्य कपड़े पहने हुए थे। मैंने इनके मॉ-बाप के बारे मे पूछा तो उत्तर में उन्होंने कहा, "हमारे मॉ-बाप नहीं हैं।" ये दो अनाथ बच्चे मुझ से भी खराब हालत में थे। उन्हें देखकर मुझे अपने शोक और आत्मपरिताप पर बड़ी लज्जा आई। मैंने उनको किस्मस ट्री दिखाया और उन्हें एक स्टोर में ले गई। वहाँ हमने कुछ नास्ता किया। मैंने उपहार स्वरूप उन्हें कुछ वस्तुएँ भी खरीद दी, मेरा सूनापन जादू की तरह विलिन हो गया। कई महीनों के बाद, इन बच्चों ने मेरे वास्तविक सुख और आत्मविस्मरण को लौटा दिया। बच्चों से बात करते समय मैं अपने आप को खुश किस्मत समझने लगी। मैंने ईश्वर को धन्यवाद दिया कि कम से कम बचपन में तो मैंने क्रिस्मस त्यौहार अपने माता-पिता के वात्सल्य और स्नेह की छाया में मनाया था। इन बच्चों ने मुझ से जितना पाया उस से भी अधिक मुझे लौटा दिया। इस अनुभव ने मुझे अपनी प्रसन्नता के लिए दूसरों को प्रसन्न करने की आवश्यकता का भान कराया। मुझे विदित हुआ कि सुख भी सक्रामक भाव है। दूसरों को सुख देकर ही हम उसे प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार दूसरों की सहायता कर के, उनको अपना स्नेह दे कर मैंने अपने शोक, आत्मपरिताप और चिता पर काबू पा लिया। मैंने अपने में सर्वथा नवीन परिवर्तन का अनुभव किया। अपने शेष जीवन के लिए मैं यथार्थ में बदल चुकी थी।"

मेरे पास ऐसे कई लोगों की कहानियाँ हैं जो अपने दुःख और कष्टों को भूल कर स्वस्थ हो गये हैं। मैं उन कहानियों की एक पुस्तक तैयार कर सकता हूँ। उदाहरणार्थ, मारग्रेट टेलर येट्स को ही लीजिए। यह अमेरीकी नौ सेना में अत्यन्त लोकप्रिय महिलाओं में से हैं।

श्रीमती येट्स उपन्यास लेखिका हैं। किन्तु जो रोचकता और चटपटापन उनके जीवन की वास्तविक घटनाओं में है उसका आधा भी उनकी जासूसी कहा-

नियों में नहीं। यह घटना उन दिनों की है जब जापानियों ने पर्ल हार्बर स्थित हमारी नौ सेना पर आक्रमण कर दिया था। श्रीमती येट्स लगभग एक वर्ष से भी अधिक समय तक बीमार रहीं। उन्हें दिल की बीमारी थी। चौबीस घंटों में से बाईस घंटे वे बिस्तर पर पड़ी रहतीं। अधिक से अधिक यदि कहीं वे चलतीं भी तो अपने उद्यान तक, जहाँ वे धूप सेवन करती थीं। किन्तु वहाँ तक जाने में भी उन्हें अपनी नौकरानी के सहारे चलना पड़ता था। उन्होंने मुझे बताया कि उन दिनों उनकी यह धारणा बन गई थी कि अपने शेष जीवन में वे बीमार ही बनी रहेंगी। उन्होंने कहा, "यदि जापानियों ने पर्ल हार्बर पर आक्रमण न किया होता और उस घटना ने मुझे समर्पण की भावना से बाहर न घसीटा होता तो मैं फिर से पूर्ववत् वास्तविक जीवन कभी नहीं जी पाती।"

श्रीमती येट्स ने कहा, "जब वह घटना घटी तो चारों ओर अराजकता फैल गई। एक बम तो मेरे घर के इतने निकट गिरा कि उसके धड़ाके ने मुझे बिस्तर से बाहर फेंक दिया। सेना की ट्रक गाड़ियाँ हिकमफिल्ड स्कोफिल्ट बरेक्स और केनोही-बे-एअर स्टेशन की ओर, स्थल और नौ-सेना के सैनिकों और अधिकारियों के परिवारों को एक पब्लिक स्कूल में ले जाने के लिए दौड़ पड़ीं। रेडक्रॉस ने उन लोगों को फोन किया, जिनके पास अतिरिक्त कमरे थे उन्हें अन्य लोगों को जगह देने का अनुरोध किया। रेडक्रॉस के कर्मचारी जानते थे कि मैं टेलिफोन अपने बिस्तर के पास ही रखती हूँ। इसलिए उन्होंने मुझे इधर उधर सूचना देने का काम सौंपा। मैं थल-सेना और नौ-सेना के परिवारों को कहाँ कहाँ ठहराया गया है इस बात की जानकारी रखने लगी। रेडक्रॉस ने थल-सेना और नौ-सेना के व्यक्तियो को सूचित कर दिया था कि वे अपने परिवारों की जानकारी प्राप्त करने के लिए टेलिफोन कर मुझसे सम्पर्क स्थापित करें।

मुझे शीघ्र ही पता चल गया कि मेरे पति कमान्डर रोबर्ट रेले येट्स सुरक्षित हैं। मैंने दूसरे सैनिकों की पत्नियों को, जिन्हें अपने पतियों के बारे में कोई सूचना नहीं मिली थी कि वे जिंदा हैं या मर गये, बहलाने का प्रयास किया। जिन स्त्रियों के पति मर गए थे उन्हें मैं धीरज बंधाने लगी। इन विधवाओं की सख्या बहुत अधिक थी। लगभग २९७० सैनिक अधिकारी हताहत हुए थे और ९६० के करीब लापता थे।

पहले तो मैं बिस्तर में पड़े-पड़े ही फोन पर बातचीत करती थी, पर बाद मे बिस्तर पर बैठकर उनके प्रश्नों के उत्तर देने लगी। अन्ततः मैं इतनी व्यस्त और उत्तेजित रहने लगी कि अपनी निर्बलता के विषय मे सब कुछ भूल गई और अपने बिस्तर से उठकर टेबल के पास बैठने लगी। अपने से भी बुरी स्थिति के लोगों की सहायता करने में मैं अपनी बीमारी के बारे में सब कुछ भूल गई थी और बाद में तो यह हाल रहा कि मैं रात्रि शयन के सिवा बिस्तर के पास तक नहीं फटकती थी। अब मैं महसूस करती हूँ कि यदि जापानियों ने आक्रमण न किया

होता तो मैं जीवन भर बीमार बनी रहती और बिस्तर में सड़ा करती। यद्यपि अपने बिस्तर में मुझे आराम मिलता था, निरन्तर मेरी टहल सेवा की जाती थी, किन्तु अब मैं महसूस करती हूँ कि उन दिनों मैं अनजाने ही पुनः स्वास्थ्य लाभ करने की इच्छा-शक्ति को शनैः शनैः खो रही थी।

पर्ल हार्बर का आक्रमण अमेरीका के इतिहास की अत्यन्त दुखद घटनाओं में से एक है। किन्तु जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, वह घटना मेरे लिए वरदान सिद्ध हुई। इस भीषण सकट ने मुझे जितनी शक्ति दी उसकी मैंने स्वप्न में भी आशा नहीं की थी। इस घटना के कारण मेरा ध्यान अपने से हटकर दूसरों पर जम गया। इस घटना ने मुझे जीने के लिए एक महान, व्यापक और महत्वपूर्ण आधार दिया। अब मेरे पास अपने बारे में सोचने तथा अपनी चिन्ता करने के लिए समय नहीं रहा। मार्ग्रेट येट्स के अनुसार, मनोविज्ञान-विशेषज्ञों के पास जानेवाले रोगियों में से लगभग एक तिहाई रोगी अपने को दूसरों की सहायता करने में व्यस्त रखकर अपने स्वास्थ्य को फिर से बना सकते हैं। यह बात मेरी ही नही कार्ल जुंग ने भी लगभग ऐसी ही बात कही है। वे इस विषय पर सबसे अधिक जानकारी रखते हैं। उनका कहना है—"मेरे पास आने वाले रोगियों में से एक तिहाई ऐसे होते हैं, जिन में स्नायु रोग के लक्षण नहीं होते। अपने शून्य एव निष्प्रयोजनीय जीवन के कारण ही वे बीमार रहते हैं। दूसरे शब्दों में, पहले तो वे जीवन की होड में अपने आप को आगे बढाने का कठोर परिश्रम करते हैं। किन्तु जीवन का काफिला ज्यो ज्यों आगे बढ जाता है त्यों त्यो वे पीछे छूटते जाते हैं और फिर अपने तुच्छ, प्रयोजन और विवेक से हीन जीवन को लेकर मनोविज्ञान-विशेषज्ञों के पास दौड पडते हैं। अवसर चूक जाने पर वे किंकर्तव्यविमूढ हो दूसरों पर दोष मढ कर बड़बडाते रहते हैं और चाहते हैं कि ससार उनके स्वार्थों की पूर्ति करे।

आप कह सकते हैं कि "ऐसी कहानियों का मुझ पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। मैं भी क्रिस्मस के अवसर पर अनाथ बच्चो में रुचि ले सकता था। और यदि मैं भी पर्लहार्बर पर होता तो बडी प्रसन्नता से वही करता जैसा कि मार्ग्रेट टेलर येट्स ने किया। किन्तु मेरी परिस्थितियाँ बिल्कुल भिन्न हैं। मेरा जीवनस्तर सामान्य है। मैं आठ घटे बराबर रूखा काम करता हूँ। मेरे जीवन में कोई नाटकीय घटना नहीं घटती। फिर मेरा दूसरों की सहायता करने का मन क्यों हो? मेरा उस में क्या स्वार्थ हो सकता है?"

आपका कहना ठीक है। मैं इसका भी उत्तर देने का प्रयास करूँगा—आपका अस्तित्व कितना ही रूखा और एक ढर्रे मे चलने वाला क्यों न हो? किन्तु आप अपने जीवन में कुछ न कुछ लोगों से तो मिलते ही रहते हैं। आप उन लोगों के लिए क्या करते हैं? क्या आप उन्हें देखते ही रहते हैं? या उनमें उन बातो को ढूँढने की भी कोशिश करते हैं, जिनके कारण वे जीवन में विश्वस्त एव दृढ बने हैं। उदाहरण के लिए आप डाकिये का जीवन लीजिए। वह आपके दरवाजे पर डाक बाँटता

है और अपने इस काम में साल भर में सैंकडों मील का सफर करता है, पर क्या कभी आपने यह जानने का भी कष्ट किया कि वह कहाँ रहता है? क्या कभी आपने उसकी स्त्री और बच्चों के बारे में भी पूछा? क्या कभी आपने उससे उसकी थकान और उकताहट के बारे में भी बात की है?

इसके अलावा मोदी के यहाँ से सामान लानेवाला लड़का, अखबार बेचनेवाला और जूते की पॉलिश करनेवाला आदि कई ऐसे लोग हैं, जिनका जीवन दुःखों से भरा पड़ा है। उन लोगों की भी अपनी कल्पनाएँ एवं आकांक्षाएँ हैं। वे भी अपनी भावनाओं को दूसरों को सुनाने के लिए उत्सुक रहते हैं। किन्तु क्या कभी आप उन्हें अपनी कहने का अवसर देते हैं? क्या कभी आप उनके जीवन के प्रति सच्ची रुचि और उत्सुकता प्रकट करते हैं? आपको फ्लोरैन्स नाइटिंगेल या कोई समाजसुधारक बनने की आवश्यकता नहीं। आपका भी अपना एक संसार है। इसीलिए आप अपने मिलने-जुलनेवाले लोगों में रुचि ले सकते हैं, इससे आपको अपूर्व सुख, संतोष और आत्मगौरव की अनुभूति होगी। अरस्तू ने इस प्रकार की भावना को सात्विक स्वार्थ की संज्ञा दी है।

पारसियों के धर्मगुरु जोरास्टू का कहना है कि दूसरों की भलाई करना हमारा परम कर्तव्य है। यह एक ऐसा आनन्द है जो हमारे सुख और स्वास्थ्य की वृद्धि करता है।" बेंजामिन फ्रैंकलिन ने इसी बात को सरल ढंग से और संक्षेप में यों कहा है कि, "दूसरों के प्रति भले बनकर ही आप अपने लिए अच्छे बन सकते हैं।"

न्यूयार्क के मनोविज्ञान सेवा-केन्द्र के निर्देशक हेनरी सी. लिंक का कहना है कि " मेरे विचार से आत्मबोध और सुख के लिए आवश्यक आत्मत्याग और अनुशासन के वैज्ञानिक प्रमाण की खोज से बढ़कर महत्वपूर्ण आधुनिक खोज दूसरी कोई नहीं।"

दूसरों के विषय में विचार करने के कारण आपको एक लाभ तो यह होगा कि आप अपनी चिंताओं से दूर रहेंगे और दूसरा यह कि जीवन में आनन्द का अनुभव करने के लिए आपको कई मित्र बनाने में सहायता मिलेगी। आप पूछेंगे कि यह कैसे? यही प्रश्न एक बार मैंने येल के प्रोफेसर विलियम लीन फेल्प्स से पूछा था—" आप दूसरों के जीवन में रुचि किस प्रकार लेते हैं? उत्तर में उन्होंने कहा—

"मैं कभी किसी होटल, नाई की दूकान या स्टोर में अपने किसी मिलने वाले से उसको भली लगने वाली बातें कहे बगैर नहीं रहता। मैं उन्हें मशीन का पुर्जा नहीं समझता। मैं मनुष्य समझ कर उससे बात करता हूँ। स्टोर में मेरी सेवा में खड़ी लड़की को उसकी सुन्दर आँखों और सुन्दर बालों के बारे में प्रशंसा के दो शब्द कह देता हूँ। अपने नाई से पूछ लेता हूँ कि क्या वह सारा दिन इस तरह बाल काटते थक नहीं जाता? मैं उसे यह भी पूछता हूँ कि उसने यह धन्धा कैसे अपनाया, कितने अर्से से वह इस धन्धे में है और अब तक कितने लोगों की हजामत उसने की है? मैं ग्राहकों की संख्या गिनने में उसकी मदद करता हूँ। जब हम लोगों में इस प्रकार रुचि लेते हैं तो उनके चेहरे प्रसन्नता से खिल उठते हैं। मैं अक्सर लाल

टोपी पहने अपनी मदद करने वाले व्यक्ति से भी हाथ मिलाता हूँ। इससे उसमें सारा दिन ताजगी एव उत्साह रहता है। एक दिन बड़ी गर्मी थी। मै न्यू हेवन रेलवे की डाइनिंग कार में भोजन करने गया। वहाँ बहुत भीड़ थी और वह भट्टी की तरह तप रही थी। परोसने का काम धीरे चल रहा था। जब एक व्यक्ति मेनु (भोजन सामग्री की सूची) लेकर मेरे पास आया तो मैंने उसे सहानुभूतिपूर्वक कहा—कि आज भोजन बनाने में रसोइयों को बड़ा कष्ट पहुँचा होगा। यह सुनकर वह व्यक्ति बडबड़ाने लगा। उसकी आवाज मे कटुता थी। मैंने सोचा वह गुस्से में है। उसने कहा, क्या करें! जो भी लोग यहाँ आते हैं वे भोजन के बारे में शिकायत करते हैं। परोसने में देर लगने के कारण क्रोधित होते हैं और गर्मी तथा भोजन की कीमतो को लेकर बड़बड़ाते रहते हैं। नौ दस वर्षों से मैं बराबर लोगों की आलोचना सुनता आ रहा हूँ। आप ही आज पहले व्यक्ति मिले हैं जिन्होंने धधकती रसोई मे काम करने वाले रसोइयों के प्रति सहानुभूति व्यक्त की है। काश! अन्य व्यक्ति भी आप जैसे ही होते?

"वह परिचारक इसलिए दग रह गया कि मैंने उन काले रसोइयों को, उस महान रेल व्यवस्था का पुर्जा मात्र न समझ कर मनुष्य समझा। प्रोफेसर फेल्प्सने कहा है कि "लोग यही चाहते है कि उनके साथ मनुष्यों की तरह व्यवहार किया जाय।" जब मैं किसी भी व्यक्ति को स्ट्रीट मे से गुजरते देखता हूँ तो उसके कुत्ते की सुन्दरता में दो शब्द कह देता हूँ और इसका परिणाम यह होता है कि जब मैं मुड कर देखता हूँ तो वह व्यक्ति अपने कुत्ते को थपथपाता और प्यार करता नजर आता है। मेरी प्रशंसा उसके मन मे श्लाघाका भाव जगा देती है।

एक बार इग्लेण्ड में मैं एक गड़रिये से मिला और उसके भेड़ों की रखवाली करनेवाले बुद्धिमान कुत्ते की मैंने हृदय से प्रशंसा की। मैंने उससे पूछा कि अपने इस कुत्ते को इतनी अच्छी ट्रेनिंग किस प्रकार दी? मेरे इन शब्दो का प्रभाव यह हुआ कि जैसे ही मैं वहाँ से आगे बढा, मैंने मुड़ कर देखा कि कुत्ता गडरिये के कधे पर अपने पजे रखे खड़ा है और मालिक उसे थपथपा रहा है। गड़रिये और उसके कुत्ते में जरा-सी रुचि लेकर मैंने उनको भी खुश किया और अपने को भी।

क्या आप ऐसे आदमी की कल्पना कर सकते हैं जो कुलियों से हाथ मिलाएँ, तपे हुए रसोई घर मे काम करने वाले रसोइयों के प्रति सहानुभूति प्रकट करे और लोगों से उनके कुत्तों की प्रशंसा करे? क्या आप कल्पना कर सकते हैं कि ऐसा आदमी भी कभी दुःखी एव चिंतित रहेगा और उसे किसी मनोविज्ञान विशेषज्ञ की सेवाओं की आवश्यकता होगी? नहीं, आप ऐसी कल्पना कर ही नहीं सकते। एक कहावत है कि "मेंहदी बॉटने वाले के हाथ में भी मेंहदी का रग लग ही जाता है।"

येल के विलिफेल्प्स को यह सब बताने की आवश्यकता नहीं रही, वह तो इस बात को खुद जानता था और तदनुसार उसने आचरण भी किया।

यदि आप पुरुष हैं तो इस अनुच्छेद को आगे मत पढ़िये। इसे पढ़ने में आप को मजा नहीं आयेगा क्यों कि इस अनुच्छेद में एक ऐसी लड़की की कहानी है जो बहुत दु:खी और चिंतित रहती थी। किन्तु दूसरों में रुचि लेने का ढग सीख कर उसने कई लड़कों को अपने से ब्याह करने के लिए आकर्षित कर लिया। आज वह लड़की पोतों की दादी है। कुछ वर्ष पूर्व मैं इस दम्पति के साथ रात भर ठहरा था। मैंने उसके कस्बे में भाषण दिया और दूसरे दिन सवेरे अपने कस्बे से पचास मील दूर न्यूयार्क सेन्ट्रल तक वह मुझे पहुँचाने आई। हम मित्र बनाने की कला पर बातचीत करने लगे। उसने कहा, "मिस्टर कारनेगी, मैं आपको एक रहस्य की बात बता रही हूँ। अब तक यह बात मैंने किसी को भी नहीं बताई है, अपने पति को भी नहीं!" (यह कहानी शायद आपको उतना मजा न दे सके जितना आप सोचते हैं।) उसने मुझे बताया, "मैं फ़िलेडेल्फ़िया के एक 'सोशियल रजिस्टर परिवार' में बड़ी हुई थी। मेरे बचपन और यौवन का सबसे बडा दुर्भाग्य यह था कि मेरा परिवार गरीब था। अपने स्तर की अन्य लड़कियों की भाँति मैं लोगों का सत्कार नहीं कर पाती थी। मेरी पोशाक बढ़िया नहीं होती थी। कपड़े तग और पुराने ढग के सिले हुए होते थे। आत्मग्लानि और लज्जा में मैं इतनी गड़ जाती कि सिसकते सिसकते मैं सो जाती। अंत में इस भयंकर नैराश्य में मुझे एक युक्ति सूझी। मैं भोजन समारम्भ में अपने साथियों से अपने अनुभव, विचार एव भविष्य के आयोजन के बारे में पूछती। मैं उन्हें यह प्रश्न इसलिए नहीं पूछती थी कि उनके उत्तर में मुझे कोई विशेष रुचि थी। मैं चाहती थी कि मेरा साथी अपनी बातों में व्यस्त रह कर मेरी सामान्य पोशाक पर ध्यान न दे। किन्तु आश्चर्य की बात तो यह हुई कि जैसे-जैसे उन युवकों के बारे में, उनकी बातों से, मुझे जानकारी मिलती गई, मैं उनकी बातों में अधिक रुचि लेने लगी। उनकी बातों में मैं इतनी लीन हो जाती कि अपनी पोशाक का खयाल ही नहीं आता। ताज्जुब की बात तो यह हुई कि जब मैं उन युवकों की बातें सुनती तथा उन्हें अपनी बात कहने के लिए प्रोत्साहित करती तो उन्हें बड़ा सुख मिलता। इस प्रकार मैं समाज में घुलने-मिलने लगी। उन युवकों में से तीन ने मुझ से विवाह का प्रस्ताव रखा। (कुमारियो, यह तरीका अच्छा है, इसे सीख लीजिए।)

कुछ लोग कहेंगे कि, "दूसरों में रुचि लेने की यह बात बकवास है, कोरा उपदेश है और व्यर्थ है। मुझे तो पैसा कमाना है, जो कुछ मिले उसे हड़प लेना है अभी इसी वक्त। दूसरी बातें भाड़ में जाएँ।"

ठीक है, आपकी यह धारणा आपको मुबारक हो, पर यदि आपकी यह धारणा सही है तो ईसा, कनफ्युशियस, बुद्ध, प्लेटो, अरस्तू और सत फ्रासिस जैसे महान दार्शनिक और उपदेशक गलत हैं। यदि आपको धार्मिक आचार्यों के उपदेशों से चिढ है तो आइए कुछ नास्तिकों की सलाह पर विचार करें। सबसे पहले अपनी पीढी के प्रसिद्ध विद्वान एव केम्ब्रिज विश्व विद्यालय

के प्रोफेसर स्वर्गीय ए. ई. होसमेन को ही लीजिए। सन् १९३६ में 'दी मेन नेचर ऑफ पोएट्री' शीर्षक भाषण उन्होंने केम्ब्रिज विश्व विद्यालय में किया था। अपने व्याख्यान में उन्होंने बताया कि सभी युगों का महानतम् सत्य एव गम्भीर नैतिक आविष्कार ईसा के वे शब्द हैं, जिनमें कहा गया है, कि 'मनुष्य अपने जीवन का मोह करके उसे खो बैठेगा और जो अपने जीवन को खो देगा, वह उसे पा लेगा।'

हमने जीवन में ऐसे कई उपेदशों को सुना है किन्तु होसमेन की बात अलग है। वे नास्तिक और निराशावादी थे। उन्होंने आत्महत्या करने का विचार किया था। फिर भी उनका मत था कि, जो व्यक्ति केवल अपने ही बारे मे सोचता है उसे जीवन में विशेष कुछ नहीं मिलता। वह बड़ा दुःखी रहता है। किन्तु दूसरों की सेवा में अपने को भूल जाने वाला व्यक्ति, जीवन का आनन्द अवश्य उठायेगा।

यदि आप ए. ई. होसमेन के शब्दों से प्रभावित नहीं हुए हैं तो बीसवीं सदी के एक अन्य अमेरीकन नास्तिक की सलाह पर विचार कीजिए। वह नास्तिक थियोडोर ड्रेजर है। ड्रेजर सभी धर्मों को परियों की कहानियाँ कह कर उनका मजाक उड़ाता था और जीवन को किसी बुध्दू के द्वारा कही गई उत्तेजना पूर्ण एव थोथी कहानी समझता था। फिर भी ड्रेजर ईसा के महान सिद्धान्तों में से एक को तो अवश्य ही मानता था। और वह था, 'दूसरों की सेवा।' उसका कहना था कि यदि व्यक्ति अपने जीवन में आनन्द का लाभ उठाना चाहे तो उसे केवल अपनी ही नहीं दूसरों की भलाई करने का भी आयोजन करना चाहिए। क्यों कि उसका आनन्द अपने और दूसरों के पारस्परिक आनन्द पर निर्भर करता है।

यदि हमें ड्रेजर के मतानुसार दूसरों की भलाई करना है तो हमें जल्दी करनी चाहिए। समय बीतता रहता है। गया समय फिर हाथ नहीं आता। इसलिए दूसरों के प्रति भलाई और दया का जो भी काम हम कर सकते हैं उसे अभी कर लेना चाहिए। उसे छोड़ना नहीं चाहिए, उसकी अवगणना नहीं करनी चाहिए क्योंकि समय लौट कर नहीं आता।

यदि आप चिंता को भगा कर मन में सुख और शान्ति का विकास करना चाहें तो यह सातवाँ नियम ध्यान में रखिए —

दूसरों में रुचि रखकर स्वय को भूल जाइए। किसी अन्य व्यक्ति के चेहरे पर आनन्द की मुसकान लाने के लिए उसकी भलाई कीजिए।

☆

भाग ४ का संक्षेप

मन में सुख और शान्ति उत्पन्न करने के सात उपाय —

१. अपने मस्तिष्क में शान्ति, साहस, स्वास्थ्य और आशा के विचार रखिए। हमारा जीवन वैसा ही होता है, जैसा हमारे विचार उसे बनाते हैं।

२. जैसे के साथ तैसा करके हानि न उठाइए। इससे आप अपना ही अहित करेंगे, अपने शत्रुओं का नहीं। जनरल आइसनहावर की तरह आचरण कीजिए और जो अवज्ञा के पात्र हैं, उनके सम्बन्ध में विचार करने में एक क्षण भी नष्ट न कीजिए।

३. [क] दूसरों की कृतघ्नता को लेकर दुःखी न होकर उसकी उपेक्षा कर दीजिए। स्मरण रखिए कि ईसा ने एक दिन में दस कोढियों का उपचार किया था। किन्तु केवल एक कोढी ने ही उन्हें धन्यवाद दिया। जितनी कृतज्ञता ईसा के सामने प्रकट की गई उससे अधिक की आशा हम क्यों करें?

[ख] स्मरण रखिए—उपकारजन्य आनन्द के लिए उपकार कीजिए। दूसरों में कृतज्ञता पाने की चिन्ता न कीजिए। सुख प्राप्ती का यही एक उपाय है

[ग] स्मरण रखिये की कृतज्ञता का भाव अभ्यास से विकसित होता है, इसलिए यदि आप चाहें कि आप के बच्चे कृतज्ञता का भाव अपनाएँ तो आप उन्हें कृतज्ञता प्रकट करने के लिए शिक्षित कीजिए।

४. अपनी नियामतों को याद रखिये, दुःखों को नहीं।

५. दूसरों की नकल मत कीजिए। अपने आप को पहचानिए और जो आप हैं वही बने रहिए, क्योंकि स्पर्धा का दूसरा नाम अज्ञान है और नकल का आत्महत्या।

६. यदि भाग्य में खटास मिले तो उसे मिठास में बदल लीजिए।

७. दूसरों को सुख देने का प्रयास करके अपना दुःख भूल जाइए। दूसरों के प्रति भले बनकर ही आप अपने प्रति श्रेष्ठ बन सकते हैं।

भाग ५

चिन्ता पर विजय पाने के स्वर्णिम नियम

१९ : मेरे माता-पिता ने चिन्ता को कैसे जीता

जैसा कि मैं कह चूका हूँ, मेरा लालन-पालन मिसौरी मे अपने फार्म पर हुआ था। उन दिनो, अन्य किसानों की तरह ही मेरे माता-पिता को भी बड़े परिश्रम से जीवन निर्वाह करना पड़ता था। मेरी माँ गाँव के स्कूल मे अध्यापिका थी और मेरे पिता प्रति माह बारह डालर की आय पर खेत पर मजदूरी करते थे। माँ मेरे कपड़े सीती थी और उनके धोने के लिए साबुन भी वही तैयार करती थी। नकद रुपये हमारे पास नहीं के बराबर थे। साल मे जब हम एक बार सूअर बेचते थे तब कुछ रोकड़ के दर्शन हो जाते थे। आटा, शक्कर और कॉफी के विनिमय में हम मोदी की दूकान पर मक्खन, अण्डे आदि दे आते थे। मैं बारह वर्ष का हुआ तब अपना साल भर का खर्च चलाने के लिए मेरे पास पन्द्रह सेंट भी नहीं थे। चार जुलाई के समारोह का वह दिन आज भी मुझे याद है जब पिताजी ने मुझे, इच्छानुसार खर्च करने के लिए दस सेंट दिये थे और मुझे ऐसा लगा जैसे कोई खजाना मिल गया हो।

मुझे रोज एक मील चलकर स्कूल जाना पड़ता था। मुझे घनी बर्फ मे से गुजरना पड़ता था, तापमान शून्य से भी २८° कम होता था। चौदह वर्ष की अवस्था तक तो मुझे रबर के जूते पहनने का सौभाग्य भी प्राप्त नहीं हुआ था। जाड़े के लम्बे और ठंडे दिनों में ठंड से मेरे पैर सन्न हो जाते थे। बचपन में मैंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि सर्दी में किसी के पॉव सूखे और गरम रह सकते हैं।

यद्यपि मेरे माता-पिता दिन मे सोलह घंटे गुलामी करते, तथापि हम सदा कर्ज से दबे रहते और अपने दुर्भाग्य के कारण दुःख उठाते। बचपन के दिनों की एक घटना मुझे याद है, जब १०२ नदी की बाढ़ का पानी हमारे धान और घास के खेतों मे फैल गया था और फसल नष्ट हो गई थी। सात वर्षों में छः वर्ष हमारी फसल बाढ़ के कराल जबड़ों मे समा जाती। हर साल हमारे सुअरों को हैजा हो जाता और हमें उन्हें जला देना पड़ता। आज भी मैं ऑखें बन्द कर सूअरों के जलने की तेज दुर्गन्ध की कल्पना कर सकता हूँ।

एक साल बाढ़ नहीं आई थी। हमने बम्बर धान की खेती की थी, कुछ पशु भी खरीदे और उन्हें खिला-पिला कर मोटा किया। यद्यपि बाढ़ नहीं आई, तथापि हमारी स्थिति मे कोई परिवर्तन नहीं आया। क्यो कि शिकागो के बाजार में मोटे पशुओं के मूल्य में गिरावट आ गई थी और हमें उन पशुओं को पालने और मोटा करने में जो खर्च हुआ, उससे केवल तीस डॉलर ही अधिक मिले। ये तीस डॉलर हमारे साल भर के परिश्रम की कमाई थी।

कठिन परिश्रम के बावजूद हमारा रुपया डूब गया। मुझे आज भी उन लम्बे कानों वाले खच्चरों के नन्हें नन्हें बच्चों का स्मरण है, जिन्हें मेरे पिताजी ने खरीदा था। तीन वर्ष तक बराबर उनको खिलाया-पिलाया और उन्हें सुधारने के लिए आदमी रखे। उसके बाद उन्हें जहाज में टेनिसी के अन्तर्गत मेमफिस को भेज दिया। उनको बेचने में हमें तीन वर्ष पूर्व उनको खरीदने में जो मूल्य देना पडा था, उससे भी कम प्राप्त हुआ। तीन वर्ष के इस जी तोड़ परिश्रम करने के बाद भी हम कौडी कौडी के मोहताज रहे और भारी ऋण में उतर गये। हमें अपना खेत गिरवी रख देना पडा। भरसक प्रयत्न करने पर भी हम रेहन की रकम का ब्याज भी नहीं चुका सके। जहाँ मेरा मकान गिरवी था उस बैंक ने, मेरे पिताजी का अपमान किया। वहाँ के अधिकारी ने उन्हें गालियाँ दीं और धमकी दी कि बैंक फार्म को अपने कब्जे में कर लेगा। पिताजी की अवस्था उस समय सैंतालीस वर्ष की थी। तीस वर्ष के कठोर परिश्रम के बाद उनके पास ऋण और अपमान के सिवा कुछ भी नहीं बचा। यह अभिशाप उनके लिए असह्य हो उठा, वे दुःखी हो गये और उनका स्वास्थ्य बिगड़ गया। सारे दिन खेत पर परिश्रम करके भी उन्हें भोजन करने की इच्छा नहीं होती थी। भूख बढाने के लिए उन्हें दवा लेनी पडती थी। उनका शरीर सूख गया था। डॉक्टर ने मेरी माँ को बता दिया था कि छः महीनों के अन्दर अन्दर उनकी मृत्यु हो जायगी। पिताजी इतने दुःखी हो गये थे कि और अधिक जीना नहीं चाहते थे। जब कभी भी वे घोड़ों को दाना देने अथवा गायों को दुहने के लिए जाते और निश्चित समय तक नहीं लौटते तो माँ उन्हें देखने जाती। वह डरती थी कि कहीं उनकी लाश किसी रस्सी से लटकी हुई न मिले। एक दिन जब वे मेरी-वॉइल से जहाँ कि बैंकर ने उन्हें मकान जब्त कर लेने की धमकी दी थी, लौट रहे थे, उन्होंने अपने घोड़े को नदी के एक पुल के पास खड़ा कर दिया और गाडी से उतरकर बहुत समय तक नीचे पानी की ओर देखते रहे और संघर्ष करते रहे कि पानी में कूद कर दुःख का अन्त करें या नहीं।

वर्षों बाद मेरे पिताजी ने मुझे बताया कि उस दिन उनके पानी में न कूदने का एक मात्र कारण मेरी माँ की अगाध श्रद्धा और भक्ति-पूर्ण विश्वास था। उसका विश्वास था कि यदि हम ईश्वर की आज्ञाओं और उसके नियमों का निरन्तर पालन करते रहें तो एक दिन सब कुछ ठीक हो जायगा। माँ का कहना बिलकुल ठीक था। क्यों कि अन्त में सचमुच ही सब कुछ ठीक हो गया। इसके बाद पिताजी ४२ वर्ष तक और जिये। १९४१ में ८९ वर्ष की अवस्था में उनका देहान्त हुआ था।

संघर्ष और दिल दहलाने वाले उन वर्षों में मेरी माँ ने कभी चिंता नहीं की। वह अपने सारे दुःखों को भगवान के चरणों में अर्पण कर देती। रात को सोने के पहले वह नियमपूर्वक बाइबल का एक अध्याय पढती। मेरे माता पिता प्रायः ईसा के इन सात्वना भरे शब्दों को पढा करते थे "भगवान के घर में रहने के लिए

बहुत जगह है ... मै वहाँ तुम्हारे लिए स्थान बनाने जा रहा हूँ ... जहाँ मैं, वहीं तुम भी रहोगे।" हम सभी मिसौरी के अपने मकान में घुटने टेक कर ईश्वर से प्यार और सरक्षण की याचना करते थे।

विलियम जेम्स हावर्ड ने जो दर्शन के प्राध्यापक थे, एक बार कहा था, धार्मिक श्रद्धा चिता रोकने की रामबाण दवा है।

इस सत्य को खोजने के लिए आपको हावर्ड जाने की आवश्यकता नहीं। मेरी माँ ने इसे मिसौरी के फार्म पर ही खोज लिया था। मेरी माँ की उल्लासमय, प्रखर एव सफल प्रवृत्ति को बाढ, ऋण तथा दुःख कभी नहीं दबा सके। आज भी वह काम करती जाती है और गाती जाती है "भगवान से प्राप्त यह पावन शान्ति, कितनी अद्‌भुत है! मेरी तो यही कामना है कि दीन-बन्धु के प्यार की वे लहराती मौजें मेरे अन्तर पर सदा बिछला करें।"

मेरी माँ चाहती थी कि मै अपने को धर्म के लिए समर्पित कर दूँ। मैंने विदेश में पादरी बनने का गम्भीर रूप से विचार किया। फिर कॉलेज में पढने चला गया। पर धीरे धीरे ज्यों ज्यों समय बीतता गया मुझमें परिवर्तन आता गया। मैंने जीवशास्त्र, दर्शनशास्त्र और विज्ञान का अध्ययन किया। मैंने अन्य धर्मों का भी तुलनात्मक अध्ययन किया। मैंने वे पुस्तकें भी पढीं जिनमें बताया गया था कि बाईबल की रचना कैसे की गई। उन पुस्तकों की स्थापनाओं को लेकर मुझ में कई प्रश्न उठने लगे। गाँवों के धार्मिक प्रवचन करनेवालों की सैद्धान्तिकता पर मै शंका करने लगा। मैं एक तरह की खींचातानी में पड गया। वाल्ट वाईटमेन की तरह मुझको भी जिज्ञासा एव अप्रत्याशित प्रश्नों ने मथ डाला। मेरी समझ में नहीं आता था कि किस पर विश्वास करू। मुझे जीवन का कोई उद्देश्य नजर नहीं आता था। मैंने प्रार्थना करना छोड़ दिया और वस्तुवादी बन गया। मुझे विश्वास हो गया कि जीवन अनिश्चित और निस्सार है। मैं मानने लगा कि मानव जीवन में कोई ईश्वरीय हेतु नहीं हैं और यदि कोई है, तो वही जो हजारों वर्ष पूर्व इस पृथ्वी पर भटकने वाले लम्बे लम्बे सर्पों का था। मुझे लगा कि एक न एक दिन उन सर्पों की तरह मानवता भी नष्ट हो जायगी। विज्ञान में मैंने पढा था कि सूरज धीरे धीरे ठडा होता जा रहा है और यदि उसका तापमान दस प्रतिशत भी गिरा तो इस भू-मडल पर कोई भी जीव न बच सकेगा। यह विचार कि, मगलकारी भगवान ने अपनी इच्छा से इस ससार का निर्माण किया है, असत्य लगने लगा। मुझे विश्वास हो गया कि इस प्राणी हीन अधकारमय शीतल अन्तरिक्ष में चक्कर काटने वाले असख्य ग्रह या तो किसी अध शक्ति से निर्मित हुए हैं या फिर उनका निर्माण किसीने भी नहीं किया, वे काल और विस्तार की भाँति ही शाश्वत हैं।

तो क्या अब मैंने उन सभी गुत्थियों का उत्तर पा लिया है? नहीं, आज तक कोई भी विश्व-निर्माण के रहस्य का उद्‌घाटन नहीं कर सका, और न कोई जीवन के रहस्य को ही समझ सका। हम रहस्यों से घिरे हुए हैं। हमारे शरीर का परिचालन भी

एक रहस्य ही है। ऐसा ही रहस्य आपके घर की बिजली के बारे में भी है। ऐसा ही रहस्य दीवार की दरार में खिलने वाले फूल का है। आपकी खिड़की के बाहर उगी घास भी रहस्यमय है। घास हरी क्यों होती है, इस बात का पता लगाने के लिए जनरल मोटर्स रीसर्च लेबोरेटरी का प्रतिभाशाली अधिकारी चार्ल्स एफ. केट्रींग, एन्टिओक कॉलेज को प्रतिवर्ष अपनी गाँठ से तीस हजार डालर देता है कि यदि हमें इस बात का पता चल जाय कि घास, सूरज की रोशनी, पानी तथा कार्बन-डाय-ऑक्साईड को खाद्य और शक्कर के रूप में किस प्रकार परिवर्तित करती है, तो हम सारी सभ्यता को बदल लेने में समर्थ हो जाएँ।

यही नहीं, आपकी मोटर के इंजिन का सचालन भी एक गूढ रहस्य ही है। इस बात का पता लगाने के लिए कि सिलिन्डर के अन्दर की चिनगारी मोटर को दौड़ाने का काम कैसे और क्यों करती है, जनरल मोटर्स लेबोरेट्रीज ने कई वर्ष और कई लाख डॉलर खर्च किये हैं। किन्तु आज भी इस रहस्य का पता नहीं चल सका।

हम अपने शरीर, विद्युत, गैस और इंजिन के रहस्यों को नहीं जानते, फिर भी इसका अर्थ यह नहीं कि हम उन वस्तुओं का उपभोग करने एवं उनका आनन्द उठाने से वंचित रखे जाएँ। मैं प्रार्थना एव धर्म के रहस्यों को नहीं समझता फिर भी धर्म द्वारा प्रदत्त सम्पन्न और सुखद जीवन का उपभोग करने में मुझे किसी तरह की बाधा का अनुभव नहीं होता। अततोगत्वा मुझे सतायन के इस कथन की बुद्धिमत्ता का ज्ञान होता है कि, "मनुष्य की सृष्टि जीने के लिए हुई है, जीवन को समझने के लिए नहीं।"

मैं कुछ पीछे की बात कह गया। हाँ तो, मैं कहने जा रहा था कि धर्म को लेकर मैं बहक गया था। किन्तु ऐसा कहना शायद उचित नहीं होगा। मैं तो धर्म की एक नवीन व्याख्या को लेकर आगे बढ़ा हूँ। मुझे चर्च को विभाजित करनेवाले विभिन्न सम्प्रदायों में कोई श्रद्धा नहीं किन्तु धर्म मेरे लिए जो कुछ करता है उसमें मेरी वैसी ही अगाध श्रद्धा है जैसी बिजली, पौष्टिक भोजन तथा पानी के उपयोग में है। ये सब पूर्णतया सुखद जीवन जीने में मेरी सहायता करते हैं किन्तु इससे भी ज्यादा काम हमारा धर्म हमारे लिए करता है। यह मुझे आध्यात्मिक मूल्यों का ज्ञान कराता है और विलियम जेम्स के शब्दों में एक नवीन उत्साह, लम्बा, सम्पन्न एव सन्तोषप्रद जीवन प्रदान करता है। यह मुझे श्रद्धा आशा एव उत्साह प्रदान करता है। यह आकुलता चिन्ता, भय एव तनाव को दूर कर देता है। जीवन में उद्देश्य एव दिशा का ज्ञान कराता है। आनन्द में अपूर्व वृद्धि करता है। पूर्ण स्वास्थ्य प्रदान करता है और जीवन के मरुस्थल में शान्ति का मरूद्यान स्थापित करने में हमारी सहायता करता है। तीन सौ पचास वर्ष पूर्व फ्राँसिस बैकन ने ठीक ही कहा था कि, "छिछला दर्शन-ज्ञान मानव मस्तिष्क को नास्तिकता की ओर झुकाता है और दर्शनज्ञान की गहनता मानव मस्तिष्क को धर्म के रंग में रंग देती है।

आज भी मुझे वे दिन याद हैं जब लोग विज्ञान एव धर्म के बीच के संघर्ष की बातें करते थे किन्तु अब वैसी बातें नहीं उठतीं। हमारा आधुनिक मनोविज्ञान वही सिखाता है जो ईसा ने सिखाया था। मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि प्रार्थना एव दृढ धार्मिक निष्ठा द्वारा चिंता, आकुलता, क्षोभ, भय और बहुत-सी बीमारियाँ दूर की जा सकती हैं। मनोवैज्ञानिकों के एक नेता डॉ. ए. ए. ब्रील का कहना है कि जो व्यक्ति सच्चे रूप में धार्मिक निष्ठा रखता है उसे कभी स्नायु रोग नहीं होता।

यदि धर्म में कोई सच्चाई नहीं तो जीवन भी निरर्थक है, भ्रांति है।

कुछ वर्ष हुए, मैंने हेनरी फोर्ड से, उनकी मृत्यु के कुछ ही वर्ष पूर्व भेंट की थी। उनसे मिलने के पूर्व मेरा खयाल था कि वर्षों से संसार के एक विशाल व्यवसाय का निर्माण एव सचालन करते रहने के कारण उस व्यक्ति पर तनाव के कुछ लक्षण दिखाई देंगे। किन्तु मुझे यह देख कर आश्चर्य हुआ कि अठत्तर वर्ष की अवस्था में भी वे स्वस्थ, शान्त एव सौम्य दिखाई दिये। जब मैंने उन्हें पूछा कि "क्या आप भी कभी चिंता के फंदे में पड़े हैं?"

तो उन्होंने कहा "नहीं, क्यों कि, मेरा विश्वास है कि भगवान ही मेरे व्यवसाय की व्यवस्था करते हैं और उन्हें मेरी सलाह की आवश्यकता नहीं है। मेरा विश्वास है कि भगवान की देखरेख में अततः सभी कार्य उत्तमरूप से सम्पन्न होंगे, फिर चिंता क्यों की जाय!

आज तो मनोवैज्ञानिक भी आधुनिक धर्म-प्रचारक बन गये हैं। आज वे हमें आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करने के लिए कहते हैं। किन्तु इस उद्देश्य से नहीं कि हम परलोक में नर्क की यातना से बच जाएँ, बल्कि इसलिए कि उदरव्रण, ऐंजिना पेक्टोरीस (हृदय रोग), स्नायु विघटन एव विक्षिप्तता आदि इहलौकिक यातनाओं से छुटकारा पा सकें। आजकल के चिकित्सक एव मनोवैज्ञानिक क्या सिखाते हैं यह जानने के लिए 'रिटर्न टू रिलिजन' नामक पुस्तक पढिये जो डॉक्टर हेनरी लिंक द्वारा लिखी गई है। सम्भव है आपके पुस्तकालय में ही यह पुस्तक मिल जाय।

ईसाई-धर्म प्रेरणा एव स्वास्थ्य प्रदान करता है। ईसा का कथन है, "मैं जीवन और ऐश्वर्य प्रदान करने के लिए इस भूतल पर अवतरित हुआ हूँ।" ईसा अपने युग की प्रचलित शुष्क एव निष्प्राण धार्मिक रूढियों पर आक्षेप करते थे। वे एक विद्रोही थे। उन्होंनें एक नवीन धर्म का प्रचार किया था। लोगों को यह शका हुई कि यह धर्म ससार में उथल-पुथल मचा देगा, इसलिए उन्होंने उन्हें फॉसी पर लटका दिया। ईसा का कहना था कि धर्म मनुष्य के लिए है मनुष्य धर्म के लिए नहीं। सब्बाथ (विश्राम का दिन) मनुष्य के लिए हो, न कि मनुष्य सब्बाथ के लिए। उन्होंने पाप की बात न कहकर भय की बात अधिक कही है। झूठा भय एक प्रकार का पाप ही है। यह पाप, हम अपने स्वास्थ्य तथा ईसा द्वारा उपदेशित सम्पन्न, सुखी, परिपूर्ण एवं उत्साह पूर्ण जीवन के प्रति करते हैं। इमर्सन अपने को आनन्द विज्ञान

के प्राध्यापक मानते थे। ईसा भी इसी आनन्द-विज्ञान का प्रचार करते थे। वे अपने शिष्यों को आनन्द से झूमने के लिए कहते थे।

ईसा के विचार से धर्म के दो पहलू मुख्य हैं—हृदय से ईश्वर की भक्ति और अपने पड़ोसी के प्रति समभाव। जो व्यक्ति इन दो बातों का पालन करता है वह धर्म को न जानकर भी धार्मिक है। उदाहरणार्थ—ओक्लाहोमा अन्तर्गत टुल्सा के निवासी मेरे श्वसुर हेनरी प्राइस को ही लीजिए। वे ईसा की उक्त दोनों उक्तियों के अनुसार आचरण करते हैं। और कभी भी स्वार्थ, नीचता एव बेईमानी का काम नहीं करते। वे चर्च मे नहीं जाते और अपने को नास्तिक समझते हैं। किन्तु वे नास्तिक नहीं हैं। ईसाई कौन है, यह आप जॉन बेली के शब्दों में सुनिए। जॉन बेली ऐडिनबरा विश्व-विद्यालय में धर्म-शास्त्र पढ़ाने वाले अत्यन्त प्रतिभासम्पन्न प्राध्यापक थे। वे कहते थे कि. "कुछ विचारों को बौद्धिक मान्यता देकर तथा कुछ नियमों से सहमति प्रकट करने मात्र से ही मनुष्य ईसाई नहीं बनता। ईसाई वह है जो एक विशेष प्रकार की स्फूर्ति से अनुप्राणित रहता है एवम् अमुक प्रकार के जीवन व्यवहार को अपनाता है।"

यदि उपर्युक्त बातों को मानने वाला ईसाई कहा जा सकता है तो हेनरी प्राईस सच्चे ईसाई हैं।

आधुनिक मनोविज्ञान शास्त्र के जन्मदाता विलियम जेम्स ने अपने मित्र प्रोफेसर टॉमस डेविडसन को लिखा था—"ज्यों ज्यों वर्ष बीतते गए, मुझे लगा कि भगवान में निष्ठा रखे बिना जीने की मेरी क्षमता धीरे धीरे कम हो चली है।"

पिछले परिच्छेद मे मैं यह बता चुका हूँ कि जब निर्णायकों ने चिंता के विषय में लिखी गई दो सर्वश्रेष्ठ कहानियों को चुनने का प्रयास किया तो उन्हें बड़ी कठिनाई का अनुभव हुआ और अतत: पारितोपिक को दो लेखकों में विभाजित कर देना पड़ा। प्रथम पारितोषिक के योग्य द्वितीय कहानी में एक महिला के जीवन का अविस्मरणीय अनुभव था। उस महिला ने बड़ी कठिनाई के बाद महसूस किया कि, "भगवान की कृपा के बिना जीवन का बेड़ा पार नहीं लग सकता।"

मै उस महिला का नाम मेरी कुशमेन रख रहा हूँ। यह उसका वास्तविक नाम नहीं है। उसके पौत्र तथा प्रपौत्र जीवित हैं। इस छपी हुई कहानी को पढ कर सम्भव है उन्हें क्लेश हो। यही कारण है कि मैं उस महिला का नाम गुप्त रख रहा हूँ। किन्तु महिला का अस्तित्व यथार्थ है। कुछ महीनों पूर्व मेरी टेबल के पास कुर्सी पर बैठे बैठे उसने मुझे अपनी कहानी सुनाई थी—

"मदी के दिनों में मेरे पति का वेतन अठारह डॉलर प्रति सप्ताह था। कभी कभी तो अठारह डॉलर भी पूरे नहीं मिलते थे, क्यों कि जब कभी वे बीमार हो जाते, उन दिनों की तनख्वाह काट ली जाती थी। और वे अक्सर बीमार रहते थे। अनेक छोटी छोटी दुर्घटनाओं के फंदे में वे फँस जाते थे। उन्हें कंठमाला और लाल बुखार हो चुका था। इन्फ्लुएंजा तो उन्हें प्रायः हो जाया करता था।

जो घर हमने बनाया था वह हमसे छूट गया। हम पर मोदी का पचास डॉलर का कर्ज था। और हमें पॉच बच्चों का भरण-पोषण करना पडता था। मैं पडोसियों के कपडे धोती, उनके कपडों पर इस्त्री करती। सैनिक स्टोर से सैकन्ड-हैन्ड कपडे खरीद कर उन्हें ठीक ठाक कर अपने बच्चो को पहनाती थी। चिता से मैं बीमार रहती। एक दिन मोदी ने, जो हमसे पचास डॉलर माँगता था, मेरे ग्यारह वर्ष के लड़के पर दूकान से पेन्सिलें चुराने का दोष मढा। लड़के ने रोते रोते मुझे यह घटना सुनाई, मै जानती थी कि लड़का ईमानदार और सवेदनशील है। मैं यह भी जानती थी कि दूसरे लोगों की उपस्थिति में उसका अपमान किया गया है और उसे नीचा दिखाया गया है। इस घटना ने, मेरे क्लेश की रही सही कसर और भी पूरी कर दी। इस धक्के ने मेरी कमर तोड़ दी। अब तक जितने भी सकट मैंने झेले थे, उन सबका विचार आने लगा। भविष्य निराशा से भर गया। कुछ समय तक तो मै चिता से लगभग पागल-सी बनी रही। मैंने धुलाई की मशीन बंद कर दी। अपनी पॉच वर्ष की लड़की को लेकर मैं अपने सोने के कमरे में चली गई। कमरे की खिड़कियों और रोशनदानों में कागज और फटे कपडे ठूँस कर उन्हें बद कर दिया। इस पर बच्ची ने पूछा, "मॉ तुम यह क्या कर रही हो?" मैंने कहा, "कुछ नहीं बेटी, हवा का झोंका आ रहा है! इसके बाद मैंने गैस के चूल्हे को भी नहीं जलाया और गैस निकालने के लिए उसे ढीला कर दिया। बच्ची ने, जो मेरे पास ही सो रही थी आश्चर्य से कहा, "मॉ, बड़ी अजीब बात है, अभी अभी तो हम सो कर उठे ही है, फिर से क्यों सो रहे हैं! मैंने उसे कहा, "कोई बात नहीं बेटी, थोडी झपकी और ले लें। मैंने अपनी आखें मूँद लीं और आतिशदान से निकलती हुई गैस की सरसराहट सुनने लगी। मैं उसकी उस बदबू को कभी नहीं भूल सकती।

"यकायक मुझे गीत सुनाई दिया। रसोई घर में लगे रेडियो को बद करना मैं भूल गई थी। मैंने सोचा, चलने दो। गीत चलता रहा और मैंने सुना —

"ईसा हमारा कितना सच्चा मित्र है!' वह हमारे सभी पाप और क्लेश सहता है। भक्ति से सब कुछ भगवान को अर्पण कर देना भी कितना पावन अधिकार है! भगवान को सब कुछ अर्पण न कर हम प्रायः अगाध शान्ति को खो देते हैं। और व्यर्थ ही इतने दुःख झेलते रहते हैं!"

"यह भजन सुनकर मुझे विचार आया कि, अकेले यह भीषण सघर्ष करने का प्रयास करके मैंने एक दुःखद भूल की है। मैंने अपना सब कुछ भगवान को समर्पित नहीं किया, यह सोच कर मै उठ बैठी। गैस बंद कर दी और खिडकियाँ खोल दीं। मै सारा दिन रोती रही। मैंने सहायता के लिए प्रभु से प्रार्थना ही नहीं की बल्कि अपनी समस्त भावनाओं एव निष्ठा के साथ भगवान को धन्यवाद दिया कि उसने मुझे, तन और मन से स्वस्थ, बलिष्ठ एवं सुन्दर पॉच बच्चे

दिये हैं। मैंने उस दयानिधान के समक्ष प्रतिज्ञा की कि भविष्य में कभी भी इतनी कृतघ्न नहीं होऊँगी। तब से अपनी प्रतिज्ञा को बराबर निभाती चली आ रही हूँ।

"यहाँ तक कि अपना घर छोड देने के बाद पाँच डॉलर प्रति माह किराये पर लिए गये गाँव के एक छोटे से स्कूल के लिए बने एक घर में रहना पड़ा, तब भी मैंने प्रभु को धन्यवाद दिया कि अपने को गरम और सूखा रखने के लिए हमारे ऊपर छत तो है। याने प्रभु को इसलिए भी धन्यवाद दिया कि परिस्थिति अधिक खराब नहीं बनी। मेरा विचार है कि उसने मेरी प्रार्थना सुन भी ली, क्यों कि कुछ ही समय बाद परिस्थितियाँ सुधरने लगीं। ज्यों ज्यों मदी कम होती गई हम कुछ ज्यादा पैसा कमाने लगे। मैंने देहात के एक बडे से क्लबों में टोपियों की रखवाली करने का काम ले लिया और शेष समय मे जुरावे-मोजे बेचने का काम करने लगी। कॉलेज का खर्च चलाने के लिए मेरे एक लड़के ने एक फार्म पर नौकरी कर ली। उसे रोजाना तीस गायों को दुहना पडता था। आज मेरे वे ही बच्चे सयाने एवं गृहस्थ बन गये हैं। मेरे तीन पोते-पोतियाँ हैं जो बहुत ही सुन्दर हैं। आज, जब मैं अतीत के उन दुर्भाग्यपूर्ण दिनों के बारे में सोचती हूँ, जब कि मैंने गैस को खोल दिया था, तो भगवान को धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकतीं, क्योंकि उसने मुझे समय रहते सावधान कर दिया। यदि मेरी योजना सफल हो जाती तो जीवन का कितना ही सुख व्यर्थ ही नष्ट हो जाता। कितने ही आनेवाले अपूर्व वर्षों को सदा के लिए खो बैठती। आज जब भी मैं किसी को आत्महत्या की बात कहते सुनती हूँ तो डॉट कर उसका मुँह बन्द कर देने को जी करता है। जीवन में अत्यन्त धूमिल विषाद के क्षण कुछ ही समय तक रहते हैं और उनके बीत जाने पर हमारे सामने अपना मधुर एवं उज्ज्वल भविष्य नाच उठता है।

अमेरिका में औसतन् हर पैंतीस मिनट में एक न एक व्यक्ति तो आत्महत्या करता ही है और हर १२० मिनट में कोई न कोई तो पागल हो ही जाता है। यदि वे आत्महत्या करने वाले व्यक्ति आध्यात्मिकता एव भक्ति में निहित सान्त्वना एवं शान्ति को प्राप्त करने का प्रयत्न करें तो ऐसी दुर्घटनाएँ कभी न हों।

आधुनिक जगत के सुप्रसिद्ध मनोरोग-चिकित्सक डॉ. कार्ल जुग ने अपनी पुस्तक 'मॉडर्न मेन इन सर्च ऑफ ए सोल' नामक पुस्तक में लिखा है कि गत तीस वर्षों में विश्व के सभी सभ्य देशों के नागरिकों ने मुझसे उपचार कराया है और मैंने सैंकडों का उपचार किया है। किन्तु उन रोगियों में से पैंतीस वर्ष के ऊपर की अधेड अवस्थावाले रोगियों में से एक भी ऐसा नहीं निकला जिसकी समस्या अन्ततः जीवन के प्रति आध्यात्मिक दृष्टिकोण अपनाने की न रही हो। यदि मै यह कहूँ कि उनमें से प्रत्येक इसलिए बीमार पड़ा कि उसने उस आध्यात्मिक दृष्टिकोण को खो दिया था, जिसे विभिन्न धर्म युगों-युगों से अपने अनुयायियों को देते आए हैं तो अत्युक्ति न होगी। उन रोगियों मे जो भी आध्यात्मिक दृष्टिकोण नहीं अपना सका वह उपचार करने पर भी स्वस्थ नहीं हो सका।

यह कथन इतना महत्वपूर्ण है कि मैं इसे दुहराना चाहूँगा।

डॉ जुग का कथन है कि –"गत तीस वर्षों में विश्व के सभी सभ्य देशों के नागरिकों ने मुझसे उपचार कराया है और मैंने सैंकडों का उपचार किया है। किन्तु उन रोगियों में से पैतीस वर्ष के ऊपर की अधेड़ अवस्थावाले रोगियों मे से एक भी ऐसा नहीं निकला, जिसकी समस्या अन्ततः जीवन के प्रति आध्यात्मिक दृष्टिकोण अपनाने की न रही हो। यदि मै यह कहूँ कि उनमें से प्रत्येक इसलिए बीमार पड़ा कि उसने उस आध्यात्मिक दृष्टिकोण को खो दिया था, जिसे विभिन्न धर्म युगों–युगों से अपने अनुयायियों को देते आए हैं तो अत्युक्ति न होगी। उन रोगियों में जो भी आध्यात्मिक दृष्टिकोण नहीं अपना सका, वह उपचार करने पर भी स्वस्थ नही हो सका।"

विलियम जेम्स ने भी लगभग ऐसी ही बात कही है, उनका कहना है—"धर्म उन शक्तियों में से है जिनके सहारे मनुष्य जीता है, उस शक्तिके नितान्त अभाव का अर्थ है मृत्यु।"

भारत में महात्मा बुद्ध के बाद महात्मा गाधी ही एक महान नेता के रूप में अवतरित हुए। यदि वे प्रार्थना की जीवनदायिनी शक्ति से प्रेरणा न पाते तो टूट कर रह जाते। यह कोई मेरी अपनी मनगढन्त बात नहीं। गाधीजी ने स्वय एक जगह लिखा है कि "प्रार्थना की शक्ति के बिना मैं कभी का पागल हो गया होता।"

इस कथन के साक्ष्यरूप हजारों व्यक्ति इस ससार में विद्यमान हैं। जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूँ कि यदि मेरे पिताजी को माँ की निष्ठा एव प्रार्थना की जीवन-दायिनी शक्ति न मिलती, तो वे कभी के डूब कर आत्महत्या कर चुके होते। आज हम हजारों दुःखी आत्माओं को पागलखानों मे चीखते हुए सुनते हैं। यदि उन्होंने अकेले जीवन–सघर्ष करने के बजाय आध्यात्मिक शक्ति की सहायता ली होती तो वे सहज ही में अपने को उस दशा से बचा लेते।

हम भगवान का द्वार तभी खटखटाते हैं जब हम दु:खी और निराश हो जाते हैं और हमारी सहनशक्ति जवाब दे देती है—किन्तु उस निराशावस्था की प्रतीक्षा ही क्यों की जाय? क्यों न हम प्रति दिन प्रार्थना एव निष्ठा द्वारा अपनी शक्ति का विकास करते जाएँ। यह जरूरी तो नहीं कि प्रार्थना रविवार को ही की जाय। मैं तो हफ्ते के किसी भी दिन दोपहर के समय निर्जन चर्चों में जा बैठता हूँ और ऐसा मैं वर्षों से करता आ रहा हूँ। जब मुझे आध्यात्मिक चिंतन के लिए कुछ समय निकालना भी कठिन हो जाता है या जल्दी रहती है तो मैं अपने आप को रोकता हूँ और कहता हूँ, "अरे पगले, यह सब उतावल और दौड–धूप किस लिए?–तुझे रुक कर कुछ गम्भीरता से चिन्तन करना चाहिए," और उस चिन्तन के लिए मैं प्रायः जो भी चर्च खुला पाता हूँ उसीमें घुस जाता हूँ। यद्यपि मैं एक प्रोटेस्टेन्ट हूँ तो भी प्रायः ५ अवेन्यू पर स्थित सत पेट्रिक कैथिड्रल में सप्ताह के किसी भी दिन दोपहर के समय जा खडा होता हूँ, क्यों कि मेरा विश्वास है कि सभी प्रकार के

चर्च महान, चिरतन एवं आध्यात्मिक सत्यों का प्रचार करते हैं। जीवन की क्षणभंगुरता को याद करते हुए मैं अपने आप को स्मरण दिलाता हूँ कि केवल तीस वर्ष और जीना है और तब आँखें मूँद कर प्रार्थना करने लग जाता हूँ। ऐसा करने से मेरे मनोवेग शान्त हो जाते हैं, शरीर को आराम मिलता है। हर वस्तु मेरे सामने स्पष्ट हो जाती है और मुझे अपने मूल्यों पर पुन: विचार करने मे सहायता मिलती है।

गत छः वर्षो से मै यह पुस्तक लिखने में लगा हुआ हूँ। इस अवधि में मैंने उन सैकडो उदाहरणो एव सच्ची घटनाओं का सकलन किया है, जिन के द्वारा विदित होता है कि मनुष्यों ने प्रार्थना की शक्ति के द्वारा भय एव चिता पर किस प्रकार विजय प्राप्त की। ऐसी घटनाओं एवं तथ्यो के विवरण मेरे पास भरे पड़े हैं। उदाहरण के लिए आइए, एक पस्तहिम्मत एवं निराश पुस्तक विक्रेता की कहानी लें। इस निराश व्यक्ति का नाम जॉन आर. एन्थनी था। सम्प्रति एन्थनी टेक्सास राज्य अन्तर्गत हस्टन में एक एटॅर्नी है और उसका कार्यालय हम्बल बिल्डिंग में है। अपनी कहानी सुनाते हुए उसने कहा—

"बाईस वर्ष पहले अपनी वकालत बन्द करके, मैं एक अमेरिकन लॉ बुक कम्पनी के क्षेत्रीय प्रतिनिधि का काम करने लगा। मेरा मुख्य कार्य वकीलों को कानून की किताबें बेचना था, और ये पुस्तकें हरेक के लिए अपरिहार्य थीं"

"मै उस काम मे काफी होशियार था और इस काम की मैंने शिक्षा भी ली थी। ग्राहकों से सीधे बात करके उन्हें राजी करना तथा उनकी सभी सम्भव आपत्तियों का समाधान करना मेरे बाएँ हाथ का खेल था। किसी भी व्यक्ति से मिलने के पूर्व मैं उसकी आय, वकालत, उसके राजनैतिक विचार एव उसकी रुचि के बारे मे पूरी जानकारी प्राप्त कर लेता और उससे मिलते समय उस जानकारी का बडी चतुराई से उपयोग करता। फिर भी कहीं न कहीं कुछ दोष अवश्य ही रह जाता था, और यही कारण था कि मुझे ऑर्डर नहीं मिलता था।

"मेरा उत्साह मरने लगा, ज्यों ज्यों दिन बीतते गए, मैं अपने प्रयत्नों को दुगुना करता गया, फिर भी अपना खर्च चलाने भर कमा लेना भी मेरे लिए मुश्किल हो गया, मुझ पर भय हावी हो गया। लोगों से मिलने में मुझे डर लगने लगा। जब भी मे धन्धे के लिए किसी मकान मे प्रवेश करता, मेरी भय और झिझक की भावनाएँ बड़ी उग्र हो जातीं और मैं दरवाजे के बाहर ही कदम नापने लगता या फिर मकान के बाहर अथवा ब्लॉक के इर्दगिर्द चक्कर काटने लगता। बहुत कुछ समय इस प्रकार नष्ट करने के पश्चात अपना समूचा साहस बटोर कर, इच्छा शक्ति के वेग से कॉपने हाथों ऑफिस का दरवाजा खोलता। मुझे यह भी आशा न रहती कि मेरा ग्राहक अन्दर ही होगा।

मेरे सेल्स मैनेजर ने धमकी दी कि अच्छी सख्या में आर्डर न भेजने पर मेरा पैसा रोक लिया जाएगा। इधर घर पर पत्नी को मोदी का बिल चुकाना था। उसे अपना और बच्चों का खर्च चलाना था इसलिए पैसों की जरूरत थी। इन

सारी चिंताओं ने मुझे घेर लिया। दिन प्रति दिन मेरा नैराश्य उन्माद की सीमा तक बढ़ता गया। समझ में नहीं आता था कि क्या करूँ और क्या नहीं करूँ। मैं पहले ही कह चुका हूँ कि वकालत करना मैंने छोड़ दिया था। मेरे मुवक्किल छूट चुके थे। मैं लगभग दिवालिया बन चुका था। न मेरे पास होटल का बिल चुकाने के लिए पैसे थे और न ही घर लौटने के लिए किराया। एक हारे आदमी की तरह घर लौटने का साहस मुझ में नहीं था। इस लिए किराया होता भी तो निराश और टूटे दिल से घर लौटने की हिम्मत मुझ में नहीं थी। मुझे अपने जीवन-मरण की चिंता नहीं थी पर इस बात का दुःख जरूर था कि मैं इस दुनिया में आया क्यों! उस रात मैं गरम दूध पीकर सो गया, मेरा वह दूध पीना भी मेरी आर्थिक क्षमता के बाहर की बात थी। किंकर्तव्यविमूढ व्यक्ति खिड़की से कूद कर जान क्यों देते हैं, इस बात का एहसास मुझे उस रात को ही हुआ। यदि मुझ में हिम्मत होती तो मैं भी वैसा ही करता। जीवन की सार्थकता एव सोद्देश्यता पर मुझे शका होने लगी। जीवन के उद्देश्य को मैं समझ नहीं सका।

इसके आतिरिक्त वहाँ कोई ऐसा व्यक्ति भी नहीं था जिससे मैं सहायता की आशा करता, मैंने भगवान का सहारा लिया और प्रार्थना करने लगा। मैंने प्रभु से, अंधकार एव निराशा से भरे जीवन के लिए, प्रकाश, शक्ति एव मार्गदर्शन की याचना की। मैंने प्रार्थना की कि, हे भगवान पुस्तकों के लिए अधिक ऑर्डर प्राप्त करने में मेरी सहायता कर और मुझे कम से कम इतना पैसा जुटा दे कि मैं अपनी स्त्री एव बच्चों का पेट भर सकूँ। प्रार्थना कर लेने के बाद जब मैंने ऑखें खोलीं तो होटल के उस एकान्त कमरे में ड्रेसर पर रखी एक बाईबल पर मेरी नजर पड़ी, उसे खोल कर मैंने ईसा के उन चिरतन एवं महत्वपूर्ण प्रवचनों को पढा, जो सदियों से असख्य एकाकी, क्लात एव अभिभूत आत्माओं को प्रेरणा देते आ रहे हैं। ईसा ने उक्त प्रवचन अपने अनुयायियों को चिन्ता से दूर रहने का उपाय बताते हुए दिया था —

अपनी चिंता न करो। क्या खाओगे, क्या पिओगे और क्या पहनोगे यह मत सोचो। मौज-शौक और खान-पान के अलावा जीवन का अपना विशेष महत्व है। उन उडते पक्षियों को देखो, वे अनाज नहीं बोते, फसल नहीं काटते और भडार नहीं भरते, फिर भी परम पिता परमात्मा उनका पोषण करता है, फिर तुम तो उनसे भी अच्छी स्थिति में हो।

पहले उस आध्यात्म एवं सत्य की साधना करो, अन्य सभी वस्तुएँ अपने आप ही तुम्हें मिल जायँगी।

जब मैं उन शब्दों को पढ रहा था, एक अपूर्व बात हुई, मेरा मनोवेग शान्त हो गया। चिन्ता, भय एव क्लेश के स्थान पर मुझ में साहस, आशा तथा निष्ठा के भाव जाग उठे।

यद्यपि होटल का बिल चुकाने के लिए मेरे पास पर्याप्त रकम नहीं थी तथापि मैं प्रसन्न था। और इसीलिए मैं खूब सोया। इतना मैं पहले कभी नहीं सोया था।

दूसरे दिन सवेरे अपने ग्राहकों के ऑफिस खुलने तक मैं अधीर हो उठा। उस दिन पानी बरस रहा था। सुन्दर सलौना मौसम था। मैं दृढ एवं साहस भरे कदमों से ऑफिस की ओर बढा। दृढता से मैंने दरवाजा खोला और बड़े उत्साह के साथ एक सम्भ्रान्त कुल के व्यक्ति की तरह चेहरे पर मुस्कराहट लिए, सर ऊँचा उठाए कमरे में प्रवेश किया, अभिवादन किया और अपना परिचय दिया। मेरे ग्राहक ने मुस्कराहट के साथ हाथ मिलाते हुए मेरा स्वागत किया और बैठने को कुर्सी दी।

उस दिन जितनी बिक्री मैंने की थी उतनी गत कई दिनों में नहीं की थी। उस दिन शाम को मैं एक विजयी योद्धा की तरह अपने होटल में लौटा। मैंने अपने में एकदम नयापन अनुभव किया, यह इसलिए कि मैंने सिद्धिदायक एक नवीन मानसिक दृष्टिकोण को अपना लिया था। उस दिन मैंने केवल दूध ही नहीं पिया बल्कि भर पेट स्वादिष्ट भोजन भी किया। उस दिन से मेरी बिक्री दिन दूनी रात चौगुनी बढती गयी।

बाईस वर्ष पूर्व उस भयानक रात में टेक्सास की छोटी अमरीलो होटल में मैंने नया जन्म-सा लिया था। मेरी स्थिति तो वैसी ही रही जैसी कई दिनों से चली आ रही थी, किन्तु आन्तरिक स्थिति में भारी परिवर्तन हो आया था। ईश्वर के प्रति अपने सम्बन्धों का एकाएक मुझे भान हो आया था। मैंने महसूस किया कि कोई भी क्यों न हो, अकेला तो सहज ही में परास्त किया जा सकता है। किन्तु प्रभु की शक्ति यदि उसके साथ हो तो वह अजय बन सकता है। यह बात मैं इसलिए कह रहा हूँ कि इसका मुझे प्रत्यक्ष अनुभव हो चुका है।

"माँगो और तुम्हे मिलेगा, खोजो और ढूँढ लोगे, द्वार खटखटाओ और वह तुम्हारे लिए खुल जायेगा।"

एलिनोइस अन्तर्गत हाइलैण्ड १४२१ आठवीं स्ट्रीट में श्रीमती एल. जी. बिअर्ड रहती हैं। जब उन पर विपत्ति का पहाड टूट पडा तो उन्होंने भगवान से प्रार्थना करके शान्ति और धैर्य को प्राप्त किया। प्रभु के चरणों में झुक कर वे प्रार्थना करती हैं - "हे प्रभु, तू जो करेगा सो ही होगा।"

श्रीमती एल. जी. बिअर्ड अपने एक पत्र में लिखती हैं - "एक दिन शाम को मेरे टेलिफोन की घंटी बज उठी, रिसीवर उठाने का साहस करते करते वह बराबर चौदह बार बजी। मुझे ज्ञात था कि फोन अस्पताल से ही आया होगा और इसलिए मैं कॉप उठी। मुझे आशंका थी कि मेरा छोटा बच्चा कहीं दम न तोड़ रहा हो। उसे मेनेंजाइटिस की बीमारी हो गई थी। पेनिसिलीन देने से उसका ज्वर बढ गया था, और डॉक्टर को शंका हुई कि बीमारी का असर दिमाग पर हो चुका है। इसका

परिणाम ब्रेनटयूमर और आखिर में मृत्यु ही हो सकता था। फोन पर वही सूचना थी जिसकी मुझे आशंका थी। डॉक्टर ने हमें जल्दी ही अस्पताल बुलाया था। मैं अपने पति के साथ वहाँ पहुँची। "सम्भव है आप हमारी परेशानी का अनुमान लगा सकें। मुझे खयाल आया-एक ओर वे माता-पिता हैं जो अपने बच्चों को गोद में ले झुला रहे हैं। दूसरी ओर हम हैं जो इस आशंका में डूबे हुए हैं कि क्या हम अपने बच्चे को फिर कभी गोद में ले सकेंगे। अंत में जब हमें डॉक्टर ने अपने कमरे में बुलाया तो उसके चेहरे के भाव देख कर हम आशंका से काँप उठे। उसके शब्दों ने हमे और भी भयातुर कर दिया। उसने हमे बताया कि बच्चे के बचने की केवल २५ प्रतिशत आशा रह गई है। यदि आप का कोई परिचित डॉक्टर हो तो उसे आप बच्चे को बचाने के लिए बुला सकते हैं।

घर लौटते समय रास्ते में मेरे पति अधीर हो उठे। उन्होंने अपने हाथों को स्टीयरिंग पर पटकते हुए कहा—'कुछ भी हो मैं अपने बच्चे को हाथ से नहीं जाने दूँगा।' यदि आपने किसी को चीखते हुए देखा है तो आप जानते होंगे कि वह दृश्य कितना करुणाजनक होता है। हमने गाड़ी रोक ली और कुछ सोच-विचार के बाद हमने चर्च में जाने का विचार किया। हमने सोचा, यदि भगवान की यही इच्छा है कि बच्चा हम से छिन जाय तो हम उस की इच्छा सर झुका कर स्वीकार कर लें। मैं चर्च में गई और वहाँ एक जगह बैठ गई। रोते रोते मैंने भगवान से कहा—। 'प्रभु' तेरी इच्छा ही सर्वोपरि है।'

"जैसे ही मैंने उन शब्दों को दुहराया मैं अपने को स्वस्थ अनुभव करने लगी। मुझ में एक नवीन शान्ति का भाव जाग उठा। जिसका इधर कई दिनों से अभाव था। घर लौटते समय रास्ते में भी यही दुहराती रही-'प्रभु' तेरी इच्छा ही सर्वोपरि है—"

एक सप्ताह बाद उस रात मैं पहली बार गहरी नींद सो सकी। कुछ दिनों के उपरान्त डॉक्टर ने हमें फिर अस्पताल बुलाया और बताया कि बच्चा अब खतरे से बाहर हो चुका है। आज मैं अपने चार वर्ष के उस स्वस्थ बच्चे को जीवनदान देने के लिए ईश्वर का बड़ा उपकार मानती हूँ।"

मैं कुछ ऐसे लोगों को जानती हूँ जो धर्म को केवल स्त्रियों, बच्चों तथा प्रचारकों का क्षेत्र ही समझते हैं। उन्हें अपने पुरुषार्थ पर गर्व है, वे समझते हैं कि वे अपनी लड़ाई अकेले ही लड़ सकते हैं।

किन्तु, जब उनको यह पता चलेगा कि संसार के अत्यन्त पुरुषार्थी व्यक्ति भी रोज प्रार्थना करते हैं तो उन्हें कितना आश्चर्य होगा! उदाहरण के लिए जेक डेम्पसी को ही ले लीजिए,—कितना बड़ा पुरुषार्थी है वह! उसने मुझे एक दिन बताया कि प्रार्थना किये बिना वह कभी सोता नहीं। कुश्ती के लिए अभ्यास करते समय भी वह रोज प्रार्थना कर लेता है और जब कुश्ती लड़ने जाता है तो पहली

घंटी बजने के पहले ही प्रार्थना कर लेना नहीं भूलता। प्रार्थना से उसे साहस और विश्वास के साथ लड़ने की शक्ति मिलती है।

पुरुषार्थी 'केनी मेक' ने भी मुझे बताया कि वह प्रार्थना किये बिना नहीं सोता।

पुरुषार्थी रेकनबेकर का कहना है कि उसका जीवन प्रार्थना के वरदान से ही सुरक्षित है। वह रोज प्रार्थना करता है।

पुरुषार्थी एडवर्ड आर. स्टेटीनिअस ने जो कि जनरल मोटर एण्ड युनाइटेड स्टेट्स स्टील कम्पनी का एक उच्च अधिकारी है तथा जो सेक्रेटरी ऑफ स्टेट रह चुका है, मुझे बताया कि रोज सुबह-शाम, बुद्धि एव मार्गदर्शन के लिए वह भगवान से प्रार्थना करता है।

अपनी पीढी का महान उद्योगपति एव पुरुषार्थी जे. पियरपोण्ट मोर्गन प्रायः अकेला ही शनिवार के दिन दोपहर के समय वॉल स्ट्रीट स्थित ट्रीनीटी चर्च मे जाकर प्रार्थना किया करता था। पुरुषार्थी आईजनहॉवर भी ब्रिटिश एवं अमेरिकन सेनाओं के सर्वोच्च कार्यभार सम्हालने के लिए जब विमान द्वारा इग्लेण्ड गये तो उनके पास केवल एक पुस्तक थी-बाईबल। पुरुषार्थी जनरल मार्क क्लार्क ने मुझे बताया कि युद्ध के दिनों में भी वे बराबर प्रार्थना किया करते थे। च्यागकाईशेक और जनरल मॉन्टगोमेरी भी यही करते थे। ये वही मॉटगोमेरी हैं जिन्होंने एल. एलामेन में ख्याति प्राप्त की थी। लॉर्ड नेल्सन ने भी ट्रफाल्गर मे यही किया। जनरल वॉशिंगटन, रोबर्ट ई. ली., स्टोन वॉल जेक्सन तथा अन्य बीसियो महान सैनिक नेता सदैव प्रार्थना किया करते थे। उन कर्मवीरो ने विलियम जेम्स की सत्यता को खोज निकाला। उसने कहा था-"हमारा और भगवान का पारस्परिक सम्बन्ध है और अपने को उसके हाथों सौप देने में हमें अथाह सिद्धि की परिपूर्ति हो सकती है।"

बहुत से कर्मवीर आज भी इसी खोज में लगे हैं। सात सौ बीस लाख अमेरिकन, चर्च के सदस्य हैं और यह सख्या अबतक के सदस्यो की सख्या से काफी अधिक है। मैं आपको पहले ही बता चुका हूँ कि वैज्ञानिक भी धर्म की शरण ले रहे हैं। उदाहरणार्थ 'मेन दी अननोन' पुस्तक के लेखक और नोबल पुरस्कार पाने वाले डॉक्टर ऐलेक्जी केरेल को ही लीजिए। रीडर्स डाईजेस्ट पत्रिका में उन्होंने लिखा था कि प्रार्थना से अत्यन्त प्रबल शक्ति उपलब्ध की जा सकती है और वह शक्ति भू गुरुत्वाकर्षण-शक्ति के समान ही वास्तविक है। मै एक डॉक्टर हूँ, और मैंने देखा है कि सभी इलाज नाकाम हो जाने पर भी रोगी श्रद्धा से प्रार्थना कर व्याधि एव सकट से मुक्त हो सके हैं।

रेडियम की भाँति प्रार्थना भी प्रकाश एवं शक्ति का स्रोत है। प्रार्थना के द्वारा मनुष्य अपनी सीमित शक्ति को असीम शक्ति के स्रोत से जोड कर उसकी वृद्धि करने का प्रयास करता है। प्रार्थना करते समय हम अपना सम्बन्ध सृष्टि का सचालन करने वाली उस चिरतन शक्ति के साथ जोडते हैं। हमारी लालसा रहती है कि उस शक्ति का कुछ अंश हमें प्राप्त हो जाए, ताकि हम अपने जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति

कर सके। प्रार्थना करने से भगवान हमारे अभावों की पूर्ति कर देता है और हम सबल एव स्वस्थ हो उठते हैं। भक्ति से ईश्वर का स्मरण करके हम अपने शरीर एव आत्मा का उद्धार करते हैं। चाहे मनुष्य क्षण भर ही प्रार्थना क्यों न करें उसे उसका शुभ परिणाम मिले बिना नहीं रहता।

सृष्टि का सचालन करने वाली उस अविनाशी शक्ति के साथ नाता जोडने का एडमिरल बिअर्ड को अच्छा अनुभव है। उस चिरतन शक्ति से तारतम्य साधने की क्षमता ने ही उसे जीवन के कठिनतम क्षणों में भी उबार लिया। 'अलोन' नामक अपनी पुस्तक मे उन्होंने अपनी कहानी सुनाई है। सन् १९३४ में उनको पॉच महीने, दक्षिण ध्रुव के सुदूर अचल रोज बेरियर की हिमाच्छादित शिखरों की तलहटी में दबी एक झोंपडी में बिताने पड़े। अठहत्तर अक्षाश रेखा के दक्षिण में, वे ही एक जीवित प्राणी थे। उन पर बर्फीले तूफान गरजते थे। भयकर शीत के कारण तापमान शून्य से भी ८२ डिग्री नीचे तक पहुँच गया था। अंधेरे से वे पूर्णतया घिर गये थे। रात खतम ही नहीं होती थी। स्टोव से निकला कार्बन-डाय-ऑक्साइड उनके लिए घातक बन रहा था और उसका विष धीरे धीरे अपना काम करता जा रहा था। वे क्या करते? निकटतम सहायता का केन्द्र भी उनसे १२३ मील दूर था। और शायद कई महीनों तक, किसी प्रकार की सहायता पाना उनके लिए सम्भव नहीं था। उन्होंने अपने स्टोव को जलाने का प्रयत्न किया और रोशन दान बनाया। किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। स्टोव से निकलने वाली गैस ने उन्हें कई बार बेहोश कर दिया था। वे बेहोश फर्श पर पड़े रहते। न खा सकते थे, न सो सकते थे। उनकी कमजोरी इतनी बढ गई थी कि बिस्तर छोडना तक उनके लिए मुश्किल हो गया था। कई बार उन्हें शंका होती कि वे सुबह होने तक जिन्दा भी रह सकेंगे! उन्हें विश्वास हो गया था कि वे उसी केबिन में मर जायेंगे और उनका शरीर उस अपार हिमराशि के नीचे दब कर रह जायगा।

उनकी जान कैसे बची! एक दिन जब वे भयकर रूप से निराश हो गये, तो उन्होंने बड़ी मुश्किल से अपनी डायरी ली और उसमें अपना जीवन-दर्शन लिखने का प्रयास किया। उन्होंने लिखा, "इस विश्व में केवल मनुष्य ही नहीं रहते, यहाँ आकाश में चमकते हुए तारे भी हैं, तथा अन्य ग्रह एव उपग्रह भी।" उन्होंने सूर्य का विचार किया जो समय समय पर दक्षिण ध्रुव के समूचे उजाड़ प्रदेश को रोशनी से जगमगा देता और उसके बाद उन्होंने अपनी डायरी में लिखा, "मैं यहाँ अकेला नहीं हूँ।"

उनके इसी विचार ने पृथ्वी के उस एकान्त छोर में, हिम की उस गुफा मे उन्हें मरने से बचा लिया। उन्होंने भी यही कहा है, इसी विचार ने मेरी रक्षा की है। कुछ ही व्यक्ति ऐसे होते है जिनकी जीवनशक्ति अपने जीवन काल ही मे लगभग समाप्त हो जाती है, अन्यथा मरते तक मनुष्य में शक्ति के कितने ही गहरे कुऍं भरे रहते हैं,

जिनका वह उपयोग ही नहीं कर पाता। रिचार्ड बिर्ड ने भगवान की शरण में जाकर शक्ति के उस भंडार को खोल कर उसका उपयोग करना सीख लिया।

जो पाठ ऐटमिरल बियर्ड ने ध्रुव प्रदेश की हिमानियों के बीच रहकर सीखा, वही ग्लेन. ए. आर. नोल्ड ने इलानुआ के धान के खेतों में सीखा था। इलानुआ अन्तर्गत चिलिकोथ की वेकन बिल्डिंग में ये महाशय बीमा-ब्रोकर का काम करते थे। चिन्ता पर विजय पाने की कहानी उन्होंने इस प्रकार सुनाई थी–

"आठ वर्ष पूर्व की बात है, मैंने विचार किया कि मैं हमेशा के लिए घर छोड दूँ और अपनी गाडी में बैठ कर नदी की ओर चल दूँ। मैं जीवन में हार चुका था, एक माह पूर्व ही मेरा अपना छोटा-सा संसार चूर होकर रह गया था — बिजली के यंत्रों एवं उपकरणों का मेरा व्यापार बैठ गया था। घर पर माँ अन्तिम साँसे गिन रही थी, पत्नी उन दिनों गर्भवती थी, दूसरे पुत्र को जन्म देने वाली थी। डॉक्टर का बिल दिन प्रति दिन बढ रहा था। अपना व्यापार फिर से शुरू करने के लिए मैं अपने पास जो कुछ था उसे गिरवी रख चुका था। कार और फर्नीचर भी रेहन रखे हुए थे। अपनी बीमा की रकम पर भी कर्ज उठा लिया था। सब कुछ एकदम चौपट हो गया था। विपत्ति का सामना करना कठिन हो गया था। अततः एक दिन अपनी मुश्किलात से सदा के लिए छुटकारा पाने के विचार से मैं अपनी गाड़ी में बैठ नदी की ओर चल पडा।

"मैंने देहात में कुछ मील तक यात्रा की और तब गाडी को सडक से दूर खडी कर बाहर निकल आया और बच्चे की तरह फूट फूट कर रोने लगा। अपनी उस अवस्था में मैंने चिन्ता में उलझे न रह कर वस्तुस्थिति पर क्रियात्मक रूप से विचार करना आरम्भ किया। मेरी परिस्थिति कितनी खराब है? क्या वह इससे भी अधिक खराब हो सकती? क्या वह सचमुच ही निराशापूर्ण है? उसे सुधारने के लिए क्या किया जा सकता है?

इतना सोच कर मैंने तत्काल ही अपनी समस्या भगवान के हवाले कर दी और उसे सुलझाने के लिए भगवान से प्रार्थना करने का निश्चय किया। मैंने खूब प्रार्थना की, मानो मेरा समूचा जीवन उस प्रार्थना पर ही टिका हुआ हो। बात भी कुछ ऐसी ही थी। इसी दरमियान एक अजीब बात बनी। जैसे ही मैंने अपनी समस्याओं को सर्व शक्तिमान प्रभु के हवाले किया, मुझे एक आन्तरिक शान्ति का अनुभव हुआ। ऐसा अनुभव इधर कई महीनों से मैं नहीं कर पाया था। मैं उस जगह करीब आधा घंटा रोता-सिसकता बैठा रहा और फिर घर लौट कर छोटे बच्चे की तरह मीठी नींद सो गया।

दूसरे दिन सवेरे जब मैं जगा तो मुझमें आत्मविश्वास था। मैं सर्वथा निर्भय हो चुका था क्योंकि मार्गदर्शन के लिए मैं अब भगवान पर ही निर्भर था। उस दिन मैं अपने आत्मविश्वास के साथ सिर ऊँचा उठाए, एक स्थानीय डिपार्टमेन्टल स्टोर के बिजली सम्बन्धी सामग्री बेचने वाले विभाग में सेल्समेन की नौकरी

खोजने के लिए गया। नौकरी मिल जाने का मुझे पूरा विश्वास था और वह मिली भी। मुझे उससे लाभ भी मिलता रहा, किन्तु बाद में युद्ध के कारण वह धन्धा एकदम चौपट हो गया। तब मैंने अपने भगवान की छत्रछाया में जीवन-बीमा के एजेन्ट का काम किया। यह घटना पॉच वर्ष पूर्व की है। अब तो मैंने अपना सारा कर्ज अदा कर दिया है। अब मेरे तीन प्यारे-से बच्चे हैं। मेरे पास अपना घर है, मोटर है और पच्चीस हजार डॉलर का बीमा है।

आज जब मैं अपने अतीत पर विचार करता हूँ तो मुझे इस बात की खुशी होती है कि उन दिनों मैं बरबाद हो गया और घबरा कर आत्महत्या के विचार से नदी में डूबने के लिए चल दिया था। यदि यह सब न होता तो मुझमें भगवान के प्रति इतना विश्वास उत्पन्न नहीं होता। आज मुझमें इतनी शान्ति और इतना आत्मविश्वास है कि जिसकी मैंने कभी कल्पना भी नहीं की थी।

क्या कारण है कि धार्मिक निष्ठा हमें शान्ति, दृढता एव धैर्य प्रदान करती है? इस का उत्तर विलियम जेम्स से पूछिए। उनका कहना है कि जिस प्रकार सागर का ऊपरी चचल भाग और उमड़ती मौजें उसके अन्तस्तल की शान्ति भग नहीं कर सकते उसी प्रकार यदि मनुष्य का, विशाल चिरतन शक्तियों पर अधिकार हो तो वैयक्तिक-जीवन का एक क्षणिक उतार चढाव उसके लिए कोई महत्त्व नहीं रखता। जिस व्यक्ति में वास्तविक धार्मिक निष्ठा हो वह दृढ एव सतुलित रहता है और धैर्य-पूर्वक दैनिक जीवन के किसी भी कर्तव्य को निभाने मे तत्पर रहता है।

अपनी चिन्ता एव व्याकुलता में हम भगवान का सहारा क्यों न लें? इमानुअल केन्ट कहते हैं—"ईश्वर में निष्ठा रखो, इसकी हमें बड़ी आवश्यकता है। हमें आज ही, अभी से, सृष्टि का सचालन करने वाली उस अनत शक्ति के साथ अपना नाता जोड़ लेना चाहिए।"

भले ही, स्वभाव और शिक्षा की दृष्टि से आप निष्ठावान व्यक्ति न हों, भले ही आप पूरे नास्तिक हों, फिर भी प्रार्थना से आपको अप्रत्याशित सहायता मिल सकती है। यह एक व्यावहारिक उपाय है। इसे मैं व्यावहारिक इस लिए बताता हूँ कि चाहे मनुष्य ईश्वर में निष्ठा न भी रखे, इससे उसकी तीन मूलभूत मनोवैज्ञानिक आवश्य-कताओं की, जो उसके लिए बहुत आवश्यक हैं, पूर्ति हो जाती है।

प्रार्थना करके हम अपने वास्तविक दुःख को वाणी मे प्रकट कर सकते हैं। चौथे परिच्छेद मे हम देख चुके हैं कि अनिश्चित एवं धुँधली समस्याओ का निरा-करण प्रायः असम्भव है। इस लिए प्रार्थना करना, बहुत कुछ अपनी समस्याओं को कागज पर उतारने के समान ही है। यदि हम किसी समस्या को लेकर भगवान की सहायता चाहें तो भी हमें उसे वाणी में प्रकट करना पड़ेगा।

प्रार्थना से हमें ऐसा अनुभव होता है कि मानो हम अपने दुःख-भार को अकेले न ढो कर दूसरों में बॉट रहे हैं। हममें से कुछ ही व्यक्ति ऐसे समर्थ हैं जो अपने भार को तथा यातना देने वाले कष्टों को अकेले ही सह लेते हैं। कभी कभी हमारे

कष्ट ऐसे भी होते हैं कि उन्हें हम अपने निकटतम सम्बन्धियों एव अभिन्न मित्रों तक को नहीं बता सकते। ऐसी दशा मे अपना दु:ख व्यक्त करने के लिए प्रार्थना ही एक-मात्र उपाय रह जाता है। कोई भी मनोरोग-चिकित्सक आपको बता सकेगा कि चिकित्सा की दृष्टि से व्याकुलता, तनाव एव सताप की अवस्था में अपने दुःखों को दूसरो के सामने व्यक्त कर देने मे बड़ा ही लाभ होता है और यदि कुछ दुःख ऐसे हों जिन्हें हम किसी और से न कह सके तो भगवान से तो निश्चय ही कह सकते हैं।

प्रार्थना से रोगी को व्यस्त रखने के सिद्धान्त को बल मिलता है, उसे व्यस्त रखने की यह पहली अवस्था है। मैं तो नहीं मानता कि कोई भी व्यक्ति बिना कोई लाभ हुए, अपनी समस्या सुलझाने के लिए रोज-रोज प्रार्थना करता रहे। मैं यह भी नहीं मानता कि वह अपनी उलझन को समाप्त करने के लिए कोई प्रयत्न ही न करे। एक विश्वविख्यात वैज्ञानिक का कथन है, "प्रार्थना से अत्यन्त प्रबल शक्ति की उद्भावना होती है। फिर प्रार्थना करके ऐसी शक्ति का उपयोग क्यों न किया जाय? ईश्वर की परिभाषा और राम-रहीम के झगड़े में क्यों पड़ा जाय, जब कि प्रकृति की वह रहस्यमयी शक्ति हमारी रक्षा करती है!

क्यों न आप इसी क्षण पुस्तक पढना बंद कर शयनकक्ष में जा, दरवाजा बन्द कर, प्रार्थना करना शुरू कर दें और अपने हृदय का बोझ हल्का कर लें। यदि आपने अपनी निष्ठा खो दी है तो प्रार्थना किजिए कि वह आपको पुनः प्राप्त हो जाय। ईश्वर के सामने गिड़गिड़ाइए और याचना कीजिए कि 'हे भगवान, अब मैं अकेला संघर्ष नहीं कर सकता, मुझे तुम्हारी सहायता और तुम्हारा स्नेह चाहिए। मेरी सभी भूलों को क्षमा कर दो और मेरे हृदय का कल्मष धो डालो। मुझे शान्ति, स्थिरता एव स्वास्थ्य का मार्ग दिखाओ और मुझमें इतना प्रेम - भाव भर दो कि मैं अपने दुश्मनों को भी प्यार कर सकूँ।"

यदि आपको प्रार्थना करना न आता हो तो सात सौ वर्ष पूर्व व्यक्त किये गये सत फ्रांसिस के शब्दों को दुहरा लीजिए —

"हे प्रभु, मुझे अपनी शान्ति का उपकरण बना, ताकि मैं घृणा के बदले प्रेम, अपकार के बदले क्षमा, नैराश्य के बदले आशा, अंधकार के बदले प्रकाश तथा उदासी के बदले उल्हास के भाव प्रकट कर सकूँ।

हे परम पिता, मुझे वरदान दे कि मैं अपने धैर्य की परवाह न कर दूसरो को धैर्य दे सकूँ। अपने को समझाने की परवाह न कर दूसरों को समझा सकूँ, दूसरों का प्रिय बनने की लालसा न रख कर, उनको प्यार कर सकूँ। क्यों कि हम देकर ही ले सकते हैं; क्षमा करके ही क्षमा के पात्र बन सकते हैं, दूसरों के लिए मर कर ही अमर बन सकते हैं।

☆

भाग ६

आलोचना की चिन्ता से दूर रहने का उपाय

२० : याद रखिए मृत कुत्ते को कोई लात नहीं मारता

उन्नीस सौ उन्तीस में एक ऐसी घटना घटी कि जिसने शिक्षा-क्षेत्र में राष्ट्र-व्यापी तहलका मचा दिया। सारे अमेरिका के विद्वान उस दृश्य को देखने शिकागो में जमा हुए थे। इस घटना के कुछ ही वर्ष पूर्व रॉबर्ट हचिन्स नामक युवक येल में वेटर, कबाड़ी, शिक्षक (ट्यूटर) और कपड़े सुखाने के लिए डोरियाँ बेचने का धंधा करता था। आठ वर्ष उपरान्त वह अमेरिका के सबसे समृद्ध विश्व-विद्यालयों में चौथी श्रेणी के शिकागो विश्व-विद्यालय का प्रेसिडेन्ट बन गया। उस समय उसकी अवस्था तीस वर्ष की थी। यह एक अपूर्व घटना थी। वृद्ध शिक्षा-शास्त्रियों ने शंका से सिर हिला दिये। उस विचित्र युवक पर निन्दा एवं आलोचना की बौछारें होने लगी। लोग कहते-यह ऐसा है, वैसा है, अनुभव हीन है, शिक्षा सम्बन्धी उसके विचार बेढंगे हैं। यहाँ तक कि समाचार पत्रों ने भी आक्षेप करने शुरू कर दिये।

जिस दिन हचिन्स प्रेसिडेन्ट बननेवाला था, उसके पिता, रॉबर्ट मेनार्ड को एक मित्र ने जाकर कहा कि "आज एक समाचार पत्र में तुम्हारे पुत्र की आलोचना सम्पादकीय में पढ कर मैं हतप्रभ रह गया।"

'हाँ,' वृद्ध हचिन्स ने उत्तर दिया, "आक्षेप कटु था किन्तु याद रखो कि मृत कुत्ते को कोई भी लात नहीं मारता। और हाँ, कुत्ता जितना ही अधिक महत्त्वपूर्ण होगा उतना ही अधिक सन्तोष औरों को उसे लात मार कर होगा। प्रिन्स ऑफ वेल्स, जो बाद में एडवर्ड अष्टम कहलाए और अब ड्यूक ऑफ विंडसर कहलाते हैं, इस कथन के स्पष्ट प्रमाण हैं। ड्यूक ऑफ विंडसर उन दिनों डेवन्डशायर के डार्ट माउथ कॉलेज में शिक्षा ले रहे थे। उनकी अवस्था चौदह वर्ष की थी। जिस कॉलेज में वे शिक्षा ले रहे थे वह अन्नापोलिस के नेवल अकेडेमी की श्रेणी का है। एक दिन एक नौसेना अधिकारी ने उन्हें रोते देखा और रोने का कारण पूछा। पहले तो उन्होंने कारण बताने से इन्कार कर दिया किन्तु बाद में सब सच-सच बता दिया कि नौसेना के कैडेट उन्हें लातें मारते हैं। कॉलेज के कमाण्डर ने उन लड़कों को बुलाया और उन्हें समझाया कि यद्यपि राजकुमार ने कोई शिकायत नहीं की है किन्तु मैं जानना चाहता हूँ कि इस धृष्ट व्यवहार के लिए अकेले राजकुमार को ही क्यों चुना गया है? बहुत हाँ-ना और झिझक के उपरान्त अन्तत उन लड़कों ने बताया कि वे ये चाहते हैं कि बड़े होकर, शाही नौसेना के कैप्टन अथवा कमान्डर बन कर वे यह कह सकें कि उन्होंने बादशाह के भी लातें जमाई हैं।

अतः जब कभी आप पर लातें पड़ें या आप पर आक्षेप किया जाय तो सदा याद रखिए कि लात मारने वाला अथवा आक्षेप करनेवाला अपने आप को महत्त्व देने के लिए ही ऐसा करता है। इसका अर्थ प्रायः यह होता है कि आप कुछ ऐसा काम कर रहें हैं जिसकी ओर लोगों का ध्यान खिंचता है। अपने से अधिक पढे-लिखे अथवा सफल व्यक्तियों की आलोचना करके कई व्यक्तियों को पाशविक संतोष मिलता है। उदाहरणार्थ इन्हीं दिनों मुझे एक महिला का पत्र मिला है जिसमें उसने साल्वेशन आर्मी (मुक्ति सेना) के जन्मदाता जनरल बूथ की आलोचना की है।

मैंने जनरल बूथ की प्रशंसा में एक रेडियो वक्तव्य दिया था। उसी के उत्तर मे उसने लिखा था कि जनरल बूथ ने गरीब लोगों की सहायता के लिए जमा की गई आठ करोड डॉलर की रकम हजम कर ली है। यह आक्षेप सचमुच ही बेहूदा था। इस महिला को सचाई की उतनी परवाह नहीं थी जितनी की अपनी कलुषित भावना तृप्त करने की। यह तृप्ति उसने अपने से कोसों दूर बैठे व्यक्ति की निन्दा करके की। मैंने उस के उन कटु पत्रों को रद्दी की टोकरी में फेंक दिया और प्रभु को धन्यवाद दिया कि वह मेरी पत्नी न हुई। उस पत्र में, जनरल बूथ के विषय में और कुछ नहीं लिखा था किन्तु उस पत्र द्वारा उस महिला के बारे में मैं बहुत कुछ जान गया। शॉपनहावर सदियों पहले कह गए हैं कि, "निकम्मे लोग बडे लोगों की भूलों और दोषों से बहुत खुश होते हैं।"

शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा जो येल के प्रेसिडेन्ट को अशिष्ट समझे। फिर भी येल विश्व-विद्यालय के भूतपूर्व प्रेसिडेन्ट टिमथी ड्वाइट ऐसे व्यक्ति थे जिन्हें अमेरिकी प्रेसिडेन्ट पद के लिए खडे होने वाले उम्मीदवार की भर्त्सना करने में बडा आनन्द आता था। उन्होंने जनता को आगाह किया कि यह उम्मीदवार यदि प्रेसिडेन्ट चुन लिया गया तो हमारी पत्नियाँ एवं पुत्रियाँ वैध वेश्यावृत्ति की शिकार बन जाएँगी। चाहे संयत रूप से ही हो, पर अपमानित होंगी, भ्रष्ट हो जाएँगी, शील और सौजन्य से दूर जा पड़ेंगी तथा ईश्वर और पुरुष से घृणा करने लग जाएँगी।

लगता है, ये शब्द हिटलर के लिए कहे गए हों, किन्तु यह भर्त्सना टॉमस जेफरसन की थी। उस अमर जेफरसन की जो 'डिक्लेरेशन ऑफ इन्डिपेन्डेन्स' का लेखक था, प्रजातंत्र का पुजारी और एक संत था।

क्या आप किसी ऐसे अमेरिकन की कल्पना कर सकते हैं जिसे धूर्त, धोखेबाज, और प्रायः हत्यारा कहा गया था!

एक समाचार पत्र में उसका व्यंगचित्र प्रकाशित हुआ जिसमें उस व्यक्ति को ग्यूलोटाइन (जहाँ मृत्यु दण्ड के लिए आदमी को खडा किया जाता है) के ऊपर खडा किया गया था और उसका सर उडाने के लिए एक बडा खंजर बताया गया। जब वह रास्ते से गुजरता तो लोग उस पर व्यंग कसते और अपनी घृणा का प्रदर्शन करते। और वह व्यक्ति था जॉर्ज वाशिंगटन।

एक दूसरी घटना लीजिए। एक अरसा हुआ इसे घटे। सम्भव है मानव प्रकृति

में अब कुछ सुधार हो गया हो। तो आइए, एटमीरल पेयरी का उदाहरण देखिए। इस अन्वेषक ने ६ अप्रैल १९०९ को कुत्तों द्वारा खींची जाने वाली गाड़ी में बैठ कर, उत्तरी ध्रुव पहुँच कर, ससार को चकित एव रोमाचित कर दिया। इस सिद्धिलाभ के लिए सदियों से कई वीर कष्ट झेलते आए हैं और अपने प्राणों की आहुति दे दी है। पेयरी भी सर्दी और भूख से मृतप्रायः हो चुका था और उसके पैरों की आठ अगुलियाँ बर्फ के कारण इतनी फट गई थी कि उन्हें काट देना पड़ा। अपने दुर्भाग्य से वह इतना विह्वल हो उठा था कि उसे पागल हो जाने की आशका रहने लगी। इधर वॉशिंग्टन में नौसेना के अधिकारी उसकी ख्याति एव चर्चा को लेकर जल-भुन कर खाक हो रहे थे। ईर्षा से जलकर उन्होंने उस पर आरोप लगाया कि वैज्ञानिक अन्वेषण के नाम पर धन जमा कर वह उत्तरी ध्रुव प्रदेश में कहीं भटक कर समय काट रहा है। और शायद उनका मन भी यही था क्योंकि जिस बात को मानने का मन हो उस पर अविश्वास करना असम्भव हो जाता है। पेयरी को नीचा दिखाने तथा उसकी प्रगति रोकने का, उनका सकल्प इतना उग्र था कि प्रेसिडेन्ट मेकिनले को उसे उत्तरी ध्रुव में अपनी खोज जारी रखने के लिए नौसेना विभाग की जानकारी के बिना सीधी आज्ञा भेजनी पड़ी और इस प्रकार वह अपना काम जारी रख सका।

यदि पेयरी नौसेना विभाग में ही बैठे बैठे काम करता रहता तो क्या कोई उसकी इतनी आलोचना करता? नहीं, क्योंकि तब वह इतना महत्वपूर्ण नहीं होता कि दूसरों में ईर्षा जग जाय।

जनरल ग्रान्ट का अनुभव तो पेयरी के अनुभव से भी कटु था। १८६२ में जनरल ग्रान्ट ने पहला महान निर्णायक युद्ध जीता था। उत्तरी अमेरिका की यह पहली विजय थी। यह विजय दोपहर में मिली थी। उस विजय ने देखते-देखते ग्रान्ट को राष्ट्र-नायक बना दिया था। यहाँ तक कि सुदूरपूर्व में भी उसका गहरा प्रतिघात हुआ था। उस विजय के कारण चर्च के घटे बज उठे। 'मैन' से मिसिसिपी तक के दोनों किनारों पर बसी बस्तियों में हर्ष और उल्लास की लहर थिरक उठी। किन्तु उस महान विजय का महान विजेता, उत्तर का वीर, ग्रान्ट छः सप्ताह बाद ही बदी बना लिया गया। उसके कमान्ड से सेना हटा ली गई। नैराश्य एव अपमान से भरकर वह खूब रोया।

विजय के चरम उत्कर्ष के समय ही जनरल यू. एस. ग्रान्ट को बन्दी क्यों बना लिया गया। मुख्यतया इसलिए कि उसने अपने हठधर्मी अधिकारियों के हृदय में ईर्षा एव स्पर्धा की ज्वाला भड़का दी थी।

यदि आप अनुचित आलोचना से चिन्तित हो जाने के आदी हों तो यह तीसरा नियम ध्यान में रखें—अनुचित आलोचना परोक्ष रूप में आपकी प्रशसा ही है। स्मरण रखिए कोई भी व्यक्ति मृत कुत्ते को लात नहीं मारता।

☆

२१ : यह उपाय कीजिए तो आलोचना से आपको दुःख नहीं पहुँचेगा।

एक बार मैंने मेजर जनरल स्मेडली बल्टर से भेंट की। ये वही हैं जो गिमलेट आई. और हेल डेविल के उपनाम से प्रसिद्ध थे। इन उपनामों से शायद आप उन्हें पहचान गये होंगे। अमेरीकी नौसेना के ये जबरदस्त रंगीले एव शेखीबाज जनरल थे।

उन्होंने मुझे बताया कि जवानी के दिनों में उन्हें लोकप्रिय होने की तीव्र लालसा थी। प्रत्येक व्यक्ति पर वे अच्छा प्रभाव जमाना चाहते थे। उस दिनों मामूली-सी आलोचना भी लोगों को चुभ जाया करती थी। किन्तु नौसेना में तीस वर्ष काम करने के कारण उनकी खाल इतनी मोटी हो गई है कि आलोचना का उन पर कोई असर ही नहीं होता। उन्होंने कहा, "मेरा अपमान किया गया, मुझे गिराया गया और भीरू नाग और नीच कहकर मेरी भर्त्सना भी की गई। कई विशेषज्ञों ने मुझे कोसा भी। जितनी हो सकती थी बद्दुआएँ दीं, पर मैंने चिन्ता नहीं की। जब कभी भी मैं किसी व्यक्ति को बद्दुआ अथवा गाली देते सुनता हूँ, मैं उसकी ओर आँख उठा कर भी नहीं देखता।

सम्भव है कि वृद्ध गिमलेट आई. बटलर आलोचना की, आवश्यकता से अधिक उपेक्षा करते हों किन्तु यह तो निश्चित है कि हममें से कई, 'बात का बतगड' बना देते हैं और मामूली-सी बात को भी बहुत गभीर रूप दे देते हैं। आज भी मुझे यह घटना याद है। कई वर्षों की बात है "न्यूयार्कसन" के एक सम्वाददाता मेरी प्रौढ-शिक्षा की कक्षाओं की प्रदर्शन-सभा में सम्मिलित हुए थे। उन्होंने मेरी और मेरे कार्य की छीछालेदर की। मैं जलभुन कर रह गया। मैंने उसे अपना अपमान माना। मैंने 'सन' पत्र की प्रबन्ध कमेटी के अध्यक्ष गिलहॉजेज को फोन किया। और कहा कि उन्हें अपने पत्र में ऐसा लेख देना चाहिए जो तथ्यों पर आधारित हो और जो कोरी बकवास न हो। मैं उन्हें योग्य दण्ड देने के लिए कृत-सकल्प था।

किन्तु आज मुझे अपने उस व्यवहार पर लज्जा आती है। आज मैं महसूस करता हूँ कि अखबार पढनेवाले पाठकों में से आधे पाठकों ने तो उस लेख को देखा ही नहीं होगा। जिन्होंने उसे पढा होगा उनमें से भी आधे पाठकों ने उसे सहज विनोद की सामग्री समझा होगा और बाकी जिन लोगों ने उस पर ध्यान दिया होगा वे कुछ ही हफ्तों में इस बात को भूल भी गये होंगे।

मैंने महसूस किया कि लोग दूसरों के बारे में कभी नहीं सोचते। वे इस बात की भी परवाह नहीं करते कि अन्य लोगों के बारे में कहाँ, क्या कहा गया है। वे तो सोते जागते अपनी ही चिन्ता में लगे रहते हैं। वे हमारी मौत से भी ज्यादा अपने मामूली-से सरदर्द की परवाह करते हैं।

यदि हम पर आरोप लगाया जाय, हमारी खिल्ली उडाई जाय, निन्दा की जाय, अ.पीठ में छुरा भी भोंक दिया जाय, या अपने अभिन्न मित्रों द्वारा हमारे साथ

विश्वासघात हो तो भी हमें आत्मग्लानि से दुःखी नहीं होना चाहिए। बल्कि स्मरण रखना चाहिए कि ईसा के साथ भी ऐसी ही बातें हुई थीं। इनके बारह अन्य साथियों में से एक आज के मूल्य के अनुसार केवल उन्नीस डॉलर की रिश्वत के कारण विश्वासघात कर गया। एक और साथी ने उन्हें दुर्दिनों में छोड दिया और सौगन्ध खाकर तीन बार घोषणा की कि वह उन्हें नहीं जानता, इस प्रकार प्रति छः साथियों में से एक ईसा के लिए विश्वासघाती साबित हुआ। फिर हम उससे अच्छे परिणाम की आशा कैसे रखें। वर्षों पहले मैंने यह जान लिया कि लोगों को मैं अनुचित आलोचना करने से नहीं रोक सकता, किन्तु मै एक अत्यन्त महत्वपूर्ण काम अवश्य ही कर सकता हूँ, और वह है, इस बात का निश्चय कि मुझे अनुचित आलोचना से परेशान नहीं होना चाहिए।

मैं जरा अपनी बात को स्पष्ट कर दूँ। मै यह नहीं कहता कि आप सच्ची आलोचना की अवज्ञा करें। नहीं, बिल्कुल नहीं! मै तो यह कहता हूँ कि आप अनुचित आलोचना की उपेक्षा कीजिए।

एक बार मैंने एलिनोर रुजवेल्ट से भी यही प्रश्न पूछा था कि आप अनुचित आलोचना से किस प्रकार पार पाती हैं? अनुचित आलोचना का उन्हें जितना सामना करना पड़ा है इसे भगवान ही जानता है। व्हाईट हाऊस मे अबतक जितनी महिलाएँ रह चुकी हैं उनमें से सम्भवतः ऐलिनोर रुजवेल्ट ही एक ऐसी महिला हैं जिनके घनिष्ट मित्र भी बहुत हैं और साथ ही कट्टर दुश्मनों की सख्या भी कम नहीं।

उन्होंने मुझे बताया कि जब वे तरुणावस्था में थीं, तब लोगों की टीका से अत्यन्त घबरातीं व भय खाती थीं। वे आलोचना से इतनी डरती थीं कि एक दिन उन्होंने अपनी ननद से इस बारे में सलाह ली। उन्होंने कहा, "आन्टी बे, मैं ये काम करना चाहती हूँ पर लोगों की आलोचना से डरती हूँ।"

टेडी रुजवेल्ट की बहन ने सहानुभूति से उसकी ओर देखते हुए कहा—"जब तक तुम यह समझो कि जो कुछ तुम कर रही हो, वह ठीक है, लोगों की आलोचना की परवाह मत करो। एलिनोर ने मुझे बताया कि जिन दिनों मैं व्हाइट हाऊस में थी, वह सलाह मेरे लिए एक आधार बन गई। उसने मुझे बताया कि आलोचना की अवज्ञा करने का एक मात्र उपाय यही है कि हम अपने को एकदम जड बना लें। एलिनोर रुजवेल्ट ने सलाह दी कि "अपने मन में जो उचित समझो, करो। आलोचनाएँ तो होंगी ही, चाहे तुम कुछ करो या न करो।

जब स्वर्गीय सी. मेथ्यु ४० वाल स्ट्रीट में अमरीकन अन्तर्राष्ट्रीय कोरपोरेशन के अध्यक्ष थे तब मैंने उनको पूछा था कि "क्या आप भी कभी आलोचना से क्षुब्ध होते हैं?" उत्तर मे उन्होंने बताया कि "हाँ, पहले मैं आलोचना से उत्तेजित हो जाता था। मै चाहता था कि मेरे सगठन के सभी कर्मचारी मुझे पूर्ण पुरुष समझें। और यदि कोई ऐसा न समझता तो मुझे क्लेश होता। पहले मैं उस व्यक्ति को प्रसन्न करने का प्रयास करता जो मेरी टीका करता किन्तु ऐसा करने में मैं

किसी और को नाराज एवं उत्तेजित कर बैठता। जब मैं उस व्यक्ति से मेल बढ़ाने की कोशिश करता तो दूसरे लोग भड़क उठते। अन्ततः मुझे विदित हुआ कि व्यक्तिगत आलोचना से मर्माहत हुए लोगों के हृदय पर जितना अधिक मरहम लगाने की कोशिश करता हूँ, मेरे दुश्मनों की संख्या उतनी ही अधिक बढ़ती जाती है। तब मैंने अपने मन में विचार किया कि सामान्य लोगों से ऊपर उठकर चलने पर आलोचना अवश्य होगी, इसलिए उनकी बातों को दरगुजर कर जाना ही ठीक है। इस विचार ने मुझे अत्यधिक सहायता दी। तब से मैं भरसक उत्तम कार्य करता और आलोचना की उपेक्षा करता।"

किन्तु स्वर्गीय डीम्स टेलर, मेथ्यु सी. ब्रश से भी एक कदम आगे बढे हुए थे। वे आलोचना को स्वीकार कर लेते और बाद में जनता में उसकी खिल्ली उडाते। जब एक बार वे रविवार को दोपहर में आयोजित न्यूयॉर्क फिलहारमोनिक सिम्फोनी आरकेस्ट्रा (रेडियो वाद्यवृन्द कार्यक्रम) पर विश्रान्ति के समय टिप्पणी कर रहे थे एक महिला ने पत्र लिख कर उन्हें झूठा, धोखेबाज, विषैला और भीरू कहा।

आगामी सप्ताह में टेलर ने वह पत्र रेडियो पर लाखों सुननेवालों को पढ कर सुनाया। अपनी पुस्तक 'मैन एण्ड म्यूजिक (व्यक्ति और संगीत) में उन्होंने लिखा है कि रेडियो पर पत्र पढे जाने के कुछ दिनों बाद भी उसी महिला का ठीक वैसा ही पत्र बिना किसी परिवर्तन के फिर से उन्हें प्राप्त हुआ। मि. टेलर ने लिखा है कि मैं नहीं समझता कि उसने उस रेडियो भाषण की, कोई परवाह नहीं की, जरूर की होगी। आलोचना को इस प्रकार ग्रहण करने वाले व्यक्ति की प्रशंसा किये बिना हम नहीं रह सकते। हम उसकी गम्भीरता, उसके दृढ संतुलन और विनोदी स्वभाव की सचमुच ही प्रशंसा करते हैं।

प्रिंसटन में विद्यार्थी वर्ग के समक्ष भाषण करते हुए चार्ल्स श्वाब ने स्वीकार किया कि उसे सबसे महत्वपूर्ण शिक्षा 'श्वाब स्टील मिल' में काम करने वाले एक वृद्ध जर्मन से मिली। वह वृद्ध जर्मन, मिल के अन्य मजदूरों के साथ युद्धकालीन गरमा-गरम बहस में उलझ गया और उन मजदूरों ने गुस्से में आकर उसे नदी में फेंक दिया। श्री श्वाब कहते हैं कि जब वह कीचड़ और पानी से सना मेरे कार्यालय में आया तो मैंने उससे पूछा कि "ऐसा तुमने उन मजदूरों को क्या कहा कि उन्होंने तुम्हें नदी में फेंक दिया?" उसने उत्तर दिया, "मैंने उन्हें कुछ नहीं कहा, सिर्फ हँस दिया।"

श्री श्वाब ने बताया कि उन्होंने भी, वृद्ध जर्मन के उन 'सिर्फ हँस दिया,' शब्दों को अपना मोटो बना लिया है।

अनुचित आलोचना के शिकार होने वाले लोगों के लिए ये शब्द बड़े लाभ-प्रद हैं। आपसे विवाद करने वाले से तो आप विवाद कर सकते हैं किन्तु जो आपकी बात पर हँस दे उसका आप क्या करेंगे?

गृह-युद्ध की भीषणता के दिनों में लिंकन टूट कर रह जाता यदि उसने अपने सभी धृष्ट आलोचकों की आलोचना के प्रति मौन रहने का पाठ न सीखा होता। अन्ततः उसने कहा था—यदि मुझ पर किये गये उन सभी आक्षेपों का उत्तर न देकर केवल उन्हें पढ़ूँ भी तो मुझे अपना यह धन्धा छोड़कर कोई दूसरा धन्धा अख्तियार करना पड़े। मैं भरसक अच्छे से अच्छा काम करने का प्रयास करता हूँ और उसे अन्त तक निभाने का प्रयत्न भी करता हूँ। यदि अन्त सिद्धिदायक हुआ तो मेरे बारे में जो कुछ कहा गया है उसकी मुझे चिन्ता नहीं। किन्तु यदि अन्त में गलत परिणाम निकले तो चाहे भगवान ही आकर क्यों न कहें कि मैं सही हूँ, हकीकत में कोई फर्क नहीं पड़ता।

यदि हमारी अनुचित आलोचना हो तो हमें यह दूसरा नियम स्मरण रखना चाहिए—

आलोचना की उपेक्षा कर भरसक उत्तम कार्य करो।

२२ : मेरी भूलें

मेरे निजी कागजातों में कुछ कागजात ऐसे हैं जिनमें मेरी भूलों का विवरण है।

कभी कभी मैं अपने सहायक को इन भूलों का कुछ अंश लिखवाता हूँ किन्तु वे इतने मूर्खता पूर्ण एवं वैयक्तिक हैं कि उनको लिखवाने में बड़ी शरम आती है और इसलिए उन्हें मैं स्वयं ही लिख लेता हूँ।

मुझे आज भी मेरे प्रति की गई वे आलोचनाएँ याद हैं जिन्हें पन्द्रह वर्ष पूर्व मैंने अपनी भूलों के अन्य विवरण के साथ जोड़ दिया था। अगर मैं पूर्णतया ईमानदारी बरतता तो अब तक मेरी भूलों के विवरण का एक लम्बा-चौड़ा चिट्ठा तैयार हो जाता। बीस सदियों पूर्व बादशाह साउल ने जो बात कही थी उसे मैं पूर्ण सचाई के साथ यहाँ अपने बारे में दुहरा सकता हूँ– "मैंने खूब शैतानी की और भूलें भी खूब कीं।

आज जब मैं अपनी भूलों का विवरण पढ़ता हूँ, तो मुझे डेलकार्नेगी मेनेजमेन्ट की अत्यन्त जटिल समस्याओं को सुलझाने में सहायता मिलती है।

मैं पहले अपनी सारी कठिनाइयों तथा दुःखों के लिए दूसरों को दोषी ठहराता था। किन्तु ज्यों ज्यों मेरी उमर बढ़ती गयी और मैं समझदार होता गया, मुझे प्रतीत होने लगा कि अन्तिम विश्लेषण में, मैं ही अपने दुर्भाग्य एवं कठिनाइयों के लिए जिम्मेदार हूँ। कितने ही ऐसे व्यक्ति हैं जिन्होंने उमर बढ़ने पर इस तथ्य को महसूस किया है। नेपोलियन ने सेन्ट हेलेना में कहा था, "अपने अधःपतन का कारण केवल मैं स्वयं हूँ। मैं स्वयं अपना सबसे बड़ा दुश्मन रहा हूँ और मैं ही अपने दुर्भाग्य का कारण भी हूँ।"

मैं आपको अपने एक परिचित कलाकार की आत्मचिन्तन एवं अनुशासन सम्बन्धी कहानी सुनाता हूँ। वह कलाकार था—एच. पी. होवेल। १९४४ की ३१ जुलाई के दिन, न्यूयॉर्क के होटल एम्बेसेडर के दवाइयों के भण्डार में उसकी आकस्मिक मृत्यु का समाचार देशभर में फैल गया। उसे सुनकर वाल स्ट्रीट (व्यापार केन्द्र) के लोगों को गहरा धक्का लगा क्यों कि वह अमेरिकी अर्थ-तन्त्र का नेता था। वह ५६ वाल स्ट्रीट के कोमार्शीयल नेशनल बैंक तथा ट्रस्ट कम्पनी का अध्यक्ष था। इसके साथ ही वह कई बड़े कोर्पोरेशनों का डायरेक्टर भी था। उसने साधारण शिक्षा प्राप्त की थी। और एक देहाती स्टोर में क्लर्क की हैसियत से उसने अपना जीवन आरम्भ किया था। उसके बाद वह अमरीकी स्टील क. का क्रेडिट मैनेजर बन गया और इस प्रकार प्रतिष्ठा एवं सत्ता के मार्ग पर अग्रसर होता गया।

जब मैंने श्री होवेल से अपनी सफलता का रहस्य समझाने का अनुरोध किया तो उन्होंने उत्तर में बताया कि– "वर्षों से, मैं, दिनभर में अपने मिलनेवालों का लेखा-जोखा रखता आया हूँ। मेरे कुटुम्ब के लोग शनिवार की रात को मेरे लिए कोई कार्यक्रम नहीं रखते क्यों कि वे जानते हैं कि प्रत्येक शनिवार की रात को कुछ समय मैं अपने सप्ताहभर के कार्य का लेखा-जोखा करने में तथा आत्म परीक्षण एवं

आत्म-समीक्षा में व्यतीत करता हूँ। भोजन के उपरान्त मैं अपनी, कार्यक्रम की डायरी खोलता हूँ और सोमवार की सुबह से आरम्भ होनेवाली सभी प्रवृत्तियों, विचार-विनिमय, भेंट तथा बैठक आदि का विचार करता हूँ। मैं पता लगाता हूँ कि अमुक अवसर पर मैंने क्या भूल की ? वह कौनसा काम था जो ठीक था तथा मैं अपनी कार्यविधि में किस प्रकार सुधार कर सकता हूँ। अपने अनुभव से मैं क्या शिक्षा ग्रहण कर सकता हूँ। कभी कभी अमुक सप्ताह की समीक्षा से मुझे बड़ा क्लेश होता है, मुझे अपनी भयंकर भूलों पर अचम्भा होता है। इतना अवश्य है कि समय की गति के साथ मेरी भूलों की संख्या भी घटती रही है। वर्ष प्रतिवर्ष 'आत्म-विश्लेषण' की इस पद्धति से मुझे जितना अधिक लाभ हुआ उतना अन्य किसी बात से नहीं हुआ।

सम्भव है एच. पी. हावेल ने यह पद्धति वेन् फ्रैंकलिन से अपनाई हो। दोनों में अन्तर इतना ही है कि फ्रैंकलिन शनिवार की रात तक प्रतीक्षा नहीं करते थे। वे रोज रात को ही दिन भर का लेखा जोखा करने का कष्ट उठा लेते थे। उन्हें विदित हुआ कि उनमें तेरह गम्भीर दोष हैं। उनमें से तीन ये थे-समय नष्ट करना, निकम्मी बातों में उलझना, लोगों से विवाद करना और उनकी बातों का काट करना। बुद्धिमान फ्रैंकलिन ने महसूस किया कि जब तक ये दोष दूर नहीं होंगे, काम पार नहीं पड़ेगा। इस विचार से प्रतिदिन एक सप्ताह तक एक दोष को लेकर उसे मिटाने का प्रयत्न करते और इस बात का भी विवरण रखते कि उस दैनिक प्रतियोगिता में विजय किसकी रही ? दूसरी बार वह दूसरे दोष को लेते और उसे दूर करने का प्रयत्न शुरू कर देते। अपने साप्ताहिक कार्यक्रम के अनुसार दो से भी अधिक वर्षों तक उन्होंने अपने दोषों के विरुद्ध संघर्ष जारी रखा।

परिणामस्वरूप, यदि वह अमेरिका के अत्यन्त प्रभावशाली एवं लोकप्रिय व्यक्ति बन गये तो आश्चर्य ही क्या ?

एलबर्ट हबार्ड का कथन है कि "कम से कम पाँच मिनट के लिए तो प्रत्येक व्यक्ति प्रतिदिन मूर्ख बनता ही है। हमारी बुद्धिमानी इसी में है कि पाँच मिनट के समय की इस अवधि को बढ़ने न दें।"

ओछे आदमी अल्प आलोचना मात्र से ही उत्तेजित हो उठते हैं, किन्तु बुद्धिमान व्यक्ति उन व्यक्तियों से, जिन्हो ने उनपर आक्षेप किया है, उनकी निन्दा की है, तथा विवाद बढ़ाया है, शिक्षा ग्रहण करते हैं। इसी कथन को वाल्ट वाइटमेन ने और तरह से अभिव्यक्त किया है-"तुमने उन्हीं से शिक्षा ग्रहण की जिन्होंने तुम्हारी प्रशंसा की, तुमसे सहृदयता रखी और तुम्हारे सहयोग के लिए तत्पर रहे। पर क्या तुमने उन व्यक्तियों से भी कोई शिक्षा ग्रहण की, जिन्होंने तुम्हारी अवज्ञा की, तुम्हारे विरोधी बने अथवा तुमसे विवाद बढ़ाया ?

अपने शत्रुओं की आलोचना की प्रतीक्षा किए बिना ही हमें अपनी कटु से कटु आलोचना स्वयं कर उनको मात दे देनी चाहिए। हमें चाहिए कि विरोधी हमारे

दोष बताएँ उसके पहले ही हम अपनी कमजोरियों से छुटकारा पा जाएँ। चार्ल्स डारविन ने यही किया था। कहा जाता है कि अपनी ही आलोचना में डारविन ने पन्द्रह वर्ष बिता दिये। जब डारविन ने अपनी अमर पुस्तक 'द ऑरिजिन ऑफ स्पेसिज (प्राणियों की मूल उत्पत्ति) की पाण्डु लिपि तैयार कर ली तो उन्हें महसूस हुआ कि सृष्टि सम्बन्धी उनका यह क्रान्तिकारी विचार बौद्धिक एवं धार्मिक क्षेत्रों में तहलका मचा देगा। इसलिए वे अपने आलोचक स्वयं बने और पन्द्रह वर्ष उन्होंने अपने परिणामों की पुनरावृत्ति करने, तर्क को चुनौती देने तथा अपने निष्कर्ष की आलोचना करने में बिता दिए।

मान लीजिए, कोई आपको 'निरा मूर्ख' कहे और भर्त्सना करे तो आप क्या करेंगे? नाराज होंगे या उत्तेजित हो उठेंगे? देखिए, लिंकन ने क्या किया था—लिंकन के युद्ध-विभाग के सचिव एडवर्ड एम. स्टेन्टन ने एक बार लिंकन को निरा मूर्ख कहा। स्टेन्टन इसलिए उत्तेजित थे कि लिंकन उसके मामलों में हस्तक्षेप करते थे। एक स्वार्थी राजनीतिज्ञ को खुश करने के लिए लिंकन ने सेना की कुछ टुकड़ियों का स्थानान्तरण करने का हुक्म दे दिया था। स्टेन्टन ने आज्ञा मानने से न केवल इन्कार ही किया बल्कि उन्होंने यह भी कहा कि लिंकन निरे मूर्ख हैं जो ऐसे हुक्म पर हस्ताक्षर किये। तब क्या हुआ? जब लिंकन को इसके बारे में बताया गया तो उन्होंने शान्त भाव से उत्तर दिया, "यदि स्टेन्टन ने मुझे निरा मूर्ख कहा है तो मैं सच ही मूर्ख हूँगा क्यों कि वे प्राय. सही बात कहते हैं। मैं स्वयं जाकर इस बात का पता लगाऊँगा।"

लिंकन निश्चय ही स्टेन्टन से मिलने गये और स्टेन्टन ने उन्हें मनवा दिया कि उनसे गलत हुक्म दिया गया था और लिंकन ने उस हुक्म को वापस ले लिया। जब लिंकन को पता चलता कि आलोचना, सच्चाई से की गई है, विवेक एवं तथ्य पर आधारित है और सहयोग की भावना से की गई है तो वे उसका स्वागत करते।

हमें भी ऐसी आलोचना का स्वागत करना चाहिए, क्योंकि हमारे द्वारा किये गए चार फैसलों में से केवल तीन ही के सही होने की आशा हमें रखनी चाहिए। कम से कम थियोडॉर रूजवेल्ट तो इतनी ही आशा रखते थे जब वे व्हाइट हाऊस में प्रसिडेन्ट थे। आइन्स्टीन यहाँ तक कहते थे कि उनके सौ फैसलों में से निन्यानवे गलत होते थे।

ला राश फोकल्ड का कथन है कि, "अपने बारे में, हमारे अपने विचारों की बनिस्बत, विरोधियों के विचार सत्य के अधिक निकट होते हैं।"

मैं जानता हूँ कि उक्त कथन बहुत हद तक सही है। फिर भी जब कभी कोई मेरी आलोचना करने लगता है तो मैं बिना अपने को टटोले, एकाएक बिना आलोचक के विचारों को जाने ही अपना बचाव करने लग जाता हूँ। जब मैं हरबार ऐसा ही करता हूँ तो अपने से ऊबने लगता हूँ। हम सभी आलोचना का तिरस्कार करते हैं और प्रशंसा को गले लगाते हैं, बिना सोचे समझे कि दोनों में से सही एवं उपयुक्त

क्या है। हम विवेक को ताक में रख कर केवल भावनाप्रधान प्राणी रह जाते हैं। हमारा विवेक भावनाओं के धूमिल एवं क्रुद्ध सागर पर डोंगी की तरह थपेड़े खाता रह जाता है। हम में से अधिकांश समझते हैं कि अपनी वर्तमान परिस्थितियों के बारे में जो कुछ हम सोचते हैं सही है किन्तु सम्भव है कि चालीस वर्ष उपरान्त हमें अपने वे ही विचार मूर्खतापूर्ण प्रतीत हों और हम उन पर हँसने लगें।

विलियम वाइट एक छोटे से कस्बे में प्रसिद्ध पत्र-सम्पादक थे। उन्होंने अपने पिछले पचास वर्ष पूर्व के जीवन के विषय में लिखा है कि उन दिनों वे एक अक्खड़, मूर्ख एव उद्धत प्रकृति के युवक थे और प्रतिक्रियावादी थे। सम्भव है आज से बीस वर्ष उपरान्त हम भी अपने आज के व्यक्तित्व के आगे ऐसे ही विशेषण लगाएँ। कौन जाने? ...... हो सकता है।

पूर्व परिच्छेदों में आपको बता चुका हूँ कि अनुचित आलोचना के प्रति कैसा रवैया अपनाया जाय? एक दूसरा उपाय भी है—जब अनुचित आलोचना को लेकर आपका खून खौलने लगे तो मन ही मन विचार कीजिए—"मैं अपने में पूर्ण नहीं हूँ। जब आइन्स्टीन सौ में से निन्यानब्बे बार गलत होना स्वीकार करता है तो हो सकता है मैं सौ में से अस्सी बार गलती पर होऊँ। हो सकता है कि आलोचना सही हो। यदि मैं आलोचना के योग्य होऊँ तो मुझे उसके लिए आलोचक को धन्यवाद देना चाहिए और उससे लाभ उठाने का प्रयास करना चाहिए।

पेप्सोडेन्ट कम्पनी के अध्यक्ष चार्ल्स लुकमेन प्रतिवर्ष बोब होप को रेडियो पर प्रस्तुत करने में लाखों डालर खर्च करते हैं। वे कार्यक्रम की प्रशसा में प्राप्त हुए पत्रों को न देखकर आलोचना से भरे पत्रो को देखने पर जोर देते हैं। वे जानते हैं कि उनसे कुछ सीखा जा सकता है।

फोर्ड कम्पनी अपने प्रबन्ध एवं कार्यसचालन के दोषों को जानने के लिए इतनी उत्सुक रहती है कि हाल ही में उसने अपने सभी कर्मचारियों को कम्पनी की आलोचना करने के लिए आमन्त्रित किया था।

मै एक साबुन बेचनेवाले को जानता हूँ जो अपनी आलोचना करवाना चाहता था। जब उसने कोलगेट कम्पनी की ओर से साबुन बेचना आरम्भ किया तो उसे आर्डर जल्दी नहीं मिलते थे। उसे अपनी नौकरी से हाथ धो बैठने का भय रहने लगा। उसे मालूम था कि साबुन में अथवा उसकी कीमत में कोई भी दोष नहीं था बल्कि दोष स्वय उसी में कहीं था। जब वह बिक्री करने में असफल रहता तो प्रायः मकान के इर्द गिर्द गलती को खोजने के प्रयास में चक्कर काटने लगता। वह सोचता—"क्या मैं डॉवाडोल रहता हूँ? क्या मुझमें उत्साह की कमी है?" कभी तो वह लौटकर फिर व्यापारी के पास जाता और कहता—"मैं साबुन बेचने की नीयत से आपके पास लौटकर नहीं आया हूँ, मैं आपकी आलोचना और सलाह चाहता हूँ। क्या आप मुझे बताएँगे कि आपको साबुन बेचने के प्रयास में मैंने कहाँ और क्या

गल्ती की। आप मुझसे अधिक अनुभवी एवं सफल व्यापारी हैं। मेरे विषय में आपकी क्या आलोचना है। स्पष्टतया कह दीजिये, मजाक नहीं।

उसके उक्त ढंग को देखकर बहुत से लोग उसके मित्र बन गए और उसे अमूल्य सलाह मिलने लगी।

आज वही व्यक्ति संसार में सबसे अधिक साबुन बनाने वाली कोलगेट पामोलिव पीयर सोप कम्पनी का अध्यक्ष है। उसका नाम इ. एच. लिटल है। गतवर्ष केवल चौदह अमेरिकन ही ऐसे थे जिनकी आय, उसकी २४०१४१ डॉलर की आय से अधिक थी।

एच. पी. होवेल तथा बेन फ्रेंकलिन ने जो किया वह कोई महान आदमी ही कर सकता है। और अब आप भी शीशे के सामने खड़े होकर देखिये कि कहीं आप भी उन्हीं में से तो नहीं हैं।

आलोचना की चिन्ता से बचने के लिए यह तीसरा नियम है—

हमें अपनी भूलों का लेखा रखना चाहिये और अपनी आलोचना स्वयं करनी चाहिये। हम अपने में पूर्ण नहीं हैं, अतः हमें वही करना चाहिये, जो इ. एच लिटल ने किया—हमें लोगों की निष्पक्ष, लाभकारी एवं रचनात्मक आलोचना जाननी चाहिये।

भाग छः का संक्षेप

आलोचना की चिन्ता से बचने का उपाय

नियम १ – अनुचित आलोचना बहुधा परोक्ष मे हमारी प्रशंसा ही है। प्रायः उसका अर्थ यह होता है कि आपने दूसरों में स्पर्धा एव ईर्ष्या को भड़काया है। स्मरण रखिये कि मरे कुत्ते को कोई लात नहीं मारता।

नियम २ – आलोचना की उपेक्षा कर भरसक उत्तम कार्य कीजिए।

नियम ३ – अपनी भूलो का लेखा रखिये और अपनी आलोचना स्वयं कीजिए। हम अपने में पूर्ण नहीं हैं, इसलिए हमें वही करना चाहिये जो इ एच. लिटल ने किया था— हमें लोगों की निष्पक्ष, लाभकारी एव रचनात्मक आलोचना जाननी चाहिये।

भाग सात

छः विधियाँ जो आपकी चिन्ता और थकान दूर कर आपको प्रफुल्लित रखेंगी

२३ : आराम कीजिए ताकि आप अधिक काम कर सकें

चिन्ता पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए लिखी गई इस पुस्तक के इस परिच्छेद में थकान की रोकथाम करने की बात मैं क्यों कह रहा हूँ? इसलिए कि प्रायः चिन्ता का उद्‌भव थकान से होता है थकान से आपको चिन्ता का अहसास होने लगता है। कोई भी चिकित्सक आपको बता सकेगा कि थकान से शरीर की सघर्ष-शक्ति कितनी क्षीण हो जाती है और जुकाम आदि अनेक बीमारियाँ किस प्रकार आ घेरती हैं। मनोरोग-चिकित्सक आपको बताएगा कि थकान के कारण भय और चिन्ता के मनोवेगों के विरुद्ध लड़ने वाली शक्ति किस प्रकार निर्बल हो जाती है। अतः थकान की रोकथाम करके ही चिन्ता की रोकथाम की जा सकती है।

यह बात मैं नहीं कह रहा हूँ, डॉक्टर एडमंड कहते हैं। वे इस पर अधिक जोर देते हैं। डॉक्टर जेकबसन ने आराम पर दो पुस्तकें लिखी हैं। एक है 'प्रोग्रेसिव रिलेक्सेशन' तथा दूसरी 'यू मस्ट रिलेक्स' है। शिकागो विश्व-विद्यालय के 'क्लीनिकल फिजियोलोजी' की लेबोरेटरी के डायरेक्टर की हैसियत से उन्होंने आराम को चिकित्सा-क्षेत्र में उपयोगी सिद्ध करने की दृष्टि से कई वर्षों तक छानबीन की है, उनका कहना है कि स्नायु अथवा मनोवेग सम्बन्धी अवस्था कैसी ही खराब क्यों न हो, पूर्ण आराम की अवस्था में वह ठीक हो जाती है।

अतः चिन्ता एवं थकान के निवारणार्थ पहला नियम यह है कि आराम किया कीजिये। थकने के पूर्व ही आराम कर लिया कीजिए। क्या कारण है कि आराम इतना महत्वपूर्ण है? कारण यह है कि थकान विचित्र गति से बढ़ती रहती है। अमरीकी सेना विभाग ने निरन्तर परीक्षण करके इस बात का पता लगाया है कि वर्षों की सैनिक-शिक्षा से मजबूत बने युवक भी, यदि अपने बन्धन दूर कर के थोड़ा आराम करें तो ज्यादा अच्छी तरह से कवायद कर सकते हैं। तथा ज्यादा देर मुकाबले में टिक सकते हैं। और इसी लिए सैनिक अनुशासन उन्हें आराम के लिए बाध्य करता है। आपका हृदय भी उतना ही चचल है जितना सैनिकों का। आपका हृदय प्रति दिन इतना खून बाहर फेंकता है कि उससे एक रेलवे टेन्कर आसानी से भर सकता है। चौबीस घण्टों में वह उतनी ही शक्ति उत्पन्न करता है जितनी तीन फीट ऊँचे प्लेटफार्म पर बीस टन कोयला ढोने के लिए आवश्यक है। हमारा हृदय यह अपूर्व कार्य पचास, सत्तर अथवा नब्बे वर्षों तक करता रहता है। पर हृदय इतना काम कैसे करता है? हार्वर्ड मेडिकल स्कूल के डॉक्टर वाल्टर केनन इसके उत्तर में कहते हैं कि, बहुत से लोगों का यह खयाल है कि हृदय यह कार्य

निरन्तर करता रहता है।" वस्तुतः हरबार की सिकुड़न के उपरान्त हृदय को निश्चित आराम मिलता है। वह प्रति मिनिट सामान्यतया सत्तर बार धड़कता है। चौबीस घटों में केवल नौ घण्टे वह काम करता है और पन्द्रह घण्टे विश्राम।

गत द्वितीय महायुद्ध के दिनों में सर विन्स्टन चर्चिल अपनी सत्तर वर्ष की अवस्था में ब्रिटिश साम्राज्य का युद्ध सचालन करते हुए प्रति दिन सोलह घण्टे कार्य करते थे। यह एक अपूर्व एव विलक्षण बात थी। किन्तु इसका रहस्य क्या था? वह प्रति दिन सवेरे ग्यारह बजे तक बिस्तर में लेटे लेटे ही अपना काम करते थे। वहीं वे कागजात अथवा पत्र पढते, आज्ञाऍं लिखवाते, टेलिफोन पर बात करते तथा महत्वपूर्ण बैठकें बुलाते। दोपहर के भोजन के उपरान्त वे पुनः एक घटे के लिए सो जाते। सध्या का भोजन करने के पूर्व वे फिर दो घण्टे सो जाते। उन्हें थकान मिटाने का प्रयास नहीं करना पड़ा, क्योंकि उन्होंने कभी थकान को पास फटकने तक नहीं दिया। क्योंकि वे प्रायः आराम कर लिया करते थे और इस प्रकार आधे से भी अधिक समय तक स्वस्थता एवं ताजगी के साथ काम कर पाते थे।

जोन डी. रोकफेलर ने जीवन में दो अपूर्व रेकार्ड स्थापित किये थे। उन्होंने अटूट दौलत जमा की। वे अपनी सानी के ससार में पहले व्यक्ति थे और साथ ही वे अट्ठानवे वर्ष तक जीवित रहे। उनकी सफलता का रहस्य क्या था? सबसे प्रमुख कारण था, लम्बी आयु जीने की उनकी पुश्तैनी विरासत! दूसरा कारण था हर दिन दोपहर को अपने ऑफिस मे आधा घण्टे सो लेने की आदत! वे अपने ऑफिस के कोच पर लेट जाते और फिर चाहे अमेरिका का प्रेसिडेन्ट ही फोन पर क्यों न हो, वे न उठते।

'वाई वी टायर्ड' नाम की अत्यन्त सुन्दर पुस्तक में डेनियल डब्ल्यू. जोसलिन बताते हैं कि 'आराम का अर्थ बेकार पड़े रहना नहीं है। आराम का अर्थ है शक्ति अर्जन।' थोड़े से आराम में भी काफी शक्ति है। केवल पॉच मिनट की झपकी ही आपकी सारी थकान दूर कर सकती है। बेस बॉल के पुराने खिलाडी कोनी मेक ने मुझे बताया कि जब कभी वह दोपहर में झपकी लिए बिना खेलने जाता है, पॉच पारी तक ही खेल सकता है, किन्तु यदि वह पॉच मिनट भी सो लेता है तो बिना थकान का अनुभव किये पूरा खेल खेल जाता है।

जब मैंने ऐलिनोर रूजवेल्ट से पूछा कि "बारह वर्ष व्हाइट हाऊस में रह कर आप थकाने वाले इतने बोझिल कार्यक्रम को किस प्रकार निभा सकीं?" तो उन्होंने उत्तर दिया कि किसी भी सभा में भाषण देने अथवा लोगों से भेंट करने के पूर्व मैं प्रायः बीस मिनट तक अपनी कुर्सी मे, ऑखें मूँदकर आराम कर लिया करती थी।

हाल ही में मैंने जेनीओटरी से उसके मेडिसन स्क्वायर गार्डन स्थित ड्रेसिंग रूम में उसके साथ भेंट की। पशु-मेले के कार्यक्रम का वह तीव्र आकर्षण था। उसने एक पलंग की ओर निर्देश करते हुए कहा—मैं रोज दोपहर को इस पलग पर अपने कार्यक्रम के दौरान में एक घन्टे तक विश्राम कर लेता हूँ। जब मैं होलिवुड में

चित्र बनाने में व्यस्त रहता हूँ तो दिन भर मे करीब तीन बार एक बड़ी आराम कुर्सी पर दस मिनट के लिए सो लेता हूँ। उससे मुझे अत्यधिक स्फूर्ति मिलती है।"

एडिसन जब भी चाहता सो लेता था और इसीलिए उसमें इतनी अधिक शक्ति एवं टिके रहने की क्षमता थी।

मैंने हेनरी फोर्ड से उनकी ८० वीं वर्षगाँठ के कुछ ही दिन पूर्व भेंट की थी। मैं उनकी स्फूर्ति और ताजगी को देख कर दंग रह गया। उन्होंने कहा—"यदि बैठ सकने का अवसर हो तो मैं कभी खड़ा नहीं रहता और यदि लेट सकने का मौका मिले तो बैठा नहीं रहता।"

आधुनिक शिक्षा पद्धति के पंडित होरेस मेन ने भी वृद्ध होने पर यही किया। जिन दिनों वह एन्टीओक कॉलेज के अध्यक्ष थे, अपने पलंग पर लेट कर विद्यार्थियों से भेंट करते थे।

हॉलिवुड के एक चित्रपट-निर्देशक को मैंने ऐसे ही उपाय का प्रयोग करने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने बाद में मान लिया कि इस उपाय ने उनपर खूब असर किया। ये महाशय मेट्रो गोल्डविन मेयर के उच्च श्रेणी के निर्देशक जेक चरटोक थे। जिन दिनों वे मुझ से मिलने आये एम. जी. एम. के लघु-चित्र विभाग के अध्यक्ष थे। वे थके-मांदे एवं निर्बल थे। सभी पौष्टिक दवाएँ एवं विटामिनों का प्रयोग वे कर चुके थे। किन्तु किसी से भी कोई लाभ नहीं हुआ था। मैंने उन्हें रोज आराम लेने की बात सुझाई। आराम कैसा हो इस सम्बन्ध में मैंने उन्हें बताया कि वे ऑफिस में लेटे लेटे अपने लेखकों तथा अन्य कर्मचारियों के साथ बात करें।

जब दो वर्ष उपरान्त मैं उनसे मिला, तो उन्होंने मुझे बताया—"उस उपाय का मुझपर गहरा प्रभाव पड़ा है। मेरे डॉक्टर ने भी यही सुझाव दिया है—पहले मैं लघु चित्रों के विषय में विचार विमर्श करते समय अपनी कुर्सी में तनकर बैठा रहता था। अब बैठकों के समय अपने ऑफिस के कोच पर आराम से लेट जाता हूँ। अब मैं अपने को बीस वर्षों की अपेक्षा अधिक स्वस्थ अनुभव करता हूँ। मैं पहले की बनिस्बत दो घण्टे अधिक काम करता हूँ किन्तु थकान का अनुभव नहीं करता।

आप पर यह सब कैसे लागू हो? यदि आप स्टेनोग्राफर हैं तो एडिसन तथा साम गोल्डेविन की भाँति ऑफिस में सो नहीं सकते और यदि आप एकाउण्टेण्ट हैं तो अपने अधिकारी के सामने लेट करके वित्तीय मसविदे पर विचार-विमर्श नहीं कर सकते। किन्तु यदि आप किसी छोटे नगर में रहते हैं तथा दोपहर में भोजन के लिए घर जाते हैं, तो भोजन के उपरान्त दस मिनिट तक तो कम से कम सो ही सकते हैं। जनरल जोर्ज सी. मार्शल भी यही किया करते थे। युद्ध के दिनों में अमेरिकन सेना का सचालन करने में वे इतने व्यस्त रहते कि उन्हें दोपहर को ही विश्राम लेना पड़ता। यदि आप पचास वर्ष के हैं और आपको इतना करने का भी अवकाश नहीं है, तो शीघ्र ही अपना बीमा करवा लीजिए। इन दिनों दाह संस्कार में काफी खर्च लगता है और मौत भी अकस्मात आ जाती है। इसके

अलावा बीमा की रकम आपकी पत्नी की, आपसे कम उमर वाले किसी व्यक्ति से विवाह करने में भी सहायता कर सकती है।

यदि आप दोपहर को न भी सो सकें तो कम से कम सन्ध्या के भोजन के पूर्व एक घण्टे लेटने का प्रयास कीजिये। यह काफी सस्ता एवं असरकारक उपाय है। यदि आप छः-सात बजे के करीब एक घण्टे तक सो सकें तो आप अधिक काम करने लगेंगे। कैसे? सध्या को भोजन के पूर्व एक घण्टे तक ली गई नींद और रात को केवल छः घण्टों की नींद, आठ घण्टे की लगातार नींद से अधिक लाभकारी होती है।

शारीरिक श्रम करने वाला व्यक्ति यदि अधिक विश्राम करे तो अधिक काम कर सकता है। बेथलेहम स्टील कम्पनी में साइन्टिफिक मैनेजमेन्ट इन्जीनियर का काम करते हुए फ्रेडरिक टेलर इस कथन को आजमा चुके हैं। उन्होंने देखा कि मजदूर प्रतिदिन लगभग १२½ टन कच्चा लोहा ट्रकों पर चढाते थे और मध्याह्न तक थक जाते थे। उन्होंने थका देने वाले सभी कारणों का वैज्ञानिक अध्ययन किया तब उन्हें पता चला कि उन व्यक्तियों को प्रतिदिन १२½ टन लोहा लादने की बनिस्वत सैंतालीस टन लोहा लादना चाहिए। उन्होंने मालूम किया कि मजदूरों को अब से बिना थके चार गुना काम करना चाहिए।

टेलर ने अपने कथन को सिद्ध करने के लिए स्मीट नाम के व्यक्ति को चुना जिसे स्टोपवॉच (निश्चित समय पर बन्द हो जाने वाली घड़ी) के सहारे काम करना पड़ा। जो आदमी घड़ी लेकर खड़ा रहता वह कहता-अब छड उठाओ...अब विश्राम करो, बैठ जाओ। अब चलो...अब बैठ जाओ।

परिणाम क्या हुआ? स्मीट ने एक दिन में सैंतालीस छड़ें लादी जब कि दूसरा मजदूर १२½ टन लोहा ही लाद सका। जब तक फ्रेडरिक टेलर बेथलेहम में रहा, उसकी देखरेख में तीन वर्ष तक काम करके वह कभी नहीं थका। और यह इसलिए कि थकने के पूर्व ही वह आराम कर लेता था। वह एक घण्टे में लगभग २६ मिनिट काम करता और ३४ मिनिट आराम करता। यद्यपि काम से अधिक वह आराम करता था, फिर भी अन्य साथियों से चार गुना अधिक काम कर लेता था। यह कोई सुनी-सुनाई बात नहीं है। आप स्वयं इस रेकार्ड को विन्सलो टेलर द्वारा लिखित पुस्तक, प्रिन्सिपल्स ऑफ साइन्टिफिक मेनेजमेन्ट में पढ सकते हैं।

इसे फिर से दुहरा लूँ-वही कीजिए जो सेना में किया जाता है-आराम कीजिए। जिस तरह आपका हृदय काम करता है उसी तरह आप भी काम कीजिये-थकने के पूर्व ही आराम कर लीजिए। इस से आप अधिक काम कर सकेंगे।

☆

२४ : आपकी थकान का कारण क्या है तदर्थ आप क्या कर सकते हैं

मैं आपको एक बहुत ही विचित्र एव सारभूत तथ्य बताने जा रहा हूँ। केवल दिमागी काम से मनुष्य कभी नहीं थकता यह कहना बड़ा अजीब-सा लगता है। किन्तु कुछ वर्ष हुए वैज्ञानिकों ने पता लगा लिया है कि कार्य-क्षमता में गिरावट लाए बिना ही मानव मास्तिष्क कहाँ तक कार्य कर सकता है। उन वैज्ञानिकों को यह जानकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि चेतनावस्था में मस्तिष्क में से जब खून गुजरता है तब उसमें जरा भी थकान के लक्षण नहीं होते। यदि आप काम करते हुए मजदूर की रगों से खून निकाल लें तो आपको उसमें थकान उत्पन्न करने वाला एक प्रकार का विपैला पदार्थ नजर आयगा। किन्तु दिन के अन्त में यदि आप एलबर्ट आइस्टीन के मस्तिप्क से खून की एक बूद निकाल कर देखें तो उसमें थकान उत्पन्न करने वाला विपैला पदार्थ आपको जरा भी नहीं मिलेगा।

जहाँ तक मस्तिष्क का प्रश्न है, यह आठ अथवा बारह घण्टों के कार्य के पश्चात् भी उतनी ही तीव्रता दिखाता है जितनी कार्यारम्भ के समय दिखाता था। मस्तिष्क कभी नहीं थकता। फिर वह कौनसा कारण है जो आपको थकाता है।

मनोरोग चिकित्सकों का कहना हैं कि प्रायः थकान का मुख्य कारण हमारी भावात्मक एव दिमागी अवस्थाएँ हैं! इंग्लैंड का प्रसिद्ध मनोरोग चिकित्सक जे. ए. हेड फिल्ड का कहना है कि बैठक का काम करने वाले पूर्ण स्वस्थ कामगार को उसके मनोवैज्ञानिक एव भावात्मक तत्व के कारण थकान होती है।

वे कौनसे भावात्मक तत्व हैं जो बैठक का काम करने वाले कामगार को थका देते हैं? क्या वह प्रसन्नता एव सतोष की भावना है? नहीं, कभी नहीं। ये तो उकताहट, क्लेश, श्लाघा का अभाव, निस्सारता, जल्दबाजी, क्षोभ तथा चिन्ता के भाव हैं जो उसे थका देते हैं और उसे सरदी का शिकार बना देते हैं। ये उसकी उत्पादनक्षमता कम कर देते हैं और उसे सरदर्द देकर घर भेज देते हैं। हाँ तो, हम इसलिए बीमार होते हैं कि हमारे मनोवेग शरीर में स्नायु-तनाव उत्पन्न कर देते हैं।

मेट्रोपोलिटन जीवन बीमा कम्पनी ने थकान के बारे मे लिखी एक पुस्तिका में बताया है कि कठोर कार्य से क्वचित् ही कोई ऐसी थकान उत्पन्न होती है जो अच्छी नींद एवं आराम से मिटाई न जा सके।...चिन्ता, तनाव तथा मनोवेगकारक असतुलन ही थकान के तीन मुख्य कारण हैं। प्रायः थकान का कारण शारीरिक एव मानसिक परिश्रम न होकर ये भाव ही हैं। . स्मरण रखिये कि काम करते समय मासपेशियाँ तनी रहती हैं। उन्हें ढीला कर दीजिए और इस प्रकार महत्वपूर्ण कामों के लिये शक्ति की बचत कीजिये। क्या आप इस पुस्तक को पढते समय भृकुटि चढाते हैं? क्या आप आँखों पर कोई भार अनुभव करते हैं? क्या आप आराम से कुर्सी पर बैठे हुए हैं या कधों को झुकाए हुए हैं? कहीं आपके चेहरे

की आकृति तनी हुई तो नहीं है ? यदि आपका शरीर पुराने कपड़े के गुड्डे की भाँति ढीला एव लचीला नहीं हैं तो आप अपने में स्नायु एव मास पेशियों का तनाव व थकान उत्पन्न कर रहे हैं।

क्या कारण है कि हम दिमागी काम करते समय अनावश्यक तनाव महसूस करते हैं ? जोसेलिन कहते हैं–" प्रायः यह तो सभी मानते हैं कि कठोर कार्य के लिए प्रयत्न की भावना की अपेक्षा रहती है अन्यथा वह भली-भाँति सम्पन्न नहीं हो पाता।" अतः जब हम ध्यान को केन्द्रित करते हैं तो हमारी भृकुटि चढ जाती है। हम कंधो को झुका लेते हैं। अपनी मास पेशियों में प्रयास की अवस्था उत्पन्न करते हैं जो बिना ऐसा किए हमारे मस्तिष्क की जरा भी सहायता नहीं करतीं।

कितने दुःख की बात है कि जो व्यक्ति एक पैसा भी खर्च करने की हिम्मत नहीं करते वे ही आज अपनी शक्ति को बरबाद करने पर तुले हुये हैं,

इस स्नायु-थकान का क्या इलाज है ? आराम ! आराम !! और आराम !!! जब आप अपना काम कर रहे हों तब आराम करना सीखिये।

क्या यह करना आसान है ? नहीं। सम्भवतः आपको अपने जीवन भर की सभी आदतें बदलनी पड़े। किन्तु आप का यह प्रयास लाभकारी रहेगा क्योंकि इससे आप के जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन हो आएगा। विलियन जेम्स ने अपने निबन्ध ' आराम का सिद्धान्त ' में कहा है कि-" बुरी आदतों के कारण ही अमरीकी जीवन मे तनाव का आधिक्य है, अफरातफरी है। और उसकी अभिव्यक्ति में गहनता एव वेदना है। तनाव एक आदत है और आराम करना भी एक आदत है, बुरी आदतें मिटाई जा सकती हैं और अच्छी आदतें डाली जा सकती हैं।

आप आराम किस प्रकार लेते हैं ? आप इसकी शुरूआत दिमाग से करते हैं या स्नायु से ? दोनों में से किसी एक से भी आप यह शुरूआत न कीजिये। आप इसकी शुरुआत मासपेशियों से कीजिये।

आइए, अब देखें कि मासपेशियों से शुरुआत कैसे की जाय ? मान लीजिए हम ऑखों से इसकी शुरूआत करें। आप इस अनुच्छेद को पूरा पढ जाइये और इसके उपरान्त पीठ के सहारे उठग बैठ जाइये और चुप चाप ऑखों से कहिए,—" जाने दो ! जाने दो ! अपने पर बोझ न डालो, कड़ी नजर न करो, जाने दो, जाने दो " एक मिनट तक इसी को धीरे धीरे दुहराइये।

क्या आपको पता नहीं चला कि ऐसा करने से ऑखों की मासपेशियाँ आपकी आज्ञा मानने लगती हैं ? क्या आपको अनुभव नहीं हुआ जैसे कि किसी ने अपने हाथों से आपका तनाव दूर कर दिया है ! यद्यपि यह विश्वास के बाहर की बात मालूम होती है। किन्तु सच ही आपने एक ही मिनट में आराम करने की कला का रहस्य एव उसकी कुंजी प्राप्त कर ली है। आप अपने जबड़े, गर्दन, चेहरे, कधे और सारे शरीर की मासपेशियों के साथ भी उपर्युक्त प्रयोग कर सकते हैं। किन्तु सबसे प्रमुख आँखों की मासपेशिया हैं। शिकागो विश्वविद्यालय के डाक्टर एडमन्ड जेकब्सन

तो यहाँ तक कहते हैं कि यदि आप आँखों की मासपेशियों को पूरा आराम दे सकते हैं तो आप अपने सभी सकट भूल सकते हैं। स्नायु-तनाव को दूर करने में आँखों की प्रमुखता इसलिए है कि ये शरीर के द्वारा काम में लाई जाने वाली एक-चौथाई स्नायु-शक्ति को नष्ट कर देती हैं। और यही एक कारण है कि इतने अधिक मनुष्य पूर्ण स्वस्थ दृष्टि के होते हुए भी नेत्र-भार से परेशान रहते हैं। वे अपने नेत्रों पर तनाव लाते हैं। प्रसिद्ध उपन्यास लेखिका विकीबाम का कथन है कि जब वह बच्ची थी, एक वृद्ध व्यक्ति से मिली थी, जिसने कि उसे जीवन का अत्यन्त महत्वपूर्ण पाठ पढाया। एक बार वह गिर पड़ी थी और फलस्वरूप उसके घुटने फट गए थे और कलाई में चोट आ गई थी। वृद्ध सज्जन ने उसे उठा लिया। वह वृद्ध कभी सर्कस में विदूषक रह चुके थे। उन्होंने उसे झाडा-पोंछा और कहा-" तुम्हारे इस तरह चोट खा जाने का कारण यह है कि तुम कभी आराम नहीं करती। तुम्हें इस तरह से सोचना चाहिये कि तुम एक पुराने मोजे की भाँति ढीली ढीली और लचीली हो। आओ, मैं तुम्हें आराम करने की सही विधि बता दूँ।

उन वृद्ध सज्जन ने विकिबाम तथा अन्य बच्चों को फ्लीप फ्लोप (नृत्य) करना तथा कुलांचें भरना सिखाया और उससे आग्रह किया कि वह अपने को एक पुराने मसले हुए मोजे की तरह ढीला और लचीला समझे और आराम करे।

अवकाश के समय आप आराम कर सकते हैं। चाहे आप कहीं भी हों। किन्तु आराम करने के लिए अपने पर जोर न डालिये। आराम सर्वथा सहज एव तनाव रहित ढग से किया जाना चाहिए। आराम का विचार कीजिये। अपने नेत्रों तथा चेहरे की मासपेशियों को शिथिल करने का विचार करके यह शुरूआत कीजिये। बार बार दुहराइये, जाने दो ... जाने दो ... जाने दो और आराम करो। चेहरे की मॉसपेशियों से, शरीर के केन्द्र की ओर शक्ति-प्रवाह का अनुभव कीजिये तथा अपने को एक शिशु के समान तनाव से मुक्त समझने लगिये।

सुमधुर गायिका गाली करसी भी यही करती थी। हेलन जेप्सन ने मुझे बताया कि उसने गाली करसी को कार्यक्रम में भाग लेने के पूर्व अपनी सभी मासपेशियों को ढीली कर कुर्सी में आराम करते देखा है। उसका नीचे का जबडा तो इतना शिथिल हो जाता था कि लटक-सा पड़ता था। वह एक उत्तम अभ्यास था। इससे वह रगमच पर आने में घबराहट का अनुभव नहीं करती थी तथा थकती भी नहीं थी।

आराम करना सीखने के लिए, ये पॉच सुझाव देखिये।

(१) इस विषय पर प्रो. डेविड हेरोल्ड द्वारा लिखी गई 'रिलीज फ्रॉम नर्वस टेन्शन' नामक उत्तम पुस्तक पढ़िये।

(२) अवकाश के क्षणों में आराम कीजिए अपने शरीर को मसले हुए मोजे की तरह ढीला और लचीला कर दीजिये। मुझे कितना शिथिल होना चाहिए, इस बात का स्मरण रखने के लिए मैं स्वय भी एक पुराना कत्थई रग का मोजा टेबल पर रखता हूँ। यदि आपके पास मोजा न हो तो बिल्ली को ही देख लीजिए। क्या आपने

कभी धूप में सोते बिल्ली के बच्चे को उठाया है ? आपने देखा होगा कि उसके शरीर के दोनों सिरे भीगें समाचार पत्र के सिरों की भाँति लटक जाते हैं। यहाँ तक कि भारतीय योगी भी कहते हैं कि आराम करने की कला सीखने के लिए बिल्ली का अध्ययन कीजिए। मैंने कभी ऐसी बिल्ली नहीं देखी जो थकी हुई हो, स्नायु विघटन की शिकार हो, अथवा अनिद्रा-रोग, चिन्ता एव उदरव्रण से पीड़ित हो। यदि आप बिल्ली की तरह ही शिथिल होना सीख लें तो सम्भवतः इन घातक रोगों से बच जाएँ।

(३) सदैव आराम से बैठकर, जितना सम्भव हो काम कीजिए। स्मरण रखिये कि शरीर के तनाव से कधे दुखने लग जाते हैं और स्नायु-थकान हो आती है।

(४) दिन में चार पाँच बार अपने को टटोलिए और सोचिए – क्या मैं अपने काम को अधिक कठिन बना रहा हूँ ? क्या मैं उन मासपेशियों का उपयोग तो नहीं कर रहा हूँ जिनकी इस काम के लिए कोई आवश्यकता नहीं है ? ऐसा करने से आपको आराम करने की आदत डालने में सहायता मिलेगी और जैसा कि प्रो. डेविड हेरोल्ड फिंक का कहना है कि मनोविज्ञान को अच्छी तरह समझनेवाले दो में से हर एक व्यक्ति में यह आदत विद्यमान रहती है।

(५) दिन के अन्त में अपने को टटोल कर मन ही मन पूछिये – "मैं कितना थका हूँ ? उसका कारण दिमागी काम नहीं बल्कि वह ढग है जिससे मैंने वह काम किया है।" डेनियल डब्ल्यु. जोसलिन का कथन है – 'मैं अपनी दैनिक सफलता थकान से नहीं आँकता बल्कि कितना नहीं थका हूँ इससे आँकता हूँ।" जब मैं दिन के अन्त में विशेष थकान अनुभव करता हूँ या क्षुब्धता मेरे स्नायु की थकावट प्रमाणित कर देती है तो बिना किसी तर्क के, समझ लेता हूँ कि दिन बुरा निकला है।" यदि प्रत्येक व्यापारी यह पाठ सीख ले तो अत्यधिक तनाव से अद्भुत बीमारियों के कारण मरने वालों की सख्या एकदम घट जाए। तथा हम चिन्ता एव थकान के कारण टूटे हुए बीमारों से सेनिटोरियम तथा पागल खानों को भरना बन्द कर दें।

☆

२५ : थकान से दूर रहकर गृहिणी अपने यौवन को कैसे अक्षुण्ण बनाए रखे

गत पतझड़ के दिनों की बात है। एक दिन मेरा एक सहयोगी मसार में विलक्षण ढंग की मेडिकल कक्षाओं के एक सत्र में सम्मिलित होने के लिए हवाई जहाज द्वारा बोस्टन पहुँचा। वहाँ बोस्टन में सप्ताह में एक बार ये कक्षाएँ लगती हैं। जो बीमार इसमें भाग लेते हैं उनकी ठीक तरह से जाँच की जाती है, तब कहीं उन्हें भर्ती किया जाता है। किन्तु वस्तुत' उन कक्षाओं में मनोविज्ञान-चिकित्सा सम्बन्धी व्याख्यान ही होते हैं यद्यपि आधिकारिक रूप से यह कक्षा व्यावहारिक मनोविज्ञान की कक्षा कहलाती है। (पहले विचार-सयम कक्षा कहलाती थी। यह नाम इसके प्रथम सदस्य ने दिया था।) किन्तु इसका वास्तविक उद्देश्य उन लोगों को स्वस्थ करना है जो चिन्ता से बीमार हैं। उन बीमारों में अधिकाश, असतुलित मनोवेगों वाली गृहिणियाँ होती हैं।

चिन्तित लोगों के लिए ये कक्षा कैसे आरम्भ हुई? डॉ. जोसेफ एच. प्राट सर विलियम ओसलर के शिष्य थे, उन्हें विदित हुआ कि बोस्टन डिस्पेन्सरी में आने वाले बहुत से रोगियों में शारीरिक दृष्टि से कोई व्याधि नहीं होती, फिर भी उन में वे सभी लक्षण वस्तुत' विद्यमान रहते हैं जो शरीर में हो सकते हैं-एक स्त्री के हाथ आर्थराइटिस से इतने अपग हो गए थे कि उससे कोई काम नहीं होता था। दूसरी स्त्री उदर-कैन्सर के तीव्र लक्षणों से पीड़ित थी। तीसरी स्त्री सर-दर्द, पीठ के दर्द तथा अन्य अनिश्चित रोगों से पीडित थी। लम्बे अर्से से चली आने वाली थकान से वह चूर थी। उसे सचमुच पीड़ा होती थी। किन्तु सर्वांगी मेडिकल परीक्षण के उपरान्त विदित हुआ कि उन स्त्रियों में शारीरिक दृष्टि से कोई व्याधि नहीं थी। बहुत से दकियानूसी डॉक्टर इस को कोरी कल्पना या दिमागी खुराफात कहेंगे।

किन्तु डॉक्टर प्रेट ने महसूस किया कि रोगियों से यह कहना कि घर जाओ और अपनी पीडा को भूल जाओ, व्यर्थ है। वे जानते थे कि उन स्त्रियों में से बहुत-सी बीमार होना नहीं चाहती थीं। यदि अपनी व्याधियों को भूलना इतना सरल होता तो वे स्वय ही भूल जातीं फिर क्या किया जाता?

उन्होंने अपनी कक्षा खोली। बहुत से मेडिकल-क्षेत्र के लोगों को इस की सफलता पर सन्देह हुआ। किन्तु कक्षा ने खूब काम कर दिखाया। कक्षा की शुरूआत हुए अठारह वर्ष हुए हैं और इस अर्से में हजारों बीमार कक्षा में उपस्थित रहकर स्वास्थ्य लाभ कर चुके हैं। कुछ बीमार तो वर्षों से इस कक्षा में उपस्थित रहते आ रहे हैं। उसी निष्ठा से जैसे कि वे चर्च में जाते हैं। मेरे सहयोगी ने एक महिला से बात चीत की, जो वर्षों से बराबर उन कक्षाओं में उपस्थित रहती आई है। उसने बताया कि जब वह पहली बार क्लीनिक में गई, उसे पूर्ण विश्वास हो गया था कि उसे गुर्दे एव हृदय की कुछ बीमारी है। वह इतनी

चिन्तित एवं तनावपूर्ण अवस्था में थी कि कभी कभी उसे दिखाई तक नहीं देता था-और आँखों के आगे अंधेरा छा जाता था। किन्तु आज वह प्रसन्न चित्त है। उसमें जीवन का विश्वास है और जब मैंने उसे देखा उसका स्वास्थ्य भी उत्तम था। उसकी गोद में उसका पौत्र सो रहा था। पर लगता था, मानों उसकी उम्र चालीस के लगभग ही हो। उसने कहा, मै इतनी चिन्तित रहती थी कि अधिक जीना नहीं चाहती थी। किन्तु इस क्लीनिक में आने पर मुझे चिन्ता की निस्सारता ज्ञात हुई। मैंने चिन्ता छोड दी। मैं ईमानदारी से कहती हूँ कि मेरा जीवन अब सुखी है।

कक्षा के मेडिकल सलाहकार डॉ. रोस हिल्फर्डिंग ने कहा कि उसकी राय में चिन्ता से हल्का होने का एक उत्तम उपाय यह है कि 'आप अपने कष्टों को अपने विश्वस्त व्यक्ति से कह डालें।' हम इस प्रणालि को 'केथारसिस' कहते हैं। उसने बताया, जब रोगी यहाँ आते हैं तो वे अपने कष्टों को विस्तार से कह डालते हैं। और इस प्रकार उन्हें अपने दिमाग से निकाल बाहर करते हैं। चिन्ताओं को लेकर उसपर सोचते बैठने और अपने तक ही रखने से स्नायु-तनाव प्रबल हो जाता है। हमें अपने कष्टों तथा चिन्ताओं को एक दूसरे के साथ बाँटना चाहिये। हमें सोचना चाहिये कि ससार मे कोई ऐसा भी हो सकता है जो हमारी बातें सुनने तथा समझने को तैयार हो। मेरे सहयोगी ने देखा था कि अपने कष्टों को दूसरों के सामने व्यक्त कर के, एक महिला को कितनी शक्ति प्राप्त हुई थी! उसकी अपनी घर-गृहस्थी की चिन्ताएँ थीं। जब उसने बात आरम्भ की वह बड़ी उत्तेजित थी किन्तु धीरे-धीरे बात-चीत के दौरान में वह शान्त हो गई और अन्त मे तो वह मुस्कराने भी लगी थी। तो क्या उसकी समस्या सुलझ चुकी थी? नहीं, वह इतनी सरल कहाँ थी! उसके व्यवहार में परिवर्तन इसलिए हुआ कि वह अपना दुःखड़ा दूसरे को सुना सकी तथा दूसरे की सलाह एव सहानुभूति प्राप्त कर सकी। शब्दो में घाव भरने की बडी शक्ति है और इसीलिए उसमें वह-परिवर्तन आया था।

कुछ हद तक मनोविश्लेषण शब्दों की घाव भरने की शक्ति पर निर्भर करता है। फ्रॉयड के समय में ही मनोविश्लेषकों को यह बात विदित हो गई थी कि यदि मनुष्य दूसरों को अपनी बात कह सके तो उसे आन्तरिक चिन्ताओं से कुछ शान्ति मिल सकती है; और यह इसलिए कि अपनी बात दूसरों को कह कर सम्भव है हमें अपने कष्टों के विषय में ठीक ठीक ज्ञान हो जाए और हम उनका सही रूप जान सकें। यों, इस विषय में पूरा पूरा उत्तर किसी के पास नहीं है, किन्तु हम सभी जानते हैं कि अपनी बात को कह देने से, एकदम जी हल्का हो जाता है।

अतः भविष्य मे जब कभी हम मानसिक सकट में हों, हमें चाहिये कि अपनी बात उगल देने के लिये अपने आस पास, किसी को खोज ले। मेरा मतलब यह नहीं कि आप हरेक के सामने अपना दुखडा रोते फिरें या शिकवा-शिकायत करने लगें। मैं यह भी नहीं कहता कि अपनी कमजोरी दूसरो को बता कर आप अपने आपके लिए खतरनाक बन जाएँ। आपको यह करना चाहिये कि आप एक विश्वास-पात्र

व्यक्ति को खोज लें और उसे अपनी सारी बातें कह दें। चाहे वह आपका सबधी हो, डॉक्टर हो, वकील हो अथवा कोई धर्म-गुरु हो। उस व्यक्ति से मिलकर कहिये- "मुझे आपकी सलाह चाहिये। मेरी अपनी एक समस्या है और मैं आशा करता हूँ कि आप इसे ध्यान से सुनेंगे। सम्भव है आप मुझे उचित राय दे सकें। सम्भव है आप इसे उस सही दृष्टिकोण से देख सकें, जिससे मै न देख पाता होऊँ और यदि आप इस सबध में कुछ भी न कर सकें तो भी यदि आप मेरी बातो को ध्यान से सुन लेंगे तो मुझे बडी सहायता मिलेगी।

यदि आपको ऐसा कोई व्यक्ति मिले ही नहीं जिसके सामने आप अपना मन खोल सकें तो 'सेव - ए. लाइफ '-लीग का सहारा लीजिए। इस लीग का बोस्टन डिस्पेन्सरी से कोई सम्बन्ध नहीं है। 'सेव - ए - लाइफ ' - लीग इस ससार में अपने ढग की अनोखी लीग है। प्रारम्भ में यह सम्भावित आत्महत्याओं को रोकने के उद्देश्य से बनाई गई थी। किन्तु ज्यों ज्यो वर्ष बीतते गए, इसके कार्यक्रम का विस्तार होता गया तथा उन लोगों को जो दुःखी थे अथवा जिनके भावात्मक अभाव थे, आध्यात्मिक सलाह देने लगी। मैंने मिस लोना बी. बोनेल से, जो सेव-ए.- लाईफ-लीग से आध्यात्मिक सलाह लेने आनेवाले लोगों से भेंट करती हैं, और बात-चीत करती है, पूछा तो उन्होंने मुझे कहा है कि इस पुस्तक के पाठकों के पत्रो के उत्तर देने मे मुझे बडी प्रसन्नता होगी। यदि आप चाहें तो न्यूयॉर्क शहर अन्तर्गत ५५० फिफ्थ ऐवन्यु स्थित सेव-ए-लाइफ-लीग को लिख सकते हैं, आपका पत्र एव कठिनाइयाँ पूरी तरह से गुप्त रखी जाएँगी। मैं तो आपको सलाह दूँगा कि आप किसी व्यक्ति के पास जाकर स्वय अपनी बात कह सुनाएँ क्योंकि इससे आपको कहीं अधिक राहत मिलेगी। किन्तु यदि ऐसा करना आपके लिए सम्भव न हो तो फिर उस लीग ही को लिख भेजिये।

अपनी बात कह दो, यह बोस्टन डिस्पेन्सरी कक्षा की मुख्य चिकित्सा पद्धति है। किन्तु कुछ अन्य पद्धतियाँ भी हैं जो हमने इस कक्षा से सीखी हैं। इनका प्रयोग एक गृहिणी की हैसियत से आप अपने घर बैठे ही कर सकती हैं।

(१) अपने पास एक डायरी रखिये जिसे आप मन बहलाने अथवा प्रेरणा लेने के लिए पढ सकें। उस डायरी में आप सभी कविताएँ, छोटी छोटी प्रार्थनाएँ तथा उद्धरण जो व्यक्तिगत रूप से आपके हृदय को छू गये हों लिख लीजिए। जिस दिन आपको क्लेष हो आप उसे मिटाने के लिए इस डायरी से उपचार प्राप्त कर सकते है। इस डिस्पेन्सरी के अनेक बीमारों ने वर्षों तक ऐसी डायरियाँ रखी हैं। उनका कहना है कि ऐसी डायरी आप में आध्यात्मिक शक्ति का सचार करेगी।

(२) दूसरों के दोषों पर बहुत अधिक ध्यान न दीजिए, यह ठीक है कि आप के पति में दोष हैं। यदि वह सन्त होता तो आप से कभी

विवाह ही नहीं करता। उस कक्षा में एक स्त्री ऐसी थी जो दिन ब दिन झगड़ालू एवं गालटराज होती जा रही थी। उसके चेहरे पर कटुता उभरने लगी थी। उसे एक छोटा सा सवाल पूछा गया "यदि तुम्हारा पति मर जाय तो तुम क्या करो?" इस विचार मात्र से उसे एक ऐसा धक्का लगा कि तत्काल ही वह बैठकर अपने पति की अच्छाइयों की सूची तैयार करने मे लग गई। उसने खासी बड़ी सूची तैयार कर ली। आप भी, जब कभी आपको लगे कि आपका पति एक कजूस और दुष्ट है, इस प्रयोग का उपयोग कीजिए। सम्भव है कि उसके गुण जान लेने के बाद आप अनुभव करने लगें कि आप उसे चाहती हैं।

(३) अपने पडोसी मे खूब दिलचस्पी लीजिए। पड़ोस मे रहने वाले लोगों के साथ मित्रता का व्यवहार कीजिए। एक बीमार स्त्री किसी मित्र के अभाव में अपने को एकाकी अनुभव करती थी, इसलिए उसे कहा गया कि अब से, जिस व्यक्ति को वह देखे उसके विषय में एक कहानी तैयार करने का प्रयास करे। एक गाडी में बैठे उसने मुहल्ले के लोगों की पृष्ठ भूमि तथा उनके वातावरण के विषय में सोचना आरम्भ किया। वह उनके जीवन के विषय में कल्पनाएँ करने लगी। परिणाम यह हुआ कि वह कहीं भी लोगो से बातें करने लग जाती। अपने इस व्यवहार से आज वह एक आकर्षक, प्रसन्न एवं फुर्तीली स्त्री बन गई है और पीडा से मुक्त है।

(४) सोने के पूर्व दूसरे दिन के कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार कर लीजिए। यह बहुत जरूरी है क्यों कि कक्षा के सचालकों को इस बात का पता चला कि अनेक स्त्रियाँ उन घरेलू कामों से जो कभी समाप्त ही नहीं होते, परेशान एवं थकी-हारी रहती हैं। उनके काम का कभी अन्त ही नहीं आता। समय का भूत उन पर हर वक्त सवार रहता है। इस उतावल और चिंता की दशा को मिटाने के लिए उन्हे सुझाया गया कि वे दूसरे दिन के लिए रात ही को कार्यक्रम निश्चित कर ले। परिणाम यह हुआ कि वे अधिक काम पूरा कर सकीं और वह भी कम थकान से। उन मे गर्व एवं सफलता की भावना का उदय हुआ। आराम तथा बनाव-शृंगार करने के लिए भी वे समय बचा सकीं। (प्रत्येक स्त्री को दिन में कुछ समय बनाव-शृंगार के लिए निकालना ही चाहिये ताकि वह आकर्षक बन सके) मेरा अपना विचार है कि जब तक स्त्री अपने को आकर्षक महसूस करती रहे उसे घबराने की कोई आवश्यकता नहीं।

(५) अन्त मे तनाव तथा थकान से दूर रहिये! आराम कीजिए! आराम! नहीं तो तनाव एवं थकान के कारण आप जल्दी ही वृद्ध दीखने लगेंगी और आप का आकर्षण एवं सौन्दर्य नष्ट हो जाएगा। जिस समय बोस्टन थॉट-कन्ट्रोल कक्षा के डायरेक्टर एव प्रोफेसर पॉल इ. जोनसन उन अनेक सिद्धान्तों पर जिन

पर हम अगले परिच्छेद में आराम के नियमों के अन्तर्गत विचार कर चुके हैं, बोल रहे थे, मेरी सहायिका लगभग एक घन्टे तक उन्हें सुनती रही। अन्य व्यक्तियों के साथ-साथ उसने भी आराम करने की कोशिश की और दस मिनट में ही वह अपनी कुर्सी पर बैठी बैठी सो गई।

शारीरिक विश्राम पर इतना बल क्यों दिया जाता है? इसलिए कि डॉक्टरों की भाँति क्लीनिक भी जानता है कि यदि हमें लोगों को चिंता से छुटकारा दिलाना है तो उन्हें आराम देना होगा।

एक गृहिणी के नाते आपको आराम जरूर करना चाहिये। इस से आप को बहुत बड़ा लाभ होगा और वह यह है कि आप जब और जहाँ चाहें लेट सकेंगी। फिर चाहे फर्श पर ही क्यों न लेटना हो! आश्चर्य की बात तो यह है कि लचीले गद्दे पर आराम करने की बनिस्बत कठोर फर्श पर आराम करना अधिक लाभदायक है। इस से सघर्ष शक्ति की वृद्धि होती है तथा रीढ़ की हड्डी को लाभ पहुँचता है।

अब मैं आपको कुछ अभ्यास बताता हूँ जिन्हें आप घर में ही कर सकती हैं। एक सप्ताह तक उन्हें कीजिए और देखिये कि आपकी आकृति तथा मन पर उनका कैसा प्रभाव पड़ता है।

(अ) जब कभी भी आप थकान महसूस करें, फर्श पर तन कर सीधे लेट जाइये। यदि आप चाहें तो गोल-गोल लुढ़क भी सकते हैं। दिन में दो बार यह अभ्यास कीजिए।

(ब) अपनी ऑखें बन्द कर लीजिये। जैसा कि प्रोफेसर जोन्सन ने कहा है आप भी कहिये – "सूरज सर पर चमक रहा है। आसमान नीला और स्वच्छ है। शान्त प्रकृति ससार की वशवर्तिनी बनी हुई है और मैं प्रकृति की सन्तान के नाते विश्व सापेक्ष ही हूँ।" इस के अलावा यदि आप प्रार्थना करें तो और भी अच्छा।

यदि आप कुछ पकवान बना रहीं हैं अथवा कार्य व्यस्त हैं और लेट नहीं सकतीं तो कुर्सी पर बैठे बैठे अभ्यास करने पर भी आप उतना ही लाभ प्राप्त कर सकती हैं। कठोर और खड़ी कुर्सी आराम के लिए उत्तम रहती है। आप मिश्र की किसी प्रतिमा की भाँति कुर्सी पर सीधी बैठ जाइये और अपनी हथेलियों को जंघाओं पर टिका दीजिए।

तब धीरे से पॉव के पजे को कड़ा और ढीला कीजिये। टॉगो की मासपेशियों को कड़ा और ढीला कीजिये। इस क्रिया को गर्दन तक शरीर की सभी मासपेशियों के साथ कीजिये। तब अपने सिर को गेंद की तरह दाएँ-बाएँ लुढकने दीजिए और मास-पेशियों को ढीला करने का विचार कीजिये।

(क) अपने स्नायु-तन्तुओं को धीरे धीरे, दृढता के साथ सॉस लेकर शान्त कीजिये। स्नायु-तन्तुओं को शान्त करने के लिये श्वास-प्रश्वास का ताल – मेल अत्यन्त उत्तम पद्धति है। इस विषय में भारतीय योगियों के विचार बड़े सही हैं।

(ङ) अपने चेहरे की झुर्रियों एवं विकृति का विचार कीजिये तथा तनाव को दूर कर उसे सौम्य बनाइये। आपकी भृकुटी के बीच की तथा मुँह के दोनों ओर की चिन्ता-जनित शल्वटो को ढीली कर लीजिये। दिन में दो बार यह प्रयोग कीजिये और सम्भव है उसके बाद अपने चेहरे की मलिनता मिटाने के लिए आपको सौन्दर्य प्रसाधनों की दूकान पर न जाना पड़े। यह भी सम्भव है कि शल्वटे विलिन हो जाएँ।

☆

२६ : थकान एवं चिन्ता रोधक उपयोगी एवं व्यावहारिक आदतें

उपयोगी व्यावहारिक आदत १ : अपनी डेस्क पर उन्हीं कागजातों को रखिये जिनकी समस्याओं का हल अभी इसी क्षण आपको करना है। बाकी को वहाँ से हटा दीजिये।

शिकागो तथा उत्तरी-पश्चिमी रेल्वे का प्रधान रोलेन्ड एल. विलियम्स का कथन है कि, "जिस व्यक्ति की डेस्क पर कागजों का ऊँचा ढेर लगा पड़ा हो, वह यदि वहाँ उन कागजों को ही रखे, जिनकी समस्याओं का हल उसे अभी, इसी वक्त, करना हो और बाकी को वहाँ से हटा दे तो उसका काम अधिक सरल हो जाए। मैं इसे उत्तम घरेलू-व्यवस्था कहता हूँ और यह कार्य कुशलता प्राप्त करने की पहली सीढ़ी है।

यदि आप वाशिंग्टन डी. सी. स्थित कॉंग्रेस पुस्तकालय देखने जाएँ तो आपको वहाँ छत पर, कवि पोप के लिखे ये शब्द दिखेंगे—व्यवस्था ईश्वर का प्रमुख नियम है।

उसी प्रकार व्यवस्था काम-काज के लिये भी प्रमुख नियम होनी चाहिये। औसतन एक व्यापारी की डेस्क उन कागजों से भरी रहती है जिन्हें उसने कई सप्ताह बीत जाने पर भी नहीं देखा। वस्तुतः न्यूओर्लियन्स समाचार पत्र के एक प्रकाशक ने मुझे एक बार बताया कि जब उसके सेक्रेटरी ने अपनी एक डेस्क से कागजात हटवाए तो उनके नीचे एक टाइप रायटर निकला, जो दो वर्षों से गुम था।

जवाब लिखे बिना पड़े, ढेर सारे पत्रों, रिपोर्टों और मेमों से भरी टेबल को देखना ही घबराहट, तनाव तथा चिन्ता बढ़ाने के लिए पर्याप्त है। दुनियाभर का काम और समय की कमी की चिन्ता से तनाव एवं थकान ही नहीं बढ़ते किन्तु उससे रक्तचाप, हृदयरोग तथा उदरव्रण की व्याधियाँ भी उत्पन्न हो सकती हैं।

पेन्सिलवेनिया विश्वविद्यालय के ग्रेजुएट, स्कूल ऑफ मेडिसिन के प्राध्यापक डॉक्टर जीन एच. स्टोक ने अमेरिकन मेडिकल एसोसिएशन के राष्ट्रीय अधिवेशन में एक निबन्ध पढ़ा था जिसका शीर्षक-'फंक्शनल न्यूरोसिस एज कोम्प्लीकेशन्स ऑफ आर्गेनिक डिजीज' था। उस निबन्ध में डॉक्टर स्टोक ने रोगी की मानसिक अवस्था के किस पहलू की जाँच पहले की जाय, इस शीर्षक के अन्तर्गत ग्यारह मुद्दों की एक सूची तैयार की थी। उस सूची की पहली बात निम्नलिखित है—

रोगी की अनिवार्यता तथा कर्तव्य की भावना को परखा जाय तथा उसके उन अगणित कार्यों की जानकारी की जाय जिनको किये बिना उसका छुटकारा नहीं।"

किन्तु, केवल अपनी डेस्क साफ करने तथा निर्णय करने की यह प्राथमिक कार्य-प्रणाली ही आपका बोझ, तथा हनुमान की पूँछ की तरह बढ़ते काम को करने की अनिवार्यता को कैसे दूर कर सकती है? डॉक्टर विलियम एल. सेडलर जो एक प्रसिद्ध मनः चिकित्सक हैं अपने एक बीमार के विषय में बताते हैं कि किस प्रकार

इस साधारण पद्धति के प्रयोग से वह स्नायु विघटन से बच सका। वह व्यक्ति शिकागो की एक बड़ी फर्म में अधिकारी था। डॉक्टर सेडलर के कार्यालय में आया उस समय वह तनाव, घबराहट तथा चिन्ता की अवस्था में था। वह जानता था कि वह ... किन्तु वह अपना काम न छोड़ सका और उसे सहायता की आवश्यकता पड़ गयी।

"डॉक्टर सेडलर ने कहा कि जब वह मुझे अपनी कहानी सुना रहा था एकाएक मेरे टेलिफोन की घंटी बज उठी। अस्पताल से बुलावा था। मैंने बात को टालने के बजाय तत्काल निर्णय कर लेने के लिये समय लिया। जहाँ तक सम्भव होता है मैं हमेशा ही प्रश्नों को जहाँ का तहाँ हल कर लेता हूँ। जैसे ही मैंने रिसीवर रखा कि घंटी फिर बज उठी। इस बार मामला जरूरी था जिसके विषय में बातचीत करने में मुझे देर लगी। तीसरी बार बाधा उस समय पड़ी जब मेरा एक सहयोगी असाध्य रूप से बीमार व्यक्ति के विषय में राय लेने मेरे ऑफिस में आ गया। जब मैं उसके साथ बातचीत समाप्त कर चुका तो मैं अपने से मिलने आए हुए व्यक्ति की ओर मुड़ा और उसे इतनी देर प्रतीक्षा कराने के लिए क्षमा माँगी। किन्तु अब उसके चेहरे पर ताजगी दीखने लगी थी। उसके चेहरे का रंग ही बदल चुका था।

उस व्यक्ति ने सेडलर से कहा—"क्षमा माँगने की कोई बात नहीं। इन दस मिनिटों में मैं अपनी भूल ज्ञात कर चुका हूँ। मैं अब ऑफिस जाकर अपनी कार्य पद्धति बदलना चाहता हूँ। किन्तु जाने के पूर्व क्या मैं आपकी डेस्क का निरीक्षण कर सकता हूँ?"

डॉक्टर सेडलर ने अपनी डेस्क के दराज खोल दिये। सब खाली थे। सिर्फ कुछ दवाइयाँ आदि थीं। बीमार ने पूछा, "आप अपने अधूरे काम के कागजात आदि कहाँ रखते हैं?"

डॉक्टर ने उत्तर दिया—"मेरा कोई काम अधूरा नहीं है।"

"और वे पत्र कहाँ हैं, जिनके उत्तर देने बाकी हैं?"

"उत्तर देने बाकी हैं? नहीं, यह मेरा नियम नहीं। मै किसी भी पत्र को उसका उत्तर लिखे बिना नहीं रखता। मैं उसी समय अपने सेक्रेटरी को उसका उत्तर लिखवा देता हूँ।"

छः सप्ताह उपरान्त उस अधिकारी ने डॉक्टर सेडलर को अपने कार्यालय में बुलाया। अब वह बदल चुका था और साथ ही उसकी डेस्क भी। उसने अपनी डेस्क के दराज खोलकर बताया कि उसमें कोई भी काम अधूरा नहीं रखा हुआ था। छः सप्ताह उपरान्त उस अधिकारी ने कहा—"दो अलग-अलग कार्यालय में मेरी तीन अलग-अलग टेबल थी, और मैं काम के बोझ से काफी दबा हुआ था। उसे कभी भी समाप्त नहीं कर पाता था। आप से बात करने के उपरान्त लौटकर मैंने

एक गाड़ीभर कागजात तथा कई पुराने मामलों को निपटा दिया। अब मैं एक ही डेस्क पर काम करता हूँ। और अपने मामलों को तत्काल निबटा देता हूँ। किसी भी काम को अधूरा नहीं छोड़ता कि बाद में वह मेरे लिये परेशानी तथा चिन्ता का कारण बन जाये। किन्तु सबसे अधिक आश्चर्य की बात तो यह है कि अब मैं पूर्णतया स्वस्थ हो गया हूँ। अब मेरे स्वास्थ्य में कोई खराबी नहीं है।"

अमेरिकी सुप्रीम कोर्ट के भूत-पूर्व मुख्य न्यायाधीश चार्ल्स इवान्स ह्यूज का कथन है कि, "लोग अधिक काम करने से कभी नहीं मरते, वे शक्ति अपव्यय और चिन्ता के कारण मरते हैं। वे कभी भी अपने काम को पूरा नहीं कर पाते इसलिए सदा चिन्तित रहते हैं।"

व्यवस्थित ढंग से काम करने का दूसरा नियमः अपने कार्य का क्रम उसके महत्व के अनुरूप निर्धारित कीजिये।

राष्ट्रव्यापी "सिटीज सर्विस कं०" का संस्थापक हेनरी एल. डॉगर्टी का कहना है कि चाहे वह कितनी ही तनख्वाह देने को तैयार क्यों न हो, उसे लोगों में दो प्रकार की योग्यताएँ पाना बहुत ही कठिन लगा। वे अमूल्य योग्यताएँ ये हैं:- सोचने की योग्यता तथा कार्य के अनुरूप काम करने की क्षमता।

चार्ल्स लुकमेन, जिसने सामान्य रूप से अपनी जीविका आरम्भ की थी बारह वर्ष की अवधि में ही "पेप्सोडेण्ट" कम्पनी का प्रधान बन गया। उसका वेतन एक लाख रुपये प्रतिवर्ष था और इसके अलावा वह १० लाख रुपये और भी कमा लेता था। उसका कथन है कि उसकी सफलता का कारण वे दो योग्यताएँ हैं जिन्हें लोगों में पाना हेनरी एल. डॉगर्टी के अनुसार प्रायः असम्भव है। चार्ल्स लुकमेन ने कहा "जहाँ तक मुझे स्मरण है, मैं सवेरे ५ बजे उठता आया हूँ, क्यों कि उस समय मैं ठीक तरह सोच सकता हूँ। ठीक तरह से सोच लेने के बाद अपना दैनिक कार्यक्रम बना लेता हूँ। अपने कार्यक्रम की योजना मैं उस के महत्व के अनुरूप बनाता हूँ।"

अमेरिका में बीमा का अत्यन्त सफल धंधा करनेवाला फ्रैंकलीन बेट्गर आनेवाले दिन का कार्यक्रम बनाने के लिए सवेरे ५ बजे तक नहीं ठहरता। वह तो रात ही को अपनी योजना बना लेता है। दूसरे दिन एक निश्चित रकम तक बीमा बेचने की योजना वह तैयार कर लेता है। यदि वह उतनी रकम तक अपना व्यापार नहीं भी कर पाता है तो उसे दूसरे दिन में जोड़ लेता है।

अपने अनुभव से मैं जानता हूँ कि काम का क्रम उसके महत्व के अनुरूप निश्चित करना हमेशा सम्भव नहीं होता, किन्तु मैं यह भी जानता हूँ कि पहला काम पहले कर लेने की पद्धति निश्चित ही उत्तम है, बनिस्बत इसके कि जो भी काम संयोग से सूझे उसे हाथ में ले लिया जाय।

जॉर्ज बर्नार्ड शॉ ने पहला काम पहले करने की पद्धति का कोई कठोर नियम नहीं बना रखा था। यदि वह ऐसा करते तो सम्भवतः एक लेखक की दृष्टि से असफल रहते और जीवन भर एक बैंक के कैशियर ही बने रहते। उन्होंने प्रतिदिन ५ पृष्ठ लिखने का निश्चय कर रखा था। उनके उस निश्चय और दृढता ने ही उन्हें जीवन में सफलता प्रदान की। वह अपने जीवन के नौ निराशा-जनक वर्षों में भी पाच पृष्ठ प्रतिदिन के हिसाब से लिखते रहे, यद्यपि उन नौ वर्षों में उन्होंने केवल तीस डालर ही कमाये। इस हिसाब से दैनिक आय एक पैसे के लगभग होती है।

व्यवस्थित ढंग से काम करने का तीसरा नियम : यदि आपकी कोई समस्या हो और निर्णय करने के लिये आवश्यक तथ्य मौजूद हों तो तत्काल ही समस्या को हल कर लीजिए। उसे कल के लिये न छोड़िये।

मेरे एक भूतपूर्व विद्यार्थी स्वर्गीय एच पी. हावैल ने बताया कि जब वह यू. एस. स्टील के डायरेक्टरों के बोर्ड का सदस्य था, बोर्ड की बैठकें प्रायः लम्बी हुआ करती थीं। कई समस्याओं पर विचार विमर्श होता था किन्तु फैसले बहुत कम किये जाते थे। परिणाम यह होता कि बोर्ड के प्रत्येक सदस्य को घर पर अध्ययन करने के लिए कागजातो का बहुत बड़ा पुलिन्दा ले जाना पड़ता।

अंत में श्री हावैल ने बोर्ड के डायरेक्टरों से एक बार में एक समस्या हाथ में लेकर उसको निबटा देने का अनुरोध किया ताकि कोई देर अथवा टालमटोल न हो, चाहे वह निर्णय अतिरिक्त जानकारी मालूम करने के लिए हो, चाहे कुछ करने या न करने के लिये हो, किन्तु दूसरी समस्या पर पहुँचने से पहले, पहले की समस्या पर निर्णय अवश्य ले लिया जाय। मि. हावैल ने मुझे बताया कि इसका परिणाम अत्यन्त आशाजनक एवं उत्साहवर्द्धक रहा। धीरे धीरे कार्य सूची साफ हो गई, और रोज के लिए कागजात कम हो गये। अब सदस्यों को कागजातो के पुलिन्दे घर नहीं ले जाने पड़ते और उनकी समस्याओं के लिए किसी प्रकार की चिन्ता नहीं रहती। यह नुस्खा यू एस. स्टील के डायरेक्टरों की मडली के लिये ही नहीं किन्तु आपके और मेरे लिए भी उपयोगी है।

व्यवस्थित ढंग से काम करने का चौथा नियम : काम को व्यवस्थित कीजिये, उसका सम्यक् वितरण कीजिये तथा उसका निरीक्षण कीजिये।

बहुत से व्यवसायी असमय में ही मृत्यु के ग्रास बन जाते हैं क्योंकि वे अपने काम और अपनी जिम्मेदारियों को बॉटना नहीं सीखते और हर काम को स्वयं करने पर जोर देते हैं। परिणाम यह होता है कि वे बारीकियों और उलझनों में फँस जाते हैं। वे उतावल, चिन्ता, शोक और तनाव की भावना से घिर जाते हैं। अपनी जिम्मेदारियों को बॉटना बड़ा कठिन काम है। मैं जानता हूँ, क्यों कि मेरे लिये यह कार्य अत्यन्त कठिन था। अनुभव के आधार पर मैं यह भी जानता हूँ कि गलत आदमियों को कार्य सौप देने से कितनी बरबादी हो सकती है। यद्यपि अपने काम

को बाँटना कठिन है फिर भी अफसर को यदि चिन्ता, तनाव और थकान से दूर रहना है तो उसे यह करना ही होगा।

जिस व्यवसायी को अपने व्यवसाय के कामों को बाँटना, उसका निरीक्षण करना, तथा उन्हें व्यवस्थित करना नहीं आता वह ५० अथवा ६० की अवस्था में ही हृदय रोग का शिकार बन जाता है। यह हृदय रोग चिन्ता और तनाव के कारण है, यदि आपको कोई प्रमाण चाहिये तो अपने स्थानीय समाचार पत्रों की मृत्यु-सूचियों को देखिये।

२७ : थकान, चिन्ता तथा रोष उत्पन्न करने वाली मनःस्थिति को मिटाने के उपाय

थकान के मुख्य कारणों में उकताहट एक है। उदाहरणार्थ एलिस ही की बात लीजिये। एलिस एक स्टेनोग्राफर है जो हमारे मुहल्ले में रहती है। एक रात वह नितान्त थकी हुई घर लौटी। उसके व्यवहार में थकावट नजर आती थी। उसे थका दिया गया था। उसके सर में दर्द था। वह इतनी थक गई थी कि खाने के पूर्व ही सो जाना चाहती थी। उसकी माँ ने बडी मिन्नत की, तब कहीं जाकर वह खाने के लिये बैठी। इतने में टेलीफोन की घंटी बजी। उसके मित्र का टेलिफोन था। उसने उसे नृत्य के लिए आमन्त्रित किया था। एकाएक उसकी आँखें चमक उठीं और उसमें ताजगी आ गई। वह ऊपर भागी। अपना नीला गाउन पहना। सवेरे तीन बजेतक उसने नृत्य किया और जब वह घर लौटी तब उसमें थकावट लेषमात्र भी नहीं थी। वस्तुतः वह इतनी स्वस्थ एव प्रसन्न थी कि सो भी नहीं सकी।

तो क्या एलिस आठ घटे पूर्व इतनी थकी थी जितनी कि अपने व्यवहार से लगती थी। हाँ, सचमुच वह थकी हुई थी। इसलिये कि वह अपने काम से ऊब गई थी और साथ ही अपने जीवन से भी। एलिस के समान ही और भी लाखों प्राणी हैं। हो सकता है आप भी उनमें से एक हों।

यह तो सर्व विदित है कि आपकी थकान का सम्बन्ध, शारीरिक परिश्रम की अपेक्षा आपकी सामान्य मानसिक अवस्था से अधिक है। कुछ वर्ष पूर्व जोसेफ इ. बारमेक, पी एच. डी. ने 'आरकाइब्ज ऑफ साइकॉलाजी' नाम की एक रिपोर्ट प्रकाशित की थी, जिस में उन्होंने अपने कुछ अनुभव बतलाये थे कि किस प्रकार उकताहट से थकान उत्पन्न होती है। डॉ. बारमेक ने ये प्रयोग कुछ विद्यार्थियों पर किये थे। उन्होंने उनको ऐसे विषय दिये, जिनमें वे जानते थे कि उनकी रुचि नहीं है। परिणाम यह हुआ कि विद्यार्थी थकान और सुस्ती का अनुभव करने लगे। उन्हें सरदर्द होने लगा। आँखें भारी हो गई और चित्त में चिड़चिड़ापन आ गया। कुछ विद्यार्थियों के तो पेट भी खराब हो गये। तो क्या यह सब कोरी कल्पना थी? नहीं। उन विद्यार्थियों का परीक्षण किया गया कि उनके भोजन से खून और माँस-पेशियाँ बराबर बनती हैं या नहीं। उन परीक्षणों से पता चला कि जब कोई व्यक्ति उकता जाता है तब उसके शरीर का रक्तचाप और ऑक्सिजन की खपत वस्तुतः कम हो जाती है और जब व्यक्ति अपने काम में आनन्द लेने लगता है तो भोजन से रक्त बनने की सम्पूर्ण क्रिया सुचारु रूप से होने लगती है।

जब हम कोई रुचिकर एव उत्साहवर्धक कार्य कर रहे होते हैं तो क्वचित् ही थकते हैं। उदाहरणार्थ हाल ही में मैं लूइज झील के इर्द गिर्द कैनेडियन रोकीज नामक स्थान पर अपनी छुट्टियाँ बिताने गया था। वहाँ मैंने कई दिन बिताए। क्रीक के आसपास में मछलियाँ मारता था, सर तक ऊँची ऊँची घास में अपना रास्ता

बनाते चलता था, तथा रास्ते में पड़े लकड़ी के लट्ठों से टकराता चलता था। दिन के आठ घण्टे इसी प्रकार बिता देता फिर भी मैं थकान का अनुभव नहीं करता था। क्यों? इसलिये कि मुझ में जोश था और खुशी थी। मुझ में एक उच्च सिद्धि की भावना थी ... किन्तु मान लीजिये मछलियाँ मारते मैं थक जाता! तो जानते हैं मुझे कैसा लगता? मुझे इतना थकान लगता जितना कि सौ फुट की ऊँचाई पर चढ़ने का कठोर परिश्रम करके भी नहीं लगता।

पहाड़ की चढ़ाई करते करते मनुष्य इसलिए थकता है कि वह चढ़ते चढ़ते उकता जाता है। जितना वह उकताहट से थकता है उतना कठोर परिश्रम कर के भी नहीं थकता। उदाहरणार्थ मिनेपोलिस स्थित फार्मर्स एण्ड मेकेनिक्स, सेविंग बैंक के प्रधान श्री. एस. एच. किंगमेन ही को लीजिये। उन्होंने मुझे उपर्युक्त कथन का एक सांगोपांग उदाहरण प्रस्तुत करने वाली घटना बताई थी—१९५३ की जुलाई में कनाडा की सरकार ने कनाडा के एल्पाइन क्लब को, प्रिन्स ऑफ वेल्स रेन्जरर्स संस्था को पर्वतारोहण के लिए प्रशिक्षण देने शिक्षक भेजने के लिये कहा। उन सिपाहियों को प्रशिक्षण देने के लिये अन्य व्यक्तियों के साथ श्री. किंग मेन को भी चुना गया। उन्होंने मुझे बताया कि किस प्रकार वे अपने अन्य साथियों को जिनकी अवस्था बयालीस वर्ष से बावन वर्ष तक की थी, हिम सोतों, हिम से आच्छादित मैदानों, तथा चालीस फीट ऊँची चट्टानों पर ले गए, जहाँ उन्हें रस्सियों तथा हाथ पाँव जमाने के लिये, छोटे छोटे खाँचों के सहारे चढ़ना पड़ता था। वे माइकल पीक (चोटी), प्रेसीडेन्ट पीक तथा कनाडियन रोकी के अन्तर्गत लीटल योहो घाटी स्थित कई बेनाम चोटियों पर चढ़े। पन्द्रह घण्टों की चढ़ाई के उपरान्त ये स्वस्थ अवस्थावाले युवक थक कर चूर हो गये। (छः सप्ताह पूर्व ही उन्होंने कठिन कमान्डो प्रशिक्षण पूरा किया था।)

पर क्या वे इसलिये थक गये थे कि जो माँसपेशियाँ सैनिक प्रशिक्षण में कठोर नही हो पाई थीं, उनसे उन्होंने काम लिया था? कोई भी व्यक्ति जो कमांडो प्रशिक्षण प्राप्त कर चुका है वह इस प्रकार के प्रश्न को बकवास समझेगा। उनके सर्वथा थक जाने का कारण यह था कि वे चढ़ाई करते करते ऊब चुके थे। वे इतने थक गये थे कि उनमें से कई तो भोजन किये बिना ही सो गए। किन्तु क्या गाईड भी, जो उनसे अवस्था में दुगुने, तिगुने थे, थके थे? हाँ, थके तो थे पर थक कर चूर नहीं हुए थे। गाईड लोगों ने भोजन किया और उसके बाद वे घंटों, दिन के अनुभवों के विषय में बातें करते रहे। वे नहीं थके इसलिए कि उनकी उसमें रूचि थी। जब कोलम्बिया के डॉ. एडवर्ड थॉर्नडाइक थकान पर प्रयोग कर रहे थे तब उन्होंने कुछ युवकों को प्रायः एक सप्ताह तक उनके मन को बहलाते हुए जगाए रखा था। बहुत कुछ प्रयोगों के उपरान्त डॉ थॉर्नडाइक इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि काम के घटने का वास्तविक कारण केवल उकताहट है।

आप दिमागी काम करके शायद ही कभी थकें। यह बात दूसरी है कि आप आवश्यक मात्रा में काम करने के पहले ही थक जाएँ। उदाहरणार्थ–गत सप्ताह के किसी दिन को याद कीजिये, जब आपके काम में निरन्तर बाधा पड़ती रही हो, पत्रों का उत्तर न दिया जा सका हो, लोगों से समय देकर भी न मिल सके हों, कुछ यहाँ अड़चन हो गई हो, कुछ वहाँ काम गड़बड़ा गया हो, या फिर बिना उलझन का काम किये ही भिन्नाया सर लिये थके माँदे आप घर लौटे हों।

इसके बाद एक ऐसे दिन की याद कीजिये जब ऑफिस में सब काम ठीक-ठाक रहा हो, आपने पहले दिन से चालीस गुना अधिक काम किया हो और फिर भी आप तरो-ताजा घर लौटे हों। (मुझे भी ऐसे अनुभव हुए हैं।)

इस प्रकार आपको पता चलेगा कि थकान काम से नहीं होती बल्कि चिन्ता, नैराश्य और रोष से होती है।

यह परिच्छेद लिखने के दिनों में मैं जेरोन कर्न द्वारा प्रस्तुत मनोरंजक सगीत-प्रहसन 'बोट' देखने गया था। उसमें केप्टन एन्डी, जो 'कॉटन ब्लॉसम' का केप्टन है अपने दार्शनिक 'इन्टरल्युड' में कहता है "भाग्यशाली व्यक्ति वे हैं जिन्हें करने के लिए मन-भाता काम मिले। वे भाग्यशाली इसलिये हैं कि उनमें शक्ति और प्रसन्नता की मात्रा अधिक होती है, चिन्ता और थकान कम है। जहाँ आपकी रूचि है वहीं आपकी शक्ति भी। अपनी प्रेयसी के साथ दस मील चलने में जितनी थकान होती है उससे भी ज्यादा अपनी झगड़ालू पत्नी के साथ दस कदम चलने में होगी।"

हाँ, तो आप इस बारे में क्या कर सकते हैं? देखिए, एक स्टेनोग्राफर ने, जो ओक्लाहोमा के अन्तर्गत टुलसा की एक तेल की कम्पनी में काम करती थी, इस बारे में क्या किया? हर महीने, कई दिनों तक, जितने भी उकता देने वाले काम होते थे, उसे करने पड़ते थे, जैसे-तेल के ठेकों के फार्म भरना, आकडे रखना तथा अंक भरना। यह काम इतना उबा देने वाला था कि अपनी आत्मरक्षा के लिये उसने उसे रूचिकर बनाने का निश्चय किया। कैसे? देखिये: वह प्रतिदिन अपने आप से सघर्ष करती। वह हर सुबह अपने भरे हुए उन फार्मों को गिन लेती और दोपहर में सवेरे के काम से अधिक काम करने का प्रयत्न करती। रोज दिन के अत में वह अपने फार्म गिन लेती और दूसरे दिन उनसे भी अधिक फार्म भरने का प्रयत्न करती। परिणाम यह हुआ कि शीघ्र ही वह अपने विभाग के अन्य स्टेनोग्राफरों की बनिस्बत उकता देने वाले उन छपे फार्मों को भरने में अधिक सफल हो सकी। इससे उसे क्या लाभ हुआ? प्रशसा मिली? नहीं, धन्यवाद? नहीं, तरक्की? नहीं, अधिक वेतन? नहीं,... उसे उकताहट के कारण जो थकान होती थी, उसे रोकने में सहायता मिली। उससे उसको मानसिक स्फूर्ति मिलती थी। और चूकि उसने अरूचिकर कार्य को रूचिकर बनाने का प्रयत्न किया था उसमें अधिक शक्ति और उत्साह रहने लगा; और

अवकाश के समय उसे अधिक आनद मिलने लगा। यह एक सच्ची घटना है। इसे मैं इसलिये जानता हूँ कि मैंने उस लडकी से ही विवाह किया है।

एक दूसरी स्टेनोग्राफर का उदाहरण लीजिए जिसने महसूस किया कि काम को रूचिकर बना लेने में ही लाभ है। पहले उस स्टेनोग्राफर को अपना काम करने में बड़ा सघर्ष करना पडता था, किन्तु अब नहीं। उसका नाम मिस वेली जी. गोल्डन है और वह इलानुआ, एम्हर्स्ट के ४७३ दक्षिण केलिनवर्थ ऐवेन्यू में रहती है। उसने मुझे अपनी निम्न लिखित कहानी लिख भेजी है।

"हमारे कार्यालय में चार स्टेनोग्राफर हैं और हर एक को कई व्यक्तियों को पत्र लिखने का काम सौंपा गया है। कभी कभी तो हम अपने काम में उलझ कर रह जाती हैं। एक दिन जब हमारे विभाग के उपप्रधान ने मुझे एक पत्र फिर से लिखने के लिये दिया तो मैंने उसका विरोध किया। मैंने उन्हें यह बताने का प्रयत्न किया कि बिना फिर से टाइप किये ही पत्र को सुधारा जा सकता है। तो उन्होंने उत्तर में कहा कि यदि मैं न कर सकूँ तो वे किसी दूसरी स्टेनोग्राफर को खोजेंगे जो फिर से उसे टाइप कर सके। मैं एकदम उत्तेजित हो उठी। किन्तु जब मैं पत्र को फिर से टाइप कर रही थी, मेरे दिमाग में एकाएक विचार आया कि जिस जगह मैं काम कर रही हूँ वहाँ का काम करने के लिये कई तैयार हो जायेंगे। और फिर मुझे तनख्वाह भी तो इसी काम के लिये दी जाती है। यह सोचकर मैं अपने आपको स्वस्थ अनुभव करने लगी। मैंने तुरन्त निश्चय किया कि अपने काम को, जिससे मैं घृणा करती थी, इस प्रकार करूँ जैसे कि वह मुझे वास्तव मे भाता हो। इस प्रकार मैंने एक बहुत ही महत्वपूर्ण खोज कर डाली कि यदि मैं किसी काम को इस तरह करूँ मानों कि मुझे भाता है तो मै कुछ हद तक उसे करने में आनन्द अनुभव कर सकती हूँ। मुझे यह भी लगा कि जब मैं अपने काम मे रूचि लेती हूँ तो उसे जल्दी कर पाती हूँ। इसलिये अब इस प्रकार अपने काम को पूरा करने के लिये अतिरिक्त समय देने की आवश्यकता नहीं पडती। मेरी इस नवीन धारणा से मुझे अच्छी कर्मचारिणी होने का सम्मान प्राप्त हुआ और जब विभाग के एक निर्देशक को निजी सेक्रेटरी की आवश्यकता हुई तो उन्होंने उसके लिये मुझे पूछा। क्योंकि उनका कहना था कि मैं बिना नाक-भौ सिकोड़े अतिरिक्त कार्य करने को तैयार रहती हूँ। मिस गोल्डन ने लिखा है कि उस परिवर्तित मानसिक अवस्था की शक्ति मेरे लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण आविष्कार बन गई और उसने आश्चर्यजनक काम कर दिखाया है। इधर मिस वेली गोल्डन सभवतः अनजाने ही उस प्रसिद्ध 'मनोदर्शन' का प्रयोग कर रही थी—विलियम जेम्स ने हमें उपदेश दिया कि आप बहादुर की तरह व्यवहार कीजिये और आप अवश्य ही बहादुर बन जाएँगे। आप अपनेको प्रसन्न और सुखी मानिये और आप सुखी बन जायेंगे।

सोचिये कि, आपकी अपने काम में रूचि है। और इस प्रकार का विचार आपकी रूचि को वास्तविकता प्रदान कर देगा। उससे आपकी थकान तनाव और चिन्तायें कम हो जाएँगी।

कुछ वर्षों पूर्व हॉलैण्ड ए. हावर्ड ने एक ऐसा सिद्धान्त निश्चित किया कि जिसने उसके जीवन को एकदम ही बदल दिया। उसने अरूचिकर काम को भी रूचिकर बनाने का निश्चय कर लिया। उसका काम सचमुच ही उबा देनेवाला था। जैसे-रकाबियॉ धोना, गल्ले की टेबल को साफ करना, और हाईस्कूल के भोजन करने के कमरे में आइसक्रीम की रकाबियॉ जमाना, वह भी उस समय जब कि अन्य लड़के गेंद खेलते होते अथवा लड़कियों के साथ दिल्लगी करते। हॉलैण्ड हावर्ड को अपने कार्य से घृणा थी, किन्तु उसे उस काम पर जमे रहना था और इसलिये उसने आइसक्रीम के विषय में अध्ययन करने का निश्चय किया। आइसक्रीम कैसे बनती है? क्या क्या चीजें इसमें मिलाई जाती हैं? कुछ आइसक्रीम बढ़िया और कुछ घटिया किस्म की क्यों होती हैं? उसने आइसक्रीम की रसायनिकता का अध्ययन किया और हाईस्कूल में भोजन आदि बनाने के काम में प्रवीण बन गया। वह व्यन्जन तैयार करने में इतनी अधिक रूचि लेने लगा कि मेसाच्युसेट्स स्टेट कॉलेज में भर्ती हो गया और पाक-विज्ञान में शिक्षण प्राप्त किया। जब न्यूयॉर्क के 'कोको एक्सेन्ज' ने कोको के प्रयोग पर उत्तम निबन्ध "कोको और चाकलेट" लिखने के लिये १०० डालर का इनाम कॉलेज के विद्यार्थियों के लिये घोषित किया तब जानते हैं वह इनाम किसे मिला? हालैण्ड हावर्ड को!

जब उसे कहीं रोजगार पाना कठिन लगा तो उसने मेसाच्युसेट्स अतर्गत एमहर्स्ट के ७५० उत्तर प्लेजैट स्ट्रीट के अपने मकान के तहखाने में एक प्राइवेट प्रयोगशाला खोल दी। उसके कुछ ही दिनों बाद एक नया नियम बना कि कम्पनियों को अपने यहॉ के दूध में कीटाणुओं की जॉच करानी होगी। हालैण्ड ए० हावर्ड को शीघ्र ही एमहर्स्ट की १४ कम्पनियों से दूध में कीटाणु देखने का काम मिल गया और इस काम के लिए उसे दो सहायक भी रखने पड़े।

अब से २५ वर्ष के बाद क्या होगा, कौन जानता है? जो लोग आज पाक-रसायनिकता का धन्धा चला रहे हैं वे या तो तब तक अवकाश पा लेंगे या चल बसेंगे और उनका स्थान, पहल और उत्साह की भावनाओं से भरे हुए नौ जवान ले लेंगे। अब से २५ वर्ष बाद हॉलैण्ड ए० हावर्ड सम्भवतः अपने क्षेत्र में अगुआ बन जायगा और उसके कुछ सहपाठी जिन्हें वह गल्ले पर आइसक्रीम बेचा करता था, दुःखी, बेरोजगार रहकर सरकार को बुरा भला कहते और उसकी शिकायतें करते नजर आयेंगे। वे कहेंगे कि उनको कोई मौका नहीं मिला। हालैण्ड ए. हावर्ड को भी यह मौका कदापि न मिलता यदि उसने अरूचिकर काम को रूचिकर बना लेने का निश्चय न कर लिया होता।

बहुत वर्ष बीते, एक युवक, लेथ-मशीन पर खड़े, बोल्ट बनाने का अरुचिकर काम करते करते उकता गया था। उसका नाम साम था, वह अपने इस धंधे को छोड़ना चाहता था किन्तु उसे अंदेशा था कि कहीं दूसरी नौकरी न मिली तो? चूंकि उसे वह अरुचिकर काम भी करना ही था उसने उसे रुचिकर बनाने का निश्चय कर लिया। उसने अपने पास ही मशीन पर काम करने वाले मेकेनिक के साथ स्पर्धा शुरू कर दी। उनमें से एक का काम मशीन पर, धातु के खुरदुरेपन को मिटाने का था और दूसरे का काम ठीक व्यास के बोल्ट बनाना। वे बीच बीच में मशीन को बंद कर देते और देखते कि सबसे अधिक बोल्ट किसने बनाये हैं। कारखाने के फोरमेन ने काम करने की गति और यथार्थता से प्रभावित होकर साम को अच्छा काम दे दिया और इस प्रकार उसकी तरक्की का श्री गणेश हुआ। तीस वर्ष पश्चात् साम जिसका पूरा नाम सेमुअल वॉकलैन था बाल्डविन लोको मोटिव कारखाने का प्रधान बन गया। यदि उसने अरुचिकर कार्य को रुचिकर बनाने का निश्चय न किया होता तो वह जीवन पर्यन्त मेकेनिक ही बना रहता।

रेडियो – समाचार का प्रसिद्ध समीक्षक एच. वी. केल्टन बॉर्न ने मुझे बताया कि उसने अरुचिकर कार्य को रुचिकर किस प्रकार बनाया। जब वह २२ वर्ष का था उसने पशुओं की एक नाव में एटलाण्टिक पार किया। वह साँडों को खिलाने पिलाने का काम करता था। साइकल पर इंग्लैण्ड की यात्रा करने के पश्चात् जब वह पेरिस में आया तो भूखा और थका हुआ था। उसने अपने कैमेरे को पाँच रुपयों में गिरवी रखा और न्यूयॉर्क हेराल्ड के पेरिस प्रकाशन में नौकरी के लिये एक विज्ञापन प्रकाशित करवा दिया। उसे 'स्टेयरा-आप्टिकल' मशीनें बेचने का काम मिल गया। यदि आप ४० वर्ष के हैं तो आप पुरानी फैशन के उन स्टेरोस्कोप के बारे में जानते होंगे जिन्हें हम अपनी आँखों के सामने दो तस्वीरों को ठीक एक जैसा देखने के लिये लगाते थे। जब हम उससे देखते तो अजीब करामात-सी मालूम पड़ती। स्टेरोस्कोप के दोनों लेन्स दोनों तस्वीरों के दृश्यों को एक बना कर हमारे सामने उपस्थित कर देते। और उसमें थ्री डाइमेन्शन का प्रभाव नजर आता। हम उसमें गहराई देखते और उस दृश्य को देख कर चकित रह जाते।

हाँ, तो मैं कह रहा था कि केल्टन बार्न पेरिस में घर घर जाकर उन मशीनों को बेचने लगा। यद्यपि वह फ्रेंच नहीं जानता था, तथापि उसने पहले साल के कमीशन से ही पाँच हजार डालर कमा लिये। वह उस वर्ष का सबसे अधिक सफल विक्रेता था। एच. वी. केल्टन बॉर्न ने मुझे बताया कि उस अनुभव ने उसके अन्दर सफलता के लिए आवश्यक गुणों का उतना ही विकास किया जितना 'हार्वर्ड' में एक साल अध्ययन करने के बाद किया जा सकता है। उसके आत्मविश्वास का तो कहना ही क्या था! उसने मुझे बताया कि उस अनुभव के बाद उसे महसूस हुआ कि काश! उसने फ्रान्स की गृहणियों को 'दी कांग्रेशनल रेकार्ड' बेचे होते!

उस अनुभव ने उसे फ्रांस के लोगों के जीवन को समझने में, वह निकटतम दृष्टि प्रदान की, जिसने उसे यूरोप के घटनाचक्र पर रेडियो समीक्षा प्रस्तुत करने में अमूल्य सहायता प्रदान की।

बिना फ्रेंच जाने ही वह एक कुशल विक्रेता कैसे बन सका? उसने अपने मालिक से बिक्री करने के लिये की जानेवाली आवश्यक बातचीत लिखवा ली और उसे कंठस्थ कर लिया। वह दरवाजे की घंटी बजाता। गृहिणी उसका उत्तर देती और काल्टन बॉर्न अपनी रटी-रटाई वक्तृता को विचित्र ढंग से दुहराने लगता। वह उस गृहिणी को तस्वीरें बताता और जब वह प्रश्न पूछती तो वह अपने कंधे हिलाकर कह देता मैं तो अमेरिकन हूँ अमेरिकन! तदुपरांत वह अपनी हैट उतार लेता और उसमें से शुद्ध फ्रेंच में लिखी वक्तृता की एक प्रति उन्हें बताता। और दोनों हँसने लगते। इस तरह वह उन्हें और अधिक तस्वीरें बताता। जब एच वी. केल्टन बॉर्न ने मुझे यह बात बताई तो उसने साफ स्वीकार किया कि उसका वह काम इतना आसान नहीं था। किन्तु अपने काम को रुचिकर बनाने के निश्चय ने ही उसे सफलता दी थी। हर सवेरे अपने काम के लिये रवाना होने के पूर्व वह एक शीशे के सामने खड़ा हो जाता और अपने आपको सम्बोधित करके कहता, "केल्टन बार्न! यदि तुम्हें पेट भरना है तो यह काम करना ही होगा। और चूँकि तुम्हें यह काम करना ही है, इसे खुशी से क्यों न करो? दरवाजे की घंटी बजाने के पूर्व यही समझ लो कि तुम रंगमंच के एक अभिनेता हो और दर्शक तुम्हें देख रहे हैं। क्योंकि जो काम तुम जिस ढंग से कर रहे हो, वह रंगमंच के अभिनय की ही तरह विचित्र है। और इसलिये अपने काम में पूर्ण शक्ति और उत्साह क्यों न लाओ?"

केल्टन बॉर्न ने बताया कि रोज की शक्तिवर्धक वक्तृता से वह अपने काम को, जिससे कि वह घृणा करता था और भय खाता था, एक अत्यन्त लाभकारी और रुचिकर कार्य में परिणित कर सका।

जब मैंने केल्टन बॉर्न को सफलता के लिये उत्सुक अमेरिकन युवकों के लिये कोई सलाह देने का अनुरोध किया तो उसने बताया कि हररोज सवेरे अपने आप ही बातचीत करो। हम में से अधिकांश ऊँघते रहते हैं और उस ऊँघ को मिटाने तथा चेतना उत्पन्न करने के लिये शारीरिक व्यायाम के महत्व की बातें करते हैं, किन्तु हमारे लिये हर सवेरे उस आध्यात्मिक और मानसिक व्यायाम की कहीं अधिक आवश्यकता है जो हमें कार्य के लिये उत्साहित कर सके। हर सवेरे अपने आप को प्रेरक शब्दों द्वारा जागृत एवं क्रियाशील बनाइये।

क्या रोज अपने को उद्बोधन देना बचपन, बकवास या मूर्खता है? नहीं, इसके विपरीत यह एक ठोस मनोवैज्ञानिक सत्य है कि "हमारा जीवन हमारे विचारों का प्रतिफल है" ये शब्द आज भी उतने ही सत्य है जितने १८ वीं सदी पूर्व थे, जब कि मारकस आरेलियस ने अपनी पुस्तक मेडिटेशन में उन्हें पहली

बार लिखा था। उन्होंने लिखा कि जैसे हमारे विचार होंगे वैसा ही हमारा जीवन होगा। दिन मे अपने आप से बातें करके, आप अपने को उत्साह, आनंद, शक्ति और शान्ति के विषय में सोचने के लिये प्रेरित कर सकते हैं। जिन बातों के लिये आपको दूसरों का आभार मानना चाहिये उनके विषय में अपने से बातें करके आप अपने मन को उच्च और मधुरता की भावनाओं से भर सकते हैं।

शुद्ध विचारों से आप किसी काम के विषय में अपनी अरुचि कम कर सकते हैं। आपका मालिक चाहता है कि आप उसके काम में रुचि लें ताकि वह अधिक पैसा बना सके। किन्तु जो कुछ आपका मालिक चाहे उसे भूल जाइये। आप केवल इस बात को याद रखिये कि अपने काम मे रुचि उत्पन्न करके आपको क्या लाभ हो सकता है? स्मरण रखिये कि इससे आपको जीवन में दुगुनी प्रसन्नता प्राप्त हो सकती है क्योंकि यदि आप अपनी जाग्रत अवस्था के आधे समय तक भी काम करके खुशी हासिल नहीं कर सकते तो फिर वह खुशी आपको कहीं भी नहीं मिलेगी। याद रखिये कि काम में रुचि लेने से आपका दिमाग चिन्ताओं से हट जायगा और अततः उससे आपकी तरक्की होगी और आपको अधिक वेतन मिलेगा। और यदि इतना नहीं भी हुआ तो भी उससे आपकी थकान तो कम हो ही सकती है और अवकाश के समय में आनंद लाभ करने में भी आपको सहायता मिल सकती है।

☆

२८ : अनिद्रा की चिन्ता से कैसे बचा जाय

क्या नींद नहीं आने पर आपको चिन्ता होती है ? यदि हाँ, तो आपको यह बात जानने में बड़ी दिलचस्पी रहेगी कि प्रसिद्ध आन्तर्राष्ट्रीय वकील साम अण्टरमेअर जीवन में कभी भी गहरी नींद नहीं सो सके।

जब साम अण्टरमेअर ने कॉलेज में प्रवेश किया तो वह दमा तथा अनिद्रा के रोग की चिन्ता से दुःखी थे। उन्होंने स्वस्थ होने की आशा छोड़ दी थी। अतः अपनी जाग्रत अवस्था से लाभ उठाने का निश्चय किया। क्योंकि इस उत्तम उपाय के सिवा उनके पास और कोई चारा ही नहीं था। इधर उधर करवटें बदलने तथा चिन्ता करके टूटने के बजाय वे बिस्तर से उठ बैठते और अध्ययन करने लगते। नतीजा यह हुआ कि वे अपनी सभी कक्षाओं में सम्मानपूर्वक सफलता प्राप्त करते गये और न्यूयॉर्क शहर के कॉलेज के एक अपूर्व प्रतिभाशाली छात्र बन गये।

वकालत आरम्भ कर देने पर भी उनको अनिद्रा से छुटकारा नहीं मिला। किन्तु अण्टरमेअर ने चिन्ता नहीं की। वे कहते कि, प्रकृति मेरी सम्हाल स्वयं करेगी और प्रकृति ने समाल की भी। अल्प निद्रा ले सकने के बावजूद भी वे न्यूयॉर्क अदालत के किसी भी युवक वकील की तरह ही कठिन परिश्रम कर सकते थे और उनका स्वास्थ्य भी बना रहा। यहाँ तक कि अन्य वकीलों से वे अधिक परिश्रम करते थे क्योंकि जब वे सोते थे वे काम करते रहते थे।

इक्कीस वर्ष की अवस्था में ही साम अण्टरमेअर प्रतिवर्ष पचहत्तर हजार डालर कमाने लग गये थे और अन्य युवक एटॉर्नी उनकी पद्धति का अध्ययन करने के हेतु अदालतों में जमा होने लगे थे। १९३१ तक उन्हें केवल एक मामले की पैरवी करने के लिये दिलखुश कर देने वाली दस लाख डालर की अभूतपूर्व फीस नकद मिलने लगी।

फिर भी अनिद्रा का रोग ज्यों का त्यों बना रहा। वे आधी रात तक पढ़ते रहते और पुनः सवेरे पाँच बजे उठ कर पत्र लिखवाना आरम्भ कर देते। जिस समय अन्य व्यक्ति अपने काम का श्री गणेश करते उनका दिन भर का काम लगभग पूरा हो जाता। उन्होंने शायद ही रात को गहरी नींद ली होगी, फिर भी इक्यासी वर्ष की अवस्था तक जीवित रहे। किन्तु यदि वे अपनी अनिद्रा को लेकर चिन्तित एवं क्षुब्ध रहते तो सम्भवतः अपने जीवन को नष्ट कर देते।

हम अपने जीवन का एक तिहाई समय सोने में गवाँते हैं। किन्तु कोई भी यह नहीं कह सकता कि वास्तव में नींद किसे कहते हैं। हम केवल इतना जानते हैं कि यह एक आदत है तथा विश्राम की एक अवस्था है जिसमें प्रकृति हमें पुनः स्फूर्ति एवं ताजगी दे देती है। किन्तु हम यह नहीं जानते कि हर व्यक्ति को कितने घंटों की नींद की आवश्यकता होती है ? हम यह भी नहीं जानते कि क्या सोना जरूरी है ही ?

एक विचित्र बात देखिये-प्रथम महायुद्ध में हंगेरी के एक सैनिक, पॉल कर्न के उर के अग्रभाग में गोली लग गई थी। उसका घाव तो ठीक हो गया किन्तु विचित्र बात यह हुई कि उसके बाद से वह सो नहीं पाता था। डॉक्टरों ने कई उपाय किये। सभी प्रकार की नींद देने वाली दवाएँ दे दीं। यहाँ तक कि सम्मोहन क्रिया का प्रयोग भी कर देखा किन्तु पॉल कर्न को नींद आना तो दूर रहा नींद की छाया भी पलकों पर नहीं आई। डाक्टरों ने कहा कि वह अधिक दिन जीवित नहीं रह सकेगा। किन्तु वे मुगालते में थे। उसने नौकरी कर ली और वर्षों तक स्वस्थ जीवन व्यतीत करता रहा। वह लेट कर आँखें बंद कर लेता और आराम करता किन्तु उसे किसी भी तरह नींद नहीं आती थी। उसकी यह बात चिकित्सा विज्ञान के लिए रहस्य बन गई और उसने नींद के विषय में हमारे अनेक विश्वासों को झकझोर दिया।

कुछ लोगों को दूसरों की अपेक्षा अधिक निद्रा चाहिये। टोस केनीनी को केवल पाँच घंटे के लिये नींद चाहिये थी। किन्तु कालविन कुलिंग को उससे दुगुने समय के लिये नींद लेने की आवश्यकता रहती थी। कुलिंग चौबीस घण्टों में ग्यारह घण्टे सोता था। दूसरे शब्दों में टोस केनीनी अपने जीवन का लगभग पाँचवाँ भाग सोने में बिताता था। किन्तु कुलिंग आधा जीवन सोने ही में बिता देता था।

अनिद्रा के विषय में चिन्ता करना अनिद्रा के रोग से भी अधिक दुःखदायी है। उदाहरणार्थ मेरे ही एक विद्यार्थी इरा सेन्डनर को लीजिये। वह न्यू जर्सी अन्तर्गत रीजफिल्ड पार्क के १७३ ओवापेक एवेन्यू में रहता था, और बहुत दिनों से अनिद्रा के रोग से पीडित रहने के कारण लगभग आत्महत्या करने पर उतारू हो गया था।

इरा सेन्डनर ने मुझे बताया—"मैंने तो सोचा था कि मैं सचमुच ही पागल होने जा रहा हूँ। मुश्किल यह थी कि पहले मैं खूब गहरी नींद सोता था। यहाँ तक कि अलार्म घड़ी के बजने पर भी मैं नहीं जगता था, और फल यह होता कि मुझे सबेरे अपने काम में देर हो जाती। इससे मुझे बड़ी चिन्ता होती थी। मेरे अफसर ने मुझे समय की पाबन्दी करने के लिये चेतावनी तक दे दी थी। मैं जानता था कि अधिक सोने के फलस्वरूप मेरी नौकरी छूट सकती है।

मैंने अपने मित्रों को यह कठिनाई कह सुनाई। उनमें से एक ने सोने के पूर्व अलार्म घड़ी पर अपना ध्यान केन्द्रित करने का सुझाव दिया। उसके फलस्वरूप अनिद्रा के रोग का श्री गणेश हुआ। अलार्म घड़ी की वह कटु टिक टिक मेरे लिये एक प्रकार का भय बन गई। उसके कारण मैं रात भर करवटें बदलता रहता। सवेरा होने पर मैं अपने को थकान और चिन्ता से अस्वस्थ पाता। वह हालत आठ सप्ताह तक चलती रही। जिस वेदना से मैं पीड़ित रहा वह वर्णनातीत है। मुझे विश्वास हो गया था कि मैं पागल होने वाला हूँ। कभी कभी तो मैं घण्टों इधर उधर टहलता रहता था। और सचमुच ही खिड़की से बाहर कूदकर प्राण देने की बात सोचा करता।

अन्त में मैं अपने एक पहचान के डॉक्टर के पास गया। उसने मुझे कहा–इरा, इसमें न मैं तुम्हारी कोई सहायता कर सकता हूँ, न कोई और ही। क्यों कि यह रोग तुमने स्वय अपने आप पर लादा है। रात होने पर बिस्तर पर लेट जाओ और यदि नींद न भी आए तो चिन्ता न करो। मन ही मन कहो, "मैं नींद की कोई परवाह नहीं करता, नहीं आती तो न आए। यदि सारी रात जागते ही बितानी पड़े तो भी कोई बात नहीं।" अपनी आँखें मूँद कर कहो—

"जब तक मैं लेटा रहता हूँ और नींद की चिन्ता नहीं करता, तब तक ठीक है। आराम तो आखिर मिल ही जाता है।"

"मैंने वैसा ही किया जैसा डॉक्टर ने बताया था और दो सप्ताह के उपरान्त ही मुझे नींद आने लगी। एक महीने के अन्दर ही मैं हर रोज आठ घण्टे सोने लगा, और मेरी अवस्था फिर से पूर्ववत् हो गई।

आपने देखा होगा कि सेन्डनर को अनिद्रा नहीं, बल्कि अनिद्रा की चिन्ता दुःखी कर रही थी।

डॉक्टर नेथनियल क्लेरमेन शिकागो विश्वविद्यालय मे प्राध्यापक हैं। उन्होंने नींद पर सबसे अधिक गवेषणा की है। वे नींद के विषय में जानकारी रखने वाले प्रसिद्ध विशेषज्ञ हैं। उनका कहना है कि अब तक वे ऐसे किसी भी व्यक्ति को नहीं जानते जो अनिद्रा से मरा हो। हो सकता है कि अनिद्रा की चिन्ता करते करते आदमी शक्तिहीन हो गया हो और रोग के कीटाणुओं ने उसे मृत्यु का ग्रास बना लिया हो। किन्तु कुछ भी हो, उसे जो हानि हुई वह अनिद्रा की चिन्ता के कारण हुई, न कि अनिद्रा के रोग के कारण।

डॉक्टर क्लेरटमेन का कथन है कि अनिद्रा के रोग से पीड़ित व्यक्ति अपने अनुमान से भी कहीं अधिक सो लेते हैं। जो व्यक्ति यह कहता है कि गत रात मैंने आँख तक नहीं झपकाई वह कई घण्टों अनजाने ही सो चुका होता है। उदाहरणार्थ–उन्नीसवीं सदी के एक गहन विचारक हर्बर्ट स्पेन्सर ही को लीजिये। वे अविवाहित थे, बूढे थे और एक बोर्डिंग में रहते थे। अपनी अनिद्रा की बातें कर-करके वे सबको उकताते रहते थे। अपने को शान्त रखने और शोरगुल से बचाने के लिए उन्होंने अपने कानों मे ढकने तक लगा दिये। नींद लेने के प्रयत्न में वे कभी कभी अफीम तक ले लेते थे। एक रात वे ऑक्सफोर्ड के प्रोफेसर साएस के साथ होटल के एक ही कमरे में सोए थे। दूसरे दिन जगने पर स्पेन्सर ने बताया कि रात को वे जरा भी नहीं सोए। किन्तु बात कुछ उल्टी ही थी। वास्तव में यदि कोई सोया नहीं तो प्रोफेसर सायस। उनको सारी रात इसलिये नींद नहीं आई कि स्पेन्सर खुर्राटे भरते रहे।

गहरी नींद लेने के लिये पहली आवश्यकता है सुरक्षा की भावना। हमें सोचना चाहिये कि हमारे ऊपर एक ऐसी महान शक्ति भी है जो सवेरे तक हमारी रक्षा करेगी। इसी बात पर ग्रेट वेस्ट राइटिंग एसाइलम के डॉक्टर टाऊस

हैस्लप ने भी ब्रिटिश मेडिकल ऐसोसिएशन में भाषण करते समय बड़ा जोर दिया था। उन्होंने कहा कि वर्षों के चिकित्सा कार्य के अपने अनुभवों के फलस्वरूप मैं इस निश्चय पर पहुँचा हूँ कि नींद लाने वाला प्रमुख साधन प्रार्थना ही है। मैं यह बात एक चिकित्सक के दृष्टिकोण से ही कह रहा हूँ। जो लोग प्रार्थना के अभ्यस्त हैं उनके लिये, यह उनके मस्तिष्क एवं स्नायुओं को शान्त रखने वाला अत्यन्त सामान्य एवं योग्य साधन है। इसलिये, 'सब कुछ भगवान के हवाले कर दो और निश्चिंत हो जाओ'।

जीनेट मेकडोनल्ड ने मुझे बताया कि जब निराशा एवं चिन्ता की अवस्था में उसके लिये नींद लेना कठिन हो जाता तब, 'शान तेवीस' (प्रार्थना) का पाठ करने से उसे 'सुरक्षा की भावना' सदा उपलब्ध हो जाती थी। प्रार्थना यह थी – जब भगवान स्वयं मेरा रखवाला है तो मुझे और क्या चाहिए ! वही मुझे हरे हरे खेतों में विश्राम देता है और शान्त जल के किनारे ले जाता है. . . . '

किन्तु यदि आप धार्मिक श्रद्धा नहीं रखते और आपको कठोर परिश्रम करना पड़ता है, तो शारीरिक उपायों से विश्राम लेना सीखिये। अपनी पुस्तक 'रिलीज फ्रॉम द नर्वस टेन्शन' में डा. डेविड हेरोल्ड फिकने कहा है कि मस्तिष्क एवं स्नायु को शान्त करने का सबसे उत्तम उपाय यह है कि मनुष्य अपने शरीर से बातें करे। डॉ. फिंक के शब्द सभी प्रकार की सम्मोहक क्रियाओं की कुञ्जी हैं। यदि आप लगातार नहीं सो पाते तो यह इसलिए कि आपने अनिद्रा की बात कह कहकर अनिद्रा का रोग मोल ले लिया है। अपने रोग से छुटकारा पाने का यही उपाय है कि आप अपना वह सम्मोहन तोड़ दें और यह आप तभी कर सकते हैं, जब आप अपनी माँसपेशियों को ढीली हो जाने और आराम करने का निर्देश दें। यह तो हम जानते ही हैं कि मस्तिष्क और स्नायु तब तक विश्राम नहीं ले सकते जब तक कि मॉसपेशियाँ तनी हुई हों। इसलिये यदि हम सोना चाहते हैं तो हमें मॉसपेशियों से उसका आरम्भ करना होगा। डॉ. फिंक की व्यावहारिक सलाह यह है कि टाँगों के तनाव को दूर करने के लिये हमें अपने घुटनों के नीचे तकिया रखना चाहिये और बाहों का तनाव कम करने के लिये उनके नीचे छोटे तकिये रखने चाहिये। और तब अपने जबड़ों, आँखों, बाहों, और टाँगों को विश्राम लेने का आदेश देकर हम तुरन्त निद्रामग्न हो सकते हैं। मैंने यह प्रयोग किया है इसलिये मैं जानता हूँ। यदि आपको नींद लेने में कष्ट हो तो आप डॉ. फिंक की पुस्तक 'रिलीज फ्रॉम द नर्वस टेन्शन' जिसका मैं पहले जिक्र कर चुका हूँ, पढ़िये। मेरे खयाल से यही एक ऐसी पुस्तक है जो रोचक भी है तथा अनिद्रा का उपचार भी बताती है।

अनिद्रा का सर्वोत्तम उपचार तो यह है कि आप अपने को थका देने वाला कोई शारीरिक परिश्रम करें। बागवानी कीजिए, तैरिये, टेनिस अथवा गोल्फ खेलिये या फिर बर्फ पर फिसलिये। इस प्रकार अपने को थका दीजिये। थियोटर ड्रेजर यही

किया करते थे। जब वे जीवन में संघर्ष कर रहे थे और एक तरुण लेखक थे, प्रायः अनिद्रा से चिन्तित रहते थे। अतः उन्होंने न्यूयॉर्क सेन्ट्रेल रेल्वे में पटरियाँ बिछाने का काम ले लिया। दिनभर पटरियों साफ करते-करते तथा ककरीट बिछाते-बिछाते वे इतने थक जाते कि भोजन करने के लिए अधिक समय तक जागते रहना भी मुश्किल हो जाता। यदि हम पर्याप्त रूप से थक जाएँ तो प्रकृति हमें चलते-फिरते भी सुला देगी। उदाहरण के तौर पर-जब मैं तेरह वर्ष का था, मेरे पिताजी ने कुछ मोटे सुअरों को वेगन मे भरकर मिसौरी अन्तर्गत सेन्ट जो को भेजा। मेरे पिताजी को रेल के दो मुफ्त पास मिले थे इसलिए वे मुझे भी अपने साथ ले गये। तब तक मैंने चार हजार से अधिक आबादी वाले कस्बे नहीं देखे थे। जब मैं साठ हजार की आबादी वाले उस सेन्ट जो शहर मे पहुँचा तो मेरे आश्चर्य और उत्साह की सीमा न रही। वहाँ ट्राम देखकर तो मैं चकित रह गया! आज भी आँखें बन्द कर मै उन दिनो की ट्राम देख सकता हूँ और उसकी गड़गडाहट सुन सकता हूँ। जीवन का अत्यन्त रोमाचक और कुतूहल पूर्ण दिन बिताने के उपरान्त मैं अपने पिताजी के साथ पुनः मिसौरी के अपने रेवनवुड स्थान की ओर लौट पडा। दिन के दो बजे हम रेवनवुड उतरे। वहाँ से अपने फार्म पर जाने के लिये हमें चार मील चलना था। इस घटना के द्वारा मैं जो बात कहना चाहता हूँ वह यह कि मैं इतना थक गया था कि चलते चलते झपकियाँ लेने लगा और सपने देखने लगा। इसके पहले भी कई बार मैं घोड़े की सवारी करते-करते सो जाता था, पर किसी प्रकार की दुर्घटना नहीं हुई और आज भी मैं उस घटना को कहने के लिए जीवित हूँ।

जब लोग पूर्णतया थक जाते हैं तो वे घड़घडाहट, आतक और युद्ध के खतरे के बावजूद भी सो सकते हैं। प्रसिद्ध न्युरोलोजिस्ट (मनोरोग चिकित्सक) डॉ० केनेडी ने मुझे बताया कि १९१८ के युद्ध में पाँचवी ब्रिटिश रेजिमेन्ट के पलायन के समय सिपाही इतने थक गये थे कि वे जहाँ थे वहीं जमीन पर पड़ गये और कुम्भकर्ण की तरह सो गये। यहाँ तक कि हाथ से आँखें खोलने पर भी वे नहीं जगते थे, और उन्होंने देखा कि प्रायः सभी सिपाहियों की आँखों की पुतलियाँ नींद में ऊँची चढी रहती थीं। डॉ० केनेडी ने कहा कि "उसके बाद मुझे जब कभी नींद में बाधा पड़ती, मैं अपनी पुतलियों को निद्रा की स्थिति में ऊँचा चढाने का अभ्यास करता। और इससे मैं कुछ ही पलों में ऊँघने और उबासी लेने लगता। वह एक सहज प्रक्रिया थी जिस पर मेरा वश नहीं था।"

न सो सकने के कारण अब तक, किसी भी व्यक्ति ने आत्महत्या नहीं की है और न कोई करेगा ही। प्रकृति मनुष्य की समूची इच्छा-शक्ति के बावजूद भी उसे सोने के लिये विवश करेगी। प्रकृति हमें भोजन एव पानी के बिना अधिक दिन रहने दे सकती है किन्तु सोये बिना नहीं।

आत्महत्या के प्रसग पर मुझे डॉ. हेनरी सी. लिंक की बात याद आ गई। जिसका उन्होने अपनी पुस्तक 'रीडिस्कवरी ऑफ मेन' में जिक्र किया है। डॉ. लिंक

'दी साइकोलोजिकल कोरपोरेशन' के सह-प्रधान हैं और कई चिन्तित एव निराश व्यक्तियो से मिलते रहते हैं। उन्होंने अपने एक परिच्छेद 'ओवर कमिंग फियर्स एण्ड वरीज' मे एक ऐसे रोगी के विषय में बताया है जो आत्महत्या करना चाहता था। डॉ. लिंक जानते थे कि उससे बहस करने से स्थिति और बिगड़ जाएगी। इसलिये उन्होंने उस व्यक्ति से कहा-"यदि तुम आत्महत्या करना ही चाहते हो तो कम से कम बहादुराना ढग से करो। इस मकान के चारों और दौड़ लगाओ और जब तक मर न जाओ, दौडते रहो।

उसने एक बार नहीं बल्कि कई बार यह प्रयास किया, और हर बार उसके दिमाग को राहत महसूस होने लगी। भले ही उसकी मॉसपेशियों को राहत न मिली हो। तीसरी रात तक उसने वही हाँसिल कर लिया जो डॉ. लिंक पहले करना चाहते थे। उस व्यक्ति को इतना शारीरिक थकान (शारीरिक आराम) हुआ था कि वह खूब सोया। तदुपरान्त उसने व्यायामशाला में प्रवेश किया और खेलों में होड लगाने लगा। वह शीघ्र ही इतना स्वस्थ हो गया कि उस में अमर रहने की कामना जाग उठी।

अत., अनिद्रा की चिन्ता से मुक्त रहने के ये पॉच उपाय हैं—

(१) यदि आप सो न सकें तो वही कीजिये जो अन्टरमेन ने किया था। बिस्तर से उठ बैठिये और जब तक नींद न आए पढते रहिये अथवा कोई अन्य काम करते रहिये।

(२) स्मरण रखिये कि नींद की कमी से अब तक कोई नहीं मरा। प्राय अनिद्रा से भी अधिक हानि अनिद्रा की चिन्ता से होती है।

(३) जिनेट मेक्डोनल्ड की भॉति 'साम तेवीस' (प्रार्थना) को दुहराइये।

(४) अपने शरीर को विश्राम दीजिये। 'रिलीज फ्रॉमद नर्वस ट्रबल' नामक पुस्तक पढिये।

(५) व्यायाम कीजिए और अपने शरीर को इतना थकाइये कि आपको नींद आ ही जाय।

☆

भाग ७ का संक्षेप

थकान और चिन्ता को रोकने और शक्ति तथा उत्साह को उत्तम बनाए रखने की छः विधियाँ।

(१) थकने के पूर्व आराम कीजिये।

(२) काम के दौरान में आराम लेना सीखिये।

(३) यदि आप गृहिणी हैं तो घर में आराम करके अपने स्वास्थ्य एव आकृति की रक्षा कीजिये।

(४) इन चार व्यावहारिक आदतों से लाभ उठाइये।

(१) अपनी डेस्क पर से उन सभी कागजातों को हटा दीजिये जिनका सम्बन्ध जरूरी समस्याओं से न हो।

(२) काम को उसके महत्व के अनुसार प्रधानता दीजिये।

(३) यदि आपके पास समस्या पर निर्णय लेने के लिये आवश्यक तथ्य हों तो उसे वहीं, उसी समय हल कर लीजिये।

(४) अपने काम का ठीक ठीक वितरण कीजिए, उसे व्यवस्थित कीजिये तथा उसकी देखरेख कीजिये।

(५) चिन्ता एव थकान रोकने के लिये काम करने में अपना उत्साह बढाइये।

(६) स्मरण रखिबे अनिद्रा से अब तक कोई नहीं मरा। अनिद्रा नहीं, अनिद्रा की चिन्ता ही हानिकारक है।

भाग ८

प्रसन्नता एवं सफलता देने वाला काम कैसे खोजा जाय

२९ : जीवन के दो महत्त्वपूर्ण निर्णय

(यह परिच्छेद उन युवक तथा युवतियों के लिये लिखा गया है जिन्हें अब तक अपनी रुचि का कार्य नहीं मिला है। यदि आप उस श्रेणी में आते हैं तो इस परिच्छेद को पढ़िये। सम्भव है इसका आपके शेष जीवन पर गहरा प्रभाव पड़े।)

यदि आप अठारह वर्ष के होने को हैं तो शीघ्र ही आपको, अपने जीवन के दो महत्त्वपूर्ण निर्णय लेने होंगे। ये निर्णय आपके जीवन में गहरा परिवर्तन ला सकते हैं। आपकी प्रसन्नता, आपके स्वास्थ्य, तथा आप की आय पर गहरा प्रभाव डाल सकते हैं। वे आपके जीवनको बना या बिगाड़ सकते हैं।

हाँ, तो ये दो महत्त्वपूर्ण निर्णय क्या हो सकते हैं?

पहला—आप जीविकोपार्जन कैसे करेंगे? आप क्या बनेंगे? किसान, डाकिया, केमिस्ट, मैनेजर, स्टेनोग्राफर, घोड़ों के व्यापारी या प्राध्यापक? या हम्पबर्गर स्टेन्ड चलाने वाले

दूसरा—आप अपना जीवन साथी किसे बनाएँगे-गी।

ये दोनों ही महत्त्वपूर्ण निर्णय जुए की तरह हैं। हेरि इमरसन फोस्डीक अपनी पुस्तक 'दी पावर टु सी इट थ्रू' में कहते हैं कि प्रत्येक युवक को अपने धन्धे का चुनाव करते समय पासा फेंकना होता है। उसे अपने जीवन की बाजी लगा देनी होती है।

अपने धन्धे के चुनाव में दाँव की सम्भावना कैसे कम की जाय? हम आपको इसका जहाँ तक हो सकेगा अच्छा उपाय बताएँगे। एक बार मैंने टायर बनानेवाली बी. एफ्. गुडरीच कम्पनी के बोर्ड के प्रधान डेविड एम. गुडरीच से पूछा कि आपके विचार से व्यवसाय में सफलता के लिये पहली आवश्यकता क्या है? तो उन्होंने उत्तर में बताया, 'अपने काम को रुचिपूर्वक करना। जो काम आप कर रहे हैं उससे यदि प्रसन्न हैं तो आप लम्बे समय तक वह काम करते रह सकते हैं और वह काम आपको काम न लगकर एक खेल लगेगा।

एडिसन इसका एक अच्छा उदाहरण था। एडिसन स्कूल में नहीं गया था। वह एक अखबार बेचनेवाला था। जिसने बड़े होकर अमेरिका के औद्योगिक-जीवन को बदल दिया। एडिसन प्रायः अपनी प्रयोगशाला में ही खाता-पीता और सोता था। और वहाँ दिन में अठारह घण्टे काम करता था, किन्तु वह उसके लिये परिश्रम

न था। वह कहता —"मैंने जीवन में कभी कोई काम नहीं किया, अगर कुछ किया तो केवल मनोरंजन।"

ऐसे विचार वाले को यदि सफलता मिली तो आश्चर्य ही क्या?

एक बार मैंने चार्ल्स श्वाब को भी करीब करीब ऐसे ही विचार प्रकट करते सुना। उन्होंने कहा "मनुष्य में अपरिमित उत्साह हो तो प्राय हर काम में वह सफलता प्राप्त कर सकता है।"

किन्तु, आप जिस काम को करने जा रहे हैं उसकी आपको यदि लेशमात्र भी जानकारी न हो तो आप उसमें किस प्रकार कोई उत्साह दिखा सकते हैं? श्रीमती एडना कोर का, जो अब अमेरिकन होम प्रोडक्ट्स कम्पनी के औद्योगिक सम्पर्क विभाग की उप निर्देशिका हैं और जो पहले हजारों कामगारों को डूपोन्ट कम्पनी के लिये भर्ती करती थी, कहना है कि सबसे बड़े दुर्भाग्य की बात तो यह है कि कई नवयुवक कभी इस बात की खोज नहीं करते कि वास्तव में वे क्या करना चाहते हैं।

मेरे विचार से इससे अधिक शोचनीय और कुछ नहीं हो सकता कि मनुष्य को अपने काम से वेतन के अतिरिक्त अन्य कुछ भी लाभ न मिले। श्रीमती कोर का कहना है कि कॉलेज के स्नातक तक मेरे पास आते हैं और कहते हैं–मैं डार्ट माउथ का बी. ए. हूँ, मैं कोरनेल का एम. ए. हूँ, क्या आपके फर्म में कोई ऐसा काम है जो मुझे मिल सके?" वे स्वय नहीं जानते कि वे क्या काम कर सकते हैं अथवा करना पसन्द करते हैं। जब ऐसी स्थिति है तो फिर आश्चर्य ही क्या कि इतने अधिक स्त्री पुरुष जो सुयोग्य मस्तिष्क एव रगीन सपनों को लेकर काम आरम्भ करते हैं, चालीस वर्ष की अवस्था तक स्नायु विघटन के शिकार बन जाते हैं! अपने स्वास्थ्य की दृष्टि से भी अनुकूल धन्धा पाना महत्वपूर्ण है। जोन्स होपकिन्स सस्था के डॉ. रेमन्ड पर्ल ने कुछ बीमा कम्पनियों के सहयोग से इस बात का अध्ययन किया और खोज की कि मनुष्य को दीर्घायु बनाने वाले तत्व कौन से हैं? और उन खोजे हुए तत्वों में से, 'अनुकूल धन्धे' के तत्व को, सूची में उन्होंने सबसे पहला स्थान दिया। टॉमस कार्लाइल के साथ-साथ सम्भवतः उनकी भी यह मान्यता थी कि "अनुकूल धन्धा प्राप्त करना मनुष्य के लिये वरदान है। यह प्राप्त हो जाने के बाद उसे अन्य किसी भी वरदान की अपेक्षा नहीं रखनी चाहिये।"

हाल ही में सोकोनी वेक्युम ऑइल कम्पनी के इम्प्लोयमेन्ट सुपरवाइजर पॉल डब्ल्यु. बोइन्टन के साथ मैंने एक शाम को बातें की थीं। गत बीस वर्षों में वे नौकरी खोजने वाले पचहत्तर हजार से भी अधिक व्यक्तियों से मिल चुके हैं और उन्होंने इस विषय पर एक पुस्तक भी लिखी है, जिसका शीर्षक है–'सिक्स वेज टु गेट ए जॉब'। मैंने उन्हें पूछा कि, "आजकल नौकरी की खोज करनेवाले नवयुवक सबसे बड़ी भूल कहाँ करते हैं? उत्तर में उन्होंने बताया कि आजकल के युवक यह नहीं जानते कि वे क्या करना चाहते हैं। नितान्त शोचनीय बात तो यह है कि मनुष्य पहनने के लिये सूट खरीदने में, जो कि कुछ ही वर्षों में फट जायगा, अधिक सोच-

विचार करता है, पर पेशे का चुनाव करने में वह इतना सोच-विचार नहीं करता, यद्यपि उसका सारा भविष्य उसी पर निर्भर रहता है। उसके भावी सुख और मानसिक शान्ति का आधार भी वही है।

तो फिर आप उस विषय में क्या कर सकते हैं? आप एक संस्था से जिसे 'वोकेशनल गाइडेन्स' कहते हैं, लाभ उठा सकते हैं। उससे आपको लाभ भी हो सकता है और हानि भी। यह सब उस व्यक्ति की योग्यता और उसके चरित्र पर निर्भर करता है जिसकी सलाह आप ले रहे हैं। यह नया विज्ञान अभी तक पूर्णता को नहीं पहुँच पाया है। यहाँ तक कि यह मोडल 'टी' स्टेज अर्थात् सन्तोष-जनक स्थिति को भी नहीं पहुँच पाया है। किन्तु इसका भविष्य उज्ज्वल है। आप इस विज्ञान का उपयोग किस प्रकार कर सकते हैं?

सबसे पहले आप इस बात का पता लगाइये कि आपके समाज में वोकेशनल परीक्षण कहाँ किये जाते हैं तथा वोकेशनल सलाह कहाँ प्राप्त की जा सकती है?

वह सलाह सुझावों के रूप में ही ली जा सकती है। निर्णय तो आपको ही करना होगा। स्मरण रखिये कि ये सलाहकार भी असफलता से परे नहीं हैं। उनका एक दूसरे से सदा ही मेल बैठता हो ऐसी बात भी नहीं है। कभी कभी तो वे हास्यास्पद भूलें कर बैठते हैं। उदाहरण के लिये एक वोकेशनल गाइडेन्स के सलाहकार ने मेरी एक छात्रा को लेखिका बनने की सलाह दी, सिर्फ इसलिए कि उसका शब्द भंडार भरपूर था। कैसी बकवास है यह! क्या लेखिका बनना कोई सरल काम है! रोचक लेखक के लिए आवश्यक बात यह है कि वह अपने मनोभाव एवं विचार पाठक तक सहजरूप से प्रेषित कर सके। उसके लिये बड़े शब्द भंडार की आवश्यकता न होकर, विचारों, अनुभवों, मान्यताओं, दृष्टान्तों एवं उत्साह की आवश्यकता होती है। वृहत् शब्द कोष वाली उस लड़की को लेखिका बनने की सलाह देकर वोकेशनल सलाहकार को केवल यही सफलता मिली कि एक सुखी स्टेनोग्राफर, एक भ्रान्त भावी उपन्यास लेखिका बन गई।

जिस बात को मैं यहाँ स्पष्ट करना चाहता हूँ वह यह है कि वोकेशन गाइडेन्स के सलाहकार भूलों से परे नहीं हैं। वे आपकी और मेरी तरह ही भूलें कर सकते हैं। अच्छा हो कि आप स्वयं उनमें से बहुतों की सलाह लें और उनकी सलाह की सामान्य ज्ञान के प्रकाश में समीक्षा कर लें।

आपको आश्चर्य होगा कि मैं चिन्ता पर लिख रहा हूँ और इस तरह का परिच्छेद इसमें जोड़ रहा हूँ। किन्तु इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है यदि आप यह समझ सकें कि आपकी बहुत सी चिन्ताएँ, खेद एवं निराशाएँ अपने कार्य के प्रति आपकी घृणा के कारण हैं। भले ही आप अपने पिताजी, पड़ोसी अथवा किसी अधिकारी से इस बारे में पूछ लें। जॉन स्टुअर्ट मील जैसे धुरन्धर विद्वान ने कहा है कि औद्योगिक क्षेत्र में अयोग्य सिद्ध हुए व्यक्तियों के कारण समाज को भारी क्षति हुई है और इस पृथ्वी पर सबसे दुःखी व्यक्ति भी

औद्योगिक क्षेत्र के वे असफल व्यक्ति ही हैं जो अपने दैनिक काम-धन्धों से घृणा करते हैं।

क्या आप जानते हैं कि सेना में कैसे व्यक्ति असफल होते हैं? वे जो गलत जगह रख दिये गये हैं। मैं सामरिक दुर्घनाओं की बात नहीं कर रहा हूँ वरन् उन व्यक्तियों की बात कर रहा हूँ जो सामान्य-सेवा करते करते भी टूट जाते हैं। वर्तमान मनः चिकित्सकों में प्रसिद्ध डॉ विलियम मेनिनगर युद्ध के दिनों में सेना के 'स्नायु एवं मनः चिकित्सा विभाग' के अधिकारी थे और उनका कथन है कि उपयुक्त व्यक्ति को उपयुक्त स्थान पर नियुक्त करना तथा उसके उपयुक्त चुनाव करने के महत्त्व को समझना आदि बातों के बारे में हमने सेना में रहकर बहुत ही महत्त्वपूर्ण ज्ञान प्राप्त किया है। जो काम अपने हाथ में है उसके महत्त्व की अनुभूति का होना हमारे लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। जहाँ आदमी को अपने काम में रुचि न हो, जहाँ वह समझे कि वह गलत जगह पर रखा गया है जहाँ उसे प्रशंसा न मिले तथा वह सोचे कि उसकी प्रतिभा का दुरुपयोग हो रहा है, वहाँ सदैव ही यह देखा गया है कि भले ही वह स्नायु-रोग का शिकार न बना हो किन्तु उस रोग के लक्षण उसमें अवश्य मिल जाते हैं।"

और हाँ, उद्योग धन्धों में भी मनुष्य के टूट जाने का यही एक कारण हो सकता है। यदि मनुष्य अपने उद्योग से घृणा करने लगे तो वह उसे भी नष्ट कर दे।

उदाहरणार्थ फिल जॉनसन ही को लीजिये। फिल जॉनसन के पिता एक लाउन्ड्री के मालिक थे और इसीलिये उन्होंने अपने लडके को उसी में कुछ काम दे दिया था, इस आशा से कि लड़का वह धन्धा सीख लेगा। किन्तु फिल लाउन्ड्री से घृणा करता था। इसीलिए वह मटरगश्ती करता, मारा मारा फिरता और वही करता जो उसे करना पड़ता था। उसके सिवा एक तिनका भी नहीं उठाता था। वह कभी कभी गैर हाजिर भी हो जाता था। पिता को यह जान कर बडा दुःख हुआ कि लड़का गतिहीन और आकांक्षा रहित है। इससे उसे अपने कामगारों के सामने बड़ी लज्जा आती थी।

एक दिन फिल जॉन ने अपने पिता से मेकेनिक बनने तथा कारखाने में काम करने की इच्छा व्यक्त की। पिता ने कहा "क्या फिर वहीं लौटना चाहते हो जहाँ से चले थे?" वृद्ध को धक्का-सा लगा। किन्तु फिल ने अपनी मनमानी की। वह चिकने कपडों में काम करता था। लॉउण्ड्री के लिये जितना काम करना जरूरी था उससे कहीं अधिक कठिन काम वह वहाँ करने लगा। वह बड़ी देर तक काम करता रहता और वह भी बड़ी दिलचस्पी से। उसने इन्जीनियरिंग की शिक्षा ली। एन्जिनों के बारे में जानकारी प्राप्त की और मशीनों से उलझता रहा। १९४४ में उसकी मृत्यु के समय फिलिप जॉन बोइंग एअर क्राफ्ट कम्पनी का प्रधान था और युद्ध के हवाई साधन बनाकर युद्ध जीतने में सहायता कर रहा था। यदि वह लॉउण्ड्री ही में चिपका रहता तो न जाने उसकी लाउण्ड्री का क्या हाल होता? खासकर

उसके पिता की मृत्यु के बाद! मेरा तो अनुमान है कि वह अपने धन्धे को बरबाद कर बैठता और उसे रसातल में पहुँचा देता।

चाहे परिवार में कलह हो जाने का खतरा ही क्यों न उठाना पड़े! मैं तो नवयुवकों से कहूँगा कि किसी भी धन्धे अथवा व्यापार को वे सिर्फ इसलिए न अपनाएँ कि उनके परिवार के लोग चाहते हैं। किसी भी धन्धे को तभी अपनाइये जब वह आपको पसन्द आए। फिर भी अपने माता-पिता की सलाह पर विचार जरूर कीजिए। उन्होंने आप से दूनी उम्र की है। उनमें वह बुद्धि है जो वर्षों के अनुभव के बाद प्राप्त होती है और जिसके लिए कई वर्ष गुजार देने पड़ते हैं। किन्तु अन्ततः आप ही को अपने विषय में अन्तिम निर्णय करना है। आप ही को अपने काम में सुख अथवा दुःख का अनुभव करना है।

इतना कहकर मैं आपको निम्नलिखित सुझाव देना चाहूँगा—इनमें से कुछ चेतावनियाँ हैं जिनका आपको धन्धे का चुनाव करते समय खयाल रखना होगा—

(१) निम्नलिखित, इन पाँच सुझावों को वोकेशनल गाइडेन्स सलाहकार का चुनाव करने के लिए पढ़िये तथा इनका अध्ययन कीजिये। ये सुझाव मत्र के समान हैं। अमेरिका के एक अग्रगण्य वोकेशनल गाइडेन्स विशेषज्ञ प्रो. हैरी डेक्स्टर किट्सन ने, जो कोलंबिया विश्वविद्यालय में प्राध्यापक हैं, ये शब्द कहे थे—

(क) ऐसे किसी व्यक्ति के पास न जाइये जो आपको यह कहे कि आपकी वोकेशनल प्रवृत्ति को बताने का उसके पास विलक्षण ढंग है। भाग्य-रेखा देखने वाले ज्योतिषि, चरित्र-विश्लेषण करने वाले, तथा आपके अक्षर देखकर बात बताने वाले इसी वर्ग में आते हैं। उनके तरीके कभी काम नहीं देते।

(ख) उन व्यक्तियों के पास न जाइये जो आपको कहें कि परीक्षण द्वारा मैं बता सकता हूँ कि आपको कौनसा धन्धा चुनना चाहिये। वह सलाहकार उन सिद्धान्तों का अतिक्रमण करता है जिनका एक वोकेशनल गाइडेन्स सलाहकार को बड़ा ध्यान रखना चाहिए। उसे, सलाह लेनेवाले की शारीरिक, सामाजिक तथा आर्थिक अवस्थाओं का, जिन में वह घिरा पड़ा है, खयाल रखना चाहिये और उसे अपनी सलाह, उस व्यक्ति के लिये उपलब्ध रोजगार के सुयोग को ध्यान में रखकर देनी चाहिये।

(ग) ऐसे वोकेशनल विशेषज्ञ को ढूँढिये जिस के पास रोजगार सम्बन्धी तथ्य जानने के लिये उपयुक्त पुस्तकालय हो तथा जिसका वह सलाह देते समय उपयोग करता हो।

(घ) पूरी तरह वोकेशनल गाइडेन्स लेने के लिये सामान्यतः एक से अधिक बार मिलकर जानकारी प्राप्त करने की आवश्यकता रहती है।

(ङ) डाक द्वारा वोकेशनल गाइडेन्स स्वीकार न कीजिये।

(२) अपने आप को उस व्यवसाय एवं पेशे से दूर रखिये जिनमें पहले ही से भीड़ लगी पड़ी हो। रोजी कमाने के हजारों तरीके हैं। किन्तु क्या युवक

इस बात को महसूस करते हैं? नहीं। उन्हें तो दिन को दिन कहने के लिए भी ज्योतिषि चाहिए! ऐसा करने का परिणाम क्या होता है सो देखिये—एक स्कूल में दो तिहाई लड़कों को अपना चुनाव पॉच व्यवसायों तक ही सीमित रखना पड़ा। बीस हजार व्यवसायों मे से केवल पाँच! और पॉच मे से चार लड़कियों ने भी यही किया। ऐसी हालत मे आश्चर्य ही क्या यदि कुछ व्यवसायों एव पेशों में लोगों की भीड़ लगी रहे और ऑफिस के बाबुओं में असुरक्षा के भाव, चिन्ता एव स्नायुकष्ट, आए दिन सर उठाते रहें। सावधान! कभी भी कानून, पत्रकारिता, रेडियो, चित्रजगत तथा अन्य आकर्षक व्यवसायों में अपना स्थान ढूँढने का प्रयत्न न कीजिए।"

(३) उन प्रवृत्तियों से अलग रहिये जिन से रोजी कमाने के लिए दस मौकों मे से केवल एक ही आपको मिले। उदाहरणार्थ जीवन बीमा ऐजेन्ट ही का धन्धा लीजिये। प्रतिवर्ष कई हजार की सख्या में नवयुवक जो प्रायः बेरोजगार होते हैं बिना पहले यह जाने कि उनका क्या होनेवाला है, जीवन बीमा का काम शुरू करने का प्रयत्न करते हैं। उनकी कैसी दशा होती है, यह रियल इस्टेट ट्रस्ट बिल्डिंग फिलेडेल्फिया के फ्रैंकलिन ए. बेटगर से सुनिये। लगभग बीस वर्ष तक श्री. बेटगर अमेरिका के एक प्रमुख एव अत्यन्त सफल बीमा पोलिसी बेचनेवाले व्यक्ति रहे हैं। उनका कहना है कि बीमा का काम करनेवाले नब्बे प्रतिशत लोग इतने निराश एवं निरुत्साहित हो जाते हैं कि एक वर्ष के अन्दर-अन्दर ही यह काम छोड़ बैठते हैं। शेष दस व्यक्तियों में से केवल एक व्यक्ति ही नब्बे प्रतिशत बिक्री करता है और दूसरे नौ केवल दस प्रतिशत का धन्धा करके ही रह जाते हैं।

(४) जिस व्यवसाय में आप अपना जीवन खपा देने जा रहे हैं उस व्यवसाय के विषय में निर्णय लेने में यदि आवश्यक हो तो हफ्ते या महीने लगा दीजिये। पर यह निर्णय आप किस प्रकार कर सकते हैं—आप उन स्त्री-पुरुषों से मिलिये जिन्होंने दस, बीस अथवा चालीस वर्ष अपने व्यवसाय में बिता दिये हैं।

सम्भव है कि उन मुलाकातों का आपके भविष्य पर गहरा प्रभाव पड़े। यह मेरा अपना अनुभव है—जब मैं बीस वर्ष के लगभग था मैंने दो बुजुर्गों से व्यवसाय सम्बन्धी सलाह ली। आज मैं जब अपने बीते जीवन का सिंहावलोकन करता हूँ तो मुझे महसूस होता है कि उन दो मुलाकातों ने मेरे जीवन को सहसा एक मोड़ दे दिया था। वस्तुतः आज यह कल्पना करना कि उन दो मुलाकातों के बिना न जाने मेरा जीवन कैसा होता, बड़ा कठिन है।

आप 'वोकेशनल गाइडेन्स' किस प्रकार ले सकते हैं? मान लीजिए आप शिल्पकारी का अध्ययन करने की सोच रहे हैं। आप अपना निर्णय लें इसके पहले आपको अपने नगर तथा आस पास के नगरों के शिल्पियो से मिलने में कई सप्ताह बिता देने होंगे। इसलिए पहले टेलिफोन डायरेक्टरी से उनके पते प्राप्त कर लीजिए। आप समय लेकर अथवा समय लिये बिना ही उनसे, उनके ऑफिसों में मिल

सकते हैं। यदि आप उनसे मुलाक़ात का समय लेना चाहें तो उन्हें इस प्रकार लीजिए —

मुझे आपकी सलाह की आवश्यकता है, क्या आप मुझे कृतार्थ करेंगे ? मैं अठारह वर्ष का हूँ और शिल्पी बनने की सोच रहा हूँ। इस विषय में अन्तिम निर्णय करने के पूर्व मैं आपकी सलाह लेना चाहता हूँ।

यदि आप अपने ऑफिस में अत्यन्त व्यस्त रहते हैं तो मुझे केवल आध घण्टे के लिये अपने निवासस्थान पर मिलने का अवसर दीजिए, मैं आपका अत्यन्त आभार मानूँगा।

ये हैं वे प्रश्न जो मैं आपसे पूछना चाहूँगा —

(क) यदि आपको फिर से मनुष्य जीवन मिले तब भी क्या आप शिल्पी ही बनना चाहेंगे ?

(ख) ... क्या आप समझते हैं कि एक सफल शिल्पी के लिए आवश्यक सभी बातें मुझ में हैं ?

(ग) क्या शिल्पकारी के पेशे में अधिक भीडभाड़ तो नहीं है ?

(घ) क्या चार वर्ष तक शिल्पकारी सीखने के पश्चात् भी मेरे लिए रोजगार पाना मुश्किल होगा ? शुरू शुरू में मुझे किस तरह का काम करना होगा ?

(ट) अपनी औसत योग्यता के अनुसार पहले पाँच वर्षों में मैं कितना कमाने की आशा रख सकता हूँ ?

(च) शिल्पी बनने के लाभ और हानियाँ क्या हैं ?

(छ) यदि मैं आपका बेटा होता तो क्या आप मुझे शिल्पी बनने की सलाह देते ?

यदि आप बड़े आदमियों से अकेले मिलने में सकुचाएँ तो इन दो सुझावों को ध्यान में रखिये। ये आपकी सहायता करेंगे —

पहला : अपनी ही अवस्था के किसी युवक को अपने साथ जाने को तैयार कीजिये। आप दोनों एक दूसरे के विश्वास को बढ़ावा दे सकेंगे। यदि आपकी उमर का कोई व्यक्ति आपके साथ जाने को तैयार न हो तो अपने पिताजी को साथ ले जाइये।

दूसरा : स्मरण रखिए कि उस व्यक्ति से सलाह लेकर आप उसकी प्रशंसा कर रहे हैं। वह आप के अनुरोध से फूल सकता है। स्मरण रखिये कि प्रौढ व्यक्तियों को युवकों एवं युवतियों को सलाह देना अच्छा लगता है। और कदाचित् उस शिल्पी को आप से मिल कर खुशी ही हो।

यदि आप पत्र लिखने में सकोच अनुभव करें तो उसके ऑफिस में यों ही बिना समय लिए चले जाइये और उससे कहिए कि उसकी कुछ सलाह पाकर आप अत्यन्त उपकृत होंगे।

मान लीजिए आप पाँच शिल्पियों से मिलने जाएँ और वे पाँचों कार्य में व्यस्त रहने के कारण आपसे न मिल सकें (जो सम्भव नहीं) तो अन्य पाँच व्यक्तियों के पास जाइये। उनमें से कुछ तो आपको अवश्य ही मिलेंगे और अपनी अमूल्य सलाह देंगे। कदाचित् वह सलाह आपको निराशा से बचा ले और आपका वर्षों का समय नष्ट होने से बच जाय।

स्मरण रखिए कि आप जीवन को प्रभावित करनेवाले दो महत्वपूर्ण एवं व्यापक निर्णयों में से एकका चुनाव करने जा रहे हैं। अतः काम को करने के पूर्व तथ्यों का संकलन करने के लिए जल्दबाजी न कीजिए। यदि आपने ऐसा किया तो आपकी आधी जिन्दगी पछताते ही बीतेगी।

यदि हो सके तो उस व्यक्ति को आध घण्टे तक सलाह देने के लिए उपहार स्वरूप कुछ दे दीजिए।

(५) अपनी उस गलत धारणा से छुटकारा पा लीजिए कि आप किसी एक ही व्यवसाय के योग्य हैं। याद रखिये, एक सामान्य व्यक्ति कितने ही व्यवसायों में सफल अथवा असफल हो सकता है। मेरा ही उदाहरण लीजिए, यदि मैंने नीचे लिखे व्यवसायों के विषय में अध्ययन और तैयारी की होती तो उनमें सफलता मिलने का अच्छा मौका था और साथ ही मुझे काम करने में आनन्द भी आता। वे व्यवसाय ये हैं —धान और फलों की खेती, वैज्ञानिक कृषिकार्य, दवा दारू की बिक्री, विज्ञापन, समाचार पत्रों का सम्पादन, अध्यापन तथा जंगल सम्बन्धी कार्य आदि, इसके विपरीत यदि मुझे खाते-बही, हिसाब-किताब, इन्जीनियरिंग, होटल, कारखाने, शिल्पकारी, यान्त्रिक-व्यवसाय अथवा अन्य ऐसा ही कोई काम करना पड़ता तो मुझे विश्वास है कि मैं अवश्य ही असफल और दुःखी रहता।

☆

३० : आपकी ये सत्तर प्रतिशत चिन्ताएँ ....

यदि मुझे सभी की आर्थिक चिन्ताएँ दूर करना आता तो मैं यह पुस्तक न लिख कर प्रेसिडेन्ट के पास व्हाइट-हाउस में बैठा मिलता। किन्तु एक बात मैं कर सकता हूँ—मैं इस विषय पर अधिकार रखनेवाले विद्वानों के उद्धरण प्रस्तुत कर सकता हूँ तथा कुछ उच्च एव व्यावहारिक सुझाव रख सकता हूँ। मैं आपको बता सकता हूँ कि आपको अतिरिक्त मार्ग-दर्शन के लिए पुस्तके एवं पुस्तिकाएँ कहाँ मिल सकती हैं!

लेडीज होम जरनल के अनुसार हमारी सत्तर प्रतिशत चिन्ताएँ अर्थ के अभाव को लेकर होती हैं। गेलप पोल के जोर्ज गेलप कहते हैं कि अधिकाश व्यक्ति समझते हैं कि यदि वे अपनी आय दस प्रतिशत और बढ़ा सके तो आर्थिक चिन्ताओं से मुक्त हो जाएँ। बहुत से लोगों के विषय में यह बात सही भी है। किन्तु ऐसे भी बहुत से लोग हैं, जिनके लिए यह बात सही नहीं उतरती। उदाहरणार्थ, जब मैं यह परिच्छेद लिख रहा था, मैं एक बजट विशेषज्ञा से मिला। ये थीं श्रीमती एल्सी स्टेपलेटन, जो कई वर्षों तक न्यूयॉर्क के वेनामेकर्स डिपार्टमेण्टल स्टोर्स तथा गिम्बेल्स के ग्राहकों एव कर्मचारियों के आर्थिक मामलों की सलाहकार रही हैं। इसके अतिरिक्त एक प्राइवेट सलाहकार की हैसियत से भी उन्हें कुछ वर्षों का अनुभव है। उन्होंने उन लोगों की सहायता की है जो अर्थ की चिन्ता से पागल से हो गए थे। उन्होंने वस्तुतः हर तरह की आमदवाले व्यक्तियों की सहायता की है। एक हजार डॉलर वार्षिक आयवाले कुली से लेकर हजार रुपये मासिक पानेवाले अधिकारी तक की उन्होंने सहायता की है। उन्होंने मुझे जो बात बताई वह यह है—अधिकाश लोगों की आर्थिक चिन्ता केवल अधिक आय से ही नहीं मिटाई जा सकती। वस्तुतः मैंने तो प्राय: यह देखा है कि आय की बढती के साथ खर्च में भी बढती हो जाती है और साथ ही सरदर्द भी बढ़ जाता है। उन्होंने बताया कि, अधिकाश लोगों की चिन्ताओं का कारण यह नहीं कि उनके पास पर्याप्त रुपया नहीं, वरन् यह कि उनको अपना रुपया खर्च करना नहीं आता। इस बात से सम्भवतः आप सहमत नहीं होंगे। क्यों है न? किन्तु इतना स्मरण रखिए कि श्रीमती स्टेपलेटन ने यह नहीं कहा कि "यह बात सभी लोगों के साथ खरी उतरती है। उन्होंने कहा है—'अधिकाश व्यक्ति।' उनका मतलब आप से नहीं था उनका मतलब था आपकी उन बहनों से, जिन्हें आप दर्जनों की सख्या में जानते हैं।

मैं जानता हूँ, बहुत से पाठक कहेंगे—काश! इस कारनेगी को मेरे बिल चुकाने होते या मेरी आय पर मेरी भारी जिम्मेदारियाँ निभानी होती! यदि उसे यह सब करना होता तो मैं दावे के साथ कहता हूँ कि उसे अपने विचार बदलने पड़ते। ठीक है, मेरी भी अपनी कठिनाइयाँ हैं। मैंने भी मिसौरी के धान के खेतों में तथा घास के बीड़ में दस दस घण्टे शारीरिक श्रम किया है, और तब तक बराबर काम करता रहा हूँ जब तक शारीरिक थकान और दर्द से छुटकारा पाने की इच्छा

बलवती नहीं हो जाती। उस कमरतोड़ काम के लिए एक डॉलर प्रतिघण्टा तो दूर रहा, दस सेंट भी नहीं मिलते थे। दिन में दस घण्टे काम करने के मुझे केवल पाँच सेंट मिलते थे।

बीस वर्षों तक मैं बिना, बाथ-रूम और नलवाले मकानों में रहा हूँ। इस प्रकार रहना कैसा होता है, मैं ही जानता हूँ।

मैं यह भी जानता हूँ कि शून्य से पन्द्रह डिग्री नीचे के तापमान वाले मकान में सोने पर क्या बीतती है। मुझे किराया बचाने के लिये मीलों पैदल चलने का भी अनुभव है। मुझे तलों में छेदवाले जूते तथा बैठक की जगह थिगली लगे हुए पेन्ट पहनने का भी अनुभव है। रेस्टॉ में सस्ता भोजन करने तथा इस्त्री का खर्च नहीं कर सकने के कारण गद्दे के नीचे पेन्ट दबाकर सोने का अनुभव भी मुझे है।

फिर भी सामान्यतया मैं अपनी आय में से कुछ पैसे बचा ही लेता था क्यों कि मुझे अपने भविष्य का डर लगा रहता था। उस अनुभव के परिणाम स्वरूप मैंने महसूस किया कि यदि हमें कर्ज तथा आर्थिक चिन्ताओं से मुक्त रहना है तो हमें चाहिए कि हम वैसा ही करें जैसा कि एक बिजनेस फर्म करती है। हमें खर्च करने के लिए एक योजना बनानी चाहिये और उसके अनुसार ही खर्चा करना चाहिए। हममें से अधिकांश को ऐसा करना नहीं आता। उदाहरण के तौर पर मेरे मित्र लियो सिमकिन ने जो कि इस पुस्तक को (मूल अंग्रेजी में) प्रकाशित करनेवाली फर्म के जनरल मैनेजर हैं, मुझे बताया कि बहुत से लोग अपने रुपयों के बारे में लापरवाही बरतते हैं। उन्होंने मुझे अपने एक परिचित, बही-खाता रखने वाले की कहानी सुनाई। फर्म का हिसाब-किताब रखने में वह अद्भुत था। किन्तु जहाँ उसे अपनी निजी अर्थव्यवस्था करनी होती तो बस......! यदि उस व्यक्ति को शुक्रवार की दोपहर को पैसा मिल जाता तो वह बाजार मे चलते चलते किसी स्टोर के शो-केस में सजाए हुए ओवरकोट को देखने लगता, यदि मन होता तो उसे खरीद लेता, किन्तु यह कभी नहीं सोचता कि मकान किराया, बिजली और अन्य कई तरह की निश्चित मदों पर उसी तनख्वाह में से रुपया खर्च करना है। चाहे जल्दी या चाहे देर से। उसकी जेब में डॉलर आए कि बस! आश्चर्य की बात तो यह है कि वह इस बात को अच्छी तरह जानता है कि यदि उसकी कम्पनी भी उसी की तरह लापरवाही से धन्धा करने लगे तो दिवालिया हो जाए। जरा सोचने की बात हैं – आप ही के रुपये हैं, आप ही को उनसे काम चलाना है और व्यवस्था भी करनी है।

किन्तु अपनी अर्थ व्यवस्था करने के सिद्धान्त क्या हैं? अपना बजट और योजना बनाने के लिए ये ग्यारह नियम ध्यान में रखिये—

नियम १ – सम्बन्धित सभी तथ्यों को कागज पर उतार लीजिए —

पचास वर्ष पूर्व जब आर्नोल्ड बेनेट ने एक उपन्यासकार बनने के लिए लन्दन में कार्यारम्भ किया तब वह गरीब था और तंगी में रहता था। इसलिए वह पाई-पाई का

हिसाब रखता था। उसे कभी हैरानी नहीं होती थी कि उसका पैसा कहाँ जाता है? क्यों कि उसे सब कुछ मालूम था।

वह व्यक्ति बाद मे विश्वाविख्यात एव धनी बन गया और सैर-सपाटे के लिए अपना निजी पोत भी रखने लगा, किन्तु फिर भी उसे हिसाब रखने का बहुत रीका इतना अधिक पसन्द आया कि उसे उसने जारी ही रखा।

जॉन डी. रोकफेलर सीनियर भी खर्च का लेखा जोखा बराबर रखते थे। उन्हें पाई-पाई का जमा-खर्च मालूम था और रातको सोने के पूर्व जमा-खर्च का हिसाब कर लेते थे।

हमें भी अपनी डायरी मे हिसाब-किताब रखना होगा। तो क्या जीवन भर हिसाब रखते रहना होगा? नहीं, यह जरूरी नहीं। बजट विशेषज्ञों का मत है कि आरम्भ के महीने का बराबर हिसाब रखना चाहिए यदि सम्भव हो तो तीन महीनों तक उसी तरह करते रहना चाहिए। इससे खर्च का पूरा पूरा लेखा मिल जायगा। हमारा पैसा कहाँ खर्च होता है और कैसे? सो भी पता चल जाएगा। इस प्रकार हम अपना बजट बना सकेंगे।

तो क्या आप भी जानते हैं कि आपका पैसा कहाँ खर्च होता है? सम्भव है आप जानते हों, और यदि सचमुच ही जानते हैं तो आप हजारों व्यक्तियों मे एक हैं। श्रीमती स्टेपल्ड ने मुझे बताया कि अक्सर कई स्त्री-पुरुष घण्टों बैठे मुझे अपने आय-व्यय के आँकडे तथा तथ्य बताते रहते हैं। मैं उन्हें लिख लेती हूँ। जब वे वह लिखा हुआ विवरण देखते हैं तो दंग रह जाते हैं। क्या मेरे पैसे यों खर्च होते हैं? मुश्किल से वे विश्वास कर पाते हैं। क्या आप भी उन्हीं में से हैं? हो सकता है।

नियम २—ऐसा बजट बनाइए जो वास्तव में आपकी आवश्यकताओं के सॉचे मे ढल जाए।'

श्रीमती स्टेपल्टन का कथन है कि चाहे दो कुटुम्ब पास-पास रहते हों, एक ही से मकान में, एक ही उपनगर में रहते हो तथा दोनो के बच्चो की सख्या भी समान हो, आय भी समान हो, पर उनकी बजट की आवश्यकताएँ एक दूसरे से भिन्न होंगी। ऐसा क्यों? इसलिए कि सभी लोग एक से नहीं होते। उनका कहना है कि बजट व्यक्तिसापेक्ष होता है और रीति-रिवाज पर निर्भर करता है।

बजट का अर्थ यह नहीं कि जीवन से आराम और सुख को बाहर कर दिया जाय। इसका उद्देश्य भौतिक सुरक्षा है जिसका अर्थ कई मामलों में भावात्मक सुरक्षा तथा चिन्ता रहित जीवन यापन है। जो लोग बजट के अनुसार चलते हैं वे सुखी रहते हैं।

किन्तु यह सब कैसे किया जाय? पहले तो जैसा कि मैने कहा है आप अपने खर्च की सूची तैयार कर लीजिये। तब, उस विषय में सलाह लीजिए। बीस हजार से ऊपर की जनसख्यावाले कई शहरों मे परिवार कल्याण-सस्थाएँ होती हैं जो

आपको आर्थिक समस्याओं पर मुफ्त सलाह देंगी तथा आपकी, अपनी परिस्थितियों के अनुरूप बजट बनाने में मदद करेंगी।

नियम ३.—इस नियम से मेरा अर्थ यह है कि आप अपनी पूंजी का उत्तम मूल्य प्राप्त करना सीखिए। सभी बड़े निगमों में ऐसे पेशेवर व्यक्ति अथवा एजेण्ट होते हैं जिनका कार्य केवल अपनी फर्म के लिए उत्तम खरीद करना होता है। आप भी अपनी निजी जायदाद के मैनेजर एव प्रधान हैं, फिर आप उसी प्रकार उत्तम खरीद क्यों नहीं करते?

नियम ४.—अपनी आय को लेकर सरदर्द मत बढ़ाइए—

श्रीमती स्टेपल्टन ने मुझे बताया कि सबसे अधिक भय उस समय लगता है जब उनसे पॉच हजार डॉलर प्रतिवर्ष की आय का बजट बनाने के लिए सलाह ली जाती है। मैंने उनसे उस भय का कारण पूछा तो उन्होंने कारण बताते हुए कहा-"कई अमेरिकन परिवारों के लिए पॉच हजार की आय किला फतह कर लेने के समान है। कुछ वर्ष तक तो वे विवेक से चलते हैं किन्तु जब उनकी आय पॉच हजार डॉलर प्रतिवर्ष तक बढ़ जाती है तब उनके पैर जमीन पर नहीं टिकते और सोचते हैं कि बस बाजी जीत ली। वे उपनगरों में नया मकान खरीदते हैं। सोचते हैं, उस किराए पर लिए गये सुविधाजनक मकान के किराए से अधिक खर्च इस पर नहीं बैठता। वे मोटर और नया फर्निचर खरीदते हैं, ढेर सारे नये कपडे बनवाते हैं और मुसीबत में पड जाते हैं। वस्तुतः पहले से उनका सुख कम हो जाता है क्यों कि उन्हें आय की बढ़ती का रोग लग जाता है।

यह स्वाभाविक भी है क्यों कि हम सभी जीवन से अधिक प्राप्त करना चाहते हैं। किन्तु अन्ततः हमें अधिक सुख किससे मिलेगा? अपने तग बजट की सीमा में रहने से या कर्ज लेने के लिए डाक में पत्रों की भरमार करने से और कर्जदारों द्वारा दरवाजा खटखटाये जाने से?

नियम ५—यदि कभी आपको उधार लेना ही पड़ जाए तो भी अपनी साख मत जाने दीजिए।

यदि आपके सामने कोई सकटकालीन स्थिति हो और कर्ज लेना ही पड़े तो जीवन बीमा की रकम रक्षा-बॉन्ड्स् और सेविंग सर्टिफिकेट एक तरह से आपकी जेब में रखी रकम के समान ही हैं, फिर भी इस बात का पता कर लीजिए कि आपकी जीवन-बीमा की रकम सचमुच आपकी बचत ही है। क्योंकि जब आप उस रकम पर कर्ज लेना चाहते हैं तो उसका नकद मूल्य होना चाहिए। कुछ बीमे ऐसे होते हैं जो टर्म इन्श्योरेन्स (सत्रीय बीमा) कहलाते हैं और केवल इस अवधि में ही आपकी रक्षा करते हैं। उनसे कोई कोष नहीं बनता। ऐसी जीवन-बीमा पॉलिसी आपके कोई काम नहीं आ सकती, क्यों कि उस पर आप कर्ज नहीं ले सकते। अतः नियम यह है कि पॉलिसी पर दस्तखत करने के पूर्व पूछ लीजिए कि यदि आपको उस पर कर्ज उठाना पड़े तो उसका कोई नकद मूल्य भी है या नहीं?

अब मान लीजिए कि आपका बीमा नहीं हुआ है जिस पर आप कर्ज ले सकें। न कोई बॉन्ड्स ही आपने खरीदे हैं, किन्तु आपके पास मोटर है, मकान है तथा अन्य ऐसी ही कुछ चीजें हैं। आप कर्ज लेने कहाँ जा सकते हैं? अवश्य ही आप बैंक में जाएँगे। इस देश में सब स्थानों पर बैंक हैं, जो अपने कठोर नियमों के अन्तर्गत कार्य करते हैं। उन्हें समाज में अपनी साख रखनी होती है। ब्याज की दर कानून द्वारा निर्धारित रहती है और वे आपके साथ उचित ढग से सुलूक करेंगे। यदि आप आर्थिक विषमता में हैं तो बैंक आपके साथ उन समस्याओं पर बात करेगा, योजना बनाएगा और कर्ज तथा चिन्ता से बाहर निकलने में आपकी सहायता करेगा। मैं बार बार यही कहूँगा कि यदि आपके पास किसी रूप में कोई जायदाद है, जिसका मूल्य और साख है तो आप बैंक के पास जाइए।

फिर भी मान लीजिए, आप उन हजारों लोगों में से हुए जिनके पास कोई पूँजी अथवा जायदाद नहीं होती और आप के पास खुद के अलावा जमानत के लिए कुछ नहीं है, तब आप अपनी जिन्दगी की खातिर इन शब्दों पर ध्यान दीजिए—पहली बात यह कि आप उन कर्ज देने वाली कम्पनियों को, जिनके लुभावने विज्ञापन अखबारों में देखते हैं, कर्ज के लिए आवेदन पत्र कभी मत भेजिए। उनके विज्ञापन पढने से ये लोग उदारता के अवतार मालम होते हैं किन्तु उन पर विश्वास मत कीजिए। कुछ कम्पनियाँ अवश्य ऐसी हैं जो नीति पर चलती हैं और ईमानदार हैं। वे सचमुच ही उन लोगों की सेवा करती हैं जो विपत्ति तथा बीमारी में रुपया कर्ज लेना चाहते हैं।

वे दूसरे बैंकों के मुकाबले ऊँची दर पर ब्याज लेती हैं, किन्तु उन्हें ऐसा करना ही पड़ता है क्यों कि वे अधिक जोखम उठाती हैं और उन्हें पैसा उगाहने में खर्च भी अधिक करना पडता है। किन्तु किसी भी कर्ज देने वाली कम्पनी से सौदा करने के पूर्व आप अपने बैंक में जाइए, वहाँ के किसी अधिकारी से बातचीत कीजिए तथा उसे किसी ईमानदार कर्ज देनेवाली कम्पनी के लिए पूछिये नहीं तो...यद्यपि मैं आपको आशंकाओं में डालना नहीं चाहता तथापि जो कुछ हो सकता है वह इस प्रकार है—एक बार मिनेपोलिस के एक समाचार पत्र ने उन कर्ज देने वाली कम्पनियो की छानबीन की जिनके विषय में समझा जाता था कि वे 'रसेल सेज फाउन्डेशन' के नियमों के अन्तर्गत काम कर रही हैं। मैं उस व्यक्ति से परिचित हूँ जो उस छान बीन में भाग ले रहा था। वह व्यक्ति है डगलस लर्टन,—'युवर लाइफ' पत्रिका का सम्पादक। उसने मुझे बताया कि गरीब कर्जदारो में उसने कुछ ऐसे घोटाले देखे जो रोमाचकारी बड़े थे। जो कर्ज मूल में पचास डॉलर का होता वह अदा होने तक तीन सौ से चार सौ डॉलर तक पहुँच जाता। तनख्वाहें कर्ज पेटे रोक ली जाती थीं और प्रायः जिस व्यक्ति की तनख्वाह कर्ज पेटे जमा हो जाती उसे कम्पनी की घुड़कियाँ सहनी पड़तीं। कई मामलों में जब कर्जदार कर्ज नहीं चुका पाता तो कम्पनी उसके

घर का फर्नीचर कुर्क करने आदमी भेज देती और उसका घर बरबाद कर देती। ऐसे भी मामले देखे गए हैं कि साधारण-से कर्ज को चुकाने, चार-पाँच वर्ष किश्ते देते रहने पर भी कर्ज बाकी निकलता ही रहता। कितनी असाधारण बातें थीं ये! डॉग लर्टन के शब्दों में-"हमारे उस आन्दोलन के दौरान में अदालतों में हम वैसे मामले इतने अधिक ले गए कि न्यायाधीशों को भी नानी याद आ गई तथा समाचार पत्रों को ऐसे सेकड़ों मामलों की निगरानी करने के लिए आरबीट्रेशन ब्यूरो की स्थापना करनी पड़ी।

आखिर ऐसी धाधली कैसे सम्भव है? बात यह है कि कम्पनियाँ कर्जदारों से कई तरह के गुप्त शुल्क और अतिरिक्त कानूनी फीस लेती हैं। उन कर्ज देने वाली कम्पनियो से निबटने के लिए यह चौथा नियम याद रखिए कि यदि आप एकदम निश्चित हैं कि आप कर्ज जल्दी अदा कर सकते हैं तो आपका ब्याज काफी कम रहेगा और आप ठीक ढग से छुटकारा पा सकेंगे। किन्तु यदि आपको नया नामा करवाना पड़े तो आपका ब्याज इतना अधिक बढ सकता है कि आइस्टिन तक उसका लेखा करने में भूल कर जाएँ। डॉग लर्टन का कहना है कि कई मामलों में अतिरिक्त खर्च मूल कर्ज के ऊपर दो हजार प्रतिशत बढ जाता है अथवा बैंक जितना लेती है उससे पॉच सौ गुना अधिक हो जाता है।

नियम ६—बीमारी, आग तथा आपतकाल के लिए आवश्यक खर्चे की व्यवस्था कर अपनी सुरक्षा रखिए—

सभी प्रकार की दुर्घटनाओं, दुर्भाग्य तथा सभावित आपत्तिकाल के लिए छोटी-छोटी रकम पर आपका बीमा हो सकता है। इसका मतलब यह नहीं कि आप हर छोटी बात जैसे कि नहाते नहाते फिसल जाना, जरमन मीजल (एक बीमारी जो छोटी माता की तरह होती है) आदि के लिए अपना बीमा करवा ले। किन्तु मैं यह अवश्य कहूँगा कि सभी बड़ी विपत्तियों से, जिनके कारण आपको खर्चे में उतरना पड़े तथा चिन्तित होना पड़े आप अपने को सुरक्षित रखिये। ऐसा करना ठीक रहता है।

उदाहरण के लिए मैं एक महिला को जानता हूँ जिसे गत वर्ष अस्पताल में दस दिन काटने पड़े और वहाँ से छुट्टी मिलने पर उसे केवल आठ डॉलर का बिल चुकाना पड़ा। क्यों? इसलिए कि अस्पताल के खर्चे का उसने बीमा करवा रखा था।

नियम ७—ऐसी व्यवस्था कभी न कीजिए कि आपकी मृत्यु के बाद आपकी विधवा पत्नी को आपके जीवन बीमा की रकम एक मुश्त मिल जाय।

मेरी आपसे यह प्रार्थना है कि यदि आपने अपने परिवार की जीविका के हेतु जीवन-बीमा करवा रखा है तो कोई ऐसी व्यवस्था कीजिए कि आपकी मृत्यु के पश्चात् वह सारी रकम एक मुश्त आपकी विधवा पत्नी को न मिले।

"जो हाल ही में विधवा हुई है वह स्त्री उस रकम का क्या करती है?" इसका उत्तर आपको श्रीमती मेरीअर एस्. एबरली देंगी। ये न्यूयॉर्क शहर के पूर्व स्थित ४२ स्ट्रीट की जीवन-बीमा सस्था की महिला विभाग की प्रधान हैं। ये सारे

अमेरिका में स्थित महिला क्लबों मे इस विवेक पर भाषण देती है कि विधवा को बीमा-रकम एक मुश्त न दी जाकर जीवन भर के लिए किश्तों में दी जाए, ताकि वह अपनी जीविका बना सके। श्रीमती मेरीअर एस्. एबरली ने मुझे बताया कि एक विधवा को जीवन बीमा की बीस हजार डॉलर की रकम एक मुश्त मिली थी। उसने ओटोएसेसरी व्यवसाय चलाने के लिए वह रकम अपने बेटे को उधरत दे दी थी। किन्तु धन्धे मे घाटा आ गया और वह निर्धन और असहाय बन गई। उन्होंने मुझे एक अन्य विधवा की कहानी भी सुनाई। एक सेल्समेन ने, जो अचल-सम्पति बिकवाने का धन्धा करता था, विधवा को फुसलाया कि वह बीमा की रकम को खाली उन पड़े तलियों पर लगा दे "जिनकी कीमत एक वर्ष में निश्चय ही दुगुनी होने वाली है।" तीन वर्ष बाद जब उसने उस सम्पत्ति को बेचा तो उसे केवल मूल पूँजी का दसवॉ भाग ही मिला। एक दूसरी विधवा के विषय में भी उन्होंने बताया कि पन्द्रह हजार डॉलर की बीमा-रकम मिलने पर भी उस विधवा को एक वर्ष के भीतर ही अपने बालकों के निर्वाह के हेतु शिशु-कल्याण सस्था को आवेदन-पत्र भेजना पड़ा। ऐसी ही हजारों अन्य दुखद कहानियॉ कही जा सकती हैं।

लेडीज होम जनरल पत्रिका में न्यूयॉर्क पोस्ट (समाचार पत्र) के सम्पादक सिल्विया एस. पोर्टर ने एक विज्ञप्ति मे बताया कि एक महिला के हाथ में बीस हजार डॉलर की रकम औसतन सात वर्ष तक भी नहीं टिक सकती।

कई वर्षों पूर्व 'दी सेटरडे इवनिंग पोस्ट' ने अपने सम्पादकीय में लिखा था कि 'चालाक सेल्समेन, उन विधवाओं को, जिनका व्यवसाय सम्बन्धी कोई शिक्षण नहीं होता, तथा जिनका कोई बैंकर सलाहकार नहीं होता, अपना पैसा बेकार के स्टॉक मे लगा देने के लिए बड़ी आसानी से फुसला लेते हैं। ऐसी घटनाएँ काफी प्रचलित हैं। कोई भी वकील अथवा बैंकर आपको दस बारह मामले ऐसे अवश्य बतला सकता है जिसमें किसी विधवा अथवा अनाथ ने किसी चापलूस पर विश्वास किया और उसने उन्हें लूट लिया। इस प्रकार एक मितव्ययी व्यक्ति की जीवन भर की बचत, जो उसने पेट काट कर जमा की थी, धुल कर रह जाती है।

यदि आप अपनी विधवा पत्नी एव बच्चों की हिफाजत करना चाहते हैं, तो जे. पी. मोरगन की युक्ति काम में लीजिए। वह अपने समय के सबसे बुद्धिमान उद्योग-पतियों मे से थे। उन्होंने सोलह प्रमुख उत्तराधिकारियों के नाम अपना रुपया छोड़ा था। उनमें से बारह स्त्रियॉ थीं। तो क्या उन्होंने उन स्त्रियों के लिए नकद रकम जोड़ी थी? नहीं उन्होंने एक ट्रस्ट कोष बनाया जिससे उन स्त्रियों के लिये जीवन पर्यन्त मासिक आजिविका निश्चित हो गई।

नियम ८—अपने बच्चों को रुपये-पैसों का आदर करना सिखाइये।

मैं कभी भी उस युक्ति को नहीं भूलूँगा जिसे 'युवर लाइफ' पत्रिका में मैंने पढ़ी थी। लेखिका स्टेला वेस्टन टटल ने, उसमें लिखा था कि किस प्रकार वह अपनी

नन्हीं बच्ची को रुपयों-पैसों के प्रति उत्तरदायित्वपूर्ण विवेक बरतना सिखाती हूँ ? उसने बैंक से एक अतिरिक्त चेकबुक प्राप्त की और उस नौ वर्षीया बच्ची को दे दी। जब लड़की को साप्ताहिक जेब खर्च दिया जाता, तो वह उसे अपनी माँ के पास जमा कर देती जो उसके लिए बैंक की तरह थी। सप्ताह में जब कभी उसे एक अथवा दो सेन्ट की आवश्यकता होती, वह उसके लिए चेक काटती और अपनी जमा रकम का लेखा जोखा रखती। उस नन्ही-सी लड़की को उसमें न केवल आनन्द आता, बल्कि वह यह भी सीखने लगी कि रुपयों पैसों के विषय में वास्तविक जिम्मेदारी कैसे निभाई जाय ?

यह एक उत्कृष्ट ढग है। यदि आपके भी स्कूल जाने वाली लड़की हो और यदि आप उसे सिखाना चाहें कि रुपयों पैसों को उसे कैसे खर्च करना चाहिए तो मैं आपसे इस युक्ति को अपनाने की सिफारिश करूँगा।

नियम ९—यदि आवश्यकता हो तो कुछ व्यजन तैयार करके अतिरिक्त पैसा कमा लीजिए।

विवेक से बजट बना लेने पर भी यदि आप महसूस करें कि आपका काम ठीक तरह से नहीं चलता है तो आप दो में से एक काम कर सकते है, या तो आप झिडकियाँ सुनाते रहें, बडबडाते रहें और चिन्ता करते रहें, या फिर अतिरिक्त आदम करने के हेतु कोई दूसरी तरकीब निकाललें। किन्तु कैसे ? आपको पैसा कमाने की सबसे अधिक आवश्यकता इसलिए है कि आपकी प्रमुख आवश्यकताएँ पूरी हो जाएँ। न्यूयॉर्क जेक्सन व्हाईट्स की ३७०-०१४३ वी स्ट्रीट की श्रीमती नेली स्पीअरने भी यही किया था। सन् १९३२ में वह एक तीन कमरों के आवास में अकेली रहती थी। उसका पति मर चुका था और उसके दोनों लड़कों की शादी हो चुकी थी। एक दिन वह एक ड्रगस्टोर, सोडा फाउण्टेन पर आइसक्रीम ले रही थी। उसने देखा कि फाउण्टेन पर बेकरी -समोसे भी बिकते थे, जो रूखे-सूखे होते थे। उसने वहाँ के मालिक से पूछा कि " क्या आप मुझ से घर के बने समोसें खरीदना चाहेंगे ? इस पर उसने दो समोसों के लिए ऑर्डर दे दिया—कहानी सुनाते समय श्रीमती स्पीअर ने मुझे बताया कि यद्यपि मैं व्यजन बनाने में कुशल हूँ तथापि मैंने सदैव अपने नौकरों से ही काम लिया है। उन दिनों हम जोर्जिया में रहते थे। मैंने तब तक कभी बारह समोसो से अधिक नहीं बनाए होगें। उन दो समोसों का ऑर्डर प्राप्त करने के पश्चात् मैंने अपनी पडोसिन से सेब के समोसे बनाने की विधि पूछी। मेरे घर के बनाए पहले दो समोसे, जिनमें एक सेब का बना था तथा दूसरा नीबू का, सोडा फाउण्टेन के ग्राहकों को बहुत पसन्द आए। ड्रगस्टोर ने दूसरे दिन पाँच समोसों का ऑर्डर दिया। धीरे धीरे दूसरे फाउण्टेन से तथा भोजनालयो से भी ऑर्डर आने लगे। दो वर्ष के भीतर मैं पाँच हजार समोसे प्रति वर्ष बनाने लगी। यह सब काम अपने छोटेसे रसोई घर में मैं स्वय करती थी। इस प्रकार साल भर में

हजार डॉलर मिलने लगे। इस काम में, सिवा उन वस्तुओं के जो समोसे बनाने में लगती थी और कोई भी खर्च नहीं होता था।"

श्रीमती स्पीअर के घर में बनाई गई पेस्टरी की माँग भी इतनी अधिक बढ गई थी कि उसे अपना रसोई घर छोड़ कर एक छोटी-सी दूकान में कारोबार जमाना पडा। और दो लड़कियों को समोसे, केक, ब्रेड और रोल बनाने के लिए नौकर रखना पड़ा। युद्ध के दिनों में तो लोगों को घण्टों उन व्यञ्जनो को खरीदने के लिए लाइन में खड़ा रहना पडता था।

श्रीमती स्पीअर का कहना है कि "मैं जितनी सुखी उन दिनों रही उतनी जीवन में कभी नहीं रही। मैं दिन मे बारह से चौदह घण्टे बिना थकान के काम करती क्यों कि वह मेरे लिए कोई काम नहीं था बल्कि एक प्रकार का एडवेन्चर (उपक्रम) था। मैं अपनी और मे सदा लोगों को प्रसन्न रखने का प्रयास करती थी। अकेलापन तथा चिन्ता के लिए मेरे पास समय ही नहीं रहता था। मेरे कार्य ने, मेरे जीवन की रिक्तता को, जो माँ तथा पति के अवसान, तथा अपना घर खो देने से हुई थी, भर दिया था।

जब मने श्रीमती स्पीअर से पूछा कि "क्या कोई अन्य महिला भी जो व्यञ्जन बनाने में कुशल हो तथा जो ऐसे कस्बों में रहती हो तथा जिनकी जनसख्या दस हजार से ऊपर हो. इसी तरीके से अपने अवकाश के समय में पैसा कमा सकती है?" तो, उन्होंने उत्तर दिया—"क्यों नहीं, जरूर कमा सकती है।"

श्रीमती ओरा सेन्डर भी आपको ऐसी ही बात बताएँगी। वह एलिनोइस के मेवुड नगर में रहती हैं। इस नगर की जन-सख्या तीस हजार है। उन्होंने रसोई बनाने के चूल्हे तथा दस सेंट की अन्य वस्तुओं से अपना धन्धा आरम्भ किया था। उनका पति बीमार पड़ गया था इसलिए उन्हें पैसा कमाना पड़ा। किन्तु कैसे! उन्हें न कोई अनुभव था, और न उनके पास कोई हुनर ही था। पैसा भी नहीं था। वह तो एक गृहिणी मात्र थीं। उन्होंने अण्डे के अन्दर के सफेद पदार्थ तथा शक्कर को मिला कर चूल्हे पर केन्डी तैयार की, उसे तवे पर रख कर एक स्कूल के निकट खड़ी रही, और 'एक पेनी में एक टुकड़ा' के हिसाब से स्कूल से लौटने वाले बच्चों को उसे बेच दिया। उन्होंने बच्चों से कहा-"कल ज्यादा पैसे लेकर आना मैं यहीं हर रोज घर की बनी केण्डी लेकर खड़ी रहूँगी।" पहले सप्ताह मे ही न केवल उन्हें मुनाफा हुआ, वरन्, जीवन मे नवीन स्फूर्ति भी प्राप्त हो गई। एक ओर वह अपने को तथा बच्चों को सुखी बना रही थी। दूसरी ओर अपनी चिन्ता से छुटकारा पा रही थी।

ऐलिनोइस अन्तर्गत मेवुड की वह शान्त, साधारण गृहिणी इतनी महत्वाकांक्षिणी थी कि उसने अपने धन्धे को बढाना चाहा। उसने अपने घर की बनी सामग्रियों को किसी एजेण्ट द्वारा भोंपू की सहायता से बिकवाने का विचार किया। इस के लिए सकुचाती हुई गली में पीनट्स बेचने वाले एक इटालियन के पास गई, पर उसने असमर्थता

प्रकट की क्योंकि उसके ग्राहक पी-नट्स चाहते थे, केण्डी नहीं। पर जब उन्होंने उसे एक नमूना दिया तो उन्होंने उसे पसन्द कर लिया। और इस तरह केण्डी बेचना शुरू कर दिया। पहले ही दिन श्रीमती स्वीडर के लिए उसने अच्छा पैसा कमाया। चार वर्ष के उपरान्त उन्होंने शिकागो में अपना स्टोर खोला, जो केवल आठ फीट चौडा था। रात में वह केण्डी बनाती और दिन में उन्हें बेचती। जो महिला अब तक सकोचशील गृहिणी थी और जिसने रसोई बनाने के चूल्हे पर केण्डी बनाना आरम्भ किया था, उसके अब अपने सत्रह स्टोर हैं। जिनमें से पन्द्रह शिकागो के लूप जिले में हैं।

जो बात मैं कहना चाहता हूँ वह यह है कि न्यूयॉर्क के जेक्सन हाइट्स की नेलीस्पीअर तथा एलिनोइस के वुड की श्रीमती ओरा स्लीडर ने अर्थ की चिन्ता करने के बजाय सक्रीय कार्य किया। यद्यपि उन्होंने आरम्भ में अत्यन्त छोटे पैमाने पर रसोई घर के चूल्हे पर व्यजन बना कर पैसा कमाना आरम्भ किया, किन्तु किसी के मत्थे नहीं। उन्हें न तो किराया देना पड़ता, न विज्ञापन और न तनख्वाह। ऐसा करने पर कोई भी महिला हो, वित्तीय चिन्ताओं से कैसे दुखी रह सकती है!

अपने चारों ओर नजर दौडाइये, आप देखेंगे कि लोगों की बहुत सी जरूरतें आपकी जैसी ही हैं जो अब तक अपूर्ण हैं और जिन्हें आप पूरा कर सकती हैं। उदाहरणार्थ आप अपने आप को कुशल व्यजनकार बना कर अपने रसोई घर ही में युवतियों के लिए पाक-विज्ञान की कक्षाएँ खोल सकती हैं। आपको केवल दरवाजे खटखटाने की जरूरत है। युवतियाँ घडल्ले से आपके पास आने लगेंगी।

'अवकाश के समय रुपया कैसे कमाना' इस विषय पर कई पुस्तकें लिखी गई हैं। किसी भी सार्वजनिक पुस्तकालय मे वे मिल सकती हैं। स्त्रियाँ एव पुरुषों के लिए कई सुयोग हैं। किन्तु एक बात कह देता हूँ। यदि आप में वस्तुएँ बेचने का स्वाभाविक गुण नहीं है तो घर घर फिर कर वस्तुएँ बेचने का प्रयास कभी मत कीजिए। क्योंकि प्रायः लोग इस तरह के काम से घृणा करते हैं और इसलिए वे असफल रहते हैं।

नियम १०—कभी जुआ मत खेलिये।

मैं प्रायः उन लोगों को देख कर चकित रह जाता हूँ जो घोडों तथा जुए की मशीन पर बाजी लगा कर रुपया कमाने की आशा रखते है। मैं एक ऐसे आदमी को जानता हूँ जो ऐसे ही लूटने के साधन रखता है और उनके द्वारा अपनी रोजी कमाता है। उसे उन मूर्ख लोगों से घृणा है, जो यह समझते हैं कि वे उस मशीन को जो कि उन्हें हराने के लिए ही बनाई गई है, हरा देंगे।

मैं अमेरिका के एक प्रसिद्ध बुकमेकर को जानता हूँ। वह मेरी प्रौढ कक्षाओं का विद्यार्थी रह चुका है। उसने मुझे बताया कि घोड़ों और घुडदौड का पूरा पूरा ज्ञान होने पर भी वह रुपया नहीं कमा सका। फिर भी सच्चाई यह है कि मूर्ख लोग प्रति वर्ष १६० करोड़ डॉलर घोड़ों पर बरबाद कर देते हैं। यह रकम १९१० के हमारे

राष्ट्रीय ऋण की छः गुनी है। बुकमेकर ने मुझे यह भी बताया कि यदि उसका कोई शत्रु है जिससे वह घृणा करता है और जिसे वह बरबाद करना चाहता है तो उसे घुड़दौड़ का चस्का लगा देना ही वह सबसे अच्छा उपाय समझता है। जब मैंने उससे पूछा कि टिप्स्टर शीट् के अनुसार रेस में दॉव लगाने वालों का क्या होगा? तो, उत्तर में उसने बताया कि "उस तरीके से खेलने से तो आपकी अपनी टकसाल हो, तो भी आप हार जाएँगे।

यदि हमें जुआ खेलना ही है तो थोड़ी चालाकी बरतनी चाहिये। हमें, अपने विरुद्ध जो कठिनाइयाँ हैं उन्हें जान लेना चाहिए। पर कैसे? इसके लिये आप ओज़वॉल्ड जेकोबी की 'हाउ टू फिगर द ओड्स' नामक पुस्तक पढ़िये। यह लेखक ब्रिज तथा पोकर (खेल) में प्रवीण है, और एक उच्च कोटि का गणितज्ञ है। यह एक पेशेवर अंकशास्त्री है तथा बीमे की तालिका बनाता है। उस पुस्तक के दो सौ पन्द्रह पृष्ठों में यही बताया गया है कि घोड़े, रोलेट, क्रेप्स, स्लोट मशीन, ड्रा पोकर, स्टडपोकर, कॉन्ट्रेक्ट ब्रिज, ओक्सन पिनोकल, स्टॉक मार्केट आदि पर पैसा लगाने में आपके खतरे क्या हो सकते हैं? यह पुस्तक आपकी अन्य बीसियों प्रवृत्तियों तथा वैज्ञानिक एवं गणित-गत पहलुओं के बारे में जानकारी कराती है। यह पुस्तक आपको यह बताने का बहाना नहीं करती कि जुआ खेल कर पैसा कैसे कमाया जाय? लेखक का उसमें कोई स्वार्थ नहीं। वह तो केवल आपको यही बताता है कि जुए के उन सभी सामान्य रास्तों में आपकी सफलता के मार्ग में क्या क्या रुकावटें आ सकती हैं? पुस्तक में लिखी, उन रुकावटों को देख कर आप बेचारे उन जुआरियों पर जरूर तरस खाएँगे जो अपने पसीने की कमाई, घोड़ों, पत्तों, डाइस, अथवा स्लोट मशीन पर झोंक देते हैं। यदि आपको क्रेप बेंधने, पोकर खेलने, या घोड़ों पर पैसा लगाने का शौक हो तो इस पुस्तक में उनसे बचने के हजारों उपाय बताए गए हैं। इसे पढ़िये। आखिर इस पर खर्च ही कितना होता है।

नियम ११ — यदि आप अपनी वित्तीय अवस्था न सुधार सकें, तो, स्वयं अपने पर कृपा करके, जो बात बदल नहीं सकती उसके लिए रोष मत कीजिये।

यदि हमारे लिए अपनी वित्तीय अवस्था को सुधारना सम्भव न हो तो हम कम से कम उस अवस्था के प्रति अपने मानसिक रवैये को तो सुधार ही सकते हैं। ध्यान रखिये कि दूसरे भी कई ऐसे लोग हैं जिनकी अपनी वित्तीय चिन्ताएँ हैं। हमें चिन्ता होती है क्योंकि हम अमुक-व्यक्ति की बराबरी नहीं कर पाते। किन्तु शायद यह नहीं जानते कि उस व्यक्ति की भी जिसकी हम बराबरी करने जा रहे हैं, यही चिन्ता है।

अमेरिका के कुछ इतिहास-प्रसिद्ध व्यक्तियों को भी वित्तीय चिन्ताओं का सामना करना पड़ा था। लिंकन तथा वॉशिंगटन, दोनों ही को, प्रेसिडेन्टपद ग्रहण करने जाने के लिये खर्चे का रुपया उधार लेना पड़ा था। यदि हमें इच्छित वस्तु न मिले तो भी हमें कभी अपने समय और मनःस्थिति को चिन्ता एवं रोष से कटु

नहीं बनाना चाहिये। हमें उस विषय में दार्शनिकता का रवैया अपनाना चाहिए। रोम के एक प्रसिद्ध दार्शनिक सिनेका ने कहा है कि "यदि आप अपने वर्तमान से सन्तुष्ट नहीं हैं तो सारे संसार को पाकर भी आप सदा दुःखी ही रहेंगे।"

हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि चाहे हम सारे अमेरिका देश के मालिक ही क्यों न बन जाएँ और केवल अकेले ही उस वैभव को क्यों न भोगें, दिन में तीन से अधिक बार भोजन नहीं कर सकते। तथा रात में एक से अधिक बिस्तर पर नहीं सो सकते।

वित्तीय चिन्ताओं को दूर करने के लिये हमें इन ग्यारह नियमों का पालन करना चाहिये:—

(१) तथ्यों को कागज पर उतार लीजिये।
(२) ऐसा बजट बनाइये जो आपकी आवश्यकताओं के साँचे में ढल जाए।
(३) विवेक से खर्च करना सीखिये।
(४) आय-वृद्धि के साथ अपना सरदर्द मत बढ़ाइये।
(५) आपको कभी उधार भी लेना पड़े तो उस दिन के लिए अपनी साख बनाए रखिये।
(६) बीमारी, आग तथा संकटकालीन खर्चे की व्यवस्था रख कर अपने को सुरक्षित रखिये।
(७) अपनी विधवा पत्नी के लिये नकद बीमा रकम मत छोड़िये।
(८) अपने बच्चों को पैसे का आदर करना सिखाइये।
(९) यदि सम्भव हो तो व्यजन बना कर अतिरिक्त आमद बनाइये।
(१०) कभी जुआ मत खेलिये।
(११) यदि अपनी वित्तीय अवस्था को सुधारना सम्भव न हो, तो, अपने पर कृपा कर, जो बदल नहीं सकता उसको लेकर रोष मत कीजिये।

☆

भाग १०

मैंने चिन्ता पर विजय कैसे पाई

३२. सच्ची कहानियाँ

छः बड़ी विपत्तियों ने मुझ पर एक साथ हमला बोल दिया था

लेखक : सी. आई. ब्लेकवुड

ब्लेकवुड – डेविस बिजनेस कॉलेज के मालिक।
ओक्लाहोमा शहर, ओक्लाहोमा।

सन् १९४३ के ग्रीष्म की बात है, मुझे लगा जैसे समूचे संसार की चिन्ताएँ मुझ पर आ पड़ी हैं।

चालीस वर्ष से भी अधिक समय मैंने सामान्य, निश्चिन्त जीवन बिताया है। यदि कठिनाइयाँ थीं, तो वही सामान्य जो किसी भी गृहस्थ अथवा व्यापारी के साथ होती हैं। मैं आमतौर पर उन मुश्किलात का आसानी से सामना कर लेता। किन्तु यकायक धड़ाधड़ छः महान विपत्तियाँ एक साथ आ धमकीं, इसलिए मैं रात भर बिस्तर पर इधर उधर करवटें लेता रहता तथा दिन निकलता देख कर भयभीत हो उठता, क्योंकि मेरे, सामने छः बड़ी चिन्ताएँ मुँह फैलाए मुझे निगलने खड़ी थीं।

(१) चूंकि सभी विद्यार्थी युद्ध में जाने लगे थे, मेरे 'बिजनेस – कॉलेज' की नींव वित्तीय कठिनाइयों के कारण हिल गई थी। अधिकांश लड़कियाँ प्रशिक्षण प्राप्त किये बिना ही युद्ध सम्बन्धी कारोबार में काम करके, प्रशिक्षित विद्यार्थियों से भी अधिक पैसा कमा लेती थीं।

(२) मेरा बड़ा लड़का लड़ाई में था इसलिए मेरा हृदय चिन्ता से उतना ही व्यग्र था जितना कि किसी भी सामान्य पिता का होता है जब उसके बच्चे युद्ध में गए हों।

(३) ओक्लाहोमा शहर के अधिकारियों ने विमान-स्थल के हेतु बहुत बड़े भू-भाग पर कब्जा करने की कार्यवाही शुरू कर दी थी। मेरा घर जो मेरी पैतृक सम्पत्ति था, उसी भू–भाग के मध्य में स्थित था। मैं जानता था कि मुझे उसके मूल्य का केवल दसवाँ भाग ही मिलेगा, किन्तु दुर्भाग्यपूर्ण बात यह थी कि मुझे अपने घर से हाथ धोने पड़ते। आवास की तंगी के कारण यह भी आशंका थी कि, अपने छः व्यक्तियों के परिवार को सिर छिपाने के लिए कोई दूसरा घर शायद ही मिले। मुझे भय था कि कहीं खेमें में न रहना पड़े। मुझे यहाँ तक चिन्ता थी कि मैं कोई तम्बू भी खरीद सकूँगा या नहीं!

(४) मेरे घर के पास पानी की नहर खोदी गई थी। फलस्वरूप मेरी जमीन पर जो कुआँ था सूख गया था। नया कुआँ खोदने का अर्थ था पाँच सौ डालर का खून! क्योंकि वह जमीन मेरे कब्जे से जाने वाली थी। दो माह तक हर सवेरे अपने पशुओं के लिए बाल्टियों में पानी लाना पड़ा था। और मुझे आशंका थी कि जब तक लड़ाई चलेगी, मुझे उस काम से छुटकारा नहीं मिलेगा।

(५) मैं अपने बिजनेस-स्कूल से दस मील के फासले पर रहता था और मेरे पास बी श्रेणी का पेट्रोल कार्ड था इसलिए स्पष्ट था कि मुझे नए टायर नहीं मिलेंगे। और मुझे यह भी चिन्ता रहती थी कि अपनी पुरानी फोर्ड गाड़ी के पुराने और घिसे टायरों के जवाब दे देने पर अपने काम पर कैसे जाऊँगा!

(६) मेरी सबसे बड़ी लड़की समय से एक वर्ष पूर्व ही हाई स्कूल का अध्ययन समाप्त कर चुकी थी। उसकी कॉलेज जाने की इच्छा थी किन्तु मेरे पास कॉलेज भेजने के लिए पैसा नहीं था। मैं जानता था कि कॉलेज नहीं जा पाने पर उसका दिल टूट जायगा। पर क्या करता!

एक दिन दोपहर को जब मैं अपनी चिन्ताओं में डूबा हुआ था, मैंने उन्हें एक कागज पर उतार लेने का निश्चय किया। मैं समझता था कि दुनिया में मुझ से अधिक चिन्ताएँ किसी को भी नहीं होंगी। मैं ऐसी चिन्ताओं से कभी नहीं डरता, जिनका हल निकालने के लिए मुझे संघर्ष करने का सुयोग मिलता हो। किन्तु मेरी वे सभी चिन्ताएँ अपने वस से सर्वथा परे थीं। मैं उनको सुलझाने के लिए कुछ नहीं कर सका और इसलिए अपनी मुसीबतों की सूची टाईप कर ली। उस बात को हुए कई महीने बीत गए। मैं भूल ही गया कि मैंने कोई सूची भी तैयार की थी। अठारह महीनों के बाद अपनी फाइलों को उलटते समय मुझे उन छः बड़ी समस्याओं की सूची मिली, जो कभी मेरे स्वास्थ्य के लिए एक खतरा बन गई थीं। मैंने बड़े चाव से उन्हें पढा और तब कहीं जाकर मुझे अपनी उन समस्याओं के खोखलेपन का भान हुआ। उन समस्याओं का क्या हुआ सो देखिये—

(१) मेरे बिजनेस-कॉलेज के बन्द हो जाने की जो आशंका थी वह निर्मूल सिद्ध हुई क्योंकि सरकार ने भूतपूर्व सैनिकों को प्रशिक्षण देने के लिए, बिजनेस-कॉलेज को सहायता देना आरम्भ किया और मेरा कॉलेज प्रशिक्षार्थियों से खचाखच भर गया।

(२) अपने लड़के के सम्बन्ध में मेरी जो चिन्ताएँ थीं वे भी निर्मूल सिद्ध हुईं क्योंकि उसका युद्ध में बाल भी बाँका नहीं हुआ था।

(३) विमान-स्थल के प्रयोग के लिए मेरी जायदाद पर सरकारी कब्जा हो जाने की चिन्ता भी व्यर्थ रही, क्योंकि मेरे फार्म से एक मील के फासले पर ही तेल निकल आया था और उसकी कीमत इतनी बढ गई थी कि विमान-स्थल के लिए उसे खरीदना एक बहुत महँगा सौदा था।

(४) अपने पशुओं को पिलाने के लिए कुएँ में आवश्यक पानी नहीं रहा था, इसकी भी मुझे चिन्ता थी। किन्तु जब मुझे विश्वास हो गया कि फार्म पर सरकारी अधिकार अब नहीं होगा, तो मैंने उचित रकम खर्च कर एक गहरा कुआँ खुदवा लिया, जिससे खूब पानी मिलने लगा।

(५) गाड़ी के टायरों के विषय में मेरी चिन्ता भी बेकार रही क्योंकि मरम्मत करने तथा सावधानी से गाड़ी चलाने के कारण किसी तरह टायर चल निकले।

(६) अपनी लड़की की शिक्षा के विषय में जो चिन्ता थी वह भी बेकार रही क्योंकि कॉलेज खुलने के साठ दिन पूर्व एक चमत्कार की तरह मुझे हिसाब ऑडिट करने का काम मिल गया था जिसे मैं स्कूल से बाहर अतिरिक्त समय में कर सकता था और उस आय से मेरे लिए अपनी लड़की को समय पर कॉलेज भेजना सम्भव हो गया।

मैंने कई बार लोगों को यह कहते सुना था कि जिन बातों को लेकर हम चिन्तित, क्षुब्ध एवं क्रुद्ध रहते हैं, उनमें से ९०% कभी नहीं होतीं। किन्तु इस मान्यता के महत्त्व को मैं तभी समझा, जब मैंने अठारह वर्ष पूर्व टाइप की गई उन चिन्ताओं की सूची को देखा।

मैं भगवान को धन्यवाद देता हूँ कि मुझे, चाहे व्यर्थ ही क्यों न हो उन छः भयानक चिन्ताओं से संघर्ष करने का सुयोग मिला। उन अनुभवों ने मुझे जो सीख दी उसे मैं कभी नहीं भूलूँगा। उससे मुझे उन घटनाओं के विषय में, जो न कभी घटी न घटने वाली हैं और जो हमारे नियन्त्रण के परे हैं, दुखी एवं क्रुद्ध होने की मूर्खता का भान हो आया।

स्मरण रखिये – 'आज' वही 'कल' है जिसकी आपने 'कल' चिन्ता की थी। मन ही मन सोचिए "मैं कैसे कह सकता हूँ कि जिस बात के लिए मैं चिन्तित हूँ वह सचमुच होगी ही!"

केवल एक घण्टे में ही मैं घोर आशावादी बन सकता हूँ

लेखक — प्रसिद्ध अर्थशास्त्री रोजर डब्ल्यू बेब्सन

बेब्सन पार्क वेलेजली हिल्स मेसेचुसेट्स

मैं अपनी परिस्थितिजन्य उदासी और चिन्ता को खदेड़ कर केवल एक घण्टे में घोर आशावादी बन सकता हूँ, पर कैसे? मैं अपने पुस्तकालय में चला जाता हूँ, आँखें बन्द कर लेता हूँ और पुस्तकों की उस अल्मारी की ओर जाता हूँ जिस में केवल इतिहास सम्बन्धी पुस्तकें ही रखी होती हैं। आँखें बन्द कर के मैं कोई सी भी पुस्तक उठा लेता हूँ, बिना जाने – बूझे कि अमुक पुस्तक कौनसी है – प्रेस्कोट की

'कोन्क्वेस्ट ऑफ मेक्सिको' है या सुटोनिअस की 'लाइव्ज ऑफ ट्वेल्व सीजर्स' मैं ऑखें बून्द किए किसी भी पृष्ठ पर पुस्तक को खोल लेता हूँ और तब ऑखें खोल कर उसे एक घण्टे तक पढता हूँ। ज्यों ज्यों मैं पढता जाता हूँ मुझे स्पष्ट ज्ञात होने लगता है कि ससार सदा से ही क्लेप एव सताप से पीड़ित रहता आया है। और मानव सभ्यता विनाश के कगारे पर लड़खड़ाती अन्तिम धक्के की प्रतीक्षा करती रही है। इतिहास के पृष्ठ साफ साफ युद्ध की विभीषिका दुष्काल, दैन्य, महामारी तथा मानव की मानव के प्रति की गई अमानुषिकता की क्रूर कहानी कहता आया हैं। एक घण्टे तक इतिहास पढ लेने के बाद मुझे ज्ञात हो जाता है कि आज की बुरी परिस्थितियाँ पहले की परिस्थितियों से कहीं ज्यादा अच्छी हैं। इस प्रकार के विश्लेपण से मैं अपने वर्तमान सकटों का सम्यक् निरूपण कर, सार रूप में महसूस करने लगता हूँ कि ससार लगातार अच्छाई की ओर बढता चला आ रहा है। यह विचारप्रणालि बहुत ही महत्वपूर्ण है। इतनी महत्वपूर्ण कि इस पर तो पूरा का पूरा परिच्छेद लिखा जाना चाहिए। दस हजार वर्षों का सिंहावलोकन कीजिए और फिर आपको ज्ञात होगा कि काल सापेक्ष दृष्टि से आपके सकट कितने नगण्य हैं।

हीन भावना से मेरा पिंड कैसे छूटा

लेखक—एल्मर टॉमस

अमेरिका की सिनेट में ओक्लाहोमा के प्रतिनिधि

अपनी पन्द्रह वर्प की अवस्था में, मैं, निरन्तर भय, चिन्ता एव सकोच से आक्रान्त रहता था। अवस्था की दृष्टि से मैं अत्यन्त लम्बा था और छडी की भॉति पतला भी। लम्बाई छः फीट दो इन्च थी किन्तु वजन केवल एक सौ अठारह पौन्ड ही था। अपनी लम्बाई के बावजूद भी मैं कमजोर था तथा अपने सहपाठियो के साथ बेस-बॉल तथा अन्य भाग-दौड के खेलों में बराबरी नहीं कर पाता था। वे मेरी खिल्ली उड़ाते और मुझे हेचफेस कहते। इससे मैं इतना चिन्तित एव सकोची बन गया कि किसी व्यकि से मिलने मात्र से घबराने लगता। यों भी मैं कभी किसी से नहीं मिलता था क्योंकि हमारा घर जनपथ से हट कर, कुछ दूरी पर स्थित था और चारों ओर से घने जंगली वृक्षों से आच्छादित था। इसलिए सारा का सारा हफ्ता प्रायः बिना किसी दूसरे व्यक्ति को देखे निकल जाता था। अपने आसपास माता-पिता और भाई-बहनों के सिवा अन्य किसी को भी नहीं देखता था।

यदि मैंने भय एव चिन्ताओं को अपने पर हावी होने दिया होता तो मुझे जीवन में कभी भी सफलता नहीं मिलती। हर दिन हर घड़ी मैं अपने लम्बे पतले तथा कमजोर शरीर पर विचार करता रहता और किसी अन्य बात पर मुश्किल से सोच

पाता। मेरा क्लेश एव भय इतना उत्कट हो उठा कि क्या बताऊँ! माँ मेरी स्थिति को अच्छी तरह समझती थी क्योंकि वह स्कूल में शिक्षिका रह चुकी थी। इसलिए उसने मुझे एक दिन कहा – 'बेटे, तुम्हें पढना लिखना होगा और अपने दिमाग के बल पर ही कमा कर खाना होगा, क्योंकि तुम्हारा शरीर सदैव तुम्हारी राह में रोड़ा बना रहेगा।

चूँकि मैं जानता था कि मेरे माता–पिता की आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं थी कि वे मुझे कॉलेज में भेजें, मैंने अपना रास्ता आप बनाने का निश्चय किया और सरदी के मौसम में मैंने ओपोसम स्कंक, मिंक, रेकून आदि कई पशुओं को फन्दे में फॉस लिया और बसन्त तक उनकी खालों को चार डॉलर में बेच दिया। उस रकम से मैंने दो छोटे सूअर खरीद लिए। उन सूअरों को खूब खिलाया पिलाया और बाद में चालीस डालर में बेच दिया। उन पैसों को लेकर मैं डेनविली इन्डियाना के सेन्ट्रल नोरमल कॉलेज मे चला गया। वहाँ मैं प्रति सप्ताह एक डॉलर और चालीस सेन्ट भोजन के देता और पचास सेन्ट कमरे के किराये के। वहाँ मैं माँ की बनाई हुई मटमैली कमीज पहना करता था। उसने मटमैले रग की कमीज इसलिए बनाई थी कि वह जल्दी मैली न हो। पिताजी के पुराने सूट भी मैं पहनता था। पर वे कपडे मुझे ठीक से बैठते नहीं थे। उनके वे पुराने जूते जिनके दोनों ओर एलास्टिक लगे हुए थे, इतने ढीले थे कि चलते समय पैर उनमें से निकल जाते थे। इससे मुझे अन्य लड़कों से मिलने–जुलने में भी क्लेश होता था। इसलिए मैं अपने कमरे में अकेला बैठा अध्ययन करता रहता। मेरी उत्कट अभिलाषा थी कि कुछ अच्छे कपड़े खरीद लूँ जो मुझे ठीक बैठें तथा जिनके पहनने से मुझे शरमिंदा न होना पड़े।

पर कुछ ही दिनों बाद चार ऐसी घटनाएँ घटीं जिनकी वजह से मुझे अपने हीन–भाव एव चिन्ताओं पर काबू पाने में बहुत सहायता मिली। उन घटनाओं में से एक ने मुझ में अपूर्व साहस, आशा और विश्वास का भाव भर दिया तथा मेरे शेष जीवन को बिल्कुल ही बदल दिया। उन घटनाओं का मैं यहाँ सक्षेप में उल्लेख कर देना चाहूँगा।

(१) आठ हफ्ते उस नोरमल स्कूल में बिताने के पश्चात् मैंने परीक्षा दी और मुझे देहात के सार्वजनिक स्कूल में पढाने के लिए तीसरी श्रेणी का प्रमाण पत्र मिल गया। वास्तव में यह प्रमाण पत्र केवल छ माह के लिए ही था और यह इस बात का भी प्रमाण था कि दूसरे लोग भी इस दुनिया में हैं जो मुझमें अपनी आस्था रखते हैं। माँ को छोड़ कर किसी अन्य से आस्था प्राप्त करने का यह पहला अवसर था।

(२) हेपी होलो के एक देहाती स्कूल बोर्ड ने मुझे दो डॉलर प्रति दिन पर नौकरी दे दी थी। मुझे वहाँ महीने में चालीस डॉलर मिलने लगे। (छुट्टियों के अलावा) यह, मुझ में दूसरों की आस्था का एक और प्रमाण था।

(३) जैसे ही मुझे पहला चेक मिला मैंने ढग के कपड़े खरीदे ताकि उन्हें पहनने से शरमिन्दा न होना पड़े। उस सूट को पा कर जितना आनन्द मुझे उस समय हुआ उतना शायद अब दस लाख डॉलर पाकर भी नहीं हो सकता।

(४) हीनभाव और सकट से सघर्ष करने में पहली महत्वपूर्ण सफलता मुझे बेन ब्रिज इन्डियाना में होने वाले वार्षिक पुटनम–काउन्टी–फेअर (मेला) में मिली थी और तब मेरे जीवन ने सचमुच ही करवट बदली थी। मेले मे होने वाली सार्वजनिक –भाषण–प्रतियोगिता में भाग लेने के लिए मेरी मॉ ने आग्रह किया। मेरे लिए तो यह सब सोचना ही हिमाकत करने के समान था। सभा में बात करना तो दूर रहा, मुझमें तो किसी अकेले व्यक्ति से बात करने का साहस भी नहीं था। किन्तु मेरी मॉ का मुझ में पूरा पूरा विश्वास था। वह मेरे भविष्य के विषय में बडे बड़े सपने देखा करती थी। वह केवल मेरे लिए ही जी रही थी। उसकी आस्था से ही मुझे प्रतियोगिता में भाग लेने की प्रेरणा मिली थी। मेरे भाषण का विषय था–अमेरिका की ललित एव मुक्त कलाएँ। इस विषय पर बोलने की मुझ में जरा भी योग्यता न थी।

स्पष्ट बात तो यह थी कि जब मैं भाषण तैयार करने लगा, मुझे यह भी पता नहीं था कि मुक्त कलाएँ, कहते किसे हैं। किन्तु, चूँकि श्रोतागण स्वय भी वह अर्थ नहीं समझते थे, मुझे विशेष कठिनाई नहीं हुई। मैंने अपने लच्छेदार भाषण को कंठस्थ कर लिया और सैंकडों बार तोते के समान उसे दुहराया और उसका अभ्यास किया। अपनी मॉ को प्रसन्न करने के लिए मैं इतना आतुर था कि भावातिरेक में धड़ल्ले से सब कुछ बोल गया और मुझे जैसे तैसे प्रथम पारितोषिक मिल गया। जो कुछ हुआ उसे देख कर मैं चकित रह गया। भीड़ में तालियों की गड़गड़ाहट गूँज उठी। वही लडके जो कभी मेरी खिल्ली उडाया करते थे और मुझे 'हेच-फेस' कह कर चिढाया करते थे, आकर मेरी पीठ थपथपाने लगे और कहने लगे, "हम जानते थे एल्मर, तुम जरूर सफल होगे। मेरी मॉ मुझसे लिपट कर सिसकियाँ भरने लगी। आज जब मैं अतीत का पर्यवेक्षण करता हूँ तो महसूस करता हूँ कि वह सफलता मेरे जीवन की जबरदस्त करवट थी। स्थानीय पत्रों ने मुखपृष्ठ पर मेरे विषय में लेख छापे और मेरे भविष्य के बारे में बडी बड़ी बातें कहीं। उस सफलता के कारण स्थानीय लोग मुझे जानने लग गये और मेरा सम्मान् बढ गया। सबसे महत्वपूर्ण बात जो हुई वह यह थी कि मेरा कलेजा गजभर का हो गया। आज मैं महसूस करता हूँ कि यदि मैं वह प्रतियोगिता न जीतता तो कदाचित् अमेरिका की सिनेट का सदस्य न बन पाता। उस सफलता से मेरी दृष्टि पैनी, और दृष्टिकोण विस्तृत हो गया। मैं जान गया कि मुझ में भी वे गुण हैं, जिनके बारे में मैंने कभी स्वप्न में भी नहीं सोचा था। सबसे प्रधान बात यह हुई कि जो पारितोषिक मुझे प्रतियोगिता में मिला था वह सेन्ट्रल नोरमल कॉलेज के एक वर्ष की छात्रवृत्ति के रूप में था।

इससे मेरी आगे पढने की लालसा उत्कट हो उठी। सन् १८९६ से १९०० तक की अवधि को मैंने अध्ययन के लिए निश्चित कर लिया। डिपाव विश्वविद्यालय के

खर्च को पूरा करने के लिए मैं वेटर का काम करता, भट्ठियाँ सभालता, दूब काटता, पुस्तकों की देखभाल करता, गरमी के दिनो में गेहूँ और धान के खेतों में काम करता तथा जहाँ सड़के बनतीं वहाँ कन्करीट बिछाता।

सन् १८९६ में मेरी अवस्था उन्नीस वर्ष की थी। मैंने विलियम जेनिगंज ब्रेयन को प्रेसिडेण्ट बनाने के लिए चुनाव आन्दोलन मे २८ भाषण दिए। ब्रेयन के पक्ष में बोलने के उत्साह के कारण मुझ में राजनीति में प्रवेश करने की इच्छा तीव्र हो उठी। इसलिए मैंने डि पाव विश्वविद्यालय में कानून और सार्वजनिक वक्तृता का अध्ययन शुरू कर दिया और १८९९ मे 'इडियाना पोलीस' में होनेवाली वाद-विवाद प्रतियोगिता मे बटलर कॉलेज के विरुद्ध अपने कॉलेज का प्रतिनिधित्व किया। वादविवाद का विषय-यह था कि, अमेरिकन सिनेट के सदस्य सीधे जनता से चुने जाने चाहिएँ। मैं इस प्रतियोगिता में जीत गया। उसके अलावा भी मैंने कई अन्य भाषण प्रतियोगिताएँ जीतीं और कुछ ही दिनों में कॉलेज की 'मिराज' तथा विश्व-विद्यालय की 'दी पिलाडियम' पत्रिका का प्रधान सपादक बन गया।

डि पाव से ए. बी. की डिग्री हासिल कर लेने के बाद मैं हेरिस ग्रीले की सलाह पर ओक्लाहोमा के नये प्रदेश में गया। जब किओवा, कोमाच, और एपाच इण्डियन रिजर्वेशन की स्थापना हुई तब मैंने एक मुकद्दमा लिया और ओक्लाहोमा के लाटन नगर में एक लॉ ऑफिस खोल दिया। मैं तेरह वर्ष तक ओक्लाहोमा राज्य की सिनेट का और चार वर्ष तक हाउस ऑफ कॉंग्रेस का सदस्य रहा। पचास वर्ष की अवस्था मे मेरी जीवनभर की अभिलाषा पूरी हुई और मैं ओक्लाहोमा से अमेरिकी सिनेट का सदस्य चुन लिया गया। इस पद पर मैं ४ मार्च सन १९२७ से बना हुआ हूँ। १६ नवम्बर १९०७ में जबसे ओक्लाहोमा और इण्डियन टेरिटरीज, ओक्लाहोमा राज्य के अग बने हैं, तब से मैं बराबर पार्टी द्वारा राज्य सिनेट, कॉंग्रेस तथा अमेरिकन सिनेट के लिए नामजद किया जाता रहा हूँ।

यह कहानी मैंने अपने मुँह मियाँ मिट्ठू बनने की इच्छा से नहीं कही है क्योंकि मैं जानता हूँ कि मेरी सफलताओं में किसी अन्य को क्या रूचि हो सकती है? इस कहानी के कहने में मेरा वस्तुत' यह आशय है कि इससे किसी गरीब लड़के को, जो सकोचशील हो तथा जो हीन–भाव का शिकार हो, नवीन साहस, प्रेरणा एव विश्वास प्राप्त हो सके।

(सम्पादकीय टिप्पणी – मजे की बात तो यह है कि युवावस्था मे बेढगे कपड़े पहननेवाले एल्मेर टॉमस बाद मे अमेरिकन सिनेट के सदस्यों में सबसे अच्छी पोशाक पहननेवाले व्यक्ति माने गये।)

मैं अल्लाह के बागीचे में रहता था

लेखक : आर. वी. सी. बोडले

(ऑक्सफोर्ड के बोडलिअन पुस्तकालय के संस्थापक सर टॉमस बोटले के उत्तराधिकारी)

आप विढ इन द सहारा, दी मेसेन्जर तथा अन्य चौदह ग्रथों के लेखक हैं।

१९१८ में मै अपनी जानी पहचानी दुनिया को छोड़कर उत्तर-पश्चिमी अफ्रिका के सहारा प्रदेश में जो अल्लाह का बागीचा कहा जाता है, अरबों के साथ रहने चला गया। मैं वहाँ सात वर्षो तक रहा। वहाँ मैंने वहाँ की आदिम जातियो की भाषा सीखी। मै उनके जैसे ही कपडे पहनता, वैसा ही भोजन करता और उन्हीं के ढँग से रहता। बीस शताब्दियाँ बीत गई पर उनका रहन-सहन विशेष नहीं बदला। मैंने कुछ भेड़ें ले लीं और अरबों के साथ खेमों में जमीन पर सोने लगा। मैंने उनके धर्म का भी व्यापक अध्ययन किया, और बाद मे 'मेसेन्जर' नाम की पुस्तक, मोहम्मद पर लिखी।

घुमक्कड़ बद्दुओं के साथ बिताए गए वे सात वर्ष मेरे जीवन के गहरे सन्तोष एव शान्ति के वर्ष थे।

मुझे इस नए जीवन के पहले ही कई महत्वपूर्ण एव निराले अनुभव हो चुके थे। मैं पेरिस मे पैदा हुआ था। मेरे माता-पिता अग्रेज थे और नौ वर्ष तक फ्रॉस में रहे थे। तदुपरान्त एटन तथा रॉयल मिलिट्री कॉलेज सेन्डहर्स्ट में मेरा अध्ययन हुआ था। उसके बाद छः वर्ष मैंने एक ब्रिटिश सैनिक अधिकारी की हैसियत से भारत में बिताए थे। वहाँ मैं पोलो खेलता, शिकार पर जाता, हिमालय प्रदेश की खोज करता और साथ ही सैनिक कर्तव्य भी निभाता चलता। मैं प्रथम विश्वयुद्ध में लड़ा था और उसके उपरान्त सहकारी सैनिक एटेची की हैसियत से पेरिस कॉन्फ्रेंस मे भेजा गया था। वहाँ जो भी मैंने देखा उससे मुझे बडी निराशा हुई और दिलको गहरा धक्का लगा। लड़ाई के चार वर्षों के खून-खच्चर के दौरान में मेरा विश्वास था कि हम सभ्यता की रक्षा के लिए लड रहे हैं। किन्तु पेरिस कॉन्फ्रेंस में मैंने स्वार्थी राजनीतिज्ञों को दूसरे विश्वयुद्ध के लिए पृष्ठ-भूमि तैयार करते देखा। प्रत्येक राष्ट्र अपने लिए जितना अधिक हो सके, हड़प लेना चाहता था। वे राष्ट्रीय शत्रुओं को जन्म दे रहे थे तथा गुप्त राजनीतिक चालों का पुनरुत्थान कर रहे थे।

मैं युद्ध, सेना, तथा समाज से तंग आ गया था। अपने जीवन में पहली बार मैंने तारे गिनते रात काटी। केवल इसी चिन्ता में कि क्या करूँ! इधर लॉयड जार्ज ने मुझे राजनीति में प्रवेश करने की सलाह दी। मै उनकी सलाह को कार्यरूप देने ही वाला था कि एक विचित्र बात हुई। उसने आने वाले सात वर्षों के लिए मेरे जीवन का स्वरूप और दिशा निश्चित कर दी। यह सब उस बातचीत का परिणाम था जो दो सौ सेकेन्ड से भी कम समय तक चली थी। यह बातचीत 'टेड लारेन्स'

था लॉरेन्स अरेबिया के साथ हुई थी। यह व्यक्ति प्रथम महायुद्ध की अत्यन्त रोमांटिक और रंगीन उपज था। लॉरेन्स अरबों के साथ रेगिस्तान में रहे थे। और मुझे भी उन्होंने वही करने की सलाह दी। यह बात विचित्र-सी लगी।

फिर भी, चूँकि मैंने सेना छोड़ देने का निश्चय कर लिया था, कुछ काम तो करना ही था। जन-सेवा में मेरे जैसे व्यक्ति को कोई भी लेना नहीं चाहता था, क्योंकि मैं सेना का अधिकारी रह चुका था और दूसरी बात यह भी थी कि भर्ती के बाजार में बेकारों की भीड़ लगी हुई थी। इसलिए मैंने वही किया जैसा लॉरेन्स ने सुझाया था। मैं अरबों के साथ रहने चला गया और मुझे इससे बड़ी प्रसन्नता हुई। अरबों ने मुझे चिन्ता पर काबू पाना सिखाया। अन्य धार्मिक मुसलमानों की तरह वे भी भाग्यवादी हैं। उनका विश्वास है कि कुरान में मोहम्मद द्वारा लिखा प्रत्येक शब्द अल्लाह का दिव्य संदेश है। कुरान में कहा गया है कि 'अल्लाह ने तुम्हारा और तुम्हारे कर्मों का निर्माण किया है।' इस बात का वे अक्षरशः पालन करते हैं। और इसीलिए वे जीवन को धैर्य से स्वीकार कर लेते हैं। वे किसी भी विघ्न बाधा के आने पर अनावश्यक रूप से क्रुद्ध नहीं होते और जल्दबाजी नहीं करते। वे जानते हैं कि जैसी अल्लाह की मर्जी होगी, होकर रहेगा और अल्लाह के सिवा उसे कोई नहीं बदल सकता। फिर भी इसका अर्थ यह नहीं कि आपत्ति पड़ने पर वे हाथ पर हाथ धरे बैठे रहते हैं और कुछ नहीं करते। दृष्टान्त स्वरूप मैं आपको उस भयानक झुलसा देने वाली गरम, शुष्क हवा तथा तूफान के अनुभव के बारे में बताऊँगा। इस तूफान का अनुभव मैंने उन दिनों किया जब मैं सहारा में रह रहा था। तीन रात और तीन दिन तक यह तूफान गरजता और दहाड़ता रहा। यह इतना तीव्र और भयानक था कि इसने सहारा की रेत को भूमध्यसागर के पार फ्रांस की 'रहोन वेली' में जा बिछाया। लू इतनी गरम थी कि मुझे लगता मानों मेरे सर के बाल झुलस रहे हों। मेरा गला सूख गया था, आँखें झुलस गई थीं और मेरे दाँतों में बालू भर गई थी। मुझे लगा जैसे मैं किसी शीशे की फैक्टरी में भट्टी के सामने विक्षिप्त-सा खड़ा हूँ। मैं विक्षिप्तता के इतना निकट पहुँच गया कि पूरा पागल बनने में थोड़ी-सी कसर रह गई थी। किन्तु अरबों को इससे कोई शिकायत नहीं थी। वे केवल विवशता से कंधे हिला देते और कहते "मेखतुब-भाग्य का लेखा।"

किन्तु जैसे ही तूफान रुका वे फिर अपने काम में लग गए। उन्होंने सभी मेमनों को काट डाला। क्योंकि वे जानते थे कि ऐसा न करने से दूसरे भी कई मर जाएँगे। इस प्रकार उन्होंने उन मेमनों की सभी माँ-भेड़ों को बचा लिया। मेमनों को काट देने के बाद वे गल्ले को पानी पिलाने दक्षिण की ओर ले गए। यह सब काम उन्होंने धैर्य से, बिना किसी चिन्ता, शिकायत के अथवा बिना अपनी हानि पर आँसू बहाए किया। उनके मुखिया ने कहा—खैर, समझो कि यह सब इतना बुरा नहीं हुआ

नहीं तो हम सभी भेड़ें खो बैठते। खुदा का शुक्र है कि चालीस प्रतिशत भेड़ें अब भी बची हुई हैं, जिनसे हम नई शुरूआत कर सकते हैं।

मुझे एक दूसरी घटना भी याद है–एक बार जब हम मोटर में रेगिस्तान का सफर कर रहे थे, गाड़ी के टायर ने जवाब दे दिया था। ड्राइवर अतिरिक्त टायर को ठीक करना भूल गया था और हमारे पास केवल तीन टायर ही रह गये थे। मैं बहुत बडबड़ाया, तमतमाया और क्रुद्ध हुआ और अरबों से पूछा कि अब क्या करें ? उन्होंने मुझे सान्त्वना देते हुए कहा कि गुस्सा होने से कुछ नहीं बनता, केवल गुस्सा ही बढ सकता है। अल्लाह की मर्जी से टायर फूटा है और इसलिए उसके बारे में कुछ भी नहीं किया जा सकता। तब हम वहाँ से रवाना हुए और पहिये की रीम पर बढने लगे। एकाएक दूसरी गाड़ी भी जूमीर करके बद हो गई। पेट्रोल खत्म हो गया था। मुखिया ने केवल यही कहा—'मेखतुब'। इस बार भी ड्राइवर को पर्याप्त पेट्रोल नहीं लेने पर उसे डॉटने के बजाय प्रत्येक व्यक्ति शान्त रहा और हम सब हँसते–गाते अपनी मंजिल पर पहुँच गए।

अरबों के साथ बिताए गए सात वर्षों ने मेरी यह धारणा दृढ कर दी कि अमेरिकन अथवा युरोप की तथाकथित सभ्यता के तीव्र एवं संकटमय जीवन के कारण ही लोग मनोरोगी, शराबी और विक्षिप्त बन जाते हैं।

जब तक मैं सहारा में रहा, चिन्ताओं से मुक्त रहा। अल्लाह के उस बागीचे में मैंने उस शुद्ध सन्तोष एव शारीरिक स्वास्थ्य को देखा जिसकी हम में से कई, तनाव एव नैराश्य को मिटाने के लिए खोज कर रहे हैं।

कई व्यक्ति भाग्यवाद पर भौं सिकोड़ते हैं। हो सकता है वे सही हों। किन्तु हमे समझना चाहिए कि प्रायः हमारा भाग्य निर्धारित रहता है। उदाहरणार्थ यदि मैंने सन् १९१९ के गरम अगस्त में दोपहर के बारह बज कर तीन मिनिट पर 'लॉरेन्स ऑफ अरेबिया' से बातचीत न की होती तो तब से जो वर्ष गुजरे हैं वे बिल्कुल और ही होते। अपने जीवन का सिंहावलोकन करने पर मुझे लगता है कि किस प्रकार उन घटनाओं से, जिन पर मेरा काबू नहीं था, जीवन बनता गया। अरब लोग उसे 'मेखतुब', किस्मत और अल्लाह की मर्जी कहते हैं। आप इसे जो भी चाहे कहें। निश्चय ही इसका विचित्र असर होता है। इसे मैं आज सहारा छोड़ने के सत्रह वर्ष उपरान्त भी महसूस करता हूँ। होनी के सामने सुखद समर्पण का वह ढग, जिसे मैंने अरबो से सीखा था आज भी निभाता आ रहा हूँ। इस दर्शन ने मेरी शिराओं को शान्त रखने मे, हजारों औषधियों से भी अधिक अच्छा काम किया है।

आप और हम मुसलमान नहीं हैं। हम भाग्यवादी भी नहीं होना चाहते, किन्तु यदि हमारे जीवन पर भी भयानक झुलसाने वाली हवाएँ चलें और हम उन्हें रोक न सकें, तो हमें भी होनी को स्वीकार कर, जो भी शेष रहे उसे ग्रहण कर लेना चाहिए।

वे पाँच विधियाँ जिनका मैं चिन्ता मिटाने के लिये प्रयोग करता हूँ

लेखक : प्रा. विलियम लियोन फेल्प्स

(मुझे येल के प्रा. विली फेल्प्स के साथ दोपहर का समय बिताने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उस बातचीत के दौरान में मैंने जो नोट्स लिए थे उनके आधार पर ये पाँच विधियाँ प्रस्तुत करता हूँ जिनका चिन्ता मिटाने के लिए वे प्रयोग करते हैं—)

(—डेल कारनेगी)

(१) जब मैं बारह वर्ष का था, मेरी आँखें बहुत खराब हो गई थीं। तीन चार मिनिट पढ़ने के उपरान्त मुझे ऐसा लगता जैसे कि मेरी आँखों में सुइयाँ चुभ रही हों। यहाँ तक कि जब मैं पढ़ता नहीं होता तब भी वे इतनी चौंधियाँ जातीं कि मैं खिड़की की तरफ भी नहीं देख पाता। मैंने न्यू हेवन और न्यूयॉर्क के सभी अच्छे डाक्टरों को दिखाया पर किसी से भी कोई सहायता नहीं मिली। एक दिन दोपहर के चार बजे मैं कमरे के अंधेरे कोने में कुर्सी पर बैठ गया और सोने की प्रतीक्षा करने लगा। मैं भयभीत और आशंकित हो उठा था कि कहीं मुझे शिक्षक का पेशा छोड़ कर पश्चिम में जाकर कबाड़ी न बनना पड़े। तब एक विचित्र घटना घटी जिससे यह स्पष्ट रूप से प्रकट हो गया कि, मस्तिष्क का शारीरिक बीमारियों पर कितना चमत्कारी प्रभाव पड़ता है। उन दुर्भाग्यपूर्ण सर्दियों में जब कि मेरी आँखें अत्यन्त खराब थीं, मैंने कुछ विद्यार्थियों की सभा में बोलने का निमन्त्रण स्वीकार कर लिया था। सभागृह, छत से लटकते हुए बड़ी प्रकाशमान गैस–बत्तियों से जगमगा रहा था। मेरी आँखें उन बत्तियों के प्रकाश में इतनी दुखने लगीं कि मच पर बैठे-बैठे मुझे जमीन की ओर देखने के लिए विवश होना पड़ा। पर जब मैं भाषण देने लगा तो मेरे तीस मिनट के भाषण के दौरान में मुझे कोई खास दर्द महसूस नहीं हुआ और मैं सीधा बिना आँखें झपकाए उनकी ओर देख सका। किन्तु जब सभा समाप्त हुई तो मेरी आँखों में फिर से दर्द होने लगा।

मैंने सोचा, यदि मैं अपने मस्तिष्क को दृढ़ता से किसी वस्तु पर केन्द्रित कर सकूँ तो तीस मिनट के लिए ही नहीं बल्कि पूरे एक सप्ताह के लिए ठीक हो सकता हूँ। क्योंकि अपने अनुभव से, शारीरिक व्याधि पर मानसिक आवेग की जीत मेरे लिए स्पष्ट हो गई थी।

बाद में समुद्र–यात्रा के समय भी मुझे ऐसा ही अनुभव हुआ। मेरी कमर में दर्द हो गया था। वह इतना भयानक था कि चलना भी दुश्वार हो गया था। जब मैं सीधा खड़ा होता तो बहुत पीड़ा होती। वैसी परिस्थिति में मुझे एक दिन जहाज पर भाषण देने का निमन्त्रण मिला। जैसे ही मैं भाषण देने के लिए खड़ा हुआ, मेरे शरीर की सारी पीड़ा और ऐंठन लुप्त हो गई। मैं सीधा खड़ा हो गया और सहज रूपसे

चल-फिर सका। एक घण्टे तक मैंने भाषण दिया। भाषण समाप्त होने पर मैं आसानी से अपने कमरे तक भी जा सका। मैंने सोचा कि मै ठीक हो गया हूँ किन्तु वह ठीक होना कुछ समय के लिए ही था। दर्द ने फिर से आ दबोचा।

इन अनुभवों ने मुझे मनुष्य की मानसिक अवस्था के व्यापक महत्त्व से परिचित कराया, और मुझे सिखाया कि जितना आनन्द जीवन से ले सको, ले लो। अतः अब मैं रोज इस तरह रहता हूँ मानों प्रत्येक दिन मेरे जीवन का प्रथम एव अन्तिम दिन हो। अब मैं दैनिक जीवन के क्रिया–व्यापार से बड़ा उत्साहित रहता हूँ। उत्साह की ऐसी तीव्र अवस्था में कोई भी चिन्तित नहीं रह सकता। शिक्षक के नाते मुझे अपने काम से लगाव है। मैंने 'अध्यापन का उत्साह' नामक पुस्तक भी लिखी है। अध्यापन कार्य मेरे लिए सदैव एक कलात्मक प्रवृत्ति रहा है। मेरे लिए यह केवल पेशा ही नहीं बल्कि उससे भी महत्त्वपूर्ण काम रहा है। मेरी इस में लगन है। जिस प्रकार एक चित्रकार चित्र बनाने मे सुख पाता है और गायक गाने में, उसी प्रकार मैं अध्यापन कर के सुख पाता हूँ। जब मैं सवेरे बिस्तर से उठता हूँ तो अत्यंत प्रसन्नता से अपने विद्यार्थियों के पहले समूह के विषय मे सोचता हूँ। मैं सदैव यह मानता आया हूँ कि जीवन में उत्साह की भावना ही सफलता का प्रमुख कारण है।

(२) मुझे यह भी ज्ञात हुआ है कि पुस्तक पढने में अपने को खो कर दिमागी चिन्ताओं को, खदेड बाहर किया जा सकता है। जब मैं उनसठ वर्ष का था मुझे एक अर्से तक स्नायु–विघटन का शिकार रहना पड़ा। उस दौरान में मैंने डेविड एलिस विल्सन की स्मृति–पुस्तक 'लाइफ ऑफ कारलाइल' पढना शुरू किया। उससे मुझे स्वास्थ्य–लाभ करने में बडी सहायता मिली, क्यों कि मैं पढने में इतना व्यस्त रहा कि अपने नैराश्य को सर्वथा भूल गया।

(३) दूसरी बार जब मैं बहुत खिन्न रहने लगा तो मैंने हर घड़ी अपने को शारीरिक रूप से व्यस्त रहने को मजबूर किया। मैं हर सवेरे टेनिस के पॉच छः खेल खेलता, तब नहा–धो कर भोजन करता। दोपहर को गोल्फ की अठारह बाजियॉ खेलता। एक रात तो मैं एक बजे तक नाचता रहा और पसीने से तर बतर हो गया। काम करने में मेरी बडी आस्था है। मुझे लगता है कि काम करने से खिन्नता और चिन्ता पसीने के साथ बह कर शरीर से निकल जाती हैं।

(४) मैंने उतावल, दौड़-धूप और तनाव की अवस्था में कार्य करने की मूर्खता कभी से छोड़ दी है। इस सम्बन्ध में मैंने हमेशा विल्बर क्रोस के दर्शन का प्रयोग करने का प्रयास किया है। जब वे कोनेक्टीकर के गवर्नर थे, उन्होंने बताया "जब मुझे कई काम एक साथ करने होते हैं, तो मैं एक घण्टे तक बैठ कर विश्राम कर लेता हूँ और बिना कुछ किए पाइप फूँकता रहता हूँ।

(५) मैंने यह भी सीखा है कि धैर्य और समय अपने ढग से हमारी कठिनाइयो को सुलझा देते हैं। जब मैं किसी बात को लेकर चिन्ता करता हूँ तो अपनी कठिनाइयो को अपने सही रूप में देखने का प्रयास करता हूँ।

म मन ही मन कहता हूँ कि "दो महीने के बाद तो मैं इस सकट के विषय मे चिन्ता करना बिल्कुल भूल ही जाऊँगा, फिर आज यह चिन्ता क्यो करूँ? जो रवैया मैं दो माह पश्चात् अपनाऊँगा उसे अभी से ही क्यों न अपना लूँ।

सक्षेप में ये हैं वे पॉच विधियाँ जिनके द्वारा प्रा. फेल्प्स ने अपनी चिन्ताओ को सदैव भगाया।

(१) उत्साह और जोश के साथ जीवन बिताइये: मैं प्रति दिन इस प्रकार जीता हूँ जैसे कि वह दिन मेरा प्रथम और अन्तिम दिन हो।"

(२) कोई रोचक पुस्तक पढिए: जब मैं लम्बे अर्से तक स्नायु विघटन का रोगी था तब......... मैंने पढना आरम्भ किया......... मैंने 'लाइफ ऑफ कार्लाइल' पुस्तक पढी। उसमें इतना डूब गया कि अपना नैराश्य बिल्कुल भूल गया।

(३) भाँतिभाँति के खेल खेलिए: जब मैं उग्र रूप से खिन्न था, मैंने अपने को दिन मे हर घडी शारीरिक रूप से व्यस्त रखने को विवश किया।

(४) काम करते करते आराम कीजिए: मैंने उतावल, दौड़धूप और तनाव की अवस्था में काम करने की मूर्खता छोड़ दी है।

(५) मैं अपनी कठिनाइयों को उनके सही रूप मे देखने का प्रयास करता हूँ। अब से दो माह पश्चात् तो मैं इस सकट के विषय मे चिन्ता करना भूल ही जाऊँगा, फिर आज यह चिन्ता क्यों करूँ! जो रवैया मुझे दो माह पश्चात् अपनाना पड़ेगा उसे आज ही क्यो न अपना लूँ!

मैंने कल भी मुसीबतों का मुकाबला किया है और आज भी कर सकता हूँ

लेखिका : डोरोथी डिक्स

मैं गरीबी और बीमारी की गहराइयो से गुजर चुकी हूँ। जब लोग पूछते हैं कि मै सकटों से किस प्रकार पार पा सकी? तो मैं यही उत्तर देती हूँ कि मैंने कल भी मुसीबतों का मुकाबला किया है और आज भी कर सकती हूँ। कल क्या होगा। इस चिन्ता मे मैं अपने को कभी नहीं झोंकूँगी।"

मै अभाव, सघर्ष, दुश्चिन्ता तथा नैराश्य से भलीभाँति परिचित हूँ। मुझे सदैव अपनी शक्ति के बाहर काम करना पड़ा है। जब मैं अपने अतीत को देखती हूँ, तो मुझे वह एक युद्धक्षेत्र-सा नजर आता है, जिसमें टूटे स्वप्न, टूटी आशाएँ

और टूटे सम्मोहन के टुकडे बिखरे पडे मिलते हैं। मैं सदैव से उन परिस्थितियों से लडती रही हूँ जो भयंकर रूप से मेरे विरुद्ध थीं और जिनके कारण आज मैं समय से पहले ही वृद्ध हो गई हूँ। उन परिस्थितियों ने मुझे विकलाग और घायल कर दिया था। उन घावों के चिह्न आज भी मेरे साथ हैं।

फिर भी मुझे अपने पर दुःख नहीं होता। अतीत के सकट पर मै ऑसू नहीं बहाती और न उन स्त्रियों से कोई ईर्ष्या ही करती हूँ जिन्हें विपत्तियों का सामना नहीं करना पडा। क्यों कि मैं सघर्ष करके जिन्दा रही हूँ। जब कि वे बिना सघर्ष किए केवल जी रही हैं। मैंने जीवन के जाम की आखिरी बूँद तक पी डाली है, जब कि उन्होंने केवल ऊपरी स्वाद ही चखा है। मैं ऐसी बातें जानती हूँ, जिन्हें वे कभी नहीं जानेगीं। मैं उन वस्तुओं को देख सकती हूँ, जिन्हें वे कभी नहीं देख सकतीं। केवल वे ही स्त्रियाँ व्यापक दृष्टिकोण पा सकती हैं, जिनकी दृष्टि ऑसुओं से धुल कर साफ हो गई हो। और वह व्यापक दृष्टिकोण ही उन्हें ससार में प्रिय बना सकता है।

मैंने कठोर आघातों के विश्व-विद्यालय से एक दर्शन हासिल किया है। वह यह कि सहज जीवन बिताने वाली स्त्री कुछ नहीं कर सकती। मैंने आज को उसके उसी रूप में स्वीकार करना सीखा है। 'कल' से भयभीत होकर मैं कोई सकट उधार नहीं लेती। भविष्य की चिन्ता ही हमको डरपोक बना देती है। मै उस भय को अपने से दूर रखती हूँ, क्योंकि अनुभव ने मुझे सिखाया है कि भय का कारण उपस्थित होने पर उस से लोहा लेने के लिए बुद्धि एव शक्ति मुझे अपने आप मिल जाएगी। छोटी छोटी झुंझलाहटों का मुझ पर कोई असर नहीं होता। जब आपके सुख का साम्राज्य ही ढह कर आपके चारों ओर बिखर गया हो ऐसी स्थिति में नौकर द्वारा पानी के प्याले के नीचे कपड़ा न रखना अथवा रसोइये का सूप छलका कर गिरा देना, क्या अर्थ रखता है ?

लोगों से अधिक आशा नहीं रखनी चाहिये, यह बात मैंने सीख ली है और इसलिये मै आज उस मित्र और परिचित से भी, जो मेरे प्रति जरा भी वफादार नहीं होता, और बातें बनाता रहता है, सुख प्राप्त कर लेती हूँ। सबसे बडी बात तो यह है कि मैंने अपने को विनोदी बना लिया है क्योंकि मेरे जीवन की बातें ही ऐसी थीं कि या तो मै उन पर रोती या फिर हँसती। जो स्त्री सकटों को लेकर उन्मादग्रस्त होने के बजाय हँस सकती है वह किसी भी बात से दुःखी नहीं हो सकती। मैं अपने सकटों के कारण कभी दुःखी नहीं होती, क्योंकि उन सकटों द्वारा ही मैं अब तक जीवन के हर पहलू से परिचित हो सकी हूँ। और जो मूल्य मैंने उनके लिये चुकाया वह वाजिब ही था।

डोरोथी डिक्स ने 'आज की परिधि में' रह कर अपनी चिन्ता पर विजय पाई थी। वह कहती थी—यदि मैं कल मुसीबतों के सामने डटी रही तो आज भी रह सकती हूँ।

मुझे सवेरे तक ज़िन्दा रहने की उम्मीद नहीं थी

लेखक : जे. सी. पीने

(चार अप्रेल : १९०२ को एक युवक ने व्योमिंग केमेरेर में पाँच सौ डॉलर की नकद रकम और बाद में दस लाख डॉलर और लगाने के निश्चय से एक स्टोर खोला जहाँ सूखी सामग्री बेची जाती थी। व्योमिंग एक छोटा-सा खानोंवाला कस्बा था, जहाँ हजार के करीब लोग रहते थे। यह स्टोर एक पुराने छत वाले माल डिब्बे के पथ पर, जो लेविस और क्लार्क अभियान के समय बनाया गया था, स्थित था। वह युवक एवं उसकी पत्नी स्टोर के ऊपर ही एक आधी बनी मंजिल पर रहते थे। वे अपने माल की खाली पेटियों को, टेबल तथा कुर्सियों की तरह काम में लाते थे। जवान पत्नी अपने बच्चे को कम्बल में लपेट कर काउन्टर के नीचे सुला देती और उसके पास ही खड़ी, अपने पति की, ग्राहकों से निबटने में मदद करती। आज ससार में कई ड्राइगुडस स्टोर हैं जो जे. सी. पीने स्टोर्स के नाम से चलते हैं। उन स्टोर्स की सख्या सोलह सौ से भी अधिक है। ये अमेरिका के सभी राज्यों में फैले हुए हैं। मैंने हाल ही में श्री पीने के साथ भोजन किया था और उसी दौरान में उन्होंने मुझे अपने जीवन की एक अत्यन्त नाटकीय घटना सुनाई—)

" कई वर्षों की बात है, मैं बड़ी कठिनाइयों में से गुजर रहा था। मैं चिन्तित और निराश हो चुका था। मेरी चिन्ताएँ जे. सी. पीने कम्पनी के विषय में नहीं थीं। वह धन्धा तो ठोस था और फल-फूल रहा था। किन्तु मैंने निजी तौर पर १९२९ की विपत्ति के पूर्व कुछ मूर्खतापूर्ण वादे कर लिये थे। जैसा कि कई व्यक्तियों के साथ होता है, मुझे भी उन परिस्थितियों के बारे में दोषी ठहराया गया, जिनके लिए मैं क़तई जिम्मेदार नहीं था। मैं चिन्ताओं में इतना घिर गया कि अपनी नींद तक खो बैठा और अत्यधिक कष्टदायक चर्म-रोग का शिकार हो गया। मेरी सारी देह पर लाल-लाल फोड़े-से निकल आए थे। मैंने उन्हें एक डाक्टर को दिखाया। मिसौरी अन्तर्गत हेमिल्टन के हाई स्कूल में मैं और वे डाक्टर साथ साथ पढ़ने गए थे। वे डाक्टर थे एल्मर एग्लेस्टन और वे मेशिगन अन्तर्गत बेटल क्रिक के केलोग सेनिटोरियम में एक स्टाफ फिजीशियन (डाक्टर) थे। डाक्टर ने मुझे बिस्तर पर लिटा दिया और कहा कि मेरी हालत चिन्ताजनक है। बड़ा नियमित इलाज बताया गया पर कुछ फायदा नहीं हुआ। दिन ब दिन मैं कमजोर होता गया। शरीर ने जवाब दे दिया और स्नायु विघटन हो गया। मैं निराशा से भर गया। आशा की हल्की-सी किरण भी कहीं नजर नहीं आती थी। फिर किस के लिए जीता ! मुझे विदित हुआ कि इस ससार में मेरा कोई नहीं है, कोई भी मित्र नहीं है और परिवार के लोग भी खिलाफ़ हो गए हैं। एक रात डाक्टर एग्लेस्टन ने

स्नायु शान्त करने की दवा दी, किन्तु शीघ्र ही उसका प्रभाव मिट गया और उस दिन सुबह उठते ही मुझे पूरा विश्वास हो गया कि वह रात मेरी अन्तिम रात होगी। बिस्तर से उठ कर मैंने अपनी पत्नि और पुत्र को विदाई पत्र लिखे और उन्हें बताया कि मैं सवेरे तक जिन्दा नहीं रहूँगा।

जब दूसरे दिन सबेरे मैं जगा तो अपने को जीवित पाकर आश्चर्यचकित रह गया। सीढियाँ उतरते हुए मैंने एक छोटे से चेपल में प्रार्थना होते सुनी। वहाँ सवेरे रोज ही धार्मिक प्रार्थना होती थी। आज भी मुझे वह प्रार्थना याद है। वे लोग गा रहे थे-"भगवान तुम्हारी सुध लेगा।" चेपल मे जाकर मैंने भारी मन से, प्रार्थना, उपदेश-पाठ और गीत सुने। यकायक कुछ हुआ, जिसे मैं समझ नहीं सका। मैं उसे केवल चमत्कार कह सकता हूँ। मुझे लगा कि मैं एकदम घोर अंधकार में से हटाया जाकर एक उष्ण एव जगमगाते प्रकाश मे लाया गया हूँ। मुझे लगा, जैसे मैं नर्क से स्वर्ग में उतर आया हूँ। उस समय मुझे जो दिव्य शक्तिका-सा भान हुआ वैसा पहले कभी नहीं हुआ था। तब मैंने महसूस किया कि अपने सारे सकटों के लिए मैं ही उत्तरदायी हूँ। मुझे विदित हुआ कि ईश्वर अपने स्नेह से मेरी सहायता करने के लिये विद्यमान है। तब से मेरा जीवन बराबर चिन्तारहित रहा है। आज मैं सत्तर वर्ष का हूँ। मेरे जीवन के अत्यन्त नाटकीय एव गौरवपूर्ण क्षण मेरे वे बीस मिनिट थे, जिन्हें मैंने उस चेपल में बिताये थे, जहाँ सवेरे 'भगवान तुम्हारी सुध लेगा'-प्रार्थना हो रही थी।

जे. सी. पीने ने पलभर में अपनी चिन्ताओं पर काबू पाना सीख लिया क्योंकि उन्होंने एक उत्तम इलाज खोज निकाला था।

मैं व्यायाम शाला में मेहनत करता हूँ और सैर ने जाता हूँ

लेखक : कर्नल इडी इगान

न्यूयॉर्क एटोर्नी रोड्स के स्कॉलर
न्यूयॉर्क स्टेट एथिलेटिक कमिशन के अध्यक्ष
और भूतपूर्व ऑलिंपिक लाइट हेवीवेट चेम्पियन

जब मैं चिन्तित हो कर रहँट फिराने वाले मिश्र के ऊँट की भाँति मानसिक चक्कर में फँस जाता हूँ, तब खूब शारीरिक श्रम करके अपनी चिन्ताओं को मार भगाता हूँ, चाहे वह दौड़ हो या कोई लम्बी यात्रा, चाहे वह आध-घण्टे तक थैला छेदने का काम हो या जिम्नेशियम पर टेनिस खेलना, कुछ भी हो, शारीरिक श्रम मेरे मानसिक दृष्टिकोण को स्पष्ट कर देता है। हर सप्ताह के अन्त में मैं शरीर को

श्रम देने वाले खेल खेलता हूँ। जैसे कि, गोल्फ – मैदान का चक्कर काटना, पेडल टेनिस खेलना या एडीरोन्डेक में बर्फ पर फिसलना। जब मैं शारीरिक रूप से थक जाता हूँ तो मेरा दिमाग कानूनी समस्याओं से विश्राम ले लेता है और बाद में उन समस्याओं पर विचार करते समय मेरे दिमाग में नया जोश और नई शक्ति आ जाती है।

न्यूयॉर्क में जहाँ मैं काम करता हूँ, येल क्लब जिमखाने में मैं प्राय: रोज एक घण्टा बिताता हूँ। कोई भी व्यक्ति टेनिस खेलते या बर्फ पर फिसलते समय चिन्तित नहीं रह सकता। उसे चिन्ता करने की फुर्सत ही नहीं रहती और संकटों के वे दिमागी पर्वत छोटे-छोटे टीलों में बदल जाते हैं। नए विचार एवं कार्य उन्हें शीघ्र ही नेस्तनाबूद कर देते हैं।

चिन्ता का प्रतिरोध करने का उत्तम उपाय है कसरत। जब आप चिन्तित हों, तब अपने दिमाग से काम न लेकर मॉसपेशियों से काम लीजिये। इसका परिणाम आपको चकित कर देगा। मैं तो जब कसरत करता हूँ, मेरी चिन्ता भाग जाती है।

वर्जीनिया टेक्निकल कॉलेज में मैं चिन्ता का पिटारा बना हुआ था

लेखक · जिम बर्डसाल

प्लान्ट सुपरिन्टेन्डेन्ट, सी. एफ. मुलर कम्पनी,

१०८ बाल्डविन एवेन्यू, जरसी सीटी, न्यू जरसी

सत्रह वर्ष पूर्व मैं वर्जीनिया ब्लेक्सबर्ग के मिलिटरी कॉलेज में था। मैं उन दिनों वर्जीनिया टेक्निकल कॉलेज में 'चिन्ता का पिटारा' कहा जाता था। मैं इतने भयानक रूप से चिन्तित रहने लगा कि बीमार हो गया। वस्तुतः मैं इतना जल्दी जल्दी बीमार पड़ने लगा कि कॉलेज के चिकित्सालय में मेरे लिए एक पलंग रिजर्व रहने लगा। जब कभी नर्स मुझे आता देखती, वह दौड़ कर मुझे सम्हाल लेती। मुझे हरबात की चिन्ता रहने लगी। कभी कभी तो मैं चिन्ता का कारण भी भूल जाता। मुझे चिन्ता रहती थी कि मैं श्रेणी में गिर जाने के कारण कॉलेज से निकाल दिया जाऊँगा, तथा भौतिक विज्ञान आदि अन्य विषयों में मैं सफल नहीं हो सकूँगा। मैं जानता था कि मुझे औसतन ७५-८४ अंकों की श्रेणी में रहना चाहिए। मुझे अपने स्वास्थ्य, अपने संकटप्रद अजीर्ण तथा अनिद्रा की चिन्ता थी। मुझे वित्तीय मामलों की भी चिन्ता थी। मुझे दुःख होता था कि मैं अपनी प्रेयसी के लिए केन्डी भी नहीं खरीद सकता था और उसे अपनी इच्छा अनुसार नृत्य-सम्मेलन

में नहीं ले जा सकता था। मुझे चिन्ता थी कि कहीं वह दूसरे केडेट से विवाह न कर ले। रात-दिन ऐसी ही दर्जनों छोटी-छोटी समस्याओं के साथ मैं उलझा रहता।

नैराश्य की अवस्था में मैंने अपनी सारी मुसीबतों को प्रोफेसर ड्यूक बेअर्ड, जो वी. पी. आई. में व्यावसायिक प्रशासन के प्रोफेसर थे, के सामने उगल दिया।

प्रोफेसर बेअर्ड से पन्द्रह मिनिट तक जो बातचीत हुई और उससे जितना स्वास्थ्य एव सुख सबन्धी लाभ हुआ उतना उस कॉलेज के चार वर्षों में कभी नहीं हुआ। उन्होंने कहा, "जीम, तुम्हें डट कर वस्तुस्थिति का सामना करना चाहिये। जितना समय और शक्ति चिन्ता करने में खर्च करते हो उसका आधा भी तुम अपनी समस्याओं को सुलझाने में लगाओ तो तुम्हें चिन्ता कभी हो ही नहीं। तुमने चिन्ता की यह बड़ी बुरी आदत डाल ली है।"

चिन्ता की आदत छोड़ने के लिए उन्होंने मुझे तीन नियम बताए:—

नियम – १. अपनी समस्या को ठीक ठीक समझ लो।

नियम – २. समस्या का कारण ज्ञात करो।

नियम – ३. समस्या सुलझाने के लिये शीघ्र ही कोई सक्रिय कदम उठाओ।

उस बातचीत के पश्चात् मैंने कुछ विधेयात्मक सोच – विचार शुरू किया। मैंने अपनी असफलता के बारे में सोचा तो ज्ञात हुआ कि भौतिक विज्ञान के कारण मैं असफल हुआ था। तब मैंने भौतिक विज्ञान में असफल होने के कारण पर विचार किया। मैं बुध्दू नहीं था कि वह विषय पढ न पाता। पढने के लिए मुझ में पर्याप्त बुद्धि थी। क्यों कि उन दिनों मैं वर्जीनिया टेक्निकल इन्जीनियर पत्रिका का प्रधान सम्पादक था।

मैंने जान लिया कि उस विषय के प्रति मेरी अरूचि ही मेरी असफलता का कारण थी। मेरा उस विषय में मन ही नहीं लगता था। मैं सोचता-एक इण्डस्ट्रियल इन्जीनियर की यह विषय क्या सहायता कर सकता है? किन्तु बाद में मैंने अपना रवैया बदल दिया और सोचा – "यदि कॉलेज अधिकारी चाहते हैं कि डिग्री लेने के पूर्व मुझे भौतिक विज्ञान की परीक्षा पास करनी ही पड़ेगी, तो उनकी बुद्धिमानी को चुनौती देने वाला मैं कौन होता हूँ? इसलिए मैंने फिर भौतिक विज्ञान का विषय लिया और इस बार विषय की कठिनाई को लेकर गुस्से होने और चिन्ता करने के बजाय, मैंने कडी मेहनत के साथ उसका अध्ययन किया।

अपनी वित्तीय कठिनाइयों को मैंने कुछ अतिरिक्त काम करके सुलझा लिया। मैं कॉलेज में होने वाले नृत्य-समारोह में 'पच' पत्रिका बेचने लगा और कुछ रुपया अपने पिताजी से उधार ले लिया जिसे मैंने स्नातक बनने के बाद लौटा दिया।

अपनी प्रेम सम्बन्धी चिन्ता को भी मैंने उस लडकी के सम्मुख, जिसके बारे में मुझे भय था कि वह किसी अन्य केडेट से विवाह कर लेगी, विवाह प्रस्ताव रख कर मिटा दिया। अब वह लड़की मेरी पत्नी है।

जब मैं अपने अतीत पर नजर दौड़ाता हूँ तो मुझे ज्ञात होता है कि मेरी समस्या मेरी अपने मन की उलझन मात्र थी। और चिन्ता का कारण ढूंढ निकालने तथा उसे वास्तविक रूप से हल करने में मैं ढिलाई कर रहा था।

जीम बर्डसाल ने अपने सकटों का विश्लेषण करके, उनके प्रति की गई चिन्ताओं को मिटाना सीखा। वस्तुतः उसने उन्हीं सिद्धान्तो का प्रयोग किया जो पिछले परिच्छेद 'चिन्ता समस्या का विश्लेषण तथा उसका समाधान करने की विधि' मे दिए गए हैं।

मैं इस वाक्य के सहारे जी रहा हूँ

लेखक : डॉक्टर जोसेफ आर सीजू।

न्यू ब्रन्सविक, थियोलोजिकल सेमिनरी के प्रधान।
यह सेमिनरी अमेरिका की सबसे पुरानी है और १७८४ में स्थापित की गई थी।

कई वर्षों की बात है। एक दिन, जब मैं नैराश्य एवं उलझन में भटक रहा था और मेरा सारा जीवन ऐसी शक्तियों से घिरा हुआ था, जिन पर मेरा कोई वश नहीं था, मैंने एक सवेरे यों ही, अपनी 'न्यू टेस्टामेण्ट' पुस्तक खोली और मेरी ऑखें इस वाक्य पर जम गईं – "जिसने मुझे इस दुनियाँ में भेजा है वह मेरे साथ है। उस परमेश्वर ने मुझे अकेला नहीं छोडा है।" उस दिन से मेरा जीवन बदल गया। तब से हर वस्तु का रूप मेरे लिये बदल गया है। तब से कोई भी दिन नहीं जाता जब मैं उस वाक्य को दुहराता नहीं। कई व्यक्ति मेरी सलाह के लिए गत कई वर्षों से मेरे पास आते रहे हैं और मैंने उन्हें यह शक्तिदायक वाक्य बता कर विदा किया है। जिस दिन से मेरी नजर इस वाक्य पर पड़ी है मैं इसके अनुसार चल रहा हूँ। मुझे इससे शान्ति और शक्ति भी मिली है। यह वाक्य मेरे लिए धर्म का सार है। उन सभी बातों के मूल में जो जीवन को जीने योग्य बनाती हैं, यही वाक्य है। यही मुझे उद्बोधन और प्रेरणा देता है।

मैं रसातल में पहुँचकर भी जिन्दा रहा

लेखक : टेड परिक्सन

१६, २३७ साउथ कोरनुटा एवेन्यू बेलफ्लॉवर केलिफोर्निया

दक्षिणी केलिफोर्निया के नेशनल एनेमेलिंग एण्ड स्टेम्पिंग कं का प्रतिनिधि।

मैं भयकर रूप से चिन्ता का पिटारा बन गया था, किन्तु अब वैसा नहीं हूँ। सन् १९४२ की ग्रीष्म ऋतु में मुझे जो अनुभव हुआ उसने मेरी चिन्ता को जीवन से सदा के लिए उखाड़ फेंका। उस अनुभव के बाद प्रत्येक सकट तुलनात्मक दृष्टि से छोटा लगने लगा।

कई वर्षों से मेरी इच्छा थी कि एलास्का में कोमर्शिअल फिशींग क्राफ्ट पर ग्रीष्म काल विताऊँ। इस हेतु मैंने १९४२ में एलास्का के कोडियाक के बाहर बत्तीस फ़ुट के सामन मछली पकडने वाले जहाज पर नौकरी कर ली। इस बडे जहाज पर केवल तीन नाविकों के लिए ही स्थान होता है। वैसे, एक तो जहाज का कप्तान होता है जो देखरेख करता है, दूसरा कप्तान का सहयोगी होता है और एक अन्य व्यक्ति सामान्य कार्य करने वाला होता है जो प्रायः स्केन्डीनेवियन होता है। मैं भी स्केन्डीनेवियन ही हूँ।

चूँकि मछली पकड़ने का काम ज्वार के समय ही होता था, मुझे चौबीस घण्टों में प्रायः बाईस घण्टे काम करना पड़ता। एक साथ, सप्ताह भर वही सिलसिला जारी रहता। मै वह सब कुछ करता जो दूसरा कोई भी करना नहीं चाहेगा—जहाज को धोता, हैड गियर अलग करता और छोटे से केबिन में लकड़ी से चलने वाले चूल्हे पर भोजन बनाता। उस केबिन में चलने वाली मोटर की लपटें और गरमी मुझे बीमार बना देती। मैं सामन को एक टेन्डर में लगाता जो उसे केनेरी में ले जाता। रबड़ के जूतों में मेरे पैर सदैव गीले रहते। उनमें प्रायः पानी भरा रहता था, पर मुझे उन्हें खाली करने का समय ही नहीं मिलता। किन्तु यह सब, मेरे जाल खींचने के मुख्य काम की कठिनाई की तुलना में कुछ नहीं था। जहाज के स्टर्न (पीछे का भाग) पर पैर रख कर मुझे जाल खींचना पड़ता और उसे समेटना पडता। किन्तु जब मैं जाल को खींचने लगता तो वह वहाँ से टस से मस नहीं होता था। बात यह होती कि जाल खींचते समय वास्तव में नाव जाल की ओर खींची चली जाती। मैंने कई हफ्तों तक यही किया। इस काम ने मेरा प्रायः अन्त ही कर दिया। मेरे सारे शरीर में अत्यन्त पीडा होने लगी और महीनों तक बनी रही।

अन्ततः मुझे विश्राम करने का मौका मिला। मैं सामान के पिटारे पर फैले, गीले, गठीले गदेले पर सोता। गदेले के अन्दर की एक गॉठ को मैं अपनी पीठ के उस भाग के नीचे रखता, जो अधिक दर्द करता था। थकान से चूर होकर मैं इस प्रकार सोता मानो नशा किया हो।

मुझे प्रसन्नता है कि मैंने उस दर्द और थकान को बर्दाश्त कर लिया, क्योंकि उस से मेरी चिन्ता दूर हो गई। अब, जब कभी मैं किसी के झमेले में पड़ता हूँ तो, उस पर चिन्ता करने के बजाय मन ही मन सोचता हूँ–एरिक्सन, यह काम जाल खींचने के काम से अधिक कष्ट कर तो नहीं है? और एरिक्सन बराबर वही उत्तर देता है–हाँ, उतना बुरा तो यह नहीं है। इस प्रकार स्फूर्ति पाकर मैं हिम्मत से संकट का सामना करने लगता हूँ। मैं समझता हूँ, यदा–कदा संकटपूर्ण अनुभव प्राप्त कर लेना अच्छा भी है। यह जानना अच्छा है कि मैं रसातल में जाकर भी जीता रहा। इस प्रकार तुलना करने में हमारी दैनिक समस्याएँ आसान हो जाती हैं।

मैं भी कभी दुनिया के महान मूर्खों में से एक था।

लेखक : परसी एच. व्हाइटिंग

मैनेजिंग डायरेक्टर डेल कार्नेगी एण्ड कम्पनी,

५०, पूर्व, ४२ वी स्ट्रीट, न्यूयॉर्क

मैं किसी भी जीवित, मृत अथवा अर्धमृत व्यक्ति की बनिस्बत अधिक बार विभिन्न बीमारियों से मरणासन्न हो चुका हूँ। मैं विषादोन्माद का दयनीय रोगी था। मेरे पिताजी का दवाइयों का अपना स्टोर था और मैं वस्तुतः उसी में पला था। वहाँ मैं रोज डाक्टरों तथा नर्सों से बातें करता था, इसलिए औसत व्यक्ति की बनिस्बत भयंकर बीमारियों के लक्षण और नाम अधिक जानता था। मेरा विषादोन्माद असाधारण था। मुझ में उसके सभी लक्षण मौजूद थे। मैं एक ही बीमारी को लेकर घण्टे दो घण्टे तक सोचता रहता और अपने में वस्तुतः वे सभी लक्षण देखता जो उस बीमारी के रोगी में होते हैं। मुझे स्मरण है कि एक बार मेसाचुसेट्स के अन्तर्गत ग्रेट बेरीग्टन में, जहाँ मैं रहता था डिप्थीरिया का भीषण रोग फैल गया था। अपने पिता के स्टोर में मैं रोज रोगियों को दवाइयाँ बेचता था। जिस विपत्ति की मुझे आशंका थी वही मुझ पर आ टूटी। मुझे भी डिप्थीरिया हो गया है, इसका मुझे निश्चय हो गया। मैं बिस्तर पर लेट गया और प्रमुख प्रमाणित लक्षणों के बारे में चिन्ता करने लगा। मैंने डॉक्टर को बुलाया। उसने मुझे देखा और कहा—"हाँ परसी तुम्हें यह बीमारी है उससे मेरे दिमाग की दुविधा दूर हो गई। क्यों कि जब भी मुझे बीमारी का निश्चय हो जाता मेरा डर भाग जाता। मैं करवट बदल कर आराम से सो गया। आश्चर्य की बात यह हुई कि दूसरे ही दिन मैं पूर्णरूप से स्वस्थ हो गया।

वर्षों तक असामान्य और विचित्र बीमारियों में गुजरने की पटुता प्राप्त करने के कारण मुझे काफी सहानुभूति और सद्भावनाएँ मिली हैं। और इस माने में मैंने काफी नाम कमाया है। मैं कई बार जबड़े और हाइड्रोफोबिया के रोग से मरने जैसा हो चुका हूँ। इसके अलावा भी मुझे एक के बाद एक कोई न कोई बीमारी होती ही रही, मगर कैन्सर तथा क्षय रोग मेरी विशेषता थे।

आज मैं उन बातों पर हसता हूँ किन्तु उन दिनों बडा क्लेष होता था। मैं वर्षों तक डरता रहा कि कब्र के कगारे पर चल रहा हूँ। जब वसन्त के महीनों में सूट खरीदने की बात आती तो मैं सोचता—क्यों अपना पैसा सूट पर बरबाद करूँ, क्योंकि सूट फटने तक तो मैं जिन्दा रहूँगा नहीं।

अब मुझे अपनी तरक्की के विषय में बताते हुये प्रसन्नता होती है कि मैं दस वर्षों में एक बार भी नहीं मरा।

मैंने यह मरना कैसे बन्द किया ? मैंने हास्यास्पद कल्पना करना छोड दिया। हर बार जब मैं कोई उग्र लक्षण देखता, अपने आप हँसता और कहता—देखो व्हाइटिंग, तुम बीस वर्ष से बराबर एक न एक घातक बीमारी से मरते आ रहे हो, फिर भी आज तुम भले-चंगे हो, हाल ही में बीमा कम्पनी ने अधिक पॉलिसी के लिए तुम्हें स्वीकार कर लिया हैं; व्हाइटिंग, क्या अब भी तुम्हें चिन्तित होने की बेवकूफी पर ठहाका मारकर हँसना नहीं आता !

मैंने शीघ्र ही जान लिया कि अपने पर हँसने और अपने विषय में चिन्तित होने के ये दो काम मैं एक साथ नहीं कर सकता। इसलिए तब से मैं अपने पर हँसता ही रहा हूँ।

इसका मतलब यह है कि अपने पर अत्यधिक भरोसा मत कीजिए। अपनी मूर्खतापूर्ण चिन्ताओं पर हँसने का प्रयास कीजिये, और तब आप देखेंगे कि आपने उन्हें हँसकर मिटा दिया हैं।

मैंने अपनी आमद का ज़रिया हमेशा खुला रखा

लेखक—जेन ऑट्री

संसार का अत्यन्त प्रसिद्ध एवं प्रिय गायक—काउबॉय (ग्वाला)

मेरा विचार है कि हमारी अधिकाश चिन्ताएँ पारिवारिक सकटों तथा पैसो को लेकर होती हैं। मेरा सौभाग्य था कि मैंने ओक्लाहामा के छोटे से कस्बे की एक ऐसी लड़की से विवाह किया जिस की पृष्ठभूमि वही थी जो मेरी थी। हम दोनों एक-सी वस्तुओं में रस लेते हैं। हम दोनों एक-साही सुनहरा नियम पालन करने का प्रयास करते हैं अतः हमने अपनी परिवारिक कठिनाइयों को न्यूनतम रखा है।

मैंने अपनी वित्तीय चिन्ताओं को भी दो तरीकों से कम कर रखा है। पहला तो यह कि हर बात में शत प्रतिशत सच्चाई और ईमानदारी बरतना। जब में रुपया उधार लेता तो पाई पाई चुका देता। बेईमानी से अधिक चिन्ताजनक बातें अन्य बहुत कम हैं।

दूसरा–जब मैं कोई नया धन्धा शुरू करता तो मुसीबत में उस पर निर्भर रहने के लिए एक न एक धन्धा अपने हाथ में जरूर रखता। विशेषज्ञों का कहना है कि लड़ाई लड़ने का पहला सिद्धान्त यह है कि सप्लाई का मार्ग खुला रहे। मेरे विचार से यह सिद्धान्त जितना सैनिक संघर्षों पर लागू होता है उतना ही व्यक्तिगत संघर्षों पर भी। उदाहरणार्थ, टेक्सास और ओक्लाहामा में एक युवक की हैसियत से मैंने वहाँ की वास्तविक गरीबी को उस समय देखा था जब कि वहाँका समूचा उपान्त सूखे के कारण बरबाद हो गया था। उन दिनों हमें उदरपूर्ति के लिए भी कभी कभी बड़ी कठिनाई उठानी पड़ती थी। हम इतने गरीब थे कि मेरे पिताजी घोड़ों अथवा खच्चरों की एक डब्बे जैसी गाडी, दिन में कई बार उस प्रदेश में, एक स्थान से दूसरे स्थान पर लाते–लेजाते और जीविका कमाते थे। मुझे उससे कुछ अधिक भरोसेवाला काम चाहिए था, इसीलिए मैंने रेल्वे-स्टेशन के एजेण्ट के यहाँ नौकरी कर ली, और अवकाश के समय टेलिग्राफी सीखने लगा। तत्पश्चात् मुझे फ्रिस्को रेल्वे में रिलीफ ऑपरेटर का काम मिल गया। मैं दूसरे स्टेशन एजेण्टों की बदली पर इधर इधर भेजा जाता था। जब कभी भी उनमें से कोई बीमार होता, छुट्टी पर जाता, अथवा उसके पास अधिक काम होता, मैं वहाँ भेजा जाता। उस नौकरी से मुझे १५० डॉलर प्रति माह मिलते थे। बाद में जब मैं तरक्की के लिए आगे बढा तो मैंने सदैव ध्यान रखा कि आर्थिक सुरक्षा की दृष्टि से रेल्वे की नौकरी में लौट जाने का अपना दरवाजा सदा खुला रहे। वह मेरे लिए सप्लाई का जरिया था और मैंने अपने को उस जरिये से कभी अलग नहीं किया, जब तक कि मैं दूसरी नई और अच्छी जगह पर पूरी तरह जम नहीं गया।

उदाहरणार्थ—१९२८ में जब मैं ओक्लाहोमा अन्तर्गत चेल्सीआ में फ्रिस्को रेल्वे में रिलीफ ऑपरेटर का काम कर रहा था, शाम के समय एक अजनबी, तार कराने के लिए आया। उसने मुझे गिटार बजाते और 'काऊ बॉय' गीत गाते सुना। उसने कहा कि मैं अच्छा गाता-बजाता हूँ और मुझे न्यूयॉर्क जाकर स्टेज अथवा रेडिओ पर कोई काम खोज लेना चाहिए। स्वाभाविक ही था कि मैं जरा फूल जाता। मैंने जब उस व्यक्ति को टेलिग्राम पर अपना नाम 'विलरोजर्स' लिखते देखा तो सन्न रह गया।

मैंने एकदम न्यूयॉर्क दौड़ जाने के बजाय नौ महीनों तक सावधानी से उस मामले पर विचार किया। अन्ततः मैं इस निर्णय पर पहुँचा कि न्यूयॉर्क जाने से मुझे कोई हानि नहीं होगी, बल्कि लाभ ही होगा और मैंने वह पुराना कस्बा छोड़ने का निश्चय कर लिया। मेरे पास रेल पास था और मैं मुफ्त यात्रा कर सकता था। मैं

अपनी जगह, बैठा-बैठा ही सो सकता था और खाने के लिए कुछ अल्पाहार तथा फलों की व्यवस्था भी कर सकता था।

इसलिए, मैं रवाना हो गया। जब मै न्यूयॉर्क पहुँचा तो वहाँ एक सजे-सजाए कमरे में रहने लगा। उसका किराया पाँच डॉलर प्रति सप्ताह था। आटोमेट होटल मे मैं भोजन करने लगा। दस सप्ताह तक मै सड़कों पर चक्कर काटता रहा पर कोई सफलता नहीं मिली। यदि मेरे पास नौकरी पर वापस लौटने का अवसर न होता तो मैं चिन्ता से दुःखी हो जाता। मै रेल्वे में पाँच वर्ष काम कर चुका था। मेरे पास सीनियोरिटी के अधिकार थे। किन्तु मै उन अधिकारों की रक्षा काम पर न जाकर, नब्बे से अधिक दिन तक नहीं कर सकता था। न्यूयॉर्क में मुझे सत्तर दिन हो चुके थे, इसलिए मैं ओक्लाहामा, रेल पास के आधार पर लौट गया और अपने सप्लाई के जरिये की रक्षा करने फिर से काम पर लग गया। मैंने कुछ महीनों तक वहाँ काम किया, पैसे बचाये और दूसरी बार प्रयत्न करने फिर न्यूयॉर्क चला गया। इस बार मेरा काम बन गया। एक दिन रेकार्डिंग स्टुडियो ऑफिस के बाहर, मुलाकात के लिए अपनी बारी की प्रतीक्षा कर रहा था कि मैंने रिसेप्शनिस्ट लड़की के सामने गिटार बजाकर गीत गाया–"जेनी आई ड्रीम ऑफ लिलाक टाईम." जब मैं यह गीत गा रहा था, उसी समय उस गीत का लेखक 'नाट गिल्डक्रोट' उधरसे गुजरा और गीत सुनता सुनता ऑफिस में चला गया। स्वाभाविक था कि अपना गाना किसी के मुँह से सुनकर उसे खुशी होती। उसने मुझे एक परिचय पत्र देकर विक्टर रेकोर्डिंग कम्पनी में भेजा। मैंने रेकॉर्ड भरवाया पर जमा नहीं, मुझे सकोच हो आया था। इसलिए मैं विक्टर रेकॉर्डिंग के आदमी की सलाह पर टुलसा लौट गया। दिन मे रेल्वे में काम करता और रात को रेडियो पर काउबॉय-गीत गाता। मुझे वह व्यवस्था पसन्द आ गई। इसका अर्थ यह था कि मैंने अपना सप्लाई का जरिया खुला रखा और इसलिए मुझे किसी प्रकार की चिन्ता नहीं हुई।

मै नौ महीनों तक टुलसा के क्यू रेडियो स्टेशन पर गाता रहा। उन दिनों मैंने और जिमी लोंग ने मिलकर एक गीत लिखा, जिसका शीर्षक था 'देट सिल्वर हेयर डेडी ऑफ माइन' (मेरे सफेद बालों वाले पिता) यह गीत चल निकला। अमेरिकन रेकॉर्डिंग कम्पनी के प्रधान आर्थर सेथरली ने मुझे उस गाने का रेकार्ड भरवाने को कहा। काम बन गया। पचास डॉलर प्रति रेकॉर्ड के हिसाब से मैंने कई अन्य रेकार्ड भी भरवाए, और अन्ततः काउबॉय गीत गाने के लिए मुझे शिकागो के डब्ल्यु एल. एस. रेडियो स्टेशन पर नौकरी मिल गई। मेरा वेतन चालीस डॉलर प्रति सप्ताह था। चार वर्ष वहाँ गाते रहने के पश्चात् मेरा वेतन नब्बे डॉलर प्रति सप्ताह हो गया। और मैं तीन सौ डॉलर अतिरिक्त, प्रति रात दूसरे स्थानो पर गा-गा कर कमाने लगा।

तब सन् १९३४ मे मुझे एक सुयोग प्राप्त हुआ, जिसने मेरी उन्नति की सम्भावनाओं को बहुत अधिक बढ़ा दिया। चलचित्रों को शुद्ध और पवित्र रखने के

लिए 'लीग ऑफ डीसेंसी' की स्थापना की गई और हॉलीवुड के निर्माताओं ने काउबॉय तस्वीरें बनाने का निश्चय किया, किन्तु उन्हें एक नए ढंग का काउबॉय चाहिए था—जो गा भी सके। अमेरिकन रेकॉर्डिंग का मालिक रिपब्लिक पिक्चरर्स में भी भागीदार था। उसने उसके सहयोगियों एवं भागीदारों से कहा—"अगर आपको गानेवाले काउबॉय की आवश्यकता हो तो मेरे पास एक व्यक्ति है जो हमारे लिए रेकॉर्डिंग करवाता है।" इस प्रकार मैंने चित्र-जगत में प्रवेश किया। मैंने सौ डॉलर प्रति सप्ताह पर 'गाने वाले काउबॉय' की तस्वीरों में काम करना शुरू किया। चित्र में मेरी सफलता के विषय में मुझे गम्भीर आशंकाएँ थीं किन्तु मैंने चिन्ता नहीं की, क्योंकि मैं जानता था कि पुरानी नौकरी पर मैं किसी भी समय लौट सकता हूँ।

चित्रों में मुझे अप्रत्याशित सफलता मिली। आज मुझे दस लाख डॉलर प्रतिवर्ष वेतन मिलता है और साथ ही मेरे सभी चित्रों से प्राप्त मुनाफे का आधा भाग भी मिलता है। तब भी मैं महसूस करता हूँ कि यह व्यवस्था सदा के लिए नहीं चलेगी। पर मुझे चिन्ता नहीं है। मैं जानता हूँ कि चाहे कुछ भी हो मेरे पास सचित सब डॉलर बीत जाने पर भी मैं पुनः ओक्लाहामा जाकर फ्रिस्को रेल्वे में नौकरी कर सकता हूँ। मैंने अपनी सप्लाई का जरिया खुला रखा है।

यह वाणी मैंने भारत में सुनी थी

लेखक : ई. स्टेन्ले जोन्स

ये अमेरिका के अत्यन्त क्रियाशील और अपने समय के प्रसिद्ध मिशनरी हैं।

मैंने अपने जीवन के चालीस वर्ष भारत में मिशनरी काम करते-करते बिता दिए। आरम्भ में, भीषण गरमी तथा अपने सामने फैले हुए भारी काम के दबाव को सहना मेरे लिए कठिन हो गया। आठ वर्ष के अन्दर ही मैं दिमागी तथा स्नायु थकान के कारण इतना दुःखी हो गया था कि कई बार तो अचेत भी हो जाता। मुझे एक वर्ष तक अमेरिका में आराम करने की आज्ञा मिली। अमेरिका लौटते समय रविवार को सवेरे की प्रार्थना में प्रवचन करते करते मैं फिर अचेत हो गया और शेष यात्रा के लिए जहाज के डॉक्टर ने मुझे बिस्तर पर पड़े रहने की सलाह दी।

अमेरिका में एक वर्ष की छुट्टी बिता लेने पर मैं भारत रवाना हुआ। किन्तु मार्ग में मनीला विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों में धर्म प्रचार सम्बन्धी सभाएँ करने के लिए रुक जाना पड़ा। उन सभाओं में हुई थकान के कारण मैं कई बार फिर अचेत हो गया। डॉक्टरों ने मुझे आगाह कर दिया था कि यदि मैं भारत लौटा तो मर

जाऊँगा। उनकी चेतावनी के बावजूद मैंने भारत के लिए अपनी यात्रा जारी रखी। किन्तु वहाँ मैं अपने पर बढते सकटों का बोझा लेकर पहुँचा। बम्बई पहुँचते पहुँचते, मैं इतना थक चुका था कि सीधा वहाँ से पहाड़ी स्थान पर चला गया और कई महीनो तक विश्राम किया। उस विश्राम के बाद फिर मैं पहाड़ी स्थान से लौट आया और अपना काम करने लगा। किन्तु व्यर्थ। मैं फिर अचेत होने लगा और एक लम्बे विश्राम के लिए पुनः पहाड़ी स्थान पर जाने के लिए मजबूर हो गया। थोडे दिन बाद फिर लौट आया, पर मुझे यह जानकर बड़ा धक्का लगा कि मैं अपना काम करने मे असमर्थ हूँ। मेरा दिमाग, शरीर और स्नायु थक चुके थे। मेरी शक्ति पूर्णतया जवाब दे चुकी थी। मुझे भय था कि शारीरिक दृष्टि से मैं जीवनभर बेकार रहूँगा।

यदि मुझे कहीं से मदद न मिली तो अपने मिशनरी जीवन को तिलाजलि देकर अमेरिका लौट जाना पड़ेगा तथा स्वास्थ्य को पुनः प्राप्त करने के प्रयास में किसी खेत पर काम करना होगा। वह मेरे जीवन का अत्यन्त अधकारमय समय था। उन दिनों मै लखनऊ मे कई सभाओं का आयोजन कर रहा था। एक रात, प्रार्थना करते समय एक ऐसी घटना घटी जिसने मेरे जीवन को पूर्णतया बदल दिया। प्रार्थना करते समय मैं अपने बारे में बिल्कुल नहीं सोच रहा था–एकाएक सुनाई पड़ा– "क्या तुम वह काम करने के लिए तैयार हो जिसके लिए मैंने तुम्हें बुलाया है?"

मैंने उत्तर दिया "नहीं भगवन्, मैं थक चुका हूँ। मेरी शक्ति जवाब दे चुकी है।" उत्तर में सुनाई पड़ा – "यदि तुम वह सब मुझ पर छोड दो और उसकी चिन्ता न करो तो मैं सब सम्हाल लूँगा।"

मैंने शीघ्र ही उत्तर दिया – "भगवन्! जैसी आपकी इच्छा।"

मेरे हृदय को बड़ी शान्ति मिली और वह मेरे अग अग में व्याप्त हो गई। मै जानता था कि मैंने बाजी जीत ली है। मुझ में अपार शक्ति आ गई। मैं खुशी से फूला नहीं समाया। जब मैं रात को अपने स्थान पर लौटा तो मेरे पॉव जमीन पर नहीं पड़ते थे। धरती पवित्र बन गई थी। उस घटना के कई दिनों बाद तक मुझे भान ही न रहा कि मेरे भी शरीर है। कई दिनों तक मैं दिन भर काम करने के बावजूद रात को देर तक काम करता रहता। और जब बिस्तर पर आता तो सोचता कि आखिर सोने की जरूरत ही क्या है, जब कि मुझ में थकान लेशमात्र भी नहीं है। मैं स्वय ईसा के अधीन था तथा मेरा जीवन शान्ति एवं विश्राम से सराबोर था।

मेरे सामने प्रश्न उठा कि क्या यह घटना मुझे लोगों को बतानी चाहिए? मुझे कुछ सकोच हुआ, किन्तु मैंने महसूस किया कि मुझे कह देनी चाहिए। और मैंने कह दी। उसके बाद तो यह हाल रहा कि सबको अपनी यह बात सुना दी। तब से जीवन के बीस से भी अधिक परिश्रमपूर्ण वर्ष बीत गये हैं किन्तु अब तक पुराने सकट ने फिर से सर नहीं उठाया। मेरी आज जैसी हालत पहले कभी नहीं थी। उससे केवल शारीरिक लाभ ही हुआ हो ऐसी बात नही है। मुझे लगा, जैसे कि शरीर में नया जीवन, नया मस्तिष्क एव नई आत्मा प्रवेश कर गई हो। उस अनुभव के

उपरान्त मेरा जीवन दृढ़ता से, ऊँचे स्तर पर काम करने लगा। मैंने भी और कुछ नहीं किया, बस उसे स्वीकार कर लिया।

तबसे जितने भी वर्ष बीते हैं मैं ससार में चारों ओर घूमता रहा हूँ और दिन में तीन तीन बार भाषण करता रहा हूँ। इस पर भी मुझे 'द क्राइस्ट ऑफ द इन्डियन रोड' तथा अन्य ग्यारह पुस्तकें लिखने का समय मिल सका है। इतनी व्यस्तता के बावजूद भी मैंने अपने कार्यक्रम में उपस्थित रहने में कभी चूक नहीं की, और न कहीं विलम्ब किया। मेरी चिन्ताएँ कभी से विलीन हो चुकी हैं और आज ६३ वर्ष की उम्र में भी मुझ में भरपूर शक्ति है। आज मैं दूसरों के लिए जी कर, उनकी सेवा में आनन्द का अनुभव करता हूँ।

मैं सोचता हूँ कि, मुझ में जो शारीरिक एव मानसिक परिवर्तन आया उसका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया जा सकता है तथा उसे समझा भी जा सकता है। उस विश्लेषण द्वारा ज्ञात हो सकता है कि जीवन ही महान है, प्रणाली नहीं। जीवन के माहात्म्य के सामने प्रणाली नगण्य है।

इतना मैं जानता हूँ कि लखनऊ में उस रात मेरी जीवनधारा पूर्णरूप से बदल कर ऊपर उठ गई थी। यह इकत्तीस वर्ष पूर्व की बात है जब मैं निर्बलता और नैराश्य से घिरा हुआ था और एक अनजान आवाज ने मुझे कहा — "यदि तुम उसे मुझे सौंप दो और उसकी चिन्ता न करो तो मैं सब सभाल लूँगा" उत्तर में मैंने कहा था — "भगवन्! जैसी आपकी इच्छा!"

जब शेरिफ मेरे द्वार पर आए

लेखक : होमर क्रोय

उपन्यासकार, १५० पिनेहर्स्ट एवेन्यु, न्यूयॉर्क

१९३३ का वह दिन मेरे जीवन का अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण दिन था। जिस दिन शेरिफ मेरे घर से अगले दरवाजे पर आये और मैं पिछले से बाहर निकल गया। फोरेस्ट हिल अन्तर्गत १० स्टेडिंग रोड पर स्थित मेरा घर अपने हाथों से निकल चुका था। वह घर – जहाँ मेरे बच्चों ने जन्म लिया था और जिसमें मैंने अपने परिवार के साथ अर्सा वर्ष बिताए थे। मुझे स्वप्न में भी आशा नहीं थी कि मेरे साथ यह घटना घटेगी। इस घटना के बारह वर्ष पूर्व मैंने सोचा था कि मैं ससार में सब कुछ हूँ। मैंने अपने उपन्यास 'वेस्ट ऑफ द वाटर टावर' के अधिकार ऊँचे दामों पर फिल्म कम्पनी को बेच दिये थे और दो वर्ष तक अपने परिवार के साथ विदेश में रहा था। गरमी हमने स्वीट्जरलैंड में बिताई थी और सरदी फ्रेंच रिवेरा में-एक आलसी धनवान की तरह।

मैं छः महीने पेरिस में रहा और वहाँ एक उपन्यास लिखा, जिसका शीर्षक था – 'दे हँड टु सी पेरिस'। विल्रोजर्स ने पहली बार उसकी भूमिका मे काम किया था। मुझे कई प्रलोभन दिए गए कि मैं हॉलिवुड में रहकर विल्रोजर्स के चित्रों के लिए चित्र-कथाएँ लिखूँ, किन्तु मैंने वैसा नहीं किया और न्यूयॉर्क लौट गया। अब वहाँ मेरी मुसीबतों का श्री गणेश हुआ।

मुझे लगा कि मेरे में कई आन्तरिक शक्तियाँ दबी पड़ी हैं जिनका मैं अब तक विकास नहीं कर पाया हूँ। मैं अपने को एक कुशल व्यवसायी समझने लगा था। मुझे किसी ने बताया था कि पड़त जमीन को खरीद कर, जॉन जेकब आस्टर ने लाखों रुपये कमा लिये थे, इसलिए मैं भी यह धन्धा करना चाहता था। पर यह आस्टर था कौन? एक घुमक्कड़, प्रवासी। मैंने सोचा – यदि वह इतना कर सकता है तो मैं क्यों नहीं कर सकता?...... मैं भी धनवान बनूँगा। इस निश्चय के साथ मैं जहाज–रानी पर लिखी गई पत्रिकाएँ पढ़ने लगा।

मुझ में केवल अज्ञानता का साहस था। जो अज्ञानता एक एस्कीमो की तेलभट्टी के बारे में हो सकती है, वही मेरी किसी जायदाद को खरीदने और बेचने के बारे में थी। किन्तु उस अपूर्व औद्योगिक जीवन को प्रारम्भ करने के लिए पैसा कैसे जुटाया जाए? मैंने अपना घर गिरवी रख दिया और 'फोरेस्टर हिल्स' में भवन निर्माण के उपयुक्त कुछ उत्तम तलिये खरीद लिए। मेरा विचार इस जमीन को काफी ऊँचे दामों बेचने का था ताकि मैं उस धनराशि द्वारा ऐश्वर्य का जीवन व्यतीत कर सकूँ। हालाँकि इसके पूर्व मुझे बालिश्तभर जमीन बेचने का भी अनुभव नहीं था। मुझे उन लोगों पर तरस आया, जो कोरी तनख्वाह लेकर ऑफिसों में गुलामी करते हैं। मैंने मन ही मन समाधान किया–शायद भगवान ने हरेक व्यक्ति को पैसा कमाने की प्रतिभा प्रदान करना उचित नहीं समझा।

एकाएक मन्दी का ऐसा चक्कर चला, ऐसा तूफान आया कि उसने मुझे झकझोर किया।

मुझे उस जमीन पर २२० डॉलर मासिक खर्च करने पड़ते थे। बड़ी मुसीबत आ पड़ी। इसके अलावा मुझे रेहन रखे मकान पर किश्तों में भुगतान भी करना पड़ता था। दाल-रोटी का भी फिकर था। बड़ी परेशानी थी। पत्रिकाओं के लिए मैं चुटकुले लिखता पर वे चुटकुले किसी की कब्र पर पढ़े गए फातिये की तरह थे। मैं उस जमीन का एक बालिश्तभर टुकड़ा भी नहीं बेच सका। मैंने जो उपन्यास लिखा वह भी बेकार गया और मैं कौड़ी–कौड़ी का मुहताज हो गया। मेरे पास सिवा टाइप रायटर तथा अपने दाँतों में भरे गए सोने के कुछ भी नहीं बचा, कि उसको रेहन रख कर कुछ रुपया जुटा लेता। दूधकेन्द्र से दूध मिलना तक बन्द हो गया। गैस कम्पनी ने गैस देना बन्द कर दिया और नतीजा यह हुआ कि हमें गैस का वह चूल्हा खरीदना पड़ा जिसमें गेसोलीन का एक

सीलिन्डर होता है और पम्प लगाने पर जिसमें से सरसराती हुई लपटें निकलने लगती हैं।

हमारे पास का कोयले का भडार समाप्त हो गया था और उधर कम्पनी ने हम पर दावा दायर कर दिया था। इसलिए हमें केवल सिगड़ी पर निर्भर रहना पडा। हमारे आसपास अमीर लोगों के मकान बन रहे थे, उन मकानों में जो लकडी काम मे लाई जाती उसके छोडे और टुकडे इधर उधर पड़े रहते थे। मैं रात के समय बाहर जाता और छोड़े और टुकड़े उठा लाता। कहाँ तो मेरी अमीर बनने की वह महत्त्वाकाक्षा और कहाँ यह दशा!

मैं इतना चिन्तित हो गया कि नींद तक गायब हो गई। मै प्रायः आधी रात के समय उठ जाता और घूमने के लिए बाहर निकल पड़ता। घण्टों घूमता रहता ताकि थकान से नींद आ सके।

जिस जमीन को मैंने खरीदा था वह मेरे हाथ से निकल गई थी और मेरा सारा परिश्रम व्यर्थ हो गया था।

बैंक ने रेहन रखे मेरे मकान को अपने कब्जे में कर लिया और मैं अपने परिवार सहित बेघर हो गया।

फिर भी किसी तरह हमने कुछ डॉलरों का इन्तजाम किया और छोटा-सा मकान किराए पर ले लिया। वे सन् १९३३ के अन्त के दिन थे। मैं एक दिन एक लकडी के खोखे पर बैठ कर अपनी, परिस्थिति पर विचार करने लगा। मुझे अपनी माँ की पुरानी बात याद आई। वह कहती थी, 'अब पछताए होत क्या जब चिडियाँ चुग गईं खेत।

किन्तु यहाँ मेरा खेत नहीं चुगा गया था, खून चूसा गया था।

मैं वहाँ बैठा बैठा सोचता रहा। मेरे मन मे यकायक विचार आया कि मैं रसातल में पहुँच कर भी जिन्दा रहा हूँ। अब इससे अधिक क्या गिरूँगा। अब तो उठना ही है।'

मैं उन वस्तुओं के बारे में सोचने लगा, जो रेहन के बाद भी मेरे पास सम्पति के रूप में बच गई थीं—मेरे पास अपना स्वास्थ्य था और अपने मित्र भी। मैंने नये सिरे से अपना काम शुरू करने का विचार किया और अतीत की चिन्ता छोड़ दी। मैं अपनी माँ के उन शब्दो को रोज दुहराता—'अब पछताए होत क्या जब चिडियाँ चुग गईं खेत।'

जिस शक्ति को मैं चिन्ता करने में व्यय करता उसे अपने काम में लगाने लगा। धीरे धीरे मेरी स्थिति सुधरने लगी। अब मैं अपने को भाग्यशाली समझता हूँ कि मुझे इन सारी मुसीबतों में से गुजरना पड़ा। इनसे मुझे ताकत, धैर्य और आत्मविश्वास प्राप्त हुआ। दुरावस्था क्या होती है, यह मैं अब अच्छी तरह जानता हूँ। दुरावस्था में मनुष्य मर नहीं जाता। वह अपने अनुमान से भी अधिक, उसका मुकाबला कर सकता है। जब कभी छोटी छोटी चिन्ताएँ, मुसीबतें और अनिश्चितताएँ

मुझे दुख देने लगती हैं तो मैं अपने उस दिन का स्मरण करता हूँ जब लकड़ी के पिटारे पर बैठे बैठे मैंने सोचा था कि "रसातल में पहुँच कर भी मैं जिन्दा रहा हूँ। इससे अधिक अब क्या गिरूँगा। अब तो उठना ही है।"

इसलिए इन सिद्धान्तों को ध्यान में रखिए—हथेली पर सरसों न उगाइये, होनी को स्वीकार कर लीजिये, यदि रसातल में पहुँच चुके हैं तो ऊपर उठने का प्रयत्न कीजिये।

चिन्ता जैसे प्रबल शत्रु से मेरा संघर्ष

लेखक : डेंप्सी

कुश्ती के अपने जीवन में मैंने चिन्ता को किसी भी घुँसेबाज की तुलना में अधिक प्रबल पाया है। मैंने सोच लिया था कि चिन्ता को रोकने का प्रयत्न करना चाहिये, नहीं तो चिन्ता शक्ति का ह्रास कर देगी और सफलता में बाधक बन जाएगी। अतः धीरे धीरे मैंने स्वय एक उपाय खोज निकाला जो निम्नलिखित है—

(१) कुश्ती के समय अपने आपको हिम्मत बधाने के लिए मैं मन ही मन बातें करता। उदाहरणार्थ—जब मैं फिरपो से लड़ रहा था, मन ही मन दुहराता रहा—"मुझे कोई नहीं हरा सकता। वह मुझे चोट नहीं पहुँचा सकता, मैं उसके घूसो की परवाह नहीं करूँगा। मुझे चोट नहीं लगेगी। कुछ भी हो मैं अडा रहूँगा।" इस प्रकार के प्रेरक विचारों से मुझे पर्याप्त सहायता मिली। इन्होंने मेरे दिमाग को इतना व्यस्त रखा कि मुझे घूँसों के प्रहार का पता ही न चला। कुश्ती के जीवन में कई बार मेरे होठ कट गए थे और आखों पर चोट आ गई थी। पसलियाँ भी तडक गईं थीं। फिरपो ने एक बार मुझे अखाड़े से बाहर उठा फेंका। मैं एक सवाददाता के टाइप-राइटर पर जा गिरा और उसे तोड़ बैठा। किन्तु फिरपो के एक भी घूँसे की चोट मैंने महसूस नहीं की। केवल एक बार मुझे घूँसे की चोट जरूर महसूस हुई जब लेस्टर जॉनसन ने मेरी तीन पसलियाँ तोड़ दी थीं। उस घूँसे की चोट की मैंने परवाह नहीं की, किन्तु उससे मुझे सांस लेने में कठिनाई होने लगी थी। मैं ईमानदारी से कहता हूँ कि उस घूँसे के अलावा मैंने कभी किसी घूँसे की परवाह नहीं की।

(२) दूसरा उपाय यह था कि मैं चिन्तित रहने की मूर्खता का अपने आपको स्मरण दिलाता रहता। मुझे अधिकाश चिन्ता उस समय होती जब बड़ी कुश्ती के पहले मैं उसके लिए तैयारी करता। प्रायः कई रातों तक मैं करवटे बदलता रहता। चिन्ता के कारण नींद नहीं आती, मुझे भय रहता कि कहीं मेरा हाथ न टूट जाए, कहीं मेरे टखनों में मोच न आ जाए, कहीं आँखों पर चोट न लगे। इस चिन्ता के कारण कुश्ती के पहले दौर में मैं अपने घूँसे ठीक ढग से नहीं जमा पाता था। जब

मैं हिम्मत हार जाता तो बिस्तरे से उठ कर शीशे के सामने जा खड़ा होता और मन ही मन कहता "तुम कितने मूर्ख हो, जो बात कभी हुई ही नहीं और न कभी होगी, उसकी चिन्ता कर रहे हो? जिन्दगी छोटी है, कुछ वर्ष ही तो जीने मिलता है, फिर आनन्द से क्यों न जिया जाय? मैं मन ही मन कहता – स्वास्थ्य से बढ़ कर कोई भी वस्तु महत्वपूर्ण नहीं है। मैं अपने को स्मरण दिलाता कि अनिद्रा और चिन्ता से स्वास्थ्य गिर जाएगा। इस प्रकार वर्षों तक लगातार अपने आपको प्रेरणा देने का फल यह हुआ कि मुझ पर अपने ही शब्दों का प्रभाव पड़ने लगा और मैंने अपनी चिन्ताएँ छोड़ दीं।

तीसरा तथा सर्वोत्तम उपाय जो मैंने किया वह यह था कि कुश्ती के पहले मैं प्रार्थना करता था। कुश्ती के लिए तैयारी करते समय भी मैं दिन में कई बार प्रार्थना करता। अखाड़े में भी कुश्ती की घंटी बजने के पूर्व प्रार्थना करता। उसके फलस्वरूप मैं साहस और विश्वास के साथ लड़ पाता। अब भी रात को सोने के पूर्व मैं सदा प्रार्थना कर लेता हूँ। ईश्वर को धन्यवाद दिये बिना मैं कभी भोजन नहीं करता। भगवान ने भी हजारों बार मेरी प्रार्थना सुनी है।

मैंने अनाथालय से दूर रहने के लिए भगवान से प्रार्थना की

लेखिका : केथरीन हॉल्टर

ये गृहस्थ महिला हैं और १०७४ रीथ, यूनिवरसिटी सीटी १४, मिसौरी में रहती हैं

जब मैं बच्ची थी मेरा जीवन आतंकमय था। मेरी माँ को दिल की बीमारी थी। मैं रोज उसे बेहोश होकर जमीन पर गिरते देखती थी। हम सब को भय था कि वह अब मर जाएगी। मेरा कुछ ऐसा विश्वास था कि जिन छोटी बच्चियों की माताएँ मर जाती हैं उन्हें 'सेन्ट्रल वेजलियन' अनाथालय में भेज दिया जाता है। यह अनाथालय मिसौरी के वॉरेनटन नामक छोटे कस्बे में था, जहाँ मैं रहती थी। वहाँ जाने के विचार मात्र से मैं काँप उठती थी। जब मैं ६ वर्ष की थी, निरन्तर भगवान से प्रार्थना करती थी कि हे भगवान, मेरी माँ को मेरे बड़े हो जाने तक जिन्दा रख, ताकि मुझे अनाथाश्रम में न जाना पड़े।

२० वर्ष के बाद मेरे भाई मैनर को एक बार जबर्दस्त चोट लगी। उसको उससे अत्यधिक पीड़ा होती थी। दो वर्ष बाद तो वह मर ही गया। उसकी ऐसी दशा हो गयी थी कि न तो वह कुछ खा सकता था और न बिस्तर में करवट ही ले सकता था। उसकी पीड़ा को मिटाने के लिए हर तीसरे घंटे मुझे उसे 'मोरफिन टाइपोडर मिक्स०' देना पड़ता था। रात-दिन यही काम था। दो साल तक मैं यही करती रही। उन दिनों मैं मिसौरी अन्तर्गत वॉरेन्टन के सेन्ट्रल वेजलियन कॉलेज में संगीत

की, शिक्षा देती थी। जब मेरे पडौसी मेरे भाई को पीड़ा से कराहते सुनते, वे मुझे कॉलेज मे टेलिफोन कर देते और मैं सगीत कक्षा छोड़ कर उसे मोरफीन का इन्जेक्शन देने घर भाग आती। हर रात सोने के पहले मै तीन तीन घटे के क्रम से घडी का अलार्म लगाती ताकि मैं अपने भाई की देखभाल के लिए जग सकूं। मुझे याद है कि मै जाड़ो की रातों में दूध की बोतल को खिड़की के बाहर रख देती। वहाँ वह दूध जम कर आइस क्रीम की तरह बन जाता। उसे खाने में मुझे बडा आनन्द आता था। आइस क्रीम खाने की इच्छा भी मुझे जगने मे अतिरिक्त प्रेरणा देती थी।

उन सभी कठिनाइयो से मैंने दो ऐसी बातें सीखीं, जिनसे मैं आत्म-ग्लानि एव नैराश्य से बच सकी और मेरा जीवन क्लेश और कटुता से बच गया। पहली बात तो यह थी कि मैंने अपने आपको बारह से चौदह घटों तक सगीत सिखाने में व्यस्त रखा ताकि मुझे अपने कष्टों का विचार करने को समय ही न मिले। और जब मुझे अपने आप पर दुःख प्रकट करने का मन होता तो मै मन ही मन दुहराती—देखो, जब तक तुम चल फिर सकती हो, खा पी सकती हो और दुःखद पीडा से मुक्त हो, तब तक इस ससार में तुम्हें यह नहीं भूलना चाहिए कि तुम सुखी हो।

मैंने यह निश्चय किया कि प्रभु की अनुकम्पाओं के लिये उसका आभार मानने की मानसिक दशा उत्पन्न करूँ। हर सवेरे जब मैं जगती, ईश्वर को धन्यवाद देती कि परिस्थितियाँ जैसी हैं उनसे अधिक बिगडी हुई नहीं हैं। मैंने यह भी निश्चय कर लिया कि अपने सकटों के बावजूद भी अपने को मिसौरी के वॉरेनटन के लोगों मे सबसे सुखी समझूँगी। यह ठीक है कि मुझे अपने इस उद्देश्य में सफलता न मिली किन्तु अपने नगर की सबसे अधिक कृतज्ञ महिला बनने में मुझे सफलता अवश्य मिली। मैं यह भी जानती हूँ कि मेरा कोई भी साथी मुझसे कम चिन्तित नहीं रहता था।

मिसौरी की इस सगीत शिक्षिका ने इस पुस्तक में वर्णित दो सिद्धान्तों का प्रयोग किया था—उसने अपने आपको व्यस्त रखा और प्रभु प्रदत्त अनुकम्पाओं का लेखा रखा। सम्भव है यही पद्धति आपकी भी सहायता कर सके।

मेरा व्यवहार उन्मादग्रस्त स्त्रीका-सा था

लेखक — केमेरोन शिप

ये पत्रिकाओं में लिखते थे—

कई वर्षों से मै केलिफोर्निया के 'वार्नर ब्रदर्स स्टुडियो' के प्रचार विभाग में बड़े सुख से काम करता रहा हूँ। मैं अकेला था और फीचर लिखता था। मैं वार्नर ब्रदर्स के कलाकारों के बारे में अखबारों और पत्रिकाओ में कथानक लिखता।

एकाएक मेरी पदोन्नति हो गई। मैं असिस्टेन्ट पब्लिसीटी डायरेक्टर बना दिया गया। वास्तव में बात यह थी कि प्रशासकीय नीति में परिवर्तन हो गया था और इस कारण मुझे 'एडमिनिस्ट्रेटिव असिटेन्ट' का प्रभावशाली पद दिया गया था।

मुझे एक निजी रेफरीजीरेटर के साथ एक बहुत बड़ा ऑफिस मिला। मेरी सहायता के लिए दो सेक्रेटरी थे, पचहत्तर लेखक, एक्स्प्लोयटर और रेडियोमेन थे। मैं इससे अत्यधिक प्रभावित हुआ। मैंने एक नया सूट खरीद लिया और रोब से दूसरों से बातें करने लगा। मैंने एक नई फाइलिंग पद्धति अपनाई। मैं विश्वास के साथ निर्णय लेता और जल्दी जल्दी भोजन करके काम में लग जाता।

मुझे विश्वास हो गया था कि वारनर ब्रदर्स की सपूर्ण जनसम्पर्क नीति मुझ पर ही आधारित है। मैंने जान लिया था कि बेड डेविस, ओलिडियाडी हेविलेण्ड, जेम्स केगने, एडवर्ड जी, रोबीन्सन, एरोलफ्लिन हमफ्री बॉगार्ट, एन. शेरीडन, एलेक्सी स्मीथ और एलन हेले आदि का व्यक्तिगत और सार्वजनिक जीवन पूर्णतया मेरे हाथों में है।

एक महीना भी नहीं हो पाया था कि मुझे उदरव्रण की आशका हुई। शायद वह केन्सर था।

युद्ध सम्बन्धी उस समय की मेरी प्रमुख प्रवृत्ति यह थी कि मैं स्क्रीन पब्लिसीटी गिल्डकी वॉर एक्टीविटी कमेटी का प्रधान था। मुझे उस में रूचि थी। गिल्ड की सभाओं में अपने मित्रो से मिलना मुझे अच्छा लगता था। लेकिन बाद में ये बैठके मेरे लिए भयकारक सिद्ध हुई। प्रत्येक बैठक के बाद मैं बहुत बीमार पड़ जाता था। घर जाते समय रास्ते मे प्रायः मुझे अपनी कार को रोक लेना पड़ता था। मैं सिकुड़ कर बैठ जाता और फिर गाड़ी चलाता। मेरे पास काम बहुत था और समय कम। सभी काम महत्वपूर्ण थे और मै उन्हें करने में असमर्थ था।

सचमुच ही यह मेरे समस्त जीवन की अत्यन्त दुःखद पीडा थी। हर समय मैं पीडा से ग्रस्त रहता था। मेरा वजन घट गया था, मैं सो नहीं पाता था और पीडा जरा भी कम नहीं होती थी।

इसलिये मैं आन्तरिक चिकित्सा के एक प्रसिद्ध विशेषज्ञ के पास परामर्श के लिए गया। विज्ञापन कार्य से सम्बन्ध रखने वाले एक व्यक्ति ने मुझे उसके बारे में बतलाया था। उसने कहा कि उस चिकित्सक के बहुत से मरीज विज्ञापन कार्य से सम्बन्ध रखते हैं।

उस चिकित्सक ने बहुत ही सक्षेप में मुझसे पूछताछ की और मुझे इतना ही बताना पड़ा कि पीडा कहाँ होती है और मैं क्या काम करता हूँ? मुझे लगा कि उसे मेरी बीमारी की अपेक्षा मेरे काम से अधिक दिलचस्पी है। लेकिन उसके बाद उस पर मेरा विश्वास शीघ्र ही जम गया, क्योंकि दो सप्ताह तक उसने रोज मेरी जॉच की और सभी आवश्यक परीक्षण कर लिए। एक्सरे और फ्लोरोस्कोप के परीक्षणों के बाद अन्त में उसने मुझे बीमारी की रीपोर्ट सुनने के लिए बुलाया।

उसने पीठ के सहारे झुक कर मुझे सिगरेट देते हुए कहा, "मिस्टर शीप हमने कई सूक्ष्म परीक्षण कर लिए हैं। ये परीक्षण आवश्यक भी थे। यद्यपि प्रारम्भिक जॉच के समय ही मैंने जान लिया था कि तुम्हें उदरव्रण की बीमारी नहीं है।"

"किन्तु मैं यह जानता था कि जिस तरह के व्यक्ति तुम हो, जिस प्रकार का काम तुम करते हो, इस आधार पर तुम कभी मेरा विश्वास नहीं करोगे। जब तक कि तुम्हें इस बारे में कुछ प्रमाण न दिखा दिये जाएँ।"

उसने मुझे चार्ट एव एक्सरे बताया और मुझे समझाया कि मुझे व्रण की बीमारी नहीं है।

तब डॉक्टर ने कहा कि इन सभी परीक्षणों के लिए तुम्हें काफी रुपया देना पड़ा, पर कोई बात नहीं। यह कह कर उसने मुझे चिन्ता छोड देने का नुस्खा बताया।

जैसे ही मैंने शिकायत के तौर पर उसे कुछ कहना चाहा कि उसने मुझे रोक दिया और कहा – मैं जानता हूँ कि तुम एकदम इस नुस्खे का प्रयोग नहीं करोगे, इसलिए मैं तुम्हें एक सहारा देता हूँ। ये कुछ 'बेलाडोना' की गोलियाँ हैं। इनमें से जितनी भी तुम चाहो ले लिया करो। जब ये खत्म हो जायँ मेरे पास चले आना और मैं तुम्हें और दे दूँगा। इनसे तुम्हें कोई हानि नहीं होगी। यह हमेशा तुम्हें राहत देती रहेंगी।

"लेकिन याद रखो तुम्हें इनकी कतई जरूरत नहीं है। तुम्हारे लिए जो जरूरी है वह है—चिन्ता का परित्याग।"

"अगर तुमने फिर से चिन्ता शुरू की तो तुम्हें वापस यहाँ आना पड़ेगा और मैं तुमसे भारी फीस वसूल करूँगा। ठीक है न !"

मैं चाहता तो यह था कि उस उपदेश का मुझ पर असर होता और मै तत्काल ही चिन्ता छोड़ देता। किन्तु ऐसा हुआ नहीं। जब कभी कोई चिन्ता सर पर आने को होती मैं गोलियाँ लेना शुरू कर देता। उसका असर भी अच्छा होता और मैं अपने आपको एकदम स्वस्थ महसूस करने लगता।

लेकिन बाद में मुझे लगा कि मैं व्यर्थ ही गोलियाँ ले रहा हूँ जब कि मैं हट्टा-कट्टा हूँ। मैं लिंकन की तरह ही लम्बा चौड़ा था। मेरा वजन लगभग दो सौ पौन्ड था फिर भी मैं राहत पाने के लिए छोटी सफेद गोलियाँ ले रहा था। मेरा व्यवहार एक उन्मादग्रस्त स्त्री की तरह था। जब मेरे मित्र मुझे गोलियाँ लेने का कारण पूछते तो मुझे उन्हें सचाई बताने में शर्म आती। धीरे धीरे मैं अपने आप पर हँसने लगा। मन ही मन कहता "देखो केमेरोन शिप! तुम मूर्खता कर रहे हो। तुम अपने आप को और अपनी इन छोटी प्रवृत्तियों को आवश्यकता से अधिक महत्व दे रहे हो। वेट्डेविस, जेम्स केगने और एडवर्ड जी, रोबीन्सन तो पहले से ही प्रसिद्ध हैं। यदि आज तुम मर जाओ तो भी वार्नर ब्रदर्स और उनके कलाकार तुम्हारे बिना ही काम

चला लेंगे। आइजनहावर, जनरल मार्शल, मेकार्थर, जीमी-डू-लिटल और एडमिरल-किंग ही को लो, वे बिना किसी प्रकार की गोलियाँ लिए ही युद्ध का प्रबन्ध कर रहे हैं और एक ओर एक तुम हो कि 'क्रिन पब्लिसीटी गिल्ड' की वार एक्टीविटी कमेटी के प्रधान का काम बिना गोलियाँ लिये नहीं कर पाते। पेट की आतों को ऐंठन से बचाने के लिये तुम्हें गोलियाँ लेनी पड़ती हैं।

बाद में बिना गोलियाँ लिए ही मैं काम चलाने लगा। इससे मुझे गर्व का अनुभव होने लगा। कुछ दिनों बाद मैंने गोलियों को नाली में फैंक दिया और हर रात समय पर घर लौट कर भोजन करने के पूर्व थोड़ी झपकी लेने लगा। इस प्रकार धीरे धीरे मैं स्वस्थ जीवन व्यतीत करने लगा। इसके बाद मैं उस डॉक्टर के पास फिर कभी नहीं गया।

किन्तु उसका मुझ पर बड़ा एहसान है, जिसका मूल्य उस समय दी गई भारी फीस से भी अधिक है। क्यों कि उसने मुझे अपने आप पर हँसना सिखाया। सबसे बुद्धिमानी की बात तो उसने यह की कि वह मुझ पर हँसा नहीं और न उसने मुझे यह कहा कि चिन्ता की कोई बात नहीं। उसने बड़ी गम्भीरता से मेरी जाँच की और मेरी लाज रख ली। उसने गोलियों का एक छोटा-सा डिब्बा देकर मुझे चलता किया। किन्तु उस समय वह जानता था, जैसा कि मैं आज जानता हूँ कि वे गोलियाँ रोग के लिए नहीं थी। मानसिक परिवर्तन के लिए थीं।

इस कहानी की सीख यह है कि जो व्यक्ति आज इस प्रकार की गोलियाँ ले रहा हो, अच्छा हो कि वह इस सातवें परिच्छेद को पढ़े और आराम करे।

अपनी पत्नि को रकाबियाँ धोते देख कर मैंने चिन्ता का परित्याग करना सीखा

लेखक : रेवरेन्ड विलियम वुड

२०४ हुलबर्ट स्ट्रीट, चार्ल्स वाक्स, मिशीगन

कुछ वर्ष पूर्व मैं उदरपीड़ा से बहुत पीड़ित था। हर रात को मैं दो तीन बार जग जाता था और भयंकर पीड़ा के कारण सो नहीं पाता था। मैंने अपने पिता को पेट के केन्सर से मरते देखा था और मुझे भय था कि मेरे पेट में भी कहीं केन्सर या उदरव्रण न हो गया हो। इसलिए मैं मिशीगन अन्तर्गत पेटोस्की के बायरन्स क्लिनिक में गया। वहाँ मैं जाँच के लिये गया था। उदर रोग के विशेषज्ञ डाक्टर लिला ने फ्लोरोस्कोप और एक्सरे द्वारा मेरे पेट की जाँच की। उन्होंने मुझे नींद की दवा देते हुए विश्वास दिलाया कि मेरे पेट में व्रण या केन्सर नहीं है।

उन्होंने कहा कि मेरे पेट में जो पीड़ा होती है उसका कारण मनोवेगजन्य दबाव है। मैं एक चर्च का मिनीस्टर था इसलिये पहला प्रश्न उन्होंने यह किया कि क्या आप के चर्च की कमेटी में कोई बूढ़ा खक व्यक्ति तो नहीं है। जिसका सब काम आप ही को करना पड़ता हो ?

जो बात उसने मुझे कही उसे मैं पहले ही से जानता था। मैं बहुत काम कर रहा था। रविवार के दिन प्रवचन करने के अतिरिक्त चर्च की अनेक अन्य प्रवृत्तियों का बोझा भी मेरे सर पर था। मैं रेड क्रॉस और किवानिस का प्रधान था। सप्ताह में दो तीन अन्तिम सस्कारों में भाग लेता और कई अन्य प्रवृत्तियों में भी हाथ बँटाता।

काम का दबाव मुझ पर निरतर बना रहता था। कभी भी आराम नहीं मिलता था। मै सदैव तनाव, उतावल और त्रिशकु की अवस्था में रहता था। मुझे हर बात की चिन्ता होने लगती। मेरा कलेजा निरन्तर कॉपता रहता। पीडा इतनी अधिक थी कि मैंने प्रसन्नता से डाक्टर लिल्ग की सलाह के अनुसार काम करना स्वीकार कर लिया। सप्ताह में हर सोमवार को मैं छुट्टी रखता। और बहुत सी जिम्मेदारियों और प्रवृत्तियों से भी मैंने छुट्टी ले ली।

एक दिन जब अपनी डेस्क साफ कर रहा था, मुझे एक युक्ति सूझी–जिसने मेरी बहुत सहायता की। मैं कुछ प्रवचन के कागज और अन्य सामग्री देख रहा था। मैंने उनको एक एक करके रद्दी की टोकरी में फैंक दिया। यकायक मैं रुक गया और मन ही मन कहा–" बिल जो व्यवहार तुम इन पुराने कागजों के साथ कर रहे हो वही अपनी चिन्ताओ के साथ भी क्यों नहीं करते ? अपनी कल की बीती समस्याओं को इसी तरह मसल कर रद्दी की टोकरी में क्यों नहीं फैंक देते ? इस युक्तिने तत्काल ही मुझे ऐसी प्रेरणा दी कि मेरे कन्धों पर से बहुतसा भारी बोझ हट–सा गया। तब से मैंने यह नियम बना लिया है कि जिन समस्याओं के बारे में मैं कुछ कर–धर न सकूँ उन्हें रद्दी की टोकरी में डाल दूँ।

एक दिन की बात है, मेरी पत्नी रकाबियॉ धो रही थी और मैं उन्हें पौंछ रहा था। यकायक मुझे एक युक्ति सूझी। मेरी पत्नी रकाबियाँ धोते धोते गीत गुनगुना रही थी और मैंने मन ही मन सोचा–यह कितनी सुखी है ? अठारह वर्ष हुए हमें विवाह किये और तब से वह बराबर रकाबियॉ धोती चली आ रही है। यदि शादी के समय ही उसने सोच लिया होता कि आने वाले अठारह वर्षों तक मुझे यही काम करते रहना है तो उन झूठी रकाबियों का उसके सामने एक अम्बार–सा नजर आता और उस अम्बार को धोने का विचार मात्र उसको आतकित कर देता।

फिर मैंने सोचा—मेरी पत्नी को रकाबियॉ धोने में किसी प्रकार की आपत्ति इसलिए नहीं होती कि उसे एक बार में एक दिन की रकाबियाँ ही धोनी पड़ती हैं। यह सोचकर मुझे अपनी गलती महसूस हुई और मैंने देखा कि मैं बीते 'कल' की,

'आज' की और आने वाले 'कल' की सभी रकाबियाँ, एक साथ धोने का प्रयास कर रहा था।

मुझे अपनी मूर्खता का भान हो आया। मैं हर रविवार की सुबह लोगों को जीवन व्यवहार पर प्रवचन देता था। पर स्वयं तनाव, चिन्ता और उतावले का जीवन बिता रहा था। मुझे अपने आप पर लज्जा हो आई।

अब मुझे चिन्ताएँ नहीं सतातीं। मेरे पेट में दर्द नहीं होता, मुझे अनिद्रा की बीमारी नहीं। मैं बासी चिन्ताओं को समाप्त कर के रद्दी की टोकरी में फेंक देता हूँ। अब मैं आने वाले कल की जूठी रकाबियों को आज ही धो डालने की कोशिश नहीं करता।

क्या आपको उस पुस्तक में उल्लेखित एक सूत्र याद है—"भूत, वर्तमान और भविष्य के भार को एक साथ वहन करने में प्रबल से प्रबल व्यक्ति भी लडखडा जाता है" इसलिए अब भी सम्भल जाइये।

व्यस्त रहने में मुझे अपनी समस्या का हल मिला

लेखक : डेल ह्यूजेस

'पब्लिक एकाउन्टेन्ट' ६०७ साउथ आर्मिड एवेन्यु, ब्रेमीटी, मिशीगन

१९४३ की बात है। मैं न्यु मेक्सिको अन्तर्गत अल्बुकर्क वेटरन्स हॉस्पिटल में भर्ती हुआ। मेरी तीन पसलियाँ टूट गई थी और फेफड़े में छेद हो गया था। यह चोट मुझे उस समय लगी जब हम 'हवाई' द्विपों में सैनिक अभ्यास कर रहे थे। मैं बार्ज (नाव) से तट पर कूदने की तैयारी कर रहा था कि इतने में एक जोर की लहर आयी जिससे बार्ज उठ गया और अपने आपको सम्भाल नहीं सकने के कारण मैं तट पर आ गिरा। मैं इतने जोर से गिरा कि मेरी एक पसली टूट कर मेरे दाहिने फेफड़े में जा घुसी।

अस्पताल में तीन महीने बिताने के बाद मुझे अपने जीवन का सबसे गहरा धक्का लगा। डाक्टर ने मुझे यह बतलाया कि मेरी स्थिति में बिल्कुल सुधार नहीं हो रहा है। कुछ सोचविचार के बाद मैंने महसूस किया कि चिन्ता के कारण ही मैं ठीक नहीं हो रहा हूँ। मैं अपनी जिन्दगी में बड़ा व्यस्त रहता आया था किन्तु उन तीन महीनों में मैं चौबिसों घण्टे बिस्तर पर पड़ा-पड़ा सोचने के सिवा कोई काम नहीं करता था। जितना सोचता, उतनी ही अधिक चिन्ता होती। मुझे चिन्ता थी कि मैं इस दुनिया में फिरसे अपनी पूर्व दशा को प्राप्त कर सकूँगा या नहीं, कहीं जिन्दगी भर विकलांग ही तो न रहूँगा? मुझे यह भी चिन्ता थी कि विवाह करके सामान्य जीवन व्यतीत कर सकूँगा या नहीं?

मैंने डाक्टरों से कन्ट्री-क्लब नामक वॉर्ड में मुझे ले जाने की प्रार्थना की, क्योंकि, वहाँ पर मरीजों को अपनी इच्छा के अनुसार काम दिया जाता था।

इस कन्ट्री-क्लब वॉर्ड मे मेरी 'कोन्ट्राक्ट ब्रिज' मे रुचि बढी। मैने छः सप्ताह इस खेल को सीखने, साथियों के साथ खेलने और इस विषय पर लिखी गई कल्बर्स्टन की किताबें पढने मे बिता दिये। तब से मैं जब तक अस्पताल मे रहा, हर सन्ध्या को ब्रिज खेलता रहा। मैंने तैल-चित्र बनाने में रुचि लेना आरम्भ किया। एक शिक्षक से प्रति दिन दोपहर को तीन से पॉच तक यह कला सीखता था। मेरे कुछ चित्र तो अभिव्यक्ति की दृष्टि से बहुत ही स्पष्ट और सुन्दर थे। मैने लकड़ी पर खुदाई की बहुत सी पुस्तकें भी पढी और उसमे बड़ा आकर्षण पाया। मैंने अपने आपको इतना व्यस्त बना दिया कि अपनी शारीरिक दशा के सम्बन्ध में चिन्तित होने का मुझे समय ही नहीं मिलता था। मैंने रेडक्रॉस से दी गई मनोविज्ञान सम्बन्धी पुस्तकें पढी। तीन महीनों के बाद डॉक्टर लोग मेरे पास आए और उस आश्चर्यजनक प्रगति पर मुझे बधाई दी। उनके वैसे मधुर शब्द मैंने जीवन में पहली बार सुने थे। मैं खुशी के मारे नाचना चाहता था।

कहने का अर्थ यह है कि जब तक मै बिस्तर पर पड़ा भविष्य की चिन्ता मे घुलता रहा, अपने स्वास्थ्य मे मैंने कोई तरक्की नहीं की। चिन्ता का विष मेरे शरीर म घुलता जा रहा था। यहॉ तक की टूटी पसलियॉ भी ठीक नहीं हो पायी। किन्तु जैसे ही मैंने कोन्ट्राक्ट ब्रिज खेलने में, तैल-चित्र बनाने मे, और लकड़ी पर खुदाई करने मे अपना ध्यान लगाया कि डाक्टरों ने आकर मुझे अपने स्वास्थ्य मे आश्चर्यजनक प्रगति करने पर बधाई दी। अब मैं सामान्यतः स्वस्थ जीवन व्यतीत कर रहा हूँ और मेरे फेफड़े भी आपके फेफड़ों की तरह ही स्वस्थ हैं।

बर्नार्ड शॉ की बात याद रखिए—"अपने सुख-दुःख के विषय में चिन्ता करने का समय मिलना ही आपके दुःख का कारण है। इसलिए अपने आपको व्यस्त रखिये-एकदम व्यस्त!"

समय बहुत-सी समस्याओं को अपने आप हल कर देता है।

लेखकः—लुई. टी. मोन्टेन्ट जूनियर

सेल्स और मार्केट विश्लेषक ११४ वेस्ट ६४ वीं स्ट्रीट, न्यूयॉर्क

चिन्ता ने मेरे जीवन के दस वर्ष घटा दिये। अठारह से अट्ठाईस तक के वे दस वर्ष मेरे युवा जीवन के अत्यन्त सफल और वैभवपूर्ण वर्ष होने चाहिये थे।

अब मैं महसूस करता हूँ कि वे दस वर्ष केवल मेरी ही गलती से नष्ट हुए थे।

मुझे हर बात की चिन्ता रहती थी—नौकरी की, स्वास्थ्य की, परिवार की और अपने हीन भाव की। मैं लोगों से मिलने से इतना डरता था कि मौका पाते ही

उनकी आँख चुरा कर बच निकलता। जब कभी कोई मेरा मित्र गली में मिल जाता, मैं उसे अनदेखा कर देता। क्योकि मुझे भय रहता था कि कहीं वह मुझे फटकार न दे।

अनजान आदमियो से मिलने में तो मुझे बहुत ही भय लगता था। परिणाम यह हुआ कि नौकर रखने वाले तीन विभिन्न महानुभावो से मुझे यह कहने का साहस नहीं हुआ कि मै काम कर सकता हूँ। इस प्रकार मुझे नौकरी से हाथ धोना पडा।

तब आठ वर्ष पूर्व, एक दोपहर को मैंने चिन्ता पर काबू पा लिया और तब से मैं चिन्ता नहीं करता। उस दोपहर को मैं एक ऐसे व्यक्ति के कार्यालय मे था जिसको मुझ से भी अधिक चिन्ताएँ थीं। किन्तु फिर भी उसके समान प्रसन्न-चित्त व्यक्ति मैंने अब तक कहीं नहीं देखा। सन् १९२९ मे उसने खूब धन कमाया पर बाद में कौड़ी-कौड़ी गवॉ दी। सन् १९३२ मे उसने फिर धन कमाया और फिर खो दिया। सन् १९३७ में भी उसने धन कमाया और उसे भी खो दिया। वह दीवालिया हो गया था और उसके दुश्मनो और कर्जदारों ने उसका पीछा पकड लिया था। उसकी मुसीबतें ऐसी थीं कि और कोई होता तो पागल हो गया होता या आत्महत्या कर लेता। किन्तु जिस तरह चिकने घड़े पर पानी का असर नहीं होता उसी तरह मुसीबतों का उस पर कोई असर नहीं हुआ।

आठ वर्ष पूर्व उसके ऑफिस में बैठे मुझे उससे स्पर्धा हो आई और मै सोचने लगा, काश! भगवान ने मुझे भी उसके समान बनाया होता!

बातचीत के दौरान में उसने मुझे एक पत्र दिखाया जो उसे उसी सवेरे मिला था और मुझे उसे पढने के लिए कहा। वह पत्र डॉट-फटकार से भरा हुआ था। उसमें कितने ही खेदपूर्ण प्रश्न उठाये गये थे। यदि मुझे ऐसा पत्र मिला होता तो मुझे काठ मार जाता। मैंने पूछा—"बिल, अब तुम इसका क्या उत्तर दोगे?"

उत्तर में बिल ने कहा—"देखो, मैं तुम्हें एक रहस्य बताता हूँ। भविष्य में जब कभी भी तुम्हें चिन्ता हो तो एक पेन्सिल और कागज लेकर बैठ जाओ और अपनी चिन्ता का विस्तृत ब्योरा लिख डालो। फिर उस कागज को दाहिने हाथ की तरफ डेस्क के नीचे के ड्रावर में रख दो। कुछ दिन निकल जाने दो और फिर उसे देखो। यदि जो कुछ तुमने लिखा था उसकी उस समय भी तुम्हें चिन्ता हो तो उस कागज को फिर उसी जगह रख दो, और कुछ दिनों तक वहीं रहने दो। वह वहाँ सुरक्षित रहेगा। उसका कुछ नहीं बिगडेगा। उस दरमियान तुम्हें चिन्तित करने वाली समस्या के बारे में बहुत कुछ घट-बढ हो सकती है। मेरा ऐसा अनुभव है कि धैर्य रखने पर कष्ट देने वाली चिन्ता बुदबुदे की तरह विलीन हो जाती है।

उस सलाह ने मुझ पर गहरा प्रभाव डाला। 'अब मैं वर्षों से बिल की सलाह का पालन करता आ रहा हूँ और फलस्वरूप आज मैं कभी चिन्ता नहीं करता।

समय, बहुतसी समस्याओं को अपने आप हल कर देता है। आज जिस समस्या को लेकर आप चिन्तित हैं, हो सकता है समय उसे अपने आप हल कर दे।

बोलने और हिलने–डुलने की मुझे मनाई थी।

लेखक :— जोसेफ – एल – रयान

सुपरवाइजर फोरेन डिविजन, रोयल टाइप-राइटर कम्पनी जडसनप्लेस
रोकवीले सेन्टर, लोग आइलैंड, न्यूयॉर्क

बहुत वर्षों की बात है मैं एक मुकदमे में गवाह था और उसके लिए मुझे बहुत भारी मानसिक बोझ और चिन्ता का सामना करना पड़ा। जब मुकदमा खतम हो गया और मैं गाड़ी में बैठ कर घर लौट रहा था, मुझे यकायक शारीरिक मूर्छा ने घेर लिया। दिल की बीमारी थी। मेरे लिए साँस लेना तक असम्भव हो गया। जब मैं घर गया तो डॉक्टर ने मुझे इन्जेक्शन दिया। जब मुझे होश आया तो मैंने देखा कि अन्तिम धार्मिक सस्कार के लिए पेरिश के पादरी वहाँ मौजूद थे।

मैंने अपने परिवार के लोगों के चेहरों पर भयकर विषाद देखा। मैंने जान लिया था कि मेरी नाव डगमगा रही है। बाद में मुझे पता चला कि डॉक्टर ने मेरी पत्नी को कह दिया था कि आध घन्टे के अन्दर शायद मेरी जीवनलीला समाप्त हो जाए। मेरा दिल इतना कमजोर हो गया था कि मुझे हिलने, डुलने और बोलने की मनाई कर दी गई थी।

यद्यपि मैं कोई सन्त नहीं हूँ, फिर भी मैंने एक बात सीखी है कि ईश्वर से विवाद नहीं करना। इसलिए मैंने अपनी ऑखें बंद करके प्रार्थना की " होई सोई राम रचि राखा " होनी होकर ही रहेगी। हे राम ! होगा वही जो तुझे मन्जूर होगा।

जैसे ही मैंने इस विचार को अपनाया, मुझे राहत मिली। मेरा भय विलिन हो गया। मैंने मन ही मन सोचा, अनिष्ट क्या हो सकता है ? सिवाय इसके कि रोग तीव्र पीड़ा के साथ फिर से लौट आए और जीवन–नौका डूब जाए। अच्छा है, मैं जल्दी ही अपने परम पिता से मिल कर शान्ति प्राप्त कर लूँगा।

एक घण्टे तक मैंने कुर्सी पर बैठे दर्द के दौरे की प्रतीक्षा की। अन्त मे मैंने अपने आपसे प्रश्न किया–यदि मैं मर नहीं सका तो आगे क्या करूँगा ? मैंने निश्चय कर लिया कि अब मैं स्वास्थ्य लाभ करने का भरसक प्रयत्न करूँगा। तनाव और चिन्ता की स्थिति में अपने आपको कोसना छोड़ कर अपनी शक्ति का पुनः निर्माण करूँगा।

यह चार वर्ष पूर्व की बात है। तबसे मैंने अपनी शक्ति को इतना बढा लिया है कि डाक्टर को भी उस पर आश्चर्य होता है। मैं अब चिन्ता नहीं करता और मुझ में जीने के लिए नया उत्साह है। किन्तु ईमानदारी की बात यह है कि यदि मैंने अनिष्ट का, जो मृत्यु के रूप में मेरे सामने था, सामना न किया होता और उसे सुधारा न होता तो मेरा विश्वास है कि मैं आज तक जिन्दा नहीं रहता। यदि

मैंने अनिष्ट को स्वीकार नहीं किया होता तो अपने ही भय और आतंक से मैं मर गया होता।

आज श्री रयन इसलिये जीवित हैं कि उन्होंने चमत्कारी फारमूला-अनिष्ट का मुकाबला करो-के सिद्धान्त को अपनाया।

जब मैं एक काम हाथ में लेता हूँ तब दूसरे काम की चिन्ता बिल्कुल छोड़ देता हूँ

लेखक—ओर्डवे टीड

आप बोर्ड आफ हायर एज्युकेशन न्यूयॉर्क के चेयरमेन है।

चिन्ता एक आदत है, जिसे मैंने कई दिन हुए छोड़ दिया है। मेरा विश्वास है कि मुख्यतः तीन बातों के कारण मैं चिन्ता को अपने से दूर रख सका हूँ।

पहली बात तो यह कि विनाशकारी क्लेप को मोल लेने की मुझे फुरसत नहीं। मेरी तीन मुख्य प्रवृत्तियाँ हैं और हरेक प्रवृत्ति ऐसी है जिसमें मुझे वस्तुतः पूरा दिन लगाना होता है। मैं कोलम्बिया विश्वविद्यालय मे एक बहुत बड़ी कक्षा में भाषण देता हूँ, न्यूयॉर्कशायर के बोर्ड आफ हायर एज्युकेशन का प्रधान हूँ और हारपर एण्ड ब्रदर्स नामक प्रकाशक फर्म के आर्थिक व सामाजिक पुस्तक विभाग का अधिकारी भी हूँ। इन तीन विभिन्न प्रवृत्तियों के काम के मारे मुझे क्लेपित होने और चिन्ता में चक्कर काटने का समय ही नहीं मिलता।

दूसरी बात यह है कि जब मैं एक काम छोड़ कर दूसरा काम हाथ में लेता हूँ तो पहले काम की सभी समस्याओं को ताक पर रख देता हूँ। मुझे एक प्रवृत्ति से दूसरी प्रवृति को हाथ में लेने से उत्साह और राहत मिलती है। इससे मुझे आराम मिलता है और मेरा दिमाग स्वस्थ हो जाता है।

तीसरी बात यह है कि आफिस बन्द करते ही वहाँ की सभी समस्याओं को अपने दिमाग से निकाल बाहर कर देता हूँ। यदि ऐसा न करूँ तो वे सदा दिमाग में बनी रहें। हर काम में कुछ न कुछ ऐसी समस्याएँ होती ही हैं जो दिमाग पर छाई रहती हैं। पर यदि मैं उन सारी समस्याओं को अपने साथ घर ले जाऊँ और रात भर उन के कारण चिन्तित रहूँ तो मेरा स्वास्थ्य बिगड़ जाए और साथ ही उन समस्याओं से पार पाने की योग्यता भी मुझ में न रहे।

ओर्डवे टीड का काम करने का ढंग बहुत अच्छा है। इसके अलावा परिच्छेद १६ का नियम भी आपको याद ही होगा।

यदि मैंने चिन्ता का परित्याग न किया होता तो कभी का कब्र में लेट गया होता

लेखक — कोनी मेक

मैं ६३ वर्ष से बेस-बॉल प्रोफेशनल हूँ। सबसे पहले मैंने यह काम सन् १८८० के लगभग शुरू किया था। मुझे कोई वेतन नहीं मिलता था। हम वीरान जगहों पर खेलते और टीन के डब्बों, घोड़ों के बेकार गलपट्टों आदि से अयड़ाते रहते। जब खेल समाप्त होता, तब हम टोपी घुमाते। किन्तु उससे जो पैसा मिलता वह मेरे लिए कम पड़ता क्यों कि अपनी विधवा माँ और छोटे भाई-बहनों का एकमात्र सहारा मैं ही था। कभी कभी हमारे दल को स्ट्रॉबेरी, क्लेम बेक आदि पर गुजारा करना पड़ता।

मेरी चिन्ता के बहुत से कारण थे। केवल मैं ही एक ऐसा मैनेजर था, जिसकी टीम सात वर्षों तक दूसरों के मुकाबले में बराबर आखिरी रहती आयी थी। मैं ही एक ऐसा मैनेजर था जिसने आठ वर्षों में आठ सौ बार खेल में मात खाई थी। इन असफलताओं के कारण मैं इतना चिन्तित रहने लगा कि मेरा खाना और सोना हराम हो गया। किन्तु गत पच्चीस वर्षों से मैंने चिन्ता करना बिल्कुल छोड़ दिया है। और मेरा तो यह पक्का विश्वास है कि यदि मैंने चिन्ता का परित्याग न किया होता तो मैं कभी का कब्र में पहुँच चुका होता।

आज जब मैं अपने पिछले लम्बे जीवन (जिन दिनों मैं पैदा हुआ लिंकन अमेरिका के प्रेसीडेण्ट थे) पर दृष्टिपात करता हूँ तो मुझे विश्वास हो आता है कि निम्नलिखित बातों के कारण ही मैं चिन्ता पर काबू पा सका —

(१) मै समझ गया था कि चिन्ता करना व्यर्थ है। इससे कोई लाभ नहीं और इससे जीवन के बरबाद होने का भय लगा रहता है।

(२) चिन्ता मेरे स्वास्थ्य को नष्ट कर देगी।

(३) मैंने अपने आपको, आगे होने वाले खेलों को जीतने के लिए योजना बनाने में तथा तैयारी करने में इतना व्यस्त रखा कि हारे हुए खेलों पर चिन्ता करने के लिए मेरे पास समय ही न रहा।

(४) अन्त में मैंने एक निश्चय यह किया कि किसी भी खिलाड़ी को, खेल समाप्त होने के चौबीस घण्टे बीतने के पूर्व, उसकी भूलों के लिए सावधान नहीं करूँगा। शुरू शुरू में खेल समाप्त होने पर मैं अपने खिलाड़ियों के साथ कपड़े बदलता था। अगर टीम हार जाती तो मेरे लिए उस समय खिलाड़ियों की कटु आलोचना करने तथा उन्हें जली-कटी सुनाने से अपने आपको रोकना असम्भव-सा हो जाता। इससे मेरी चिन्ताएँ और बढ़ जातीं। दूसरे खिलाड़ियों की उपस्थिति में किसी एक खिलाड़ी की आलोचना करने से मुझे उसका सहयोग नहीं मिलता

और वह मेरे से नाराज हो जाता। खेल में हार जाने के तुरन्त बाद ही खिलाड़ियों को जो कुछ कहना होता कह देता इसलिए दूसरे दिन कहने को कुछ नहीं रहता। और तब तक मेरा दिमाग भी ठण्डा हो जाता। और उनकी गलतियाँ मुझ पर इतनी हावी नहीं रहती। बाद में जब मै उन खिलाड़ियों से बातें करता तो वे मुझ पर न नाराज होते, न अपना बचाव करने की कोशिश करते।

(५) मैं उन्हें हिम्मत बँधाता, उन्हें प्रोत्साहन देता और उनकी तारीफ करता। उनकी आलोचना करके उन्हें नीचे नहीं गिराता। मैं हर आदमी के लिए एक दो अच्छी बातें कहने का प्रयत्न करता।

(६) मैंने यह महसूस किया कि थक जाने पर मुझे अधिक चिन्ता होती है इसलिए अब मैं हर रात दस घण्टे बिस्तर पर बिताता हूँ और हर दोपहर को थोड़ा सो लेता हूँ। चाहे वह पाँच मिनट के लिए ही क्यों न हो। उससे मुझे राहत मिलती है।

(७) मेरा तो विश्वास है कि कार्यरत रह कर ही मैं अपनी चिन्ताओं को दूर रख कर अपनी उम्र को बढ़ा सका हूँ। मैं ८५ वर्ष का हूँ किन्तु अपने कार्य से अवकाश लेना नहीं चाहता। मैं अपने को वृद्ध भी तभी महसूस करूँगा, जब अपनी बीती गलतियों को दुहराने लगूँगा।

कोनी मेक ने चिन्ता रोकने के बारे में कोई पुस्तक नहीं पढ़ी थी, इसलिए उसने अपने नियम आप बनाए। आप भी उन नियमों की सूचि क्यों नहीं बना लेते जिन्होंने कभी आपकी सहायता की है? आप उन्हें यहीं लिख डालियें।

ये हैं वे नियम जिन्होंने चिन्ता पर काबू पाने में मेरी सहायता की—

१. .... २. .... ३. .... ४. ....

'एक ही साधे सब सधे सब साधे सब जाए'

लेखक : जॉन हॉमर मीलर

'टेक ए लुक एट युवरसेल्फ' नामक पुस्तक के लेखक

कई वर्षों पहले मैंने यह समझ लिया था कि चिन्ता से दूर भाग कर उससे कभी बचा नहीं जा सकता, पर उसके प्रति अपने मानसिक रवैये को बदलने से उसे दूर किया जा सकता है। मैंने यह भी जान लिया था कि मेरी चिन्ताएँ बाह्य न होकर आन्तरिक हैं।

जैसे जैसे वर्ष बीतते गये मैं यह समझता गया कि समय स्वय बहुतसी चिन्ताओं से निबट लेता है। वस्तुतः जब मैं एक सप्ताह के पहले की चिन्ता को याद करने की कोशिश करता तो उसे याद करना भी प्रायः कठिन हो जाता। इसलिए मेरा अपना एक नियम है कि जब तक एक सप्ताह नहीं बीत जाए

किसी समस्या पर दुःखी न होऊँ और यदि किसी भी समस्या को सदा के लिए अपने मस्तिष्क के बाहर न भी रख सकूँ, तो कम से कम एक सप्ताह के लिए तो उसे रोक ही लूँ। ऐसा करने से यह लाभ होता है कि समस्या अपने आप ही हल हो जाती है या फिर मेरी मानसिक दशा ही इतनी बदल जाती है कि उस समस्या से मुझे इतना कष्ट नहीं होता।

सर विलियम ओस्लर के दर्शन को पढ़ने से मुझे बहुत सहायता मिली है। वे बहुत बड़े डॉक्टर ही न थे, बल्कि जीने की महानतम कला के एक कुशल कलाकार भी थे। उनके कुछ शब्दों ने चिन्ता निवारण करने में मेरी बड़ी सहायता की है। उनके सम्मान में दिये गये एक भोज के अवसर पर सर विलियम ने कहा था– "मेरी जो कुछ भी सफलता है उसका श्रेय मेरी उस शक्ति को है, जिसके आधार पर मैं अपने दिनभर के कार्य में जुटा रहता हूँ और उसको अपनी उत्तमोत्तम योग्यता से करने का प्रयास करता हूँ। अपने भविष्य को भी मैं उसी पर छोड़ देता हूँ।"

अपनी चिन्ताओं से पार पाने में मैंने एक तोते के शब्दों को अपना सूत्र बना लिया है। उनके बारे में मेरे पिताजी बताया करते थे कि पेन्सिलवेनिया के क्लब के मार्ग में पिंजड़े में एक तोता लटका रहता था। जैसे ही क्लब के सदस्य उस दरवाजे से गुजरते, तो वह बार बार कहता, 'एक ही साधे सब सधे, सब साधे सब जाए।' मेरे पिताजी ने भी मुझे अपनी कठिनाइयों को उसी आधार पर हल करना सिखाया था। मैंने यह जान लिया है कि एक बार में एक ही काम करने से कार्यभार को शान्ति और धैर्य के साथ वहन करने में सहायता मिलती है। इसलिए 'एक ही साधे सब सधे' का नियम ही श्रेयस्कर है।

यहाँ भी चिन्ता पर काबू पाने का एक मूलभूत सिद्धान्त लागू होता है। और वह है–'आज की परिधि में रहिये।' आप इस सिद्धान्त को इस पुस्तक के पिछले पृष्ठों मे फिर से पढ़ लीजिए।

अब ईश्वर मेरा पथ-प्रदर्शक है

लेखक : जोजफ एम. कोटर

१५३४ फार्गो एवन्यु, शिकागो एलिनिओस

मैंने युवावस्था और उसके पहले का सारा जीवन निरन्तर चिन्ता करके नष्ट कर दिया। चिन्ता करना मेरा एक पेशा बन गया था। मेरी कई चिन्ताएँ थीं, और उनके कई रूप थे। उनमें से कुछ वास्तविक थीं बाकी सब काल्पनिक। मेरे जीवन में ऐसे अवसर बहुत ही कम आते थे जब मुझे चिन्ता नहीं होती थी। जब चिन्ता न होती तो लगता–कहीं किसी बात की लापरवाही तो नहीं कर रहा हूँ?

किन्तु गत, दो साल से एक दूसरे ही ढग से जीवन बिताने लगा हूँ। मैंने अपनी भूलें तथा अल्पगुणों का विश्लेपण करना आरम्भ कर दिया है। यह मेरा अपना निर्भीक और नैतिक आविष्कार था। इससे मुझे अपनी चिन्ता का कारण स्पष्ट होने लगा।

अब तक मैं अपने जीवन क्रम को व्यवस्थित एव सीमित नहीं कर पाया था। कल की गलतियों पर मुझे क्रोध आता था और भविष्य के बारे में भय लगा रहता था।

मुझे बार बार बताया गया कि 'आज' वही 'कल' है जिसकी चिन्ता मैंने 'कल' की थी। किन्तु उसका मुझ पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। मुझे केवल चौबीस घण्टों के कार्यक्रम को लेकर जीने की सलाह भी दी गयी। मुझे यह भी कहा गया था कि 'आज' के जीवन पर ही हमारा अधिकार है और हमें रोज अपने सुयोगों का पूर्ण दोहन करना चाहिए। मुझे कहा गया था कि यदि मैंने यह किया तो काम की व्यस्तता के कारण भूत या भविष्य के बारे में चिन्ता करने का मेरे पास समय ही न रहेगा। वह सलाह, तर्क–सगत एव विवेकपूर्ण थी किन्तु मुझे उन युक्तियों का प्रयोग करने में बड़ी कठिनाई महसूस हुई।

तब, यकायक जैसे अन्धे के हाथ बटेर लगा हो, मुझे अपनी कठिनाइयों का हल मिल गया। ३१ मार्च १९४५ का दिन था। शाम के सात बजे थे। हम कुछ मित्रों के साथ गाड़ी में जा रहे थे। उन्हें बिदा देनी थी। वे दि सीटी–ऑफ–लॉस ऐन्जल्स' नामक एक जहाज से, छुट्टियाँ बिताकर काम पर लौट रहे थे। युद्ध चल रहा था। भीड़ काफी थी। अपनी पत्नी के साथ गाड़ी में चढने के बजाय मैं गाड़ी के सामने की पटरियों पर उतर आया। मैं एक मिनट तक बड़े चमकीले इन्जन की तरफ देखता रहा। यकायक मैंने एक बहुत बड़ा सीमाफोर (सिग्नलयंत्र) देखा। यह जहाज का सिग्नल था। एक पीली रोशनी नजर आ रही थी। तत्काल ही वह रोशनी हरी बन गयी। उसी समय इन्जीनियर ने घण्टी बजाई। सब जहाज पर चले गये। कुछ ही पलों में जहाज अपनी २३०० मील की यात्रा के लिए रवाना हो गया।

मेरा दिमाग चक्कर खाने लगा। कोई बात मुझे रह रहकर सचेत कर रही थी। मुझे किसी चमत्कार का अनुभव होने लगा। एकाएक ज्ञात हुआ कि इन्जीनियरने मुझे अपनी समस्याओं का हल बता दिया है। वह हरी रोशनी के सहारे अपनी लम्बी यात्रा के लिए रवाना हो रहा था। यदि उसकी जगह मैं होता तो अपनी यात्रा की सभी कठिनाइयों के बारे में एक साथ सोचता और सुरक्षा के लिए चिन्तित रहता। क्योंकि अपने जीवन में अब तक कुछ ऐसा ही व्यवहार करता आ रहा हूँ। स्टेशन पर बैठे–बैठे भी मैं भविष्य की चिन्ता करके घबरा रहा था।

अब मैं सोचने लगा–उस इन्जीनियरने अपनी यात्रा के मार्ग में आनेवाली सभी कठिनाइयों की चिन्ता एक साथ नहीं की क्योंकि उसके जहाज का पथ-प्रदर्शन

करने के लिए सिग्नल लगे हुए थे। उनके इंगित पर वह जहाज की गति को कम-ज्यादा कर सकता था। सिग्नल की पीली रोशनी गति कम करने का संकेत देती है। लाल रोशनी आगे के खतरे के कारण रुक जाने का संकेत देती है। इस प्रकार जहाज की यात्रा सुरक्षित हो जाती है।

मैंने भी मन ही मन प्रश्न किया कि, मैं भी अपनी जीवन-यात्रा के लिए एक उत्तम सिग्नल पद्धति को क्यो न अपनाऊं? मुझे अपने आप ही इस का उत्तर मिल गया कि मेरे पास भी ऐसी ही एक सिग्नल-पद्धति है। भगवान ने उसे मुझे दिया है वही उसका सचालन भी करता है। वह अचूक है। मैंने उस हरी रोशनी की, जिससे कि जीवन-यात्रा सुगम हो जाए, खोज की। पर वह मिलेगी कहाँ? मैंने सोचा-भगवान ने ही इन हरी रोशनियों को बनाया है फिर उसी से उनके लिए क्यों न पूछा जाय? मैंने वही किया।

अब मैं जब सवेरे की प्रार्थना करता हूँ मुझे दिन भर के काम के लिए हरी रोशनी का संकेत मिल जाता है। मुझे कभी कभी पीली रोशनी भी दिखाई देती है। जो मेरी गति को रोक देती है। कभी कभी मैं लाल रोशनी भी देखता हूँ जो मुझे खतरे की ओर बढने से रोक लेती है।

जब से मैंने यह खोज की है मुझे कभी कोई चिन्ता नहीं हुई। गत दो वर्षों में लगभग सात सौ हरी रोशनियाँ मुझे दिखीं और जीवन की यात्रा बिना किसी खतरे की चिन्ता के बहुत कुछ सुगम हो गई। अब मैं हर रग की रोशनी का संकेत समझ कर उसके अनुसार चलना सीख गया हूँ।

जॉन डी. रोकफेलर के पैंतालीस वर्ष

जॉन डी. रोकफेलर सीनियर अपनी ३३ वर्ष की अवस्था तक करीब १० लाख की सम्पत्ति इकट्ठी कर चुके थे और ४३ वर्ष की अवस्था तक ससार की अपूर्व तथा सबसे बड़ी मोनोपोली का निर्माण उन्होंने कर लिया था। वह मोनोपोली थी-बृहत् स्टेन्डर्ड ऑइल कम्पनी की; किन्तु ५३ वर्ष की अवस्था में उनका क्या हाल हुआ? उस अवस्था में चिन्ता नें उन्हें जकड़ लिया। चिन्ता और जबरदस्त तनाव के जीवन ने उनके स्वास्थ्य को बिगाड़ कर रख दिया। ५३ वर्ष की अवस्था में ही वे निर्जीव से लगने लगे। उपर्युक्त शब्द उनके एक जीवनी लेखक जॉन के. विम्बलर ने कहे हैं।

५३ वर्ष की व्यवस्था में पाचन-शक्ति सम्बन्धी एक रहस्यमयी बीमारी ने उनको धर दबाया। उनके सभी बाल यहाँ तक कि बरौनियों के भी, गायब हो गये। केवल भौंहों पर थोड़े थोड़े बाल बचे थे। विम्बलर कहते हैं कि उनकी स्थिति इतनी

गम्भीर हो गयी थी कि जॉन को स्त्री के दूध पर जिन्दा रहने के लिए मजबूर होना पड़ा। डॉक्टरों ने एलोपेसिया की बीमारी बतलाई थी। बाल झड़ने की यह बीमारी प्रायः उत्तेजना और भय के कारण उत्पन्न होती है। बाल झड़ जाने से वे इतने अजीब से लगने थे कि उन्हें अपनी खोपड़ी पर टोपी पहने रहना पड़ता था। बाद में उन्होंने पांच सौ डॉलर के कीमत की विग पहनना शुरू किया और जीवन भर वे ये सफेद बालों की विग पहनते रहे।

आरम्भ में रॉकफेलर का शारीरिक स्वास्थ्य और ढाचा बहुत मजबूत था। किसान के घर में उनका लालन-पालन हुआ था, इसलिए उनके कन्धे पुष्ट और शक्तिशाली थे। उनकी पीठ सीधी और तनी हुई थी और उनकी चाल तीव्र और दृढ़ता लिये हुए थी।

किन्तु ५३ वर्ष की अवस्था में जब कि अधिकाश लोग स्वस्थ होते हैं, उनके कंधे झुक गये और चाल भद्दी हो गई। उनके एक दूसरे जीवनी लेखक जॉन विंकलीन के अनुसार, जब वे आइने में देखते तो उनके सामने वृद्ध व्यक्ति का स्वरूप नजर आता। अनवरत कार्य, निरन्तर चिन्ता, गालियाँ, निद्राहीन रातों, विश्राम और कसरत के अभाव के कारण उनके शरीर की शक्ति निकल चुकी थी। वे ससार के सबसे धनी व्यक्ति थे फिर भी उन्हें पथ्य पर रहना पड़ता था। उन्हें ऐसा भोजन करना पड़ता, जिसे एक भिखारी भी पसन्द नहीं करेगा। उनकी सामाहिक आय लगभग दस लाख डॉलर थी। किन्तु उनके भोजन पर सप्ताह में दो डॉलर भी खर्च नहीं होते थे। डॉक्टर लोग उन्हें खट्टा दूध और कुछ बिस्कुट खाने को देते थे। उनकी चमड़ी का रग बदल गया था। लगता था जैसे कोई पुराना चर्मपत्र उनकी हड्डियों के इर्द-गिर्द तानकर लपेट दिया गया हो। ५३ वर्ष की अवस्था में उत्तम से उत्तम और अत्यन्त कीमती दवा भी उनको मौत से बचाने में असमर्थ प्रतीत होने लगी।

ऐसा क्यों हुआ? इसका कारण था चिन्ता, दबाव और तनाव का जीवन। उन्होंने वस्तुतः अपने को कब्र के निकट पहुँचा दिया था। उनके परिचितों का कहना है कि २३ वर्ष की अवस्था से ही रॉक फेलर उग्र निश्चय के साथ अपने काम में जुट पड़े थे। केवल अच्छे और लाभप्रद सौदे की खबर ही उनके मन को हल्का कर सकती थी। जब उनको कोई बड़ा लाभ हो जाता तो वे एक युद्ध-नृत्य-सा करने लगते। अपने हैट को फर्श पर फेंक देते और थिरक-थिरक कर नाचने लगते। पर यदि उन्हें व्यापार में हानि हो जाती तो वे बीमार हो जाते। एक बार उन्होंने 'ग्रेट लेक्स' के रास्ते से, बिना बीमा कराए ४० हजार डॉलर का अनाज जहाज द्वारा रवाना कर दिया। बीमे की १५० डॉलर की रकम उनको बहुत अधिक लगी। उसी रात को लेक एरी के ऊपर भयकर तूफान उठा। रॉकफेलर को अपना माल नष्ट हो जाने की इतनी चिन्ता हुई कि दूसरे दिन सवेरे जब उनका भागीदार जार्ज गार्डनर ऑफिस में पहुँचा तो उसने देखा कि जॉन डी. रोकफेलर व्यग्रता से

इधर उधर जमीन माप रहे है। "जल्दी करो" उन्होंने भर्राई आवाज में कहा, "यदि अधिक विलम्ब नहीं हो गया हो तो हमें अब भी बीमा करा लेना चाहिए।" गार्डनर शहर गया और बीमा करा लिया। लेकिन जब वह ऑफिस में लौटा तो उसने देखा कि जॉन डी. और भी अधिक उग्रता की अवस्था में हैं। इसी दरमियान उन्हें एक तार मिला जिस में बतलाया गया था कि माल से भरा जहाज तूफान से बचकर किनारे लग चुका है। अब उन्हें पहले से भी ज्यादा दुःख था इसलिए कि उनके १५० डॉलर वेकार गए। वस्तुतः वे इतने बीमार हो गये कि घर जाकर बिस्तर पकड लिया। जरा सोचिए, उन दिनों उनकी फर्म प्रति-वर्ष ५ लाख डॉलर की रकम का धन्धा कर रही थी! फिर भी १५०.डॉलर के लिए अपने आपको इतना दु खी बना लिया कि उन्हें बिस्तर पकड़ लेना पडा।

उन्हें पैसा बढाने और रविवारीय स्कूल में पढाने के सिवा किसी काम के लिए समय नहीं था। न उन्हें खेलने का समय था और न ही आमोद-प्रमोद करने का। जब उनके भागीदार ने एक पुराना यॉच (जहाज) तीन अन्य व्यक्तियों के साथ दो हजार डॉलर में खरीदा तो जॉन डी. क्रुद्ध हो गए और उसमें बैठकर सैर के लिए जाने से इन्कार कर दिया। गार्डनर ने उन्हें शनिवार के दिन दोपहर को काम करते हुए देखा और उन्हें नौका-सैर का आमन्त्रण दिया और कहा कि इससे आपको लाभ होगा, आप धन्धे की बात भूल जाइए, थोड़ा आमोद प्रमोद भी कीजिए। इस-पर रोकफेलर ने उत्तेजित होकर चेतावनी देते हुए कहा "तुम्हारे जैसा अत्यन्त खर्चीला आदमी मैंने अबतक नहीं देखा। तुम बैंकों में अपनी और मेरी साख को धक्का पहुँचा रहे हो। इसका नतीजा यह होगा कि हमारा व्यापार नष्ट हो जायगा। मैं तुम्हारे यॉच पर नहीं आऊँगा। मैं उसे देखना भी नहीं चाहता।" और वे शनिवार का सारा दिन ऑफिस में ही गुजारते रहे।

विनोद और सूक्ष्मदर्शन की कमी जॉन डी. के व्यापारिक जीवन की कमजोरी थी। वर्षों के बाद उन्होंने बतलाया "मैं सोते समय हमेशा यह सोचता कि मेरी सफलता अस्थाई है।"

लाखों करोड़ों की सम्पत्ति होते हुए भी अपने वैभव के नष्ट हो जाने की काल्पनिक चिन्ता किये बिना वे कभी नहीं सोये। खेल-कूद और आमोद-प्रमोद के लिए उनके पास समय ही न था। वे कभी थियेटर नहीं गये, ताश नहीं खेले, किसी पार्टी में नहीं गये। मार्क हन्ना के कथन के अनुसार वे पैसे के पीछे पागल हो गये थे। वे अन्य सभी बातों में समझदार थे किन्तु पैसे के बारे में पागल थे।

ओहीयो अन्तर्गत क्लीवलैण्ड में अपने पड़ोसी के सामने रॉकफेलर ने एक बार स्वीकार किया था कि, "मैं लोगों का प्यारा बनना चाहता हूँ।" किन्तु, वे व्यवहार में इतने शिथिल और सन्देही थे कि बहुत कम लोग उन्हें पसन्द करते थे। मोरगन को एक बार उनके साथ धन्धा करने के कारण पछतावा हुआ। उसने क्रोध से बड़बड़ाते हुए कहा—"मै इस आदमी को पसन्द नहीं करता, मैं इसके

साथ किसी प्रकार का वास्ता नहीं रखना चाहता।" स्वय रॉकफेलर का भाई उनसे इतनी घृणा करता था कि परिवार के कब्रिस्तान से उसने अपने बच्चों के शव हटवा दिये। उसने कहा "मेरे खून का कोई भी व्यक्ति जॉन डी के अधिकार की भूमि में विश्राम नहीं करेगा। रॉकफेलर के कर्मचारी और सहयोगी उनसे एक विशेष प्रकार का भय खाते थे। और मजे की बात तो यह थी कि जॉन डी. स्वय अपने कर्मचारियो से भय खाते थे। उन को भय रहता था कि वे कर्मचारी ऑफिस की बातें बाहर कहकर कोई भड़ाफोड न कर दें।

मानव स्वभाव में उनकी आस्था इतनी कम थी कि एक बार जब उन्होंने एक स्वतत्र रिफाइनर के साथ दस-साला समझौते पर हस्ताक्षर किए तो उन्होने उस व्यक्ति से यह वादा करवा लिया कि वह उस समझौते के बारे में किसी को कुछ नहीं बतलाएगा, यहाँ तक कि अपनी पत्नी को भी नहीं। उनका 'मोटो' यह था कि अपना मुँह बन्द रखो और व्यापार करते जाओ।

जब वे अपनी समृद्धि की चरम सीमा पर पहुँच गये और सोने के ढेर उनके चारों ओर जगमगाने लगे तब उनका निजी ससार प्रायः लुट गया। पुस्तकों और लेखों में निन्दा की जाने लगी कि स्टेन्डर्ड ऑइल कम्पनी, रेल कम्पनियों को छिपे रूप से रिबेट देती है तथा क्रूरता से अपने विरोधियों को कुचल देती है।

जॉन डी. रॉकफेलर पेन्सिलवेनिया के तेल क्षेत्र में ससार के सब से घृणित व्यक्ति माने जाते थे। जिन लोगों को उन्होंने कुचल दिया था, उन्होंने उन के पुतले को फाँसी पर लटका दिया। उनमें से बहुत से उनकी पतली गर्दन के चारों ओर रस्सी बाध कर उन्हें किसी खट्टे सेब के पेड़ की शाखा से लटका देना चाहते थे। उनकी ऑफिस में आग और पत्थर उगलने वाले पत्र जाते थे, जिन में, इन्हें जान से खत्म कर देने की धमकियाँ दी जाती थीं। उन्होंने अपने शत्रुओ से बचने के लिए अगरक्षक रखे। उन्होंने घृणा के इस तूफान की उपेक्षा करने का प्रयत्न किया। एक बार उन्होंने सिनक में कहा "यदि मुझे मन माना करने दो तो, तुम मुझे लातें भी लगा सकते हो और गालियाँ भी दे सकते हो।" किन्तु बाद मे उन्होने महसूस किया कि आखिर वे भी एक इन्सान ही हैं और चिन्ता तथा घृणा दोनों को एक साथ नहीं सह सकते। उनका स्वास्थ्य गिरने लगा। वे अपने नये दुश्मन-बीमारी से, जिसने अन्दर ही अन्दर उनपर आक्रमण कर दिया था, घबरा गए और भ्रमित हो गये। आरम्भ में तो उन्होंने यदाकदा होनेवाली अस्वस्थता को गुप्त रखा और अपनी बीमारी की चिन्ता दिमाग से दूर रखने की कोशिश की, किन्तु अनिद्रा, अजीर्ण तथा बाल उड़ने के शारीरिक निशान जो चिन्ता एवं विघटन के कारण थे, छिपे नहीं रह सके। और अन्त मे डॉक्टरों ने कटु सत्य कह सुनाया। अब उनके लिए एक ही विकल्प रह गया था – या तो रुपया पैसा और चिन्ता या जिन्दगी। डॉक्टरों ने उन्हें सावधान कर दिया था कि या तो वे अपने व्यवसाय आदि से अवकाश ले लें या फिर मृत्यु को अपना ले। उन्होंने अवकाश ले लिया। किन्तु पूर्व इसके कि वे अवकाश लें,

चिन्ता, लालच और भय ने उनके स्वास्थ्य को तोड़कर रख दिया था। अमेरिका की एक अत्यन्त प्रसिद्ध जीवनी-लेखिका इडा टारबेल जब उनसे मिली तो उन्हें देखकर उसे धक्का लगा। उसने लिखा है कि, "बुढापा भयकर रूप से उन के चेहरे पर छा गया था। उनके समान बूढा व्यक्ति मैंने कभी नहीं देखा था। वे इतने वृद्ध क्यों हो गए! जब कि वे जनरल मेकार्थर से, जिसने फिलिपिन्स पर अधिकार कर लिया था, अवस्था मे कई वर्ष छोटे थे।" उनका स्वास्थ्य इतना गिर गया था कि इडा टारबेल को उन पर दया आयी थी। वह उन दिनों ऐसी पुस्तक लिख रही थी जिसमें उसने स्टेण्डर्ड ऑइल कम्पनी तथा उसके उद्देश्यों की निन्दा की थी। और यह स्वाभाविक ही था कि उस लेखिका के मन में वह भयकर जन्तु रूपी कम्पनी और उसके निर्माता के लिये कोई हमदर्दी न होती। फिर भी उसने लिखा है कि जब वह रविवारीय स्कूल में जॉन डी. रोकफेलर को अध्यापन कार्य करते और अपने चारों ओर बैठे लोगों के चेहरों को बड़ी उत्सुकता से निहारते हुए देखती, तो उसमें एक अनपेक्षित भावों की उद्‌भावना होती। समय एव परिस्थितियों के कारण उसके भाव और भी अधिक तीव्र हो जाते और उसे उनके लिए बड़ा खेद होता। सच है मनुष्य का भय के समान भयकर शत्रु अन्य कोई नहीं।

जब डॉक्टरों ने रॉकफेलर की जिन्दगी को बचाने का काम हाथ में लिया, तब उन्होंने उन्हें तीन नियम बताए और उन नियमों का उन्होने अपने शेष जीवन में पूरा पूरा पालन किया। वे नियम ये थे—

(१) चिन्ता से दूर रहिये, कैसी भी परिस्थिति क्यो न हो उसके विषय मे चिन्ता न कीजिये।

(२) आराम कीजिये और खुली हवा में हल्की-सी कसरत किया कीजिये।

(३) भोजन करने का ध्यान रखिये। भोजन उतना ही कीजिये कि पेट मे थोड़ी जगह बची रह जाए।

जॉन डी. रोकफेलर ने उन नियमों का पालन किया और उन्होंने सम्भवत. अपने जीवन को बचा भी लिया। अवकाश प्राप्त करने पर उन्होंने गोल्फ खेलना सीखा, बागवानी शुरू की और अपने पड़ोसियों से गपशप लड़ाने लगे। वे खेलने और गाने लगे।

इसके अतिरिक्त वे कुछ काम भी करते थे। विम्बलर का कहना है कि कष्ट और अनिद्रा के कारण जॉन डी. को मनन करने का समय मिला। वे दूसरे लोगों के बारे में सोचने लगे। अपने धनलाभ के सम्बन्ध में विचार करना छोड जब उन्होंने मानव-सुख की दृष्टि से पैसों के महत्त्व पर विचार किया तो उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ।

रोक फेलर अब अपने रुपयों को लाखों की तादाद में दान में देने लगे। उनका यह दान देना भी कभी कभी बड़ा कठिन काम बन जाता, क्योंकि जब कभी वे

किसी चर्च में दान देते तो सारे देश के चर्च के धर्मोपदेशक खून रगा पैसा कहकर उस दान की भर्त्सना करते। किन्तु उन्होंने दान देना बन्द नहीं किया। उन्हें लेक मिशीगन के किनारे स्थित एक ऐसे कॉलेज का पता चला जिसे पैसों की अत्यन्त आवश्यकता थी। रेहन के झगड़े के कारण वह बन्द किया जानेवाला था, पर उन्होंने उसकी सहायता की और लाखों डॉलर इस कॉलेज को दान देकर उसे एक विश्वविख्यात 'शिकागो विश्वविद्यालय' का रूप दे दिया। उन्होंने हब्शी लोगों की सहायता करना शुरू किया। उन्होंने टस्कोगी कॉलेज जैसे हब्शी विश्वविद्यालयों को धन दिया, जहाँ जॉर्ज वॉशिंग्टन कार्वर के द्वारा शुरू किए गए कार्य को जारी रखने के लिए धन की बहुत बड़ी आवश्यकता थी। उन्होंने हुकवर्म बीमारी का उन्मूलन करने में सहायता की। हुकवर्म की चिकित्सा करनेवाले एक अधिकारी डॉक्टर चार्ल्स डब्ल्यू. स्टील्स ने कहा कि दक्षिण प्रदेश का नाश करनेवाली इस बीमारी से पीड़ित बीमार को पचास सेन्ट में स्वस्थ किया जा सकता है किन्तु ये पचास सेन्ट दे कौन? रॉकफेलर ने पचास सेन्ट दे दिए। उन्होंने हुकवर्म जैसी भयकर बीमारी का, जिसने दक्षिण प्रदेश को सत्रस्त-सा कर रखा था, उन्मूलन करने के लिए लाखों रुपये खर्च कर दिए। उन्होंने अपना काम और आगे बढाया और महान अन्तर्राष्ट्रीय फाउण्डेशन की स्थापना की, जो रॉकफेलर फाउण्डेशन के नाम से प्रसिद्ध है। समूचे ससार से बीमारी और अज्ञानता का उन्मूलन करना ही इस सस्था का उद्देश्य है।

इस फाउण्डेशन के सम्बन्ध में मेरी भावुकता का कारण यह है कि सम्भव है किसी दिन रॉकफेलर फाउण्डेशन द्वारा ही मुझे जीवन दान मिले। मुझे आज भी अच्छी तरह से याद है कि सन् १९३२ में मैं चीन मे था तो समूचे राष्ट्र में हैजे का प्रकोप फैल रहा था। चीनी किसान मक्खियों की तरह मर रहे थे। इस आतक के बीच हम पिकींग के रॉकफेलर मेडिकल कॉलेज में जाकर बीमारी से बचने के लिये टीका लगवा सके। चीनी और विदेशी सभी को टीके की सुविधा समान रूप से प्राप्त थी। और तभी मुझे पहली बार ज्ञात हुआ कि रॉकफेलर के लाखों डॉलरों से ससार मे कितना महान काम हो रहा है।

रॉकफेलर फाउण्डेशन के समान अन्य सस्था का उदाहरण इतिहास में कहीं भी नहीं मिलता। अपने ढग की यह अनोखी सस्था है। रॉकफेलर जानते थे कि दूरदर्शी व्यक्ति कई प्रकार के महत्त्वपूर्ण आन्दोलन चला कर ससार का भला कर सकते हैं। इन आन्दोलनों के अन्तर्गत अन्वेषण का काम किया जा सकता है, कॉलेजों की स्थापना हो सकती है, और डॉक्टरों द्वारा रोगों का उन्मूलन करने के प्रयत्न किए जा सकते हैं। किन्तु इस कार्य के लिए धन की आवश्यकता होती है। इसलिए उन्होंने-मानवता के लिए कार्य करनेवाले समाज सेवियों को सहायता देने का निश्चय किया, पर उन पर अपना अधिकार नहीं जमाया। वे उनकी धन से सहायता करके स्वय अपनी मदद करने में सहयोग देते। आज हम जॉन डी. रॉक-

फेलर को पेनिसिलिन जैसे चमत्कार तथा अन्य खोजों के लिए, जो उनके धन की सहायता से सम्पन्न हो सकीं, धन्यवाद दे सकते हैं। स्पाईनल मेनेञ्जाइटिस नामक बीमारी के कारण ९०% प्रतिशत बच्चे मृत्यु को प्राप्त हो जाते थे, किन्तु आज आपके बच्चे उस बीमारी से नहीं मरते और इसलिए रॉकफेलर आपके धन्यवाद के पात्र हैं। आज भी मलेरिया, तपेदिक, इन्फ्ल्युएन्जा, डिप्थीरिया आदि अन्य कई बीमारियाँ ससार में फैली हुई हैं। उन बीमारियों का उन्मूलन करने में जो कुछ भी काम हुआ उसके लिए रॉकफेलर हमारे धन्यवाद के पात्र हैं।

और रॉकफेलर का क्या हाल था? क्या उन्हें मानसिक शान्ति मिलती थी? हाँ, अन्ततः उन्हें सतोष ही मिला। "एलन नेवीन्स का कथन है कि सन् १९०० के बाद भी यदि जनता यह समझती रहे कि रॉकफेलर स्टेण्डर्ड ऑइल कम्पनी की अलोचना अथवा आक्षेपों पर चिन्तित रहते थे तो वह उसकी बड़ी भारी भ्रान्ति है।

रॉकफेलर सुखी थे। वे पूर्णतया बदल गये थे। यहाँ तक कि उन्हें चिन्ता कभी भी नहीं होती थी। वस्तुतः अपने जीवन की करारी हार के दिनों मे भी वे रात को गहरी नीद सोए बिना न रहे।

यह हार उनके सामने उस समय आई जब कि 'बृहत् स्टेन्डर्ड ऑइल कोर्पोरेशन' को इतिहास मे भारी से भारी दण्ड भरने की आज्ञा दी गई। अमेरिकन सरकार के अनुसार स्टॅन्डर्ड ऑइल कम्पनी एक मोनोपोली थी जो एण्टी ट्रस्ट कानून के स्पष्ट' विरुद्ध थी। पाँच वर्ष तक यह लड़ाई चलती रही। देश के उत्तम से उत्तम कानून विशारद लगातार इस मुकदमे को लड़ते रहे। कानूनी लड़ाई के इतिहास मे यह सब से लम्बी लड़ाई थी। किन्तु अन्ततः स्टॅण्डर्ड ऑइल कम्पनी हार गयी। जब जज महोदय ने जिनका नाम केनेसा माउण्टेन लेण्डिस था, फैसला सुनाया तो बचाव पक्ष के वकीलों को यह भय लगा कि जॉन डी. को इससे बड़ा धक्का लगेगा। किन्तु उन्हें यह मालूम नहीं था कि जॉन डी. कितने बदल चुके थे।

उसी रात को एक वकील ने जॉन डी. को फोन पर उस फैसले के सम्बन्ध मे बतलाया। उसने बड़ी नरमी से उस फैसले के विषय में बातचीत की और तब चिन्ता व्यक्त करते हुए कहा, "मिस्टर रॉकफेलर आशा है यह फैसला आपका मानसिक सतुलन भग नहीं करेगा और आपको रात में नींद आ जाएगी।"

किन्तु वृद्ध जॉन डी. ने फोन पर ही प्रत्युत्तर देते हुए कहा, "मिस्टर जॉनसन तुम चिन्ता न करो, मैं जरूर सोऊँगा। अच्छा, तो नमस्ते!"

यह हाल उस व्यक्ति का था, जिसने एक बार एक सौ पचास डॉलर के लिए बिस्तर पकड़ लिया था। यह ठीक है कि जॉन डी. को चिन्ता पर विजय पाने के लिए बहुत लम्बा समय लगा। यों वे ५३ वर्ष की अवस्था ही में मरनेवाले थे किन्तु बाद में अट्ठानवें वर्ष की अवस्था तक जिन्दा रहे।

काम सम्बन्धी पुस्तक पढ़ने के कारण मेरा दाम्पत्य जीवन नष्ट होते होते बच गया

लेखक — बी. आर. डब्ल्यु

मैं अपनी कहानी लिखते समय अपना नाम छिपाना पसन्द नहीं करता, किन्तु यह इतनी व्यक्तिगत है कि मेरे लिए अपना वास्तविक नाम देना सम्भव नहीं है। पर डेल कार्नेगी इस कहानी के सत्य की साक्षी जरूर देंगे। बारह वर्ष पूर्व मैंने उन्हें यह कहानी सुनाई थी।

"कॉलेज छोड़ने के पश्चात् मुझे एक वृहत् औद्योगिक संस्था में नौकरी मिली। पांच वर्ष के पश्चात् कम्पनी ने मुझे प्रशान्त महासागर के पार सुदूर पूर्व में अपने प्रतिनिधि के रूप में भेज दिया। अमेरिका छोड़ने के एक सप्ताह पूर्व मैंने अपनी जान-पहचान की स्त्रियों में से एक अत्यन्त सुन्दर और आकर्षक स्त्री से विवाह कर लिया, किन्तु हमारी सुहाग रात, हम दोनों ही के लिए दुःखान्त एवं निराशापूर्ण रही· विशेषकर मेरी पत्नी के लिए। 'हवाई' पहुँचने तक तो वह इतनी निराश एवं भग्न-हृदया हो गई कि यदि उसे जीवन के अत्यन्त रोमान्चक उपक्रम में हार स्वीकार करने तथा अपने पुराने मित्रों को मुँह दिखाने में शर्म न आती तो वह तुरन्त अमेरिका लौट जाती।

पूर्व में दो वर्ष हमने साथ साथ बड़े संकट में बिताए। मैं इतना दुःखी हो गया था कि कभी कभी आत्महत्या करने का भी विचार कर बैठता। तब एक दिन यकायक एक पुस्तक ने सारी परिस्थिति को बदल दिया। मुझे सदा से ही पुस्तकों से प्रेम रहा है। एक रात सुदूर पूर्व के अपने एक अमेरिकन मित्र के पास मैं गया हुआ था, और उनके अच्छे पुस्तकालय को मैं देख रहा था। यकायक मैंने डॉक्टर वान डी. वेल्ड की 'आइडियल मेरेज' नामक पुस्तक देखी। पुस्तक के शीर्षक से ऐसा लगा कि वह कोई कोरा उपदेश देने वाली ऐसी-वैसी पुस्तक होगी। किन्तु महज उत्सुकतावश मैंने उसे खोल कर देखा। उसमें अधिकांशतः दाम्पत्य जीवन के काम-पक्ष की बातें थीं और ये बातें स्पष्ट रूप से लिखी गयी थीं। उसमें किसी प्रकार की नग्नता का संकेत नहीं मिलता था।

यदि किसी ने मुझे काम पर कोई किताब पढ़ने का सुझाव दिया होता तो मैं उस सुझाव को अपना अपमान समझता। काम पर मैं पुस्तक पढ़ूँ? मैं तो उस पर किताब लिख सकता हूँ। किन्तु मेरा दाम्पत्य जीवन इतना दुःखद था कि मैंने हार कर उस किताब को पढ़ने का निश्चय कर लिया। मैंने अपने मेजबान से पुस्तक मांगने का साहस किया। मैं सत्य कहता हूँ कि उस पुस्तक का पढ़ना मेरे जीवन की प्रमुख घटनाओं में से एक था। मेरी पत्नी ने भी उस पुस्तक को पढ़ा। उस पुस्तक ने दुःखद दाम्पत्य जीवन को एक सुखद परम आनन्द में

बदल दिया। यदि मेरे पास लाखों डॉलर होते तो उस पुस्तक को छपवाने के सभी अधिकार मैं खरीद लेता और उसकी प्रतियाँ हजारों भावी दम्पत्तियों को मुफ्त बाँट देता।

सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक डॉक्टर जॉन बी. वाट्सन ने एक जगह लिखा है कि "काम, जीवन का अत्यन्त प्रमुख विषय मान लिया गया है और यह भी मान लिया गया है कि अधिकांशत पुरुषों और स्त्रियों के सुख को तोड़ने में यही एक कारण है।

डॉक्टर वाट्सन का कहना सत्य है। मै तो इसे मानने के लिए मजबूर हो जाता हूँ। भले ही यह पूरा पूरा सत्य न हो किन्तु अधिकाश अंगों में यह सत्य जरूर है। तब क्या कारण है कि सभ्य समाज काम से अनभिज्ञ हजारों व्यक्तियों को प्रतिवर्ष विवाह करने की अनुमति दे देता है और उनके दाम्पत्य सुख के सयोगों को नष्ट होते देखता रहता है।

यदि हम यह जानना चाहें कि विवाह में कठिनाई कहाँ है? तो हमें डॉक्टर जी. वी. हेमल्टर और कीनिथ मेकगोवन लिखित 'वॉट इज रॉग विथ मेरेज' नामक पुस्तक पढ़नी चाहिए। इस पुस्तक को लिखने के पहले उन्होंने चार वर्ष तक दाम्पत्य जीवन की बहुत-सी कठिनाइयों के विषय में खोज की थी। उनका कहना है कि केवल लापरवाह मनःविश्लेपक ही यह कहेगा कि अधिकाशतया दाम्पत्य जीवन के मन-मुटाव का मूल, काम सम्बन्धी गलत समझौते में है। कुछ भी हो, यदि काम-सम्बन्ध सतोषजनक हो तो अन्य कठिनाइयों से उत्पन्न मन-मुटाव आसानी से भुला दिए जा सकते हैं। इस कथन की सत्यता में मुझे जरा भी सन्देह नहीं है। यह मैं अपने दुःखद अनुभव के आधार पर जानता हूँ। डॉक्टर वान डी. वेल्ड की 'आइडियल मेरेज' नामक पुस्तक, जिसने मेरे दाम्पत्य जीवन को नष्ट होने से बचा लिया, अधिकाशतया सभी बड़े सार्वजनिक पुस्तकाल्यों से प्राप्त हो सकती है या किसी पुस्तकों की दुकान से खरीदी जा सकती है। यदि आप किसी दुल्हे या दुल्हन को भेंट देना चाहें तो उन्हें हस्तकला की कोई वस्तु न दीजिए। उन्हें 'आइडियल मेरेज' पुस्तक की एक प्रति उपहार में दे दीजिए। उस पुस्तक से उनके जीवन का सुख जितना अधिक बढ़ेगा, उतनी ससार भर की हस्तकला तथा कला की सभी वस्तुएँ भी नहीं बढा सकतीं।

डेल कार्नेगी की सूचना:—यदि 'आइडियल मेरेज' पुस्तक खरीदना आपके लिए भारी पड़े तो एक दूसरी पुस्तक की सिफारिश करता हूँ और वह है डाक्टर हन्नाह और एब्राहम स्टॉन द्वारा लिखित 'मेरेज मेन्युअल।'

मैं शनैः शनैः आत्म-हनन कर रहा था क्योंकि मुझे आराम करना नहीं आता था

लेखक — पॉल सेम्सन

डायरेक्टर, सेल्स एडवरटाइजिंग, १२८१५ सिकामोर, वेन्डोट, मिशीगन

छः मास पूर्व मैं उन्माद ग्रस्त जीवन बिता रहा था। मैं सदैव तनाव की अवस्था में रहता था और कभी आराम नहीं करता था। रोज रात को स्नायु-थकान से थकित और चिन्तित घर लौटता था। पर क्यों? इसलिए कि किसी ने मुझे यह नहीं बतलाया कि पॉल, तुम अपनी हत्या कर रहे हो। तुम अपनी गति को कम क्यों नहीं करते? तुम आराम क्यों नहीं करते?

मैं सवेरे जल्दी उठता, जल्दी जल्दी खाता, जल्दी जल्दी डाढी बनाता, जल्दी जल्दी कपड़े पहनता और मोटर में बैठकर अपने काम पर रवाना हो जाता। मुझे भय लगता कि यदि मैंने स्टेयरींग व्हिल को जम कर नहीं पकडा तो कहीं यह खिडकी से निकल भागेगा। मैं तीव्रगति से काम करता। जल्दी से घर भागता और रात को सोने में भी जल्दी करने का यत्न करता।

मेरी अवस्था इतनी खराब हो गई थी कि मुझे डेट्रोयट में एक प्रसिद्ध स्नायु विशेषज्ञ के पास जाना पड़ा। उसने मुझे आराम करने के लिये कहा। (उसने मुझे आराम करने के वेही सिद्धान्त बतलाए जिनका उल्लेख इस पुस्तक के चौबीसवें अनुच्छेद में कर दिया गया है। उसने मुझे हर समय, काम करते, गाड़ी चलाते, खाते और सोते आराम ही के बारे में विचार करने का सुझाव दिया। उसने मुझे बताया कि आराम करना नहीं जानने के कारण ही मैं शनैःशनै आत्म-हनन कर रहा हूँ।

तब से मैंने आराम करने का अभ्यास किया है। जब मैं रात को बिस्तर पर जाता हूँ तो पहले अपने शरीर को आराम देता हूँ और तब सोता हूँ। अब मैं पूरा आराम लेकर जगता हूँ। यह एक अच्छा सुधार है क्यों कि मैं पहले थकान व तनाव की अवस्था में जगता था। अब मैं खाते और मोटर चलाते समय भी आराम करता हूँ। इसका अर्थ यह नहीं कि मोटर चलाते समय मैं असावधान रहता हूँ। अब मैं अपने मस्तिष्क की सहायता से गाड़ी चलाता हूँ, स्नायु की सहायता से नहीं। मेरे आराम करने का मुख्य स्थान वह है जहाँ मै काम करता हूँ। दिन में कई बार अपना काम रोक कर मैं अपने आपको देखता हूँ कि आराम की अवस्था में हूँ या नहीं। जब फोन की घण्टी बजती है, तब मैं फोन को भयभीत होकर नहीं उठता। फोन पर बात करते समय मैं एक सोये हुए शिशु की

तरह पूर्ण विश्राम की अवस्था में रहता हूँ। इन सब बातों का फल यह हुआ कि अब मेरा जीवन सुखद और जीने योग्य बन गया है। और मै स्नायु-थकान और स्नायु-चिन्ता से पूर्णतया मुक्त हूँ।

एक सच्ची चमत्कारपूर्ण घटना

लेखक : श्रीमति जॉन बर्गर

३१४० कॉलरेडो एवेन्यु, मिनेपॉलिस, मिनेसोटा

चिन्ता ने मुझे पूर्णतया हरा दिया था। चिन्ता के कारण मेरा मस्तिष्क इतना उलझ गया था कि जीवन में कोई आनन्द दिखाई नहीं दे रहा था। मेरी शिराओं पर इतना बोझ पड़ गया था कि न तो मैं रात को सो सकती थी और न दिन को विश्राम कर सकती थी। मेरे तीन बच्चे मुझ से बहुत दूर रिश्तेदारों के पास रहते थे, मेरे पति जो हाल ही में सैनिक सेवा से लौटे थे, एक दूसरे शहर में रहकर वकालत जमाने का प्रयत्न कर रहे थे। युद्ध के बाद मुझे जीवन में सुरक्षा और स्थिरता का अभाव महसूस होने लगा।

मुझे भय था की मेरे पति का क्या होगा ! मुझे अपने बच्चों के सुख, और सामान्य घरेलू जीवन के लिए आवश्यक द्रव्य की चिन्ता थी। मुझे स्वयं अपना भी भय था। मेरे पति को कहीं मकान नहीं मिल रहा था और नया मकान बनाना ही एक मात्र उपाय रह गया था। यह सब कुछ मेरी अच्छी अवस्था पर निर्भर था। ज्यों ज्यों मुझे ये बातें अधिक घेरती गई मैं उनके लिए अधिक प्रयत्न करती गई। और साथ ही साथ मेरी असफलता का भय भी अधिकसे अधिक बढ़ता गया। मुझे, किसी भी काम की योजना बनाने में भय लगने लगा और महसूस होने लगा कि मेरा आत्मविश्वास जाता रहा है और में जीवन में पूर्णतया असफल रही हूँ।

जब चारों ओर अंधःकार छा गया था और कहीं से भी सहायता की आशा न रही तो मेरी माँ ने मेरे लिए एक उपाय किया, जिसके लिए मै उसकी सदा आभारी रहूँगी। उसने मुझे फिर से संघर्ष करने की प्रेरणा दी। उसने मुझे हार मानने तथा अपने स्नायु और मस्तिष्क पर से नियंत्रण खोने से रोक दिया। उसने मुझे बिस्तर छोड़कर अपनी कठिनाई से लड़ने के लिये प्रोत्साहित किया। वह कहती - "तुम परिस्थितियों के सामने घुटने टेक रही हो, उनका सामना करने के बजाय उनसे डर रही हो, और जीने के बजाय जिन्दगी से दूर भाग रही हो"।

इसलिए उस दिन से मैने अपनी परिस्थितियों से संघर्ष करना शुरू किया। उसी सप्ताह मैंने अपने माता-पिता को घर लौट जाने को कह दिया, क्योंकि मैं सब काम अपने हाथ में लेनेवाली थी। जो काम पहले असम्भव मालूम होता था उसे

मैंने कर डाला। मैं अकेली अपने दो छोटे बच्चों की देखरेख करने लगी। मैं अच्छी तरह सोने और खाने-पीने लगी और मेरा उत्साह बढ़ने लगा। एक सप्ताह बाद जब वे मेरे पास वापस आए तो उन्होंने देखा कि मैं इस्त्री करते करते गा रही हूँ। मुझे अपने भले का विवेक हो आया था, क्योंकि मैंने संघर्ष करना शुरू कर दिया था और उस में मेरी विजय हो रही थी। मैं इस सीख को कभी नहीं भूलूंगी कि यदि कोई परिस्थिति अजेय मालूम हो तो भी उसका सामना करो। उसके विरुद्ध संघर्ष शुरू कर दो, उसके सामने घुटने मत टेको।

मैंने अपने आपको काम में जुटा दिया। मैंने अपने सब बच्चों को अपने पास बुला लिया और नये मकान में पति के साथ रहने लगी। मैंने यह निश्चय कर लिया कि मैं अपने अच्छे परिवार के लिए एक शक्तिशाली और स्वस्थ माँ के रूप में रहूँगी। मैं अपने घर, अपने बच्चों, अपने पति और अपने अन्य कुटुम्बियों के लिए योजनाएँ बनाने में व्यस्त रहने लगी। अपने बारे में सोचने का मेरे पास समय ही नहीं था। इस प्रकार वह चमत्कारी घटना घटित हुई।

मैं दिनोंदिन शक्तिशाली बनती गई। मैं रोज अपने कुटुम्ब की भलाई करने, आनेवाले दिनों के लिए अयोजन गढने तथा जीवित रहने के आनन्द के साथ जगती। यद्यपि बाद में भी यदा कदा निराशा के दिन आए थे, विशेष कर जब कि मैं थक जाती थी, तथापि अब मैं अपने उन दिनों के सम्बन्ध में कभी विचार अथवा मनन करने का प्रयास नहीं करती। धीरे धीरे कठिनाइयों के विचार कम होते गये और अन्त में अपने आप विलीन हो गये।

तब से, एक साल बीत गया है। मेरे पति सुखी और सफल व्यक्ति हैं। मेरा एक सुन्दर घर है। मैं दिन में सोलह घण्टे काम करती हूँ। मेरे तीन स्वस्थ और प्रसन्न चित्त बच्चे हैं और मेरा जीवन शान्तिमय एवं सुखी है।

धक्के

लेखक — फेरेंक मोलनर

हंगरी के प्रख्यात नाटककार "काम नींद की एक उत्तम दवा है।"

ठीक पचास वर्ष पूर्व मेरे पिताजी ने जो शब्द कहे थे, उनका मैं आज भी पालन करता हूँ। मैंने उन दिनों बुडापेस्ट विश्वविद्यालय में कानून का अध्ययन शुरू किया था। मैं एक परीक्षा में असफल हो गया था। इस लज्जा को मैं सहन नहीं कर सका और उससे पलायन करने के लिए मैंने असफल व्यक्तियों के गहरे मित्र, शराब का सहारा लिया और वह सहज प्राप्य शराब थी 'एप्रिकोट ब्रॉन्डी।"

मेरे पिताजी यकायक मुझे मिलने आये। एक अच्छे डॉक्टर के नाते उन्होंने मेरे सकट और बोतल दोनों को पलक मारते ही भॉप लिया। मैंने भी वास्तविकता से पलायन करने का कारण उन्हें बता दिया।

उन्होंने वहीं उसी समय एक नुस्खा लिख दिया और मुझे समझाया कि शराब और सोने की दवा लेने से सकट से छुटकारा नहीं मिलता। किसी भी सकट के लिए केवल एक दवा है जो ससार की सभी दवाओं से उत्तम और विश्वस्त है। और वह है, काम।

मेरे पिताजी का यह कहना कितना सत्य था। काम में लगने की आदत पैदा करना जरा कठिन लग सकता है किन्तु जल्दी या देर से, सफलता जरूर मिल जाती है। इसमें निद्रादायक दवाओं के गुण विद्यमान हैं। यह एक तरह की आदत है और एक बार जब आदत हो जाती है तो बाद में इस आदत को छोड़ना असम्भव हो जाता है। पचास वर्ष बीत गये पर वह आदत अब भी मेरे साथ है।

मैं इतनी चिन्तित रहती थी कि अठारह दिनों तक भोजन का एक ग्रास भी नहीं लिया

लेखिका — केथरीन हॉलकोम्ब

किसान महिला शेरीफ का ऑफिस मोबाइल, एलबामा

तीन माह पूर्व की बात है मैं चार दिन और चार रात तक चिन्ता के कारण सो नहीं सकी और अठारह दिनों तक मैंने भोजन का एक ग्रास भी नहीं लिया। भोजन की सुगन्ध मात्र से मेरा जी मतलाने लग जाता था। जिस मानसिक संकट को मैंने सहा उसका वर्णन करना शब्दों की शक्ति से परे है। शायद नर्क मे भी इतनी यातना नहीं होगी। मुझे महसूस होने लगा कि या तो मैं पागल हो जाऊँगी या फिर मर जाऊँगी। मुझे विदित हो गया कि इस तरह से जिन्दा रहना सम्भव नहीं।

जिस दिन मुझे इस पुस्तक की अग्र-प्रति मिली, उसी दिन मेरे जीवन ने करवट ली। गत तीन महीनों तक मैं वस्तुतः पुस्तकों के सहारे दिन काटती रही। उनका एक-एक पृष्ठ पढ़ती और जीवन का नया रास्ता ढूँढने के लिए भरसक प्रयास करती। इससे मेरी मानसिक अवस्था और मनोवेगों की स्थिरता में जो परिवर्तन आया उस पर एकाएक विश्वास नहीं किया जा सकता। अब मैं रोज के सघर्षों को सह सकती हूँ। आज मैं महसूस करती हूँ कि मेरी विक्षिप्तता के कारण, आज की समस्याएँ न होकर कुछ बीती समस्याएँ थीं। मुझे भय लगा रहता कि कहीं फिर से वे बातें अपना सिर न उठा बैठें।

किन्तु अब, जब मुझे किसी बात की चिन्ता होने लगती है तब मैं तत्काल ही इस पुस्तक से जो सिद्धान्त सीखे हैं उनका प्रयोग करना शुरू कर देती हूँ। यदि मुझ मे किसी काम को आज ही करने की व्यग्रता जग जाती है तो मैं उस काम को हाथ में ले लेती हूँ और उसे तत्काल ही सम्पन्न कर अपने दिमाग से निकाल बाहर करती हूँ। जब मेरे सामने ऐसी समस्याएँ आ जाती हैं जिनके कारण मैं पहले पागल-सी हो जाती थी, तो अब मैं शान्ति से, भाग १ के अनुच्छेद ३ की उन तीन अवस्थाओं का प्रयोग करने का प्रयास करती हूँ। पहले, मैं अपने आप से प्रश्न करती हूँ कि होने वाला अनिष्ट क्या है? दूसरे, मैं मन ही मन उस अनिष्ट को स्वीकार करने का प्रयास करती हूँ। तीसरे, मै समस्या पर विचार करती हूँ और देखती हूँ कि यदि मुझे अनिष्ट को स्वीकार करना ही है और उसे स्वीकार करने की मेरी इच्छा भी है, तो मैं उस में क्या सुधार कर सकती हूँ। जब मैं किसी ऐसी घटना के बारे में चिन्तित होती हूँ, जिसे मैं बदल नहीं सकती और जिसे मैं स्वीकार करना नहीं चाहती, तो मै रुक कर इस छोटी-सी प्रार्थना को दुहराने लगती हूँ।

"हे भगवन्! जिस बात को मैं बदल नहीं सकती, उसको स्वीकार करने का विवेक मुझे प्रदान कर, जिस को मैं बदल सकूँ उसे बदलने का मुझे साहस दे। मुझे बुद्धि दे कि मैं भले-बुरे को समझ सकूँ"

इस पुस्तक को पढने के पश्चात् मैं वस्तुतः एक नवीन एव गौरवपूर्ण जीवन का अनुभव करने लगी हूँ। अब मैं चिन्ता से अपने स्वास्थ्य और सुख का नाश नहीं करती। अब मैं नौ घण्टों तक निद्रा ले सकती हूँ, मैं भोजन का आनन्द उठाती हूँ, मुझपर से परदा हट गया है। मेरे लिए एक नया मार्ग खुल गया है। अब मैं अपने चारों ओर के लौकिक सौन्दर्य को देख सकती हूँ तथा उसका आनन्द उठा सकती हूँ। अब मैं ईश्वर को अपने जीवन के लिए तथा इस मोहक ससार में जीने का सुयोग प्रदान करने के लिए धन्यवाद देती हूँ।

मेरा यह सुझाव है कि आप भी इस पुस्तक को पढ जाइये। इसे अपने बिस्तर के पास रखिए। इसकी जो बातें आपकी समस्याओं पर लागू हो, उन पर निशान बना लीजिए। इसका अध्ययन कीजिए और प्रयोग कीजिए। क्यों कि यह पुस्तक सामान्य अर्थ में पढी जानेवाली पुस्तक नहीं है बल्कि एक नवीन जीवन-पथ दिखाने वाली निर्देशिका है।